

श्री भगवत्-पुष्पदन्त-भूतबलि-प्रणीतः

षट्खंडागमः

श्रीवीरसेनाचार्य-विरचित-धवला-टीका-समन्वितः ।

तस्य

प्रथम-खंडे जीवस्थाने

हिन्दीभाषानुवाद तुलनात्मकटिप्पण-प्रस्तावनानेकपरिशिष्टे सम्पादिता

अन्तर-भावालपबहुत्वानुगमाः ५

सम्पादक

अमरावतीस्व-फिंग-एडवर्ड-कॉलेज-संस्कृताध्यापक, एम् ए, एल् एल् बी, इत्युपाधिगारी

हीरालालो जैनः

सहसम्पादक

प. हीरालालः सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थः

सशोधने सहायकौ

व्या वा, सा सु, पं, देवकीनन्दनः

सिद्धान्तशास्त्री

*

डा. नेमिनाथ-तनय आदिनाथः

उपाध्याय, एम् ए, डी लिट्

प्रकाशक

श्रीमन्त सेठ शितावगय लक्ष्मीचन्द्र

जेन-साहित्योद्धारक-फड-कार्यालय

अमरावती (मर)

मि स १९९९]

धीर-निर्माण-सम् २४६८

[ई स १९४२

मूल्यं रूप्यक-दशकम्

प्रकाशक—

श्रीमन्त सेठ शिवाचाराय लक्ष्मीचन्द्र,
जैन-साहित्योद्धारक-फंड कार्यालय,
अमरावती (बरार)



मुद्रक—

टी. एम्. पाटील,
मैनेजर
सरस्वती प्रिंटिंग प्रेस, अमरावती (बरार)

THE
ṢAṬKHAṆḌĀGAMA

OF
PUSPADANTA AND BHŪTABALI
WITH
THE COMMENTARY DHAVALĀ OF VĪRASENA

VOL V

ANTARA-BHĀVĀLPABAḤUTWĀNUGAMA

Edited
with introduction, translation, notes and indexes

BY
HIRALAL JAIN, M A, LL B,
C P Educational Service, King Edward College, Amraoti.

ASSISTED BY
Pandit Hiralal Siddhānta Shāstri, Nyāyatārtha

With the cooperation of

Pandit Devakinandana
Siddhānta Shāstri



Dr A. N Upadhye,
M A, D Litt.

Published by
Shrimanta Seth Shitabrai Laxmichandra,
Jaina Sāhitya Uddhāraka Fund Kāryālaya
AMRAOTI [Berar].

1942

Price rupees ten only

Published by—
Shrimanta Seth Shitabrai Laxmichandra,
Jaina Eāhitya Uddhāraka Fond Kāryālaya
AMRAOTI [Berar]



Printed by—
T. M. Patil, Manager,
Saraswati Printing Press
AMRAOTI [Berar]

विषय सूची

प्राकृत्यन १-३

१

प्रस्तावना

Introduction

1-11

१ ध्वज-ज्ञा गणितशास्त्र

१-२८

२ कानड प्रशस्ति

२९-३०

३ शक्ता-समाधान

३०-३६

४ विषय परिचय

३६-४३

५ विषय सूची

४४-५९

६ शुद्धिपत्र

६१-६३

पृष्ठ

पृष्ठ

२

मूल, अनुवाद और टिप्पण

१-३५०

अन्तरानुगम

१-१७९

मानानुगम

१८१-२३८

अल्पमहुत्वानुगम

२३९-३५०

३

परिशिष्ट

१-३८

१ अन्तप्ररूपणा-सूत्रपाठ

१

मानप्ररूपणा-सूत्रपाठ

१७

अल्पमहुत्व-सूत्रपाठ

२१

२ अन्तरण-गाथा-सूची

३३

३ न्यायोक्तिया

३४

४ प्रपोष्टेस्व

३४

५ पारिभाषिक शब्दसूची

३५-३८



प्रश्न कथन

पद्लङ्गागमका चौथा भाग इसी वर्ष जनवरामें प्रकाशित हुआ था। उसके छह माह पश्चात् हा यह पाचवां भाग प्रकाशित हो रहा है। सिद्धांत प्रयोगोंके प्रकाशनके विरुद्ध जो आन्दोलन उठाया गया था वह, हर्ष है, अधिज्ञाश जैनपर सम्पादकों, अन्य जैन विद्वानों तथा पूर्व भागकी प्रस्तानामें प्रकाशित हमारे विवेचनके प्रमाणसे बिलकुल ठंडा हो गया और उसकी अब कोई चर्चा नहीं चल रही है।

प्राचीन प्रयोगोंके सम्पादन, प्रकाशन व प्रचारकी चार मजिले हैं— (१) मूल पाठका सशोधन (२) मूल पाठका शब्दज्ञान अनुवाद (३) प्रयोगोंके अर्थको सुस्पष्ट करनेवाला सुवित्तृत व स्वतंत्र अनुवाद (४) प्रयोगोंके नियमों लेकर उसपर स्वतंत्र लेख व पुस्तकों आदि रचनायें। प्रस्तुत सम्पादन-प्रकाशनमें हमने इनमेंसे केवल प्रथम दो मजिलें तय करनेका निश्चय किया है। तदनुसार ही हम यथाशक्ति मूल पाठके निर्णयका पूरा प्रयत्न करते हैं और फिर उसका हिन्दी अनुवाद यथाशक्य मूल पाठके रूप, शैली व शब्दावठाके अनुसार ही रखते हैं। नियमोंके मूल पाठसे अधिक स्वतंत्रतापूर्वक खोलनेका हम साहस नहीं करते। जहां इसकी कोई विशेष ही आवश्यकता प्रतीत हुई वहां मूलानुगामी अनुवादमें विस्तार न करके अलग एक छोटा मोटा विशेषार्थ लिख दिया जाता है। किंतु इस स्वतंत्रतामें भी हम उत्तरोत्तर कमी करते जाते हैं, क्योंकि, वह यथार्थत हमारी पूर्वोक्त सामाजिक बाहरकी बात है। हम अनुवादको मूल पाठके इतने समीप रखनेका प्रयत्न करते हैं कि जिससे वह कुछ अंशमें सख्त छायाके अमानकी भी पूर्ति करता जाय, जैसा कि हम पहले ही प्रकट कर चुके हैं। जिन शब्दोंकी मूलमें अनुवृत्ति चली आती है वे यदि समीपनी होनेसे सुज्ञेय हुए तो उन्हें भी बार बार दुहराना हमने ठीक नहीं समझा।

हमारी इस सुस्पष्ट नीति और सीमाओं न समझ कर कुछ समालोचक अनुवादमें दोष दिखानेका प्रयत्न करते हैं कि अमुक वाक्य ऐसा नहीं, ऐसा लिखा जाना चाहिये था, या अमुक विषय स्पष्ट नहीं हो पाया, उसे और भी खोलना चाहिये था, इत्यादि। हमें इस बातका हर्ष है कि विद्वान् पाठकोंनी इन प्रयोगोंमें इतनी तीव्र रुचि प्रकट हो रही है। पर यदि वह रुचि सच्ची और स्थायी है तो उसके बलपर उपर्युक्त चार मजिलोंमेंसे दोष दो मजिलोंकी भी पूर्तिकर अंशमें प्रयत्न होना चाहिये। प्रस्तुत प्रकाशनके सीमाके बाहरकी बात लेकर सम्पादनार्थमें दोष दिखानेका प्रयत्न करना अनुचित और अन्याय है। जो समालोचनादि प्रकट हुए हैं उनसे हमें अपने कार्योंमें आशातीत सफलता मिली हुई प्रतीत होती

है, क्योंकि, उनमें मूल पाठके निर्णयकी त्रुटियां तो नहीं के बराबर मिलती हैं, और अनुवादके भी मूलानुगामित्वमें कोई दोष नहीं दिखाये जा सके। हां, जहां शब्दोंकी अनुवृत्ति आदि जोड़ी गई है वहां कहीं कुछ प्रमाद हुआ पाया जाता है। पर एक ओर हम जन अपने अल्प ज्ञान, अल्प साधन सामग्री और अल्प समयका, तथा दूसरी ओर इन महान् ग्रन्थोंके अतिगहन विषय-विश्लेषणका विचार करते हैं तब हमें आश्चर्य इस बातका निकलना नहीं होता कि हमसे ऐसी कुछ भूलें हुई हैं, वरिष्ठ, आश्चर्य इस बातका होता है कि वे भूलें उक्त परिस्थितियों में भी इतनी अल्प हैं। इस प्रकार उक्त छिद्रान्वेषी समालोचकोंके लेखोंसे हमें अपने कार्यमें अधिक दृढ़ता और विश्वास ही उत्पन्न हुआ है और इसके लिये हम उनके हृदयसे कृतज्ञ हैं। जो अल्प भी त्रुटि या खलन जब भी हमारे दृष्टिगोचर होता है, तभी हम आगामी भागके शुद्धिपत्र व शका समाधानमें उसका समावेश कर देते हैं। ऐसे खलनादिकी सूचना करनेवाले सज्जनोंके हम सदैव आभारी हैं। जो समालोचक अत्यन्त छोटी मोटी त्रुटियोंसे भी बचनेके लिये बड़ी बड़ी योजनायें सुझाते हैं, उन्हें इस बातका ध्यान रखना चाहिये, कि इस प्रकाशनके लिये उपलब्ध फंड बहुत ही परिमित है और इससे भी अधिक कठिनाई जो हम अनुभव करते हैं, वह है समयकी। दिनों दिन काल बढ़ा करता जाता है और इस प्रकारके साहित्यके लिये रुचि उत्तरोत्तर हीन होती जाती है। ऐसी अस्थिरतामें हमारा तो अब मत यह है कि जितने शीघ्र हो सके इस प्राचीन साहित्यको प्रकाशित कर उसकी प्रतिष्ठा सत्र और फैला दी जाय, ताकि उसकी रक्षा ता हो। छोटी मोटी त्रुटियोंके सुधारके लिये यदि इस प्रकाशनको रोकना गया तो संभव है उसका फिर उद्धार ही न हो पावे और न जाने कैसा संकट आ उपस्थित हो। योजनाएँ सुझाना जितना सरल है, स्वार्थत्याग करके आजकल कुछ कर दिखाना उतना सरल नहीं है। हमारा समय, शक्ति, ज्ञान और साधन सब परिमित हैं। इस कार्यके लिये इससे अधिक साधन-सम्पन्न यदि कोई संस्था या व्यक्ति-विशेष इस कार्य-भारको अधिक योग्यताके साथ सन्हालनेको प्रस्तुत हो तो हम सहर्ष यह कार्य उन्हें सौंप सकते हैं। पर हमारी सीमाओंमें फिर हाल और अधिक विस्तारकी गुंजाइश नहीं है।

प्रस्तुत खंडाशमें जीवस्थानकी आठ प्ररूपणाओंमेंसे अन्तिम तीन प्ररूपणाएँ समाविष्ट हैं—अन्तर, मान और अल्पबहुत्व। इनमें क्रमशः ३९७, ९३ व ३८२ सूत्र पाये जाते हैं। इनकी टीकामें क्रमशः लगभग ४८, ६५ तथा ७६ शका-समाधान आये हैं। हिन्दी अनुवादमें अर्थको स्पष्ट करनेके लिये क्रमशः १, २ और ३ विशेषार्थ लिखे गये हैं। सुखनात्मक व पाठभेद सनधी टिप्पणियोंकी सख्या क्रमशः २९९, ९३ और १४४ है। इस प्रकार इस प्रथम-भागमें लगभग १८९ शका-समाधान, ६ विशेषार्थ और ५३६ टिप्पण पाये जावेंगे।

सम्पादन-व्यवस्था व पाठ-शोधनके लिये प्रतियोगिता उपयोग पूर्ववत् चाल रहा।
 पं. हीरालालजी शास्त्री यह कार्य नियतरूपसे कर रहे हैं। इस भागके मुद्रित फार्म

फ़ाकू कथन

पदखटागमका चौथा भाग इसी वर्ष जनवरीमें प्रकाशित हुआ था । उसके छह माह पश्चात् ही यह पाचवां भाग प्रकाशित हो रहा है । सिद्धांत प्रयोगोंके प्रकाशनके निरुद्ध जो आन्दोलन उठाया गया था वह, हर्ष है, अधिमात्रा जैनपरम्परादकों, अथ जैन विद्वानों तथा पूर्व भागकी प्रस्तावनामें प्रकाशित हमारे विवेचनके प्रभावसे निःकुल टडा हो गया और उसकी अत्र कोई चर्चा नहीं चल रही है ।

प्राचीन ग्रंथोंके सम्पादन, प्रकाशन व प्रचारकी चार मजिठे हैं— (१) मूल पाठका संशोधन (२) मूल पाठका शब्दश अनुवाद (३) ग्रंथके अर्थको सुस्पष्ट करनेवाला सुविस्तृत व स्वतंत्र अनुवाद (४) ग्रंथके शिष्योंके लेकर उसपर स्वतंत्र लेख व पुस्तकें आदि रचनामें । प्रस्तुत सम्पादन-प्रकाशनमें हमने इनमेंसे केवल प्रथम दो मजिठें तय करनेका निश्चय किया है । तदनुसार ही हम यथाशक्ति मूल पाठके निर्णयका पूरा प्रयत्न करते हैं और फिर उसका हिन्दी अनुवाद यथाशक्य मूल पाठके रूप, शैली व शब्दावलीके अनुसार ही रखते हैं । विषयको मूल पाठसे अधिक स्वतंत्रतापूर्वक खोलनेका हम साहस नहीं करते । जहाँ इसकी कोई विशेष ही आवश्यकता प्रतीत हुई वहाँ मूलानुगामी अनुवादमें विस्तार न करके अलग एक छोटा मोटा विशेषार्थ लिख दिया जाता है । किन्तु इस स्वतंत्रतामें भी हम उत्तरोत्तर कमी करते जाते हैं, क्योंकि, वह यथार्थ हमारी पूर्वाक्त सीमाओंके बाहरकी बात है । हम अनुवादको मूल पाठके इतने समीप रखनेका प्रयत्न करते हैं कि जिससे वह कुछ अंशमें सङ्कट छायाके अमानकी भी पूर्ति करता जाय, जैसा कि हम पहले ही प्रकट कर चुके हैं । जिन शब्दोंकी मूलमें अनुवृत्ति चली आती है वे यदि समीपवर्ती होनेसे सुज्ञेय हुए तो उहें भी धार वा दूहराना हमने ठीक नहीं समझा ।

हमारी इस सुस्पष्ट नीति और सीमाओं न समझ कर कुछ समालोचक अनुवादमें दोष दिखानेका प्रयत्न करते हैं कि अमुक वाक्य ऐसा नहीं, ऐसा लिखा जाना चाहिये था, या अमुक विषय स्पष्ट नहीं हो पाया, उसे और भी खोलना चाहिये था इत्यादि । हमें इस बातका हर्ष है कि विद्वान् पाठकोंकी इन प्रयोगोंमें इतनी तीव्र रुचि प्रकट हो रही है । पर यदि वह रुचि सच्ची और स्थायी है तो उसके बलपर उपर्युक्त चार मजिठोंमें शेष दो मजिठोंकी भी पूर्तिक्रम अलगसे प्रयत्न होना चाहिये । प्रस्तुत प्रकाशनके सीमाके बाहर बात लेकर सम्पादनदिमें दोष दिखानेका प्रयत्न करना अनुचित और अय्याय है । समालोचनादि प्रकट हुए हैं उनसे हमें अपने कार्यक्रमों आशातीत सफलता मिली हुई प्रतीत है ।

है, क्योंकि, उनमें मूल पाठके निर्णयकी त्रुटियां तो नहीं के बराबर मिलती हैं, और अनुवादके भी मूलानुगामित्वमें कोई दोष नहीं दिखाये जा सके। हा, जहाँ शब्दोंकी अनुवृत्ति आदि जोड़ी गई है वहाँ कहीं कुछ प्रमाद हुआ पाया जाता है। पर एक ओर हम जब अपने अल्प ज्ञान, अल्प साधन सामग्री और अल्प समयका, तथा दूसरी ओर इन महान् ग्रन्थोंके अतिगहन विषय-निवेचनका विचार करते हैं तब हमें आश्चर्य इस बातका बिलकुल नहीं होता कि हमसे ऐसी कुछ भूलें हुई हैं, वरिन्, आश्चर्य इस बातका होता है कि वे भूलें उक्त परिस्थितिमें भी इतनी अल्प हैं। इस प्रकार उक्त टिड्रान्वेषी समालोचकोंके लेखोंसे हमें अपने कार्यमें अधिक दृढता और विश्वास ही उत्पन्न हुआ है और इसके लिये हम उनके हृदयसे कृतज्ञ हैं। जो अल्प भी त्रुटि या खलन जन भी हमारे दृष्टिगोचर होता है, तभी हम आगामी भागके शुद्धिपत्र व शका समाधानमें उसका समावेश कर देते हैं। ऐसे खलनादिकी सूचना करनेवाले सज्जनोंके हम सदैव आभारी हैं। जो समालोचक अत्यन्त छोटी मोटी त्रुटियोंसे भी बचनेके लिये बड़ी बड़ी योजनायें सुझाते हैं, उन्हें इस बातका ध्यान रखना चाहिये, कि इस प्रकाशनके लिये उपलब्ध फंड बहुत ही परिमित है और इससे भी अधिक कठिनाई जो हम अनुभव करते हैं, वह है समयकी। दिनों दिन काल बढ़ा करता जाता है और उस प्रकारके साहित्यके लिये रुचि उत्तरोत्तर हीन होती जाती है। ऐसी अनस्थायी हमारा तो अब मत यह है कि जितने शीघ्र हो सके इस प्राचीन साहित्यको प्रकाशित कर उसकी प्रतिधा सत्र ओर फेला दी जाय, ताकि उसकी रक्षा ता हो। छोटी मोटी त्रुटियोंके मुधारके लिये यदि इस प्रकाशनको रोकना गया तो संभव है उसका फिर उद्धार ही न हो पावे और न जाने कैसा सकट आ उपस्थित हो। योजनाए सुझाना जितना सरल है, स्वार्थत्याग करके आजगल कुछ कर दिखाना उतना सरल नहीं है। हमारा समय, शक्ति, ज्ञान और साधन सब परिमित हैं। इस कार्यके लिये इससे अधिक साधन-सम्पन्न यदि कोई सत्था या व्यक्ति-विशेष इस कार्य-भारको अधिक योग्यताके साथ सम्हालनेको प्रस्तुत हो तो हम सहर्ष यह कार्य उन्हें सौंप सकते हैं। पर हमारी सीमाओंमें फिर हाठ और अधिक विस्तारकी गुजाइश नहीं है।

प्रस्तुत खंडाशमें जीवस्थानकी आठ प्ररूपणाओंमेंसे अन्तिम तीन प्ररूपणाए समाविष्ट हैं—अन्तर, मान और अल्पबहुत्व। इनमें क्रमश ३९७, ९३ व ३८२ सूत्र पाये जाते हैं। इनकी टीकामें क्रमश लगभग ४८, ६५ तथा ७६ शका-समाधान आये हैं। हिन्दी अनुवादमें अर्थको स्पष्ट करनेके लिये क्रमश १, २ और ३ विशेषार्थ लिखे गये हैं। तुलनात्मक व पाठभेद सबधी टिप्पणियोंकी सख्या क्रमश २९९, ९३ और १४४ है। इस प्रकार इस ग्रन्थ-भागमें लगभग १८९ शका-समाधान, ६ विशेषार्थ और ५३६ टिप्पण पाये जायेंगे।

सम्पादन-व्यवस्था व पाठ-शोधनके लिये प्रतियोंका उपयोग पूर्ववत् चालू रहा।
 पं. हीरालालजी शास्त्री यह कार्य नियतरूपसे कर रहे हैं। इस भागके मुद्रित फार्म

श्री प. देवकीनन्दनजी सिद्धातशास्त्रीने विशेषरूपसे मर्मीके विराम-कालमें अवशेषका पत्र सरोजन भेजनेकी कृपा की है, जिनका उपयोग शुद्धिपत्रमें किया गया है। कानडप्रशासिका सशोधन पूर्ववत् डा. ए. एन्. उपाध्येनीने परके भेजा है। प्रति मिलानमें प. बालचन्द्रजी शास्त्रीका सहयोग रहा है। इस प्रकार सब सहयोगियोंका साहाय्य पूर्ववत् उपलब्ध है, जिसके लिये मैं उन सबका अनुगृहीत हूँ।

इस भागकी प्रस्तावनामें पूर्वप्रतिज्ञानुसार डा. अश्वेशनारायणजीके गणितसम्बन्धी लेखका अरिम्भ हिन्दी अनुवाद दिया जा रहा है। इसका अनुवाद मेरे पुत्र चिरनीष प्रफुल्ल कुमार बी. ए. ने किया था। उसे मैंने अपने सहयोगी प्रोफेसर काशीरत्नजी पाठेके साथ मिलाया और फिर डा. अश्वेशनारायणजीके पास भेजकर सशोधित करा लिया है। इसके लिये इन सज्जनोंका मुझपर आभार है। चौथे भागके गणितपर भी एक लेख डा. अश्वेशनारायणनी लिख रहे हैं। खेद है कि अनेक कौटुम्बिक विपत्तियों और चिन्ताओंके कारण ये उस लेखको इस भागमें देनेके लिये तैयार नहीं कर पाये। अतः उसका लिये पाठकोंको अगले भागकी प्रतीक्षा करना चाहिये।

आजकल कामज, जिह्द आदिना सामान्य मुद्रणादि सामग्रीके मिलनेमें असाधारण कठिनाईका अनुभव हो रहा है। काममें बेहद बढ़ी हुई है। तथापि हमारे निरंतर सहायक और अद्वितीय साहित्यसेवी प. नाथूरामजी प्रेमीके प्रयत्नसे हमें कोई कठिनाईका अनुभव नहीं हुआ। इस वर्ष उनके ऊपर पुत्रवियोगका जो कठोर वज्रपात हुआ है उससे हम और हमारी सत्याके समस्त टस्टी व कार्यकर्तागण अत्यन्त दुखी हैं। ऐसी अपूर्व कठिनाईयोंके होते हुए भी हम अपनी व्यनस्था और कार्यप्रगति पूर्ववत् कायम रखनेमें सफल हुए हैं, यह हम इस कार्यके पुष्पका फल ही समझते हैं। आगे जब जैसा हो, कष्ट नहीं जा सकता।

दिय एडवर्ड कॉलेज

अमरावती

२०-७-४२

हीरानाल जैन

प्रस्तावना

INTRODUCTION

This volume contains the last three *prarūpaṅās*, namely *Antara*, *Bhāva* and *Alpa-bahutva*, out of the eight *prarūpaṅās* of which the first five have been dealt with in the previous volumes. The *Antara prarūpaṅā* contains 397 *Sūtras* and deals with the minimum and maximum periods of time for which the continuity of a single soul (*eka jiva*) or souls in the aggregate (*nānā jiva*) in any particular spiritual stage (*Guṇa-sthāna*) or soul-quest (*Mārgaṅga-sthāna*) might be interrupted. It is, thus, a necessary counterpart of *Kāla prarūpaṅā* which, as we have already seen, devotes itself to the study of similar periods of time for which continuity in any particular state could uninterruptedly be maintained. The standard periods of time are, therefore, the same as in the previous *prarūpaṅā*. The first *Guṇasthāna* is never interrupted from the point of view of souls in the aggregate; there is no time when there might be no souls in this *Guṇasthāna*—some souls will always be at this spiritual stage. But a single soul might deviate from this stage for a minimum period of less than 48 minutes (*Antaramuhūrta*) or for a maximum period of slightly less than 132 *Sāgaropamas*. The second *Guṇasthāna* may claim no souls for a minimum period of one instant (*eka samaya*) or for a maximum period of an innumerable fraction of a *palyopama*, while a single soul might deviate from it in the minimum for an innumerable fraction of a *palyopama* and at the maximum for slightly less than an *Ardha-pudgala-parivartana*. And so on with regard to all the rest of the *Guṇasthānas* and the *Mārgaṅga-sthānas*. The commentator has explained at length how these periods are obtained by changes of attitude and transformations of life of the souls.

The *Bhāva prarūpaṅā*, in 93 *Sūtras*, deals with the mental dispositions which characterise each *Guṇasthāna* and *Mārgaṅga-sthāna*. There are five such dispositions of which four arise from the *Karmas* heading for fruition (*udaya*) or pacification (*upaśama*) or destruction (*kshaya*) or partly destruction and partly pacification (*kshayopaśama*),

while the fifth arises out of the natural potentialities inherent in each soul (*parmātmika*) Thus, the first *Guṇasthāna* is *audāyika*, the second *pārināmika*, the third, fifth, sixth and seventh *kshūyopa'amika*, the fourth *aupa'amika*, *kshāyika* or *kshūyopa'amika*, eighth, ninth and tenth *aupa'amika* or *kshāyika*, eleventh *Aupa'amika* and the twelfth, thirteenth and fourteenth *kshāyika* The commentary explains these at great length

The eighth and last *prarupānā* is *Alpa-bahutva* which, as its very name signifies, shows, in 382 *Sūtras*, the comparative numerical strength of the *Guṇasthānas* and the *Margau'thānas* It is here shown that the number of souls in the 8th, 9th and 10th *Aupa'amika* *Guṇasthānas* as well as in the 11th is the least of all and mutually equal In the same three *Kshapaka* *Guṇasthānas* and in the 12th, 13th and 14th, they are several times larger and mutually equal This is the numerical order from the point of view of entries (*praveśa*) into the *Guṇasthānas* From the point of view of the aggregates (*samcaya*) the souls at the 13th stage are several times larger than the last class, and similarly larger at each successive stage are those at the 7th and the 6th stage respectively Innumerable larger than the last at each successive stage are those at the 5th and the 2nd stage, and the last is exceeded several times by those at the 3rd stage At the 4th stage they are innumerable larger and at the 1st infinitely larger successively The whole discussion shows how the exact sciences like mathematics have been harnessed into the service of the most speculative philosophy

The results of these *prarupānās* we have tabulated in charts, as before, and added them to the Hindi introduction



धवलाका गणितशास्त्र

(पुस्तक ४ में प्रकाशित डा. अवधेश नारायण सिंह,
लखनऊ यूनीवर्सिटी, के लेखका अनुवाद)

यह विदित हो चुका है कि भारतवर्षमें गणित- अकगणित, बीजगणित, क्षेत्रमिति आदिका अध्ययन अति प्राचीन कालमें किया जाता था । इस बातका भी अच्छी तरह पता चल गया है कि प्राचीन भारतवर्षीय गणितज्ञोंने गणितशास्त्रमें ठोस और सारगर्भित उन्नति की थी । यथार्थत अर्वाचीन अकगणित और बीजगणितके जन्मदाता वे ही थे । हमें यह सोचनेका अभ्यास होगया है कि भारतवर्षकी विशाल जनसंख्यामेंसे केवल हिंदुओंने ही गणितका अध्ययन किया, और उन्हें ही इस विषयमें रुचि थी, और भारतवर्षीय जनसंख्याके अन्य भागों, जैसे कि बौद्ध व जैनोंने, उसपर विशेष ध्यान नहीं दिया । विद्वानोंके इस मनका कारण यह है कि अभी अभी तक बौद्ध वा जैन गणितज्ञोंद्वारा लिखे गये कोई गणितशास्त्रके ग्रन्थ ज्ञात नहीं हुए थे । किन्तु जैनोंके आगमग्रन्थोंके अध्ययनसे प्रकृत होता है कि गणितशास्त्रका जैनोंमें भी खूब आदर था । यथार्थत गणित और ज्योतिष विद्याका ज्ञान जैन मुनियोंकी एक मुख्य साधना समझी जाती थी^१ ।

अब हमें यह विदित हो चुका है कि जैनोंकी गणितशास्त्रकी एक शाखा दक्षिण भारतमें थी, और इस शाखाका कमसे कम एक ग्रन्थ, महानीराचार्य-कृत गणितसारसप्रह, उस समयकी अन्य उपलब्ध कृतियोंकी अपेक्षा अनेक बातोंमें श्रेष्ठ है । महानीराचार्यकी रचना सन् ८५० की है । उनका यह ग्रन्थ सामान्य रूपरेखामें ब्रह्मगुप्त, श्रीधराचार्य, भास्कर और अन्य हिन्दू गणितज्ञोंके ग्रन्थोंके समान होते हुए भी विशेष बातोंमें उनसे पूर्णतः भिन्न है । उदाहरणार्थ— गणितसारसप्रहके प्रश्न (problems) प्रायः सभी दूसरे ग्रन्थोंके प्रश्नोंसे भिन्न हैं ।

वर्तमानकालमें उपलब्ध गणितशास्त्रसंबंधी साहित्यके आधारपरसे हम यह कह सकते हैं कि गणितशास्त्रकी महत्वपूर्ण शाखाएँ पाटलिपुत्र (पटना), उज्जैन, मैसूर, मलबार और समभवत बनारस, तक्षशिला और कुछ अन्य स्थानोंमें उन्नतिशील थीं । जब तक आगे प्रमाण प्राप्त न हों, तब तक यह निश्चयपूर्णक नहीं कहा जा सकता कि इन शाखाओंमें परस्पर क्या

^१ देखो—भगवती सूत्र, अमर्यदेव सूत्रकी टीका सहित, श्वेताशानी आगमोदय समिति द्वारा प्रकाशित, १९१९, सूत्र ९० । जैकोबी कृत उत्तराध्ययन सूत्रना अमेजी अनुवाद, ऑक्सफोर्ड १८९५, अ पाप ७, ८, ३८

while the fifth arises out of the natural potentialities inherent in each soul (*pariśamika*) Thus, the first *Guṇasthāna* is *audāyika*, the second *parīnamika*, the third, fifth, sixth and seventh *kshūyopā'amika*, the fourth *aupā'amika*, *kshūyika* or *kshūyopā'amika*, eighth, ninth and tenth *aupā'amika* or *kshūyika*, eleventh *Aupā'amika* and the twelfth, thirteenth and fourteenth *kshūyika* The commentary explains these at great length

The eighth and last *prarupanā* is *Alpa-bahutva* which, as its very name signifies, shows, in 382 Sūtras, the comparative numerical strength of the *Guṇasthānas* and the *Marganāsthānas* It is here shown that the number of souls in the 8th, 9th and 10th *Aupā'amika* *Guṇasthānas* as well as in the 11th is the least of all and mutually equal In the same three *Kshapaka* *Guṇasthānas* and in the 12th, 13th and 14th, they are several times larger and mutually equal This is the numerical order from the point of view of entries (*praveśa*) into the *Guṇasthānas* From the point of view of the aggregates (*samcaya*) the souls at the 13th stage are several times larger than the last class, and similarly larger at each successive stage are those at the 7th and the 6th stage respectively Innumerable larger than the last at each successive stage are those at the 5th and the 2nd stage and the last is exceeded several times by those at the 3rd stage At the 4th stage they are innumerable larger and at the 1st infinitely larger successively The whole discussion shows how the exact sciences like mathematics have been harnessed into the service of the most speculative philosophy

The results of these *pracupānās* we have tabulated in charts, as before, and added them to the Hindi introduction



धवलाका गणितशास्त्र

(पुस्तक ४ में प्रकाशित डा. अग्रवेश नारायण सिंह,
लखनऊ यूनीवर्सिटी, के लेखका अनुवाद)

यह विदित हो चुका है कि भारतवर्षमें गणित- अरूगणित, बीजगणित, क्षेत्रमिति आदिका अध्ययन अति प्राचीन कालमें किया जाता था । इस बातका भी अच्छी तरह पता चल गया है कि प्राचीन भारतवर्षीय गणितज्ञोंने गणितशास्त्रमें ठोस और सारगर्भित उन्नति की थी । यथार्थत अर्वाचीन अरूगणित और बीजगणितके जन्मदाता वे ही थे । हमें यह सोचनेका अभ्यास होगया है कि भारतवर्षकी विशाल जनसंख्यामेंसे केवल हिंदुओंने ही गणितका अध्ययन किया, और उन्हें ही इस विषयमें रुचि थी, और भारतवर्षीय जनसंख्याके अन्य भागों, जैसे कि बौद्ध व जैनोंने, उसपर विशेष ध्यान नहीं दिया । विद्वानोंके इस मतका कारण यह है कि अभी अभी तक बौद्ध वा जैन गणितज्ञोंद्वारा लिखे गये कोई गणितशास्त्रके ग्रन्थ ज्ञात नहीं हुए थे । किन्तु जैनियोंके आगमग्रन्थोंके अध्ययनसे प्रकट होता है कि गणितशास्त्रका जैनियोंमें भी खूब आदर था । यथार्थत गणित और ज्योतिष विद्याका ज्ञान जैन मुनियोंकी एक मुख्य साधना समझी जाती थी^१ ।

अब हमें यह विदित हो चुका है कि जैनियोंकी गणितशास्त्रकी एक शाखा दक्षिण भारतमें थी, और इस शाखाका कमसे कम एक ग्रन्थ, महावीराचार्य कृत गणितसारसंग्रह, उस समयकी अन्य उपलब्ध कृतियोंकी अपेक्षा अनेक बातोंमें श्रेष्ठ है । महावीराचार्यकी रचना सन् ८५० की है । उनका यह ग्रन्थ सामान्य रूपरेखामें ब्रह्मगुप्त, श्रीधराचार्य, भास्कर और अन्य हिन्दू गणितज्ञोंके ग्रन्थोंके समान होते हुए भी विशेष बातोंमें उनसे पूर्णतः भिन्न है । उदाहरणार्थ— गणितसारसंग्रहके प्रश्न (problems) प्रायः सभी दूसरे ग्रन्थोंके प्रश्नोंसे भिन्न हैं ।

वर्तमानकालमें उपलब्ध गणितशास्त्रसम्बन्धी साहित्यके आधारपरसे हम यह कह सकते हैं कि गणितशास्त्रकी महत्वपूर्ण शाखाएँ पाटलिपुत्र (पटना), उज्जैन, मैसूर, मलबार और समवत बनारस, तक्षशिला और कुण्ड अथ स्थानोंमें उन्नतिशील थीं । जब तक आगे प्रमाण प्राप्त न हों, तब तक यह निश्चयपूर्ण नहीं कहा जा सकता कि इन शाखाओंमें परस्पर क्या

^१ देखो—मगवती सूत्र, अमर्यदेव सरिनी टीका सहित, ग्नेसाणानी आगमोद्येय समिति द्वारा प्रकाशित, १९१९, सूत्र १० । जैकोबी कृत उच्चारण सूत्रमा अग्नेजी अनुवाद, ऑक्सफोर्ड १८९५, अयाय ७, ८, ३८

सवध था। फिर भी हमें पता चलता है कि भिन्न भिन्न शाखाओंमें आये हुए प्राचीनी सामान्य दृष्टरेखा तो एकही है, किन्तु विस्तारमयरी विशेष बातोंमें उनमें विभिन्नता है। इससे पता चलता है कि भिन्न भिन्न शाखाओंमें आदान प्रदानका समय था, छात्रगण और विद्वान एक शाखासे दूसरी शाखामें गमन करते थे, और एक स्थानमें किये गये आविष्कार शीघ्र ही भारतके एक कोनेसे दूसरे कोने तक विज्ञापित कर दिये जाते थे।

प्रतात होता है कि बौद्ध धर्म और जैन धर्मके प्रचारने विभिन्न विज्ञानों और कलाओंके अध्ययनको बतेजना दी। सामान्यतः सभी भारतवर्षीय धार्मिक साहित्य, और मुख्यतया बौद्ध व जैनसाहित्य, बड़ी बड़ी सभ्याओंके उल्लेखोंसे परिपूर्ण है। बड़ी सभ्याओंके प्रयोगने उन सभ्याओंको लिखनेके लिये सरल संकेतोंकी आवश्यकता उत्पन्न की, और उसीसे दशमिक क्रम (The place value system of notation) का आविष्कार हुआ। धन यह बात निस्संशयरूपसे सिद्ध हो चुकी है कि दशमिक क्रमका आविष्कार भारतमें ईसवी सन्के प्रारम्भ कालके लगभग हुआ था, जब कि बौद्धधर्म और जैनधर्म अपनी चरमोन्नति पर थे। यह नया अक्षर क्रम बड़ा शक्तिशाली सिद्ध हुआ, और इसने गणितशास्त्रको गतिप्रदान कर सुलभपूर्वमें प्राप्त वेदकालीन प्राथमिक गणितको विकासकी ओर बढाया, और बगहमिहिरके प्रथममें प्राप्त पाँचवीं शताब्दीके सुस्पष्ट गणितशास्त्रमें परिष्कृत कर दिया।

एक बड़ी महत्वपूर्ण बात, जो गणितके इतिहासकारोंकी दृष्टिमें नहीं आई, यह है कि पद्यविद्विद्गुओं, बौद्धों और जैनियोंका सामान्य साहित्य ईसासे पूर्व तीसरी व चौथी शताब्दीसे लगाकर मध्यकालीन समय तक अविच्छिन्न है, क्योंकि प्रत्येक शताब्दीके मध्य उपलब्ध हैं, तथापि गणितशास्त्रसंबंधी साहित्यमें विच्छेद है। यथार्थतः सन् ४९९ में रचित आर्यभटीयसे पूर्वकी गणितशास्त्रसंबंधी रचना कदाचित् ही कोई हो। अपवादमें वंशाब्धि प्रति (Bakhsali-Manuscript) नामक वह अपूर्ण हस्तलिखित ग्रन्थ ही है जो समस्त दूसरी या तीसरी शताब्दीकी रचना है। किन्तु इसकी उपलब्ध हस्तलिखित प्रतिसे हमें उस कालके गणितज्ञानकी स्थितिके विषयमें कोई निरतुत वृत्तांत नहीं मिलता, क्योंकि यथार्थमें यह आर्यभट्ट, प्रथमगुप्त अथवा श्रीधर आदिके ग्रंथोंके सदृश गणितशास्त्रकी पुस्तक नहीं है। वह कुछ चुने हुए गणितसम्बन्धी प्रश्नोंकी व्याख्या अथवा टिप्पणीसी है। इस हस्तलिखित प्रतिसे हम केवल इतना ही अनुमान कर सकते हैं कि दशमिकक्रम और तत्सम्बन्धी अक्षरगणितकी मूल प्रक्रियायें उस समय अच्छी तरह विदित थीं, और पाँचके गणितज्ञोंद्वारा उल्लिखित कुछ प्रकारके गणितप्रश्न (problems) भी ज्ञात थे।

यह पूर्व ही बनाया जा चुका है कि आर्यभटीयमें प्राप्त गणितशास्त्र विशेष उन्नत है, क्योंकि उसमें हमको निम्न लिखित नियमोंका उल्लेख मिलता है— वर्तमानकालीन प्राथमिक

अंकगणितके सब भाग जिनमें अनुपात, त्रिनिमय और व्याजके नियम भी सम्मिलित हैं, तथा सरल और वर्ग समीकरण, और सरल कुट्टक (indeterminate equations) की प्रक्रिया तरुका बीजगणित भी है। अत्र प्रश्न यह उपस्थित होता है कि क्या आर्यभटने अपना गणितज्ञान विदेशसे ग्रहण किया, अथवा जो भी कुछ सामग्री आर्यभटीयमें अन्तर्हित है वह सब भारतवर्षकी ही मौलिक सम्पत्ति है ? आर्यभट लिखते हैं “ ब्रह्म, पृथ्वी, चन्द्र, बुध, शुक्र, सूर्य, मंगल, बृहस्पति, शनि और नक्षत्रोंको नमस्कार करके आर्यभट उस ज्ञानका वर्णन करता है जिसका कि यहा कुसुमपुरमें आदर है। ” इससे पता चलता है कि उसने विदेशसे कुछ ग्रहण नहीं किया। दूसरे देशोंके गणितशास्त्रके इतिहासके अध्ययनसे भी यही अनुमान होता है, क्योंकि आर्यभटीय गणित संसारके किसी भी देशके तरुकालीन गणितसे बहुत आगे बढ़ा हुआ था। विदेशसे ग्रहण करनेकी सामानाको इस प्रकार दूर कर देने पर प्रश्न उपस्थित होता है कि आर्यभटसे पूर्वकालीन गणितशास्त्रसंबंधी कोई ग्रंथ उपलब्ध क्यों नहीं है ? इस शंकाका निराकरण सरल है। दाशमिकरुमका आदिप्रकार ईसवी सन्के प्रारंभ कालके लगभग किसी समय हुआ था। इसे सामान्य प्रचारमें आनेके लिये चार पाँच शताब्दियाँ लग गई होंगी। दाशमिकरुमका प्रयोग करनेवाला आर्यभटका ग्रंथ ही सर्वप्रथम अच्छा ग्रंथ प्रतीत होता है। आर्यभटके ग्रंथसे पूर्वके ग्रंथोंमें या तो पुरानी सख्यापद्धतिका प्रयोग था, अथवा, वे समयकी कसौटी पर ठीक उतरने लायक अच्छे नहीं थे। गणितकी दृष्टिसे आर्यभटकी विस्तृत रसायनिका कारण, भरे मतानुसार, बहुतायतसे यही था कि उन्होंने ही सर्वप्रथम एक अच्छा ग्रंथ रचा, जिसमें दाशमिकरुमका प्रयोग किया गया था। आर्यभटके ही कारण पुरानी पुस्तकों अप्रचलित और पिछीन हो गईं। इससे साफ पता चल जाता है कि सन् ४९९ के पश्चात् लिखी हुईं तो हमें इतनी पुस्तकें मिलती हैं, किन्तु उसके पूर्वके कोई ग्रंथ उपलब्ध नहीं है।

इस प्रकार सन् ५०० ईसवीसे पूर्वके भारतीय गणितशास्त्रके विकास और उन्नतिका चित्रण करनेके लिये वास्तवमें कोई साधन हमारे पास नहीं है। ऐसी अवस्थामें आर्यभटसे पूर्वके भारतीय गणितज्ञानका बोध करानेवाले ग्रंथोंकी खोज करना एक विशेष महत्वपूर्ण कार्य हो जाता है। गणितशास्त्रसंबंधी ग्रंथोंके नष्ट हो जानेके कारण सन् ५०० के पूर्वकालीन भारतीय गणितशास्त्रके इतिहासका पुनर्निर्माण करनेके लिये हमें हिंदुओं, बौद्धों और

१ मन्हुशशिउधभृगुरविजययुरुमोगमगणानमस्त्वत् ।

आयमदस्त्वत् निगदति कुसुमपुरेऽभ्यर्चितं ज्ञानम् ॥ आर्यभटीय २, १

प्रश्नभूमिनक्षनगणानमस्त्वत् कुसुमपुरे कुसुमपुराख्येऽरिभन्देऽभ्यर्चितं ज्ञानं कुसुमपुरवासिभि पूजितं
ग्रहगणितज्ञानसाधनं तत्र तत्रार्थभटी निगदति । (परमेश्वरचार्यदत्त टीका)

सर्पत्र उपलब्ध होते हैं। हम यहां धरलामे अतर्गत अतरणोंसे ला गई सग्याओंको व्यक्त करनेकी कुछ पद्धतियोंको उपस्थित करते हैं—

(१) ७९९९९९९८ को ऐसा सग्या कहा है कि जिसके आदिमें ७, अन्तमें ८ और मध्यमें छठ वार ९ की पुनरावृत्ति है।

(२) ४६६६६६६६४ व्यक्त किया गया है— चोसठ, छठ सौ, ष्ठासठ हजार, अष्टासठ लाख, और चार करोड़।

(३) २२७९९४९८ व्यक्त किया गया है— दो करोड़, सत्ताइस, निगानेज हजार, चारसौ और अठाने।

इनमेंसे (१) में जिस पद्धतिका उपयोग किया है वह जैन साहित्यमें अन्य स्थानोंमें भी पायी जाती है, और गणितसारसमूहमें भी कुछ स्थानोंमें है। उससे दशभिन्नक्रमका सुपरिचय सिद्ध होता है। (२) में छोटी सख्याएँ पहले व्यक्त की गई हैं। यह सस्कृत साहित्यमें प्रचलित साधारण रीतिसे अनुसार नहीं है। उसी प्रकार यहां संकेत क्रम सौ है, न कि दश जो कि साधारणतः सस्कृत साहित्यमें पाया जाता है। किंतु पाळा और प्राकृतमें सौ का क्रम ही प्रायः उपयोगमें लाया गया है। (३) में सबसे बड़ी सग्या पहले व्यक्त की गई है। अवतरण (२) और (३) स्पष्टतः भिन्न स्थानोंसे लिये गये हैं।

बड़ी सख्यायें— यह सुविदित है कि जैन साहित्यमें बड़ी सग्यायें बहुतायतसे उपयोगमें आई हैं। धरलामें भा अनेक तरहकी जीवराशियों (द्रव्यप्रमाण) आदि पर तर्क नितर्क है। निश्चिनरूपसे लिखी गई संससे बडा सग्या पर्याप्त मनुष्योंकी है। यह सग्या धरलामें दो के छठे वर्ग और दो के सानने वर्गके बीचकी, अथवा और भी निश्चिन, कोटि कोटि-कोटि और कोटि-कोटि-कोटि-कोटिके बीचकी कही गई है। याने—

२२^६ और २२^७ के बीचकी। अथवा, और अधिक नियत (१,००,००,०००)^३ और (१,००,००,०००)^४ के बीचकी। अथवा, संस्था निश्चिन- २२^५ × २२^६ । इन जीवोंकी सग्या अन्य मतानुसार ७९२२८१६२५१४२६४३३७^५ ९९३५४३९५^६ ०३३६ है।

१ घ भाग ३, पृष्ठ १८, गाय ५१ । देवो गाम्मसार, जिरांड, पृष्ठ ६३३

२ घ भाग ३, पृ ९९, गाय ५२

३ घ भाग ३ पृ १००, गाय ५३

४ देवो- गणितसारसमूह १, २७ और भी देवो- दश और सिद्धा त्रिभूगणितशास्त्रा इतिहास,

द १, छांदार १९३५ पृ १६

५ दश और सिद्ध, पृ १४

६ घ भाग ३, पृ २५३

७ गोम्मसार, जिरांड, (से डू जै सीरीस) पृ १०४

यह साया उन्तीस अरु ग्रहण करती है । इसमें भी उतने ही स्थान हैं जितने कि (१,००,००,०००)^५ में, परन्तु है वह उससे बड़ी सख्या । यह बात धवलाकारको ज्ञात है, और उन्होंने मनुष्यक्षेत्रका क्षेत्रफल निकालकर यह सिद्ध किया है कि उक्त सख्याके मनुष्य मनुष्यक्षेत्रमें नहीं समा सकते, और इसलिये उस सायाजाल मत ठीक नहीं है ।

मौलिक प्रक्रियायें

धवलामें जोड़, बाकी, गुणा, भाग, वर्गमूल और घनमूल निकालना, तथा सख्याओंका घात निकालना (The raising of numbers to given powers) आदि मौलिक प्रक्रियाओंका कथन उपलब्ध है । ये क्रियाएँ पूर्णांक और भिन्न, दोनोंके समर्थमें कही गई हैं । धवलामें वर्णित घातांकका सिद्धान्त (Theory of indices) दूसरे गणित ग्रंथोंसे कुछ कुछ भिन्न है । निश्चयत यह सिद्धान्त प्राथमिक है, और सन् ५०० से पूर्वका है । इस सिद्धान्तसंबन्धी मौलिक विचार निम्नलिखित प्रक्रियाओंके आधारपर प्रतीत होते हैं—(१) वर्ग, (२) घन, (३) उत्तरोत्तर वर्ग, (४) उत्तरोत्तर घन, (५) किसी सरयाका सरयातुल्य घात निकालना (The raising of numbers to their own power), (६) वर्गमूल, (७) घनमूल, (८) उत्तरोत्तर वर्गमूल, (९) उत्तरोत्तर घनमूल, आदि । अन्य सब घातांक इन्हीं रूपोंमें प्रगट किये गये हैं ।

उदाहरणार्थ— a^3 को a के घनका प्रथम वर्गमूल कहा है । a^4 को a का घनका घन कहा है । a^5 को a के घनका वर्ग, या वर्गका घन कहा है, इत्यादि^१ । उत्तरोत्तर वर्ग और घनमूल नीचे लिखे अनुसार हैं—

| | | | |
|----------------------------------|------|---------------------------|--|
| अ का प्रथम वर्ग | याने | $(a)^2 = a^2$ | |
| ,, द्वितीय वर्ग | ,, | $(a^2)^2 = a^4 = a^{2^2}$ | |
| ,, तृतीय वर्ग | ,, | a^{2^3} | |
| ,, न वर्ग | ,, | a^{2^n} | |
| उसी प्रकार— a का प्रथम वर्गमूल | याने | $a^{\frac{1}{2}}$ | |
| ,, द्वितीय ,, ,, | ,, | $a^{\frac{1}{2^2}}$ | |
| ,, तृतीय ,, ,, | ,, | $a^{\frac{1}{2^3}}$ | |
| ,, न ,, ,, | ,, | $a^{\frac{1}{2^n}}$ | |

वर्गित-सर्गित

परिभाषिक शब्द वर्गित सर्गितका प्रयोग किसी सत्याना सख्यातुल्य घात करनेके अर्थमें किया गया है ।

उदाहरणार्थ— n^n न का वर्गितसर्गितरूप है ।

इस सम्बन्धमें धबलामें निरलन देय 'फलाना और देना' नामक प्रक्रियाका उल्लेख आया है । किसी सत्याका 'निरलन' करना व फलाना अर्थात् उस सत्याको एफएफमें अलग करना है । जैसे, न के निरलनका अर्थ है—

१११११ न बार

'देय' का अर्थ है उपर्युक्त अंशोंमें प्रत्येक स्या पर एफकी जगह न (विवक्षित स्या) को रख देना । फिर उस निरलन देयसे उपलब्ध सख्याओंको परस्पर गुणा कर देनेसे उस सत्याका वर्गित सर्गित प्राप्त हो जाता है, और यही उस सख्याका प्रथम वर्गित सर्गित कहलाता है । जैसे, न का प्रथम वर्गित सर्गित n^n ।

निरलन देयकी एकबार पुन प्रक्रिया करनेसे, अर्थात् n^n को लेकर वही निधान फिर करनेसे, द्वितीय वर्गित सर्गित (n^n) ^{n^n} प्राप्त होता है । इसी निधानको पुन एकबार करनेसे

न का तृतीय वर्गित सर्गित $\left\{ (n^n)^{n^n} \right\} \left\{ (n^n)^{n^n} \right\}$ प्राप्त होता है ।

धबलामें उक्त प्रक्रियाका प्रयोग तीन बारसे अधिक अपेक्षित नहीं हुआ है । किन्तु, तृतीय वर्गितसर्गितका उल्लेख अनेकवार बड़ी सख्याओं व असंघात व अनन्तके समूहमें किया गया है । इस प्रक्रियासे कितनी बड़ी सख्या प्राप्त होती है, इसका ज्ञान इस बातसे हो सकता है कि २ का तृतीयबार वर्गितसर्गित रूप $2^{2^{2^{2^4}}}$ हो जाता है ।

घाताक सिद्धान्त

उपर्युक्त कथनसे स्पष्ट है कि धबलान्तर घाताक सिद्धान्तसे पूर्णत परिचित थे । जैसे—

$$(१) \quad \text{अ}^म \text{अ}^न = \text{अ}^{म+n}$$

$$(२) \quad \text{अ}^म / \text{अ}^न = \text{अ}^{म-n}$$

$$(३) \quad (\text{अ}^म)^न = \text{अ}^{मन}$$

१ धबला, भाग ३, पृ २० आदि



उक्त सिद्धान्तोंके प्रयोगसमधी उदाहरण धनलामें अनेक हैं । एक रोचक उदाहरण निम्न प्रकारका है— कहा गया है कि २ के ७ वें वर्गमें २ के छठों वर्गका भाग देनेसे २ का छठवा वर्ग लब्ध आता है । अर्थात्—

$$2^{2^7} / 2^{2^6} = 2^{2^6}$$

जब दाशमिकक्रमका ज्ञान नहीं हो पाया था तब द्विगुणक्रम और अर्धक्रमकी प्रक्रियाएँ (The operations of duplation and mediation) महत्त्वपूर्ण समझी जाती थीं । भारतीय गणितशास्त्रके प्रथममें इन प्रक्रियाओंका कोई चिह्न नहीं मिलता । किन्तु इन प्रक्रियाओंको मिश्र और यूनानके निवासी महत्त्वपूर्ण गिनते थे, और उनके अरुगणितसत्रधी प्रथममें वे तदनुसार स्वीकार की जाती थीं । धनलामें इन प्रक्रियाओंके चिह्न मिलते हैं । दो या अन्य सख्याओंके उत्तरोत्तर वर्गीकरणका विचार निश्चयत द्विगुणक्रमकी प्रक्रियासे ही परिष्कृतित हुआ होगा, और यह द्विगुणक्रमकी प्रक्रिया दाशमिकक्रमके प्रचारसे पूर्व भारतवर्षमें अवश्य प्रचलित रही होगी । उसी प्रकार अर्धक्रम पद्धतिका भी पता चलता है । धनलामें इस प्रक्रियाको हम २, ३, ४ आदि आधार-वाले लघुरिक्य सिद्धान्तमें साधारणीकृत पाते हैं ।

लघुरिक्य (Logarithm)

धनलामें निम्न पारिभाषिक शब्दोंके लक्षण पाये जाते हैं—

(१) अर्धच्छेद— जितनी बार एक सख्या उत्तरोत्तर आधी आधी की जा सकती है, उतने उस सख्याके अर्धच्छेद कहे जाते हैं । जैसे— २^म के अर्धच्छेद = म
अर्धच्छेदका सकेत अठे मान कर हम इसे आधुनिक पद्धतिमें इस प्रकार रख सकते हैं—
क का अठे (या अठे क) = लरि क । यहा लघुरिक्यका आधार २ है ।

(२) वर्गशलाका— किसी सख्याके अर्धच्छेदोंके अर्धच्छेद उस संख्याकी वर्ग-शलाका होती है । जैसे— क की वर्गशलाका = वश क = अठे अठे क = लरि लरि क । यहा लघुरिक्यका आधार २ है ।

(३) त्रिकच्छेद— जितने बार एक सख्या उत्तरोत्तर ३ से विभाजित की जाती है, उतने उस सख्याके त्रिकच्छेद होते हैं । जैसे— क के त्रिकच्छेद = त्रिछे क = लरि ३क । यहा लघुरिक्यका आधार ३ है ।

$$(घ) \text{ छरि छरि म} = \text{छरि व} + \text{छरि ररि व} \\ = \text{ररि अ} + \text{छरि छरि अ} + \text{अ छरि अ}$$

$$(ङ) \text{ छरि म} = \text{म छरि म}$$

$$(च) \text{ छरि छरि म} = \text{छरि म} + \text{छरि छरि म} । \text{ इत्यादि}$$

$$(८) \text{ छरि ररि म} < \text{व}^३$$

इस असाम्यतासे निम्न असाम्यता आती है—

$$\text{व छरि व} + \text{छरि व} + \text{छरि छरि व} < \text{व}^३$$

भिन्न— अकगणितमें भिन्नोक्तौ मौलिक प्रक्रियाओं, जिनका ज्ञान धवलाओं ग्रहण कर लिया गया है, के अतिरिक्त यद्वा हम भिन्नसंबन्धी अनेक ऐसे रोचक सूत्र पाते हैं जो अन्य किसी गणितसंबन्धी ज्ञात ग्रन्थमें नहीं मिलते । इनमें निम्न लिखित उल्लेखनीय हैं—

$$(१) \frac{\text{न}^३}{\text{न} \pm (\text{न} / \text{प})} = \text{न} \mp \frac{\text{न}}{\text{प} \pm १}$$

(२) मान लो कि किमी एक सख्या म में द, द' ऐसे दो भाजकों का भाग दिया गया और उनसे क्रमशः क और क' ये दो लघु (या भिन्न) उत्पन्न हुए । निम्न लिखित सूत्रमें म के $\frac{\text{म}}{\text{द} \pm \text{द}'}$ से भाग देने का परिणाम दिया गया है—

$$\frac{\text{म}}{\text{द} \pm \text{द}'} = \frac{\text{क}'}{(\text{क}'/\text{क}) \pm १}$$

$$\text{अथवा} = \frac{\text{क}}{१ + (\text{क}/\text{क}')}$$

$$(३) \text{ यदि } \frac{\text{म}}{\text{द}} = \text{क}, \text{ और } \frac{\text{म}'}{\text{द}'} = \text{क}', \text{ तो— } \text{द} (\text{क}-\text{क}') + \text{म}' = \text{म}$$

$$(४) \text{ यदि } \frac{\text{अ}}{\text{व}} = \text{क}, \text{ तो— } \frac{\text{अ}}{\text{व} + \frac{\text{व}}{\text{न}}} = \text{क} - \frac{\text{क}}{\text{न} + १},$$

१ धवला, भाग ३, पृ २४

३ धवला, भाग ३, पृ ४६

५ भाग ३, पृ ४६, गाथा २४

२ धवला, भाग ३, पृ ४६

४ धवला, भाग ३, पृ. ४७, गाथा २७.

लिये घातांक नियमोंका उपयोग सर्वसाधारण है । उदाहरणार्थ— विश्वभरके विद्युत्कणोंकी गणना करके उसकी व्यक्ति इस प्रकार की गई है— १३६२^{१५} तथा, रूढ़ सरयाओंके विकलन (distribution of primes) को सूचित करनेवाली स्केव्स संख्या (Skewes' number) निम्न प्रकारसे व्यक्त की जाती है—

$$१०१०१०३४$$

सरयाओंको व्यक्त करनेवाले उपर्युक्त समस्त प्रकारोंका उपयोग धनलमें किया गया है । इससे स्पष्ट है कि भारतवर्षमें उन प्रकारोंका ज्ञान सातवीं शताब्दिसे पूर्व ही सर्व साधारण हो गया था ।

अनन्तका वर्गीकरण

धवलमें अनन्तता वर्गीकरण पाया जाता है । साहित्यमें अनन्त शब्दका उपयोग अनेक अर्थोंमें हुआ है । जैन वर्गीकरणमें उन सबका ध्यान रखा गया है । जैन वर्गीकरणके अनुसार अनन्तके ग्यारह प्रकार हैं । जैसे—

(१) नामानन्त^१— नामका अनन्त । किसी भी वस्तु-समुदायके यथार्थत अनन्त होने या न होनेका विचार किये बिना ही केवल उसका बहुत्व प्रगट करनेके लिये साधारण बोलचालमें अथवा अवोध मनुष्यों द्वारा या उनके लिये, अथवा साहित्यमें, उसे अनन्त कह दिया जाता है । ऐसी अवस्थामें 'अनन्त' शब्दका अर्थ नाममात्रका अनन्त है । इसे ही नामानन्त कहते हैं ।

१ सरया १३६२^{१५} को दाशमिन् क्रमसे व्यक्त करने पर जो रूप प्रगट होता है वह इस प्रकार है—
१५,७४७,७७४,१३६,२७५,००२,५७७,६०५,६५३,९६१,१८१,५५५,४६८,०४४,७१७,९१४,५७२,
११६,७०९,३६६,२३१,४२५,०७६,१८५,६३१,०३१,२९६,

इससे देखा जा सकता है कि २ का तृतीय वगित सर्वांगित अयान् २५६^१ विश्वभरके समस्त विद्युत् कणोंकी सरयासे अधिक होता है । यदि हम समस्त विश्वको एक शतरजका फलक मान लें और विद्युत्कणोंको उसकी गोदियां, और दो विद्युत्कणोंकी किसी भी परिच्छिन्नी इस विश्वके खेलनी पुर 'चाल' मान लें, तो समस्त समस्त 'चालों' की संख्या—

$$१०१०१०३४ \text{ होगी ।}$$

यह संख्या रूढ़ संख्याओं (primes) के विभाग (distribution) से भी सबंध रखती है ।

२ जीवाजीवमिसद्वयस कारणित्वेक्या सण्णा अणता । धवला ३, पृ ११

भी आविष्कार किया। विशेषतः बेनियोंने डोरुमरके समस्त जीवों, काल प्रदेशों और क्षेत्र अथवा आकाश प्रदेशों आदिके प्रमाणका निरूपण करनेका प्रयत्न किया है।

बड़ी संख्यायें व्यक्त करनेके तीन प्रकार उपयोगमें लिये गये—

(१) दाशमिक क्रम (Place value notation)— जिसमें दशमानका उपयोग किया गया। इस संबंधमें यह बात उल्लेखनीय है कि दशमानके आधारपर $१०^{१४०}$ जैसी बड़ी संख्याओंको व्यक्त करनेवाले नाम कल्पित किये गये।

(२) घातांक नियम (Law of indices वर्ग सर्ग) का उपयोग बड़ी संख्याओंको सूक्ष्मतासे व्यक्त करनेके लिये किया गया। जैसे—

$$(अ) २^४ = १६$$

$$(ब) (२^४)^३ = १६^३ = ४०९६$$

$$(स) \{(२^४)^३\}^३ = ४०९६^३$$

जिसमें २ का तृतीय वर्गित सर्गित बड़ा है। यह संख्या समस्त विश्व (universe) के विद्युत्-कणों (protons and electrons) की संख्यासे बड़ी है।

(३) लघुविकथ (अर्धच्छेद) अथवा लघुविकथके लघुविकथ (अर्धच्छेदशालाका) का उपयोग बड़ी संख्याओंके विचारको छोटी संख्याओंके विचारमें उतारनेके लिये किया गया। जैसे—

$$(अ) लरि १, २^१ = २$$

$$(ब) लरि १, लरि २, १६^३ = ४०९६$$

$$(स) लरि १, लरि २, ४०९६^३ = ६८७९९३६३६$$

इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि आज भी संख्याओंको व्यक्त करनेके लिये हम उपर्युक्त तीन प्रकारोंमें किसी एक प्रकारका उपयोग करते हैं। दाशमिकक्रम समस्त देशोंकी साधारण सम्पत्ति बन गई है। जहाँ बड़ी संख्याओंका गणित करना पड़ता है, वहाँ लघुविकथोंका उपयोग किया जाता है। आधुनिक पदार्थविज्ञानमें परिमाणों (magnitudes) को व्यक्त करनेके

१ बड़ी संख्याओं तथा संख्या-नामोंके सर्वप्रथम विवर्य जाननेके लिये दक्षिण दूर और विद्वत् एतद् हिन्दू-
 इतिहास (History of Hindu Mathematics), भारतीय विद्यापीठ, लाहौर, द्वारा
 १९२०, भाग १, पृ. ११ आदि

गणनानन्त (Numerical infinite)

ध्वलामें यह स्पष्टरूपसे कह दिया गया है कि प्रकृतमें अनन्त संज्ञाका प्रयोग^१ गणनानन्तके अर्थमें ही किया गया है, अन्य अनन्तोंके अर्थमें नहीं, ' क्योंकि उन अन्य अनन्तोंके द्वारा प्रमाणका प्ररूपण नहीं पाया जाता ^२ । यह भी कहा गया है कि ' गणनानन्त बहुवर्णनीय और सुगम है ^३ । इस कथनका अर्थ समस्त यह है कि जैन-साहित्यमें अनन्त अर्थात् गणनानन्तकी परिभाषा अधिक विशदरूपसे भिन्न भिन्न लेखकों द्वारा कर दी गई थी, तथा उसका प्रयोग और ज्ञान भी सुप्रचलित हो गया था। किन्तु ध्वलामें अनन्तकी परिभाषा नहीं दी गई। तो भी अनन्तसम्बन्धी प्रक्रियाएँ सत्यात और असत्यात नामक प्रमाणोंके साथ साथ बहुत बार उल्लिखित हुई हैं ।

सत्यात, असत्यात और अनन्त प्रमाणोंका उपयोग जैन साहित्यमें प्राचीनतम ज्ञात-कालसे किया गया है । किन्तु प्रतीत होता है कि उनका अभिप्राय सदैव एकमात्र नहीं रहा । प्राचीनतर ग्रंथोंमें अनन्त सचमुच अनन्तके उसी अर्थमें प्रयुक्त हुआ था जिस अर्थमें हम अत्र उसकी परिभाषा करते हैं । किन्तु पीछेके ग्रंथोंमें उसका स्थान अनन्तानन्तने ले लिया । उदाहरणार्थ— नेमिचन्द्र द्वारा दशम शताब्दिमें लिखित ग्रंथ त्रिओक्तसारके अनुसार परीतानन्त, युक्तानन्त एवं जघन्य अनन्तानन्त एक बड़ी भारी सत्या है, किन्तु है वह सान्त । उस प्रथके अनुसार सत्याओंके तीन मुख्य भेद किये जा सकते हैं—

(१) सत्यात—जिसका सकेत हम स मान लेते हैं ।

(२) असत्यात—जिसका सकेत हम अ मान लेते हैं ।

(३) अनन्त—जिसका सकेत हम न मान लेते हैं ।

उपर्युक्त तीनों प्रकारके सत्या-प्रमाणोंके पुन तीन तीन प्रभेद किये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं—

(१) सत्यात— (गणनीय) सत्याओंके तीन भेद हैं—

(अ) जघन्य सत्यात (अत्यन्त सत्या) जिसका सकेत हम स ज मान लेते हैं ।

(व) मध्यम सत्यात (बीचकी सत्या) जिसका सकेत हम स म मान लेते हैं ।

१ ध्वला ३, पृ १६

२ ' यत्र सद्यश्चापि पमाणपरूपानि, तत्र तथारूपपादो ' । प ३, पृ १७

३ ' जैत गणनानन्तं च बहुवर्णनीयं सुगमं च ' । प ३, पृ १६

(२) **स्थापनानन्त**— आरोपित या आनुपगिक, या स्थापित अनन्त । यह भी यथार्थ अनन्त नहीं है । जहाँ किसी वस्तुमें अनन्तका आरोपण कर लिया जाता है वहाँ इस शब्दका प्रयोग किया जाता है ।

(३) **द्रव्यानन्त**— तत्काल उपयोगमें न आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस सज्ञाना उपयोग उन पुरुषोंके लिये किया जाता है जिन्हें अनन्त-निययक शास्त्रका ज्ञान है, जिसका वर्तमानमें उपयोग नहीं है ।

(४) **गणनानन्त**— सरयात्मक अनन्त । यह सज्ञा गणितशास्त्रमें प्रयुक्त वास्तविक अनन्तके अर्थमें आई है ।

(५) **अप्रदेशिकानन्त**— परिमाणहीन अर्थात् अत्यंत अल्प परमाणुरूप ।

(६) **एकानन्त**— एकदिशात्मक अनन्त । यह वह अनन्त है जो एक दिशामें सीधी एक रेखाके रूपसे देखनेमें प्रतीत होता है ।

(७) **दिग्गारानन्त**— द्विदिशारामक अथवा पृष्ठदेशीय अनन्त । इसका अर्थ है प्रतरात्मक अनन्ताकाश ।

(८) **उभयानन्त**— द्विदिशात्मक अनन्त । इसका उदाहरण है एक सीधी रेखा जो दोनों दिशाओंमें अनन्त तरु जाती है ।

(९) **सर्गानन्त**— आकाशात्मक अनन्त । इसका अर्थ है त्रिधा विस्तृत अनन्त, अर्थात् घनाकार अनन्ताकाश ।

(१०) **भाजनन्त**— तत्काल उपयोगमें आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस सज्ञाना उपयोग उस पुरुषके लिये किया जाता है जिसे अनन्त निययक शास्त्रका ज्ञान है और जिसका उस धोर उपयोग है ।

(११) **शाश्वतानन्त**— निरवस्थाधी या अनिनाशी अनन्त ।

पूर्वोक्त वर्गीकरण सब व्यापक है जिसमें उन सब अर्थोंका समावेश हो गया है जिन अर्थोंमें कि 'अनन्त' सज्ञाना प्रयोग जैन साहित्यमें हुआ है ।

१ जं ४
वा जे ५
२ जं ४

वा चित्तगमेषु वा पौच्छगमेषु वा
त्वगाणतं धाम । २, पृ ११ से १२

जबखो वा बराज्यो

गणनानन्त (Numerical infinite)

ध्वलामें यह स्पष्टरूपसे कह दिया गया है कि प्रकृतमें अनन्त संज्ञाका प्रयोग^१ गणना-नन्तके अर्थमें ही किया गया है, अन्य अनन्तोंके अर्थमें नहीं, 'क्योंकि उन अर्थ अनन्तोंके द्वारा प्रमाणका प्ररूपण नहीं पाया जाता'^२। यह भी कहा गया है कि 'गणनानन्त बहुवर्णनीय और सुगम है'^३। इस कथनका अर्थ समझत यह है कि जैन-साहित्यमें अनन्त अर्थात् गणना-नन्तकी परिभाषा अधिक विशदरूपसे भिन्न भिन्न लेखकों द्वारा कर दी गई थी, तथा उसका प्रयोग और ज्ञान भी सुप्रचलित हो गया था। किन्तु ध्वलामें अनन्तकी परिभाषा नहीं दी गई। तो भी अनन्तसम्बन्धी प्रक्रियाएँ सरयात और असरयात नामक प्रमाणोंके साथ साथ बहुत बार उल्लिखित हुई हैं।

सख्यात, असरयात और अनन्त प्रमाणोंका उपयोग जैन साहित्यमें प्राचीनतम ज्ञात-कालसे किया गया है। किन्तु प्रतीत होता है कि उनका अभिप्राय सदैव एकसा नहीं रहा। प्राचीनतर ग्रंथोंमें अनन्त सचमुच अनन्तके उसी अर्थमें प्रयुक्त हुआ था जिस अर्थमें हम अब उसकी परिभाषा करते हैं। किन्तु पीछेके ग्रंथोंमें उसका स्थान अनन्तानन्तने ले लिया। उदाहरणार्थ—नेमिचन्द्र द्वारा दशवीं शताब्दिमें लिखित ग्रंथ त्रिंशोक्तसारके अनुसार परीतानन्त, युक्तानन्त एव जघन्य अनन्तानन्त एक बड़ी भारी सख्या है, किन्तु है वह सान्त। उस ग्रंथके अनुसार सरयाओंके तीन मुख्य भेद किये जा सकते हैं—

(१) सरयात—जिसका संकेत हम स मान लेते हैं।

(२) असरयात—जिसका संकेत हम अ मान लेते हैं।

(३) अनन्त—जिसका संकेत हम न मान लेते हैं।

उपर्युक्त तीनों प्रकारके सरया-प्रमाणोंके पुन तीन तीन प्रभेद किये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं—

(१) सरयात— (गणनीय) सरयाओंके तीन भेद हैं—

(अ) जघन्य-सरयात (अल्पतम सरया) जिसका संकेत हम स ज मान लेते हैं।

(व) मध्यम सरयात (बीचकी सरया) जिसका संकेत हम स म मान लेते हैं।

१ ध्वला ३, पृ १६

२ ' न च सेसअणताणि पमाणपरूपणाणि, तत्थ तथादत्तणादो '। ध ३, पृ १७

३ ' जं त गणणाणत्त त बहुवर्णणीय सुगम च '। ध ३, पृ १६

(२) स्थापनानन्त^१— आरोपित या आनुपगमिक, या स्थापित अनन्त । यह भी यथार्थ अनन्त नहीं है । जहां किसी वस्तुमें अनन्तका आरोपण कर लिया जाता है वहां इस शब्दका प्रयोग किया जाता है ।

(३) द्रव्यानन्त^२— तत्काल उपयोगमें न आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस सज्ञाना उपयोग उन पुरुषोंके लिये किया जाता है जिन्हें अनन्त-विषयक शास्त्रका ज्ञान है, जिसका वर्तमानमें उपयोग नहीं है ।

(४) गणनानन्त— सरयात्मक अनन्त । यह सज्ञा गणितशास्त्रमें प्रयुक्त वास्तविक अनन्तके अर्थमें आई है ।

(५) अप्रदेशिकानन्त— परिमाणहीन अर्थात् अत्यन्त अन्य परमाणुरूप ।

(६) एकानन्त— एकदिशात्मक अनन्त । यह वह अनन्त है जो एक दिशामें सीधी एक रेखारूपसे देखनेमें प्रतीत होता है ।

(७) विस्तारानन्त— द्विविस्तारात्मक अथवा पृष्ठदेशीय अनन्त । इसका अर्थ है प्रतारामक अनन्तारकाश ।

(८) उभयानन्त— द्विदिशात्मक अनन्त । इसका उदाहरण है एक सीधी रेखा जो दोनों दिशाओंमें अनन्त तरु जाती है ।

(९) सर्गानन्त— आकाशात्मक अनन्त । इसका अर्थ है त्रिधा विस्तृत अनन्त, अर्थात् घनाकार अनन्तारकाश ।

(१०) भावानन्त— तत्काल उपयोगमें आने हुए ज्ञानका अपेक्षा अनन्त । इस सज्ञाना उपयोग उस पुरुषके लिये किया जाता है जिसे अनन्त विषयक शास्त्रका ज्ञान है और जिसका उस और उपयोग है ।

(११) द्वाथतानन्त— नित्यस्थायी या अविनाशी अनन्त ।

पूर्वोक्त वर्गीकरण खूब व्यापक है जिसमें उन सब अर्थोंका समावेश हो गया है जिन अर्थोंमें कि ' अनन्त ' सज्ञाना प्रयोग जैन साहित्यमें हुआ है ।

१ जं इ इवगाणतं नाम तं इवग्मेण वा चित्तग्मेण वा पौत्तग्मेण वा अन्वो वा बराढयो वा जे च अन्ये इवगाण इविदा कण्ठमिदि त सच्च इवगाणतं नाम । प ३, पृ ११ से १२

२ ज त दव्याणत त इविद् आगमदो षोआगमदो य । प ३, पृ १२

गणनानन्त (Numerical infinite)

ध्वलामें यह स्पष्टरूपसे कह दिया गया है कि प्रकृतमें अनन्त संज्ञाका प्रयोग^१ गणनान्तके अर्थमें ही किया गया है, अन्य अनन्तोंके अर्थमें नहीं, ' क्योंकि उन अन्य अनन्तोंके द्वारा प्रमाणका प्ररूपण नहीं पाया जाता^२ । यह भी कहा गया है कि ' गणनानन्त बहुवर्णनीय और सुगम है^३ । इस कथनका अर्थ समवत^४ यह है कि जैन-साहित्यमें अनन्त अर्थात् गणनान्तकी परिभाषा अधिक निशदरूपसे भिन्न भिन्न लेखकों द्वारा कर दी गई थी, तथा उसका प्रयोग और ज्ञान भी सुप्रचलित हो गया था। किन्तु ध्वलामें अनन्तकी परिभाषा नहीं दी गई। तो भी अनन्तसवधी प्रक्रियाएँ सरयात और असख्यात नामक प्रमाणोंके साथ साथ बहुत वार उल्लिखित हुई हैं ।

सख्यात, असख्यात और अनन्त प्रमाणोंका उपयोग जैन साहित्यमें प्राचीनतम ज्ञात-कालसे किया गया है । किन्तु प्रतीत होता है कि उनका अभिप्राय सदैव एकसा नहीं रहा । प्राचीनतर ग्रंथोंमें अनन्त सचमुच अनन्तके उसी अर्थमें प्रयुक्त हुआ था जिस अर्थमें हम अब उसकी परिभाषा करते हैं । किन्तु पीछेके ग्रंथोंमें उसका स्थान अनन्तानन्तने ले लिया । उदाहरणार्थ— नेमिचन्द्र द्वारा दशवीं शताब्दिमें लिखित ग्रंथ त्रिलोकसारके अनुसार परीतानन्त, युक्तानन्त एव जघन्य अनन्तानन्त एक बड़ी भारी सख्या है, किन्तु है वह सान्त । उस ग्रंथके अनुसार सरयाओंके तीन मुख्य भेद किये जा सकते हैं—

(१) सख्यात—जिसका संकेत हम स मान लेते हैं ।

(२) असख्यात—जिसका संकेत हम अ मान लेते हैं ।

(३) अनन्त—जिसका संकेत हम न मान लेते हैं ।

उपर्युक्त तीनों प्रकारके सरया-प्रमाणोंके पुन तीन तीन प्रभेद किये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं—

(१) सख्यात— (गणनीय) सरयाओंके तीन भेद हैं—

(अ) जघन्य-सरयात (अल्पतम सख्या) जिसका संकेत हम स ज मान लेते हैं ।

(व) मध्यम सरयात (बीचकी सख्या) जिसका संकेत हम स म मान लेते हैं ।

१ ध्वला ३, पृ १६

२ ' ण च सेसअणताणि पमाणपरूखणाणि, तत्थ तथादनणादो ' । ध ३, पृ १७

३ ' ज त गणणात्त त बहुवर्णनीय सुगम च ' । ध ३, पृ १६

(२) स्थापनानन्त^१— आरोपित या आनुपगिक, या स्थापित अनन्त । यह भी यथार्थ अनन्त नहीं है । जहाँ किसी वस्तुमें अनन्तका आरोपण कर लिया जाता है वहाँ इस शब्दका प्रयोग किया जाता है ।

(३) द्रव्यानन्त^१— तत्काल उपयोगमें न आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस संज्ञाका उपयोग उन पुरुषोंके लिये किया जाता है जिन्हें अनन्त-विषयक शास्त्रका ज्ञान है, जिसका वर्तमानमें उपयोग नहीं है ।

(४) गणनानन्त— सरयात्मक अनन्त । यह संज्ञा गणितशास्त्रमें प्रयुक्त वास्तविक अनन्तके अर्थमें आई है ।

(५) अप्रदेशिकानन्त— परिमाणहीन अर्थात् अत्यन्त अल्प परमाणुरूप ।

(६) एकानन्त— एकदिशात्मक अनन्त । यह वह अनन्त है जो एक दिशामें सीधी एक रेखारूपसे देखनेमें प्रतीत होता है ।

(७) विस्तारानन्त— द्विविस्तारात्मक अथवा पृष्ठदेशीय अनन्त । इसका अर्थ है प्रतारामक अनन्तज्ञास ।

(८) उभयानन्त— द्विदिशात्मक अनन्त । इसका उदाहरण है एक सीधी रेखा जो दोनों दिशाओंमें अनन्त तरु जाती है ।

(९) सर्गानन्त— आकाशात्मक अनन्त । इसका अर्थ है त्रिधा विस्तृत अनन्त, अर्थात् घनाकार अनन्तज्ञास ।

(१०) भागानन्त— तत्काल उपयोगमें आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस संज्ञाका उपयोग उस पुरुषके लिये किया जाता है जिसे अनन्त विषयक शास्त्रका ज्ञान है और जिसका उस ओर उपयोग है ।

(११) शाश्वतानन्त— नित्यस्थायी या अविनाशी अनन्त ।

पूर्वोक्त वर्गीकरण सब व्यापक है जिसमें उन सब अर्थोंका समावेश हो गया है जिन अर्थोंमें कि ' अनन्त ' संज्ञाका प्रयोग जैन साहित्यमें हुआ है ।

१ जे ३ दृवणाणउ नाम त अट्टग्ग्मेसु वा चित्तग्ग्मेसु वा पोत्तग्ग्मेसु वा अवलो वा बराडयो वा ज व अणे दृवणाणु इविदा अणत्तमिदि त सच्च दृवणाणउ नाम । घ ३, पृ ११ से १२

२ जे त दन्नाणत्त व इविह ध्यागमदो णोआगमदा य। घ ३, पृ १२

गणनानन्त (Numerical infinite)

धवलामें यह स्पष्टरूपसे कह दिया गया है कि प्रकृतमें अनन्त संज्ञाका प्रयोग^१ गणनानन्तके अर्थमें ही किया गया है, अन्य अनन्तोंके अर्थमें नहीं, ' क्योंकि उन अन्य अनन्तोंके द्वारा प्रमाणका प्ररूपण नहीं पाया जाता ' । यह भी कहा गया है कि ' गणनानन्त बहुवर्णनीय और सुगम है ' । इस कथनका अर्थ समस्त यह है कि जैन-साहित्यमें अनन्त अर्थात् गणनानन्तकी परिभाषा अधिक विशदरूपसे भिन्न भिन्न लेखकों द्वारा कर दी गई थी, तथा उसका प्रयोग और ज्ञान भी सुप्रचलित हो गया था। किन्तु धवलामें अनन्तकी परिभाषा नहीं दी गई । तो भी अनन्तसवधी प्रक्रियाएँ सरयात और असख्यात नामक प्रमाणोंके साथ साथ बहुत वार उल्लिखित हुई हैं ।

सख्यात, असख्यात और अनन्त प्रमाणोंका उपयोग जैन साहित्यमें प्राचीनतम ज्ञात-कालसे किया गया है । किन्तु प्रतीत होता है कि उनका अभिप्राय सदैव एकसा नहीं रहा । प्राचीनतर ग्रंथोंमें अनन्त सचमुच अनन्तके उसी अर्थमें प्रयुक्त हुआ था जिस अर्थमें हम अब उसकी परिभाषा करते हैं । किन्तु पीछेके ग्रंथोंमें उसका स्थान अनन्तानन्तने ले लिया । उदाहरणार्थ— नेमिचन्द्र द्वारा दशवीं शताब्दिमें लिखित ग्रंथ त्रिलोकसारके अनुसार परीतानन्त, युक्तानन्त एव जघन्य अनन्तानन्त एक उड़ी भारी सरया है, किन्तु है वह सान्त । उस ग्रंथके अनुसार सरयाओंके तीन मुख्य भेद किये जा सकते हैं—

(१) सख्यात—जिसका संकेत हम स मान लेते हैं ।

(२) असंख्यात—जिसका संकेत हम अ मान लेते हैं ।

(३) अनन्त—जिसका संकेत हम न मान लेते हैं ।

उपर्युक्त तीनों प्रकारके सरया-प्रमाणोंके पुन तीन तीन प्रभेद किये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं—

(१) सरयात— (गणनीय) सरयाओंके तीन भेद हैं—

(अ) जघन्य सरयात (अल्पतम सख्या) जिसका संकेत हम स ज मान लेते हैं ।

(ब) मध्यम सरयात (बीचकी सरया) जिसका संकेत हम स म मान लेते हैं ।

१ धवला ३, पृ १६

२ ' ग च सेसअणताणि पमाणपरवणाणि, तत्थ तथादमणादे ' । ध ३, पृ १७

३ ' ज त गणणाणत्त त बहुवर्णणीय सुगम च ' । ध ३, पृ १६

(२) स्थापनानन्त— आरोपित या आनुपगिक, या स्थापित अनन्त । यह भी यथार्थ अनन्त नहीं है । जहां किसी वस्तुमें अनन्तका आरोपण कर लिया जाता है वहां इस शब्दका प्रयोग किया जाता है ।

(३) द्रव्यानन्त— तत्काल उपयोगमें न आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस संज्ञाका उपयोग उन पुरुषोंके लिये किया जाता है जिन्हें अनन्त-विषयक शास्त्रका ज्ञान है, जिसका वर्तमानमें उपयोग नहीं है ।

(४) गणनानन्त— सख्यात्मक अनन्त । यह सज्ञा गणितशास्त्रमें प्रयुक्त वास्तविक अनन्तके अर्थमें आई है ।

(५) अप्रदेशिकानन्त— परिमाणहीन अर्थात् अत्यन्त अल्प परमाणुरूप ।

(६) एकानन्त— एकदिशात्मक अनन्त । यह वह अनन्त है जो एक दिशामें सीधी एक रेखारूपसे देखनेमें प्रतीत होता है ।

(७) निस्तारानन्त— द्विविस्तारत्मक अथवा पृष्ठदेशीय अनन्त । इसका अर्थ है प्रतयात्मक अनन्तताकाश ।

(८) उभयानन्त— द्विदिशात्मक अनन्त । इसका उदाहरण है एक सीधी रेखा जो दोनों दिशाओंमें अनन्त तक जाती है ।

(९) सर्गानन्त— आकाशशात्मक अनन्त । इसका अर्थ है त्रिधा-विस्तृत अनन्त, अर्थात् घनाकार अनन्तताकाश ।

(१०) मावानन्त— तत्काल उपयोगमें आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस संज्ञाका उपयोग उन पुरुषोंके लिये किया जाता है जिसे अनन्त विषयक शास्त्रका ज्ञान है और जिसका उस ओर उपयोग है ।

(११) द्वायतानन्त— नित्यस्थायी या अनिनाशी अनन्त ।

पूर्वोक्त वर्गीकरण सत्र व्यापक है जिसमें उन सब अर्थोंका समावेश हो गया है जिन अर्थोंमें कि 'अनन्त' संज्ञाका प्रयोग जैन साहित्यमें हुआ है ।

१ जे ४ दृव्यागतं नाम तं कट्टकम्भेसु वा चित्तकम्भेसु वा पाचकम्भेसु वा अक्षो वा भ्राज्यो वा जे ५ अथा दृव्यागतं द्विविधं अण्डनिदि तं सख्यं दृव्यागतं नाम । घ ३, पृ ११ से १२
२ जे ४ दृव्यागतं तं द्विविधं आगमदो गोजागमदो ५। घ ३, पृ १२

गणनानन्त (Numerical infinite)

ध्वलामें यह स्पष्टरूपसे कह दिया गया है कि प्रकृतमें अनन्त संज्ञाका प्रयोग^१ गणनानन्तके अर्थमें ही किया गया है, अन्य अनन्तोंके अर्थमें नहीं, ' क्योंकि उन अन्य अनन्तोंके द्वारा प्रमाणका प्ररूपण नहीं पाया जाता^२ । यह भी कहा गया है कि 'गणनानन्त बहुवर्णनीय और सुगम है'^३ । इस कथनका अर्थ समस्त यह है कि जैन-साहित्यमें अनन्त अर्थात् गणनानन्तकी परिभाषा अधिक विशदरूपसे भिन्न भिन्न लेखकों द्वारा कर दी गई थी, तथा उसका प्रयोग और ज्ञान भी सुप्रचलित हो गया था। किन्तु ध्वलामें अनन्तकी परिभाषा नहीं दी गई। तो भी अनन्तसबधी प्रक्रियाएँ सरयात और असख्यात नामक प्रमाणोंके साथ साथ बहुत बार उल्लिखित हुई हैं ।

सरयात, असख्यात और अनन्त प्रमाणोंका उपयोग जैन साहित्यमें प्राचीनतम ज्ञात-कालसे किया गया है । किन्तु प्रतीत होता है कि उनका अभिप्राय सदैव एकसा नहीं रहा । प्राचीनतर ग्रंथोंमें अनन्त सचमुच अनन्तके उसी अर्थमें प्रयुक्त हुआ था जिस अर्थमें हम अब उसकी परिभाषा करते हैं । किन्तु पीछेके ग्रंथोंमें उसका स्थान अनन्तानन्तने ले लिया । उदाहरणार्थ— नेमिचन्द्र द्वारा दशमी शताब्दिमें लिखित प्रथम त्रिखोरुसारके अनुसार परीतानन्त, युक्तान्त एव जघन्य अनन्तानन्त एक वटी मारी सरया है, किन्तु है वह सान्त । उस प्रथमके अनुसार सरयाओंके तीन मुख्य भेद किये जा सकते हैं—

(१) सरख्यात—जिसका सकेत ह्रम स मान लेते हैं ।

(२) असंख्यात—जिसका सकेत ह्रम अ मान लेते हैं ।

(३) अनन्त—जिसका सकेत ह्रम न मान लेते हैं ।

उपर्युक्त तीनों प्रकारके सरया-प्रमाणोंके पुन तीन तीन प्रभेद किये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं—

(१) सरयात— (गणनीय) सरयाओंके तीन भेद हैं—

(अ) जघन्य-सरयात (अल्पतम सरया) जिसका सकेत ह्रम स ज मान लेते है ।

(व) मध्यम सरयात (बीचकी सरया) जिसका सकेत ह्रम स म मान लेते हैं ।

१ ध्वला ३, पृ १६

२ ' य च सेषअणताणि प्रमाणपन्त्रणाणि, तस्य तधादसणादो ' । ध ३, पृ १७

३ ' ज त गणणात्त त बहुवर्णणीय सुगम च ' । ध ३, पृ १६

(१) उत्कृष्ट-असख्यात (सबसे बड़ी संख्या) जिसका संकेत हम स उ मान लेते हैं ।

(२) असख्यात (अगणनीय) के भी तीन भेद हैं—

(अ) परीत असख्यात (प्रथम श्रेणीका असख्यात) जिसका संकेत हम अ प मान लेते हैं ।

(ब) युक्त-असख्यात (बीचका असख्यात) जिसका संकेत हम अ यु मान लेते हैं ।

(स) असख्यातासख्यात (असख्यात-असख्यात) जिसका संकेत हम अ अ मान लेते हैं ।

पूर्वोक्त इन तीनों भेदोंमेंसे प्रत्येकके पुन तीन तीन प्रभेद होते हैं । जैसे, जघन्य (सबसे छोटा), मध्यम (बीचका) और उत्कृष्ट (सबसे बड़ा) । इस प्रकार असख्यातके भीतर निम्न संख्याएँ प्रविष्ट हो जाती हैं—

| | | |
|---|-------------------------|--------|
| १ | जघन्य-परीत-असख्यात | अ प ज |
| २ | मध्यम-परीत असख्यात | अ प म |
| ३ | उत्कृष्ट परीत असख्यात | अ प उ |
| १ | जघन्य युक्त-असख्यात | अ यु ज |
| २ | मध्यम-युक्त-असख्यात | अ यु म |
| ३ | उत्कृष्ट-युक्त-असख्यात | अ यु उ |
| १ | जघन्य-असख्यातासख्यात | अ अ ज |
| २ | मध्यम-असख्यातासख्यात | अ अ म |
| ३ | उत्कृष्ट-असख्यातासख्यात | अ अ उ |

(३) अनन्त— जिसका संकेत हम न मान चुके हैं । उसके तीन भेद हैं—

(अ) परीत-अनन्त (प्रथम श्रेणीका अनन्त) जिसका संकेत हम न प मान लेते हैं ।

(ब) युक्त-अनन्त (बीचका अनन्त) जिसका संकेत हम न यु मान लेते हैं ।

(स) अनन्तानन्त (नि सीम अनन्त) जिसका संकेत हम न न मान लेते हैं ।

असख्यातके समान इन तीनों भेदोंके भी प्रत्येकके पुन तीन तीन प्रभेद होते हैं । जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट । अतः अनन्तके भेदोंमें हमें निम्न संख्याएँ प्राप्त होती हैं—

| | | |
|---|--------------------|-------|
| १ | जघन्य-परीतानन्त | न प ज |
| २ | मध्यम-परीतानन्त | न प म |
| ३ | उत्कृष्ट-परीतानन्त | न प उ |

| | | | | |
|---|---------------------|---|------|--------|
| १ | जघन्य युक्तानन्त | . | ... | न यु ज |
| २ | मध्यम-युक्तानन्त | | | न यु म |
| ३ | उत्कृष्ट-युक्तानन्त | | | न यु उ |
| १ | जघन्य-अनन्तानन्त | | | न न ज |
| २ | मध्यम अनन्तानन्त | | .. | न न म |
| ३ | उत्कृष्ट-अनन्तानन्त | | | न न उ |

संख्यातका संख्यात्मक परिमाण— सभी जैन प्रयोगे अनुसार जघन्य सरयात २ है, क्योंकि, उन प्रयोगे मतसे भिन्नताकी बोधक यहाँ सगसे छोटी सरया है। एकत्वको सरयातमें सम्मिलित नहीं किया। मध्यम सरयातमें २ ओर उत्कृष्ट सख्यातके बीचकी समस्त गणना आ जाती है, तथा उत्कृष्ट सरयात जघन्य परीतासरयातसे पूर्ववर्ती अर्थात् एक कम गणनाका नाम है। अर्थात् स उ = अ प ज - १। अ प ज को त्रिलोकसारमें निम्न प्रकारसे समझाया है—

जैन भूगोलानुसार यह त्रिभू, अर्थात् मध्यलोक, भूमि और जलके क्रमवार बलयोंसे बना हुआ है। उनकी सीमाएँ उत्तरोत्तर बढ़ती हुई त्रियाओंवाले समकेन्द्रीय वृत्तरूप हैं। किसी भी भूमि या जलमय एक बलयका विस्तार उससे पूर्ववर्ती बलयके विस्तारसे दुगुना है। केन्द्र-वर्ती वृत्त (सगसे प्रथम बीचका वृत्त) एक लाख (१००,०००) योजन व्यासवाला है, और जम्बूद्वीप कहलाता है।



अत्र बेलनके आकारके चार ऐसे गड्डोंकी कल्पना कीजिये जो प्रत्येक एक लाख योजन व्यासवाले और एक हजार योजन गहरे हों। इन्हें अ_१, व_१, स_१, और ङ_१ कहिये। अब कल्पना कीजिये कि अ_१ सरसोंके बीजोंसे पूरा भर दिया गया और फिर भी उस पर और सरसों डाले गये जब तक कि उसकी शिला शुकुके आकारकी हो जाय, जिसमें सगसे ऊपर एक सरसोंका बीज रहे। इस प्रक्रियाके लिये जितने सरसोंके बीजोंकी आवश्यकता होगी उनकी सरया इस प्रकार है—

बेलनान्तर गड्डेके लिये— $1\ 2\ 3\ 4\ 5\ 6\ 7\ 8\ 9\ 10\ 11$ । ऊपर शकान्तर शिखाके लिये— $1\ 2\ 3\ 4\ 5\ 6\ 7\ 8\ 9\ 10\ 11\ 12\ 13\ 14\ 15\ 16\ 17\ 18\ 19\ 20\ 21\ 22\ 23\ 24\ 25\ 26\ 27\ 28\ 29\ 30\ 31\ 32\ 33\ 34\ 35\ 36\ 37\ 38\ 39\ 40\ 41\ 42\ 43\ 44\ 45\ 46\ 47\ 48\ 49\ 50\ 51\ 52\ 53\ 54\ 55\ 56\ 57\ 58\ 59\ 60\ 61\ 62\ 63\ 64\ 65\ 66\ 67\ 68\ 69\ 70\ 71\ 72\ 73\ 74\ 75\ 76\ 77\ 78\ 79\ 80\ 81\ 82\ 83\ 84\ 85\ 86\ 87\ 88\ 89\ 90\ 91\ 92\ 93\ 94\ 95\ 96\ 97\ 98\ 99\ 100$ । सपूर्ण सरसोंका प्रमाण— $1\ 2\ 3\ 4\ 5\ 6\ 7\ 8\ 9\ 10\ 11\ 12\ 13\ 14\ 15\ 16\ 17\ 18\ 19\ 20\ 21\ 22\ 23\ 24\ 25\ 26\ 27\ 28\ 29\ 30\ 31\ 32\ 33\ 34\ 35\ 36\ 37\ 38\ 39\ 40\ 41\ 42\ 43\ 44\ 45\ 46\ 47\ 48\ 49\ 50\ 51\ 52\ 53\ 54\ 55\ 56\ 57\ 58\ 59\ 60\ 61\ 62\ 63\ 64\ 65\ 66\ 67\ 68\ 69\ 70\ 71\ 72\ 73\ 74\ 75\ 76\ 77\ 78\ 79\ 80\ 81\ 82\ 83\ 84\ 85\ 86\ 87\ 88\ 89\ 90\ 91\ 92\ 93\ 94\ 95\ 96\ 97\ 98\ 99\ 100$

१ देखा त्रिलेखार, गाथा १५.

इस पूर्वोक्त प्रक्रियाको हम बेलनान्तर गड्डेका सरसोंके बीजोंसे 'शिखायुक्त पूरण' कहेंगे। अब उपर्युक्त शिखायुक्त पूरित गड्डेमेंसे उन बाजोंको निकालिये और जम्बूद्वीपसे प्रारम्भ करने प्रत्येक द्वीप और समुद्रके बलयोंमें एक एक बीज डालिये। चूँकि बीजोंकी सरसों सम है, इसलिये अन्तिम बीज समुद्रबलय पर पड़ेगा। अब एक बीज व_१ नामक गड्डेमें डाल दीजिये, यह बतलानेके लिये कि उक्त प्रक्रिया एक बार होगई।

अब एक ऐसे बेलनका कल्पना कीजिये जिसका व्यास उस समुद्रकी सीमापर्यन्त व्यासके बराबर हो जिसमें वह अन्तिम सरसोंका बीज डाला हो। इस बेलनको अ_२ कहिये। अब इस अ_२ को भी पूर्वोक्त प्रकार सरसोंसे शिखायुक्त भर देनेकी कल्पना कीजिये। फिर इन बीजोंको भी पूर्व प्राप्त अन्तिम समुद्रपर्यन्त आगेके द्वीप समुद्ररूप बलयोंमें पूर्वोक्त प्रकारसे क्रमशः एक एक बीज डालिये। इस द्वितीय बार प्रक्रियामें भी अन्तिम सरसप किसी समुद्रबलय पर ही पड़ेगा। अब व_१ में एक और सरसप डाल दो, यह बतलानेके लिये कि उक्त प्रक्रिया द्वितीय बार हो चुकी।

अब फिर एक ऐसे बेलनकी कल्पना कीजिये जिसका व्यास उसी अन्तिम प्राप्त समुद्रबलयके व्यासके बराबर हो तथा जो एक हजार योजन गहरा हो। इस बेलनको अ_३ कहिये। अब व_१ को भी सरसोंसे शिखायुक्त भर देना चाहिये और फिर उन बीजोंको आगेके द्वीपसमुद्रोंमें पूर्वोक्त प्रकारसे एक एक डालना चाहिये। अन्तमें एक और सरसप व_१ में डाल देना चाहिये।

कल्पना कीजिये कि यही प्रक्रिया तब तक चालू रखी गई जब तक कि व_१ शिखायुक्त न भर जाय। इस प्रक्रियामें हमें उत्तरोत्तर बढ़ते हुए आकारके बेलन लेना पड़गे—

अ_१, अ_२, अ_३,

मान लीजिये कि व_१ के शिखायुक्त भरने पर अन्तिम बेलन अ' प्राप्त हुआ।

अब अ' को प्रथम शिखायुक्त भर गइया मान कर उस जलबलयके बादसे जिसमें पिछला क्रियाके अनुसार अन्तिम बीज डाला गया था, प्रारम्भ करने प्रत्येक जल और स्थलके बलयोंमें एक एक बीज छोड़ने की क्रियाको आगे बढ़ाइये। तब स_१ में एक बीज छोड़िये। इस प्रक्रियाको तब तक चालू रखिये जब तक कि स_१ शिखायुक्त न भर जाय। मान लीजिये कि इस प्रक्रियासे हमें अन्तिम बेलन अ'' प्राप्त हुआ। तब फिर इस अ'' से वही प्रक्रिया प्रारम्भ कर दीजिये और उसे व_१ के शिखायुक्त भर जाने तक चालू रखिये। मान लीजिये कि इस प्रक्रियाके अन्तमें हमें अ''' प्राप्त हुआ। अतएव जघनपर्यन्त प्रस्तानना

अपज का प्रमाण अ^३ में समानेवाले सरसप बीजोंकी सरयाके बराबर होगा और उक्कट-सरयात = स उ = अ प ज - १

पर्यालोचन— सरयाओंको तीन भेदोंमें विभक्त करनेका मुख्य अभिप्राय यह प्रतीत होता है— सख्यात अर्थात् गणना कहा तरु की जा सकती है यह भाषामें सख्या नामोंकी उपलब्धि अथवा सरयाव्यक्तिके अन्य उपायोंकी प्राप्ति पर अवलम्बित है। अतएव भाषामें गणनाका क्षेत्र बढ़ानेके लिये भारतवर्षमें प्रधानत दश मानके आधारपर सख्या-नामोंकी एक लम्बी श्रेणी बनाई गई। हिन्दू १०^{१०} तरुकी गणनाको भाषामें व्यक्त कर सकनेवाले अठारह नामोंसे सतुष्ट होगये। १०^{१०} से ऊपरकी सख्याए उन्हीं नामोंकी पुनरावृत्ति द्वारा व्यक्त की जा सकती थीं, जैसा कि अज हम दश दश-लाख (million million) आदि कह कर करते हैं। किन्तु इस बातका अनुभव होगया कि यह पुनरावृत्ति भारभूत (cumbersome) है। बौद्धों और जैनियोंको अपने दर्शन और निश्चरचना सबधी निचारोंके लिये १०^{१०} से बहुत बड़ी सख्याओंकी आवश्यकता पडी। अतएव उन्होंने और बड़ी बड़ी सख्याओंके नाम कल्पित कर लिये। जैनियोंके सख्यानामोंका तो अब हमें पता नहीं है^१, किन्तु बौद्धोंद्वारा कल्पित सरया-

१ जिनियोंके प्राचीन साहित्यमें दीर्घ काल प्रमाणोंके सूचक नामोंकी तालिका पाई जाती है जो एक वर्ष प्रमाणसे प्रारम्भ होती है यह नामावली इस प्रकार है—

| | | | | | | |
|-------------|---|-----------------|---|-----------------|---|---------------------|
| १ वर्ष | | १७ अट्ठांग | = | ८४ युदित | | |
| २ युग | = | ५ वर्ष | | १८ अट्ट | = | ,, लाख अट्ठांग |
| ३ पूर्वांग | = | ८४ लाख वर्ष | | १९ अममांग | = | ,, अट्ट |
| ४ पूव | = | ,, लाख पूर्वांग | | २० अमम | = | ,, लाख अममांग |
| ५ नयुतांग | = | ,, पूर्वांग | | २१ हाहांग | = | ,, अमम |
| ६ नयुत | = | ,, लाख नयुतांग | | २२ हाहा | = | ,, लाख हाहांग |
| ७ कुमुदांग | = | ,, नयुत | | २३ ह्हांग | = | ,, हाहा |
| ८ कुमुद | = | ,, लाख कुमुदांग | | २४ ह्हु | = | ,, लाख ह्हांग |
| ९ पभांग | = | ,, कुमुद | | २५ लतांग | = | ,, ह्हु |
| १० पभ | = | ,, लाख पभांग | | २६ लता | = | ,, लाख लतांग |
| ११ नलिनांग | = | ,, पभ | | २७ महालतांग | = | ,, लता |
| १२ नलिन | = | ,, लाख नलिनांग | | २८ महालता | = | ,, लाख महालतांग |
| १३ कमलांग | = | ,, नलिन | | २९ श्रीम्व | = | ,, लाख महालता |
| १४ कमल | = | ,, लाख कमलांग | | ३० हस्तप्रहेलित | = | ,, लाख श्रीम्व |
| १५ युदितांग | = | ,, कमल | | ३१ अचलप्र | = | ,, लाख हस्तप्रहेलित |
| १६ युदित | = | ,, लाख युदितांग | | | | |

यह नामावली त्रिलोमप्रति (४-६ वीं शताब्दि) हविषपुराण (८ वीं शताब्दि) और राजवार्तिक (८ वीं शताब्दि) में कुछ नामभेदोंके साथ पाई जाती है। त्रिलोमप्रतिने एक उल्लेखानुसार अचलप्रमा प्रमाण ८४ को ३१ बार परस्पर गुणा करनेसे प्राप्त होता है—अचलप्र = ८४^{३१} तथा यह सख्या ९० अरु प्रमाण होगी। किन्तु लघुविक्रय तालिका (Logarithmic tables) के अनुसार ८४^{३१} सरया ६० अरु प्रमाण ही प्राप्त होती है। देखिये धनलाका भाग ३, प्रस्तावना व फुट नोट, पृ ३४ —सम्पादक

नामोंकी निम्न श्रेणिका चित्कार्यक है—

| | | | |
|----------------|-----------------------------|------------|------------------------------|
| १ एक | = १ | १५ अम्बुद | = (१०,०००,०००) ^६ |
| २ दस | = १० | १६ निम्बुद | = (१०,०००,०००) ^६ |
| ३ सत | = १०० | १७ अहह | = (१०,०००,०००) ^{१०} |
| ४ सहस्र | = १,००० | १८ अत्रय | = (१०,०००,०००) ^{१०} |
| ५ दससहस्र | = १०,००० | १९ अट्ट | = (१०,०००,०००) ^{११} |
| ६ सतसहस्र | = १००,००० | २० सोगधिरु | = (१०,०००,०००) ^{११} |
| ७ दससतसहस्र | = १,०००,००० | २१ उण्ड | = (१०,०००,०००) ^{१५} |
| ८ कोटि | = १०,०००,००० | २२ कुमुद | = (१०,०००,०००) ^{१५} |
| ९ पकोटि | = (१०,०००,०००) ^१ | २३ पुटरीरु | = (१०,०००,०००) ^{१५} |
| १० कौटिप्यकोटि | = (१०,०००,०००) ^१ | २४ पट्टम | = (१०,०००,०००) ^{१५} |
| ११ नड्डत | = (१०,०००,०००) ^१ | २५ कयान | = (१०,०००,०००) ^{१५} |
| १२ निनड्डत | = (१०,०००,०००) ^१ | २६ महाकयान | = (१०,०००,०००) ^१ |
| १३ अखोमिनी | = (१०,०००,०००) ^१ | २७ असरपेय | = (१०,०००,०००) ^{१५} |
| १४ मिट्टु | = (१०,०००,०००) ^१ | | |

यहां देखा जाता है कि श्रेणिकामें अतिथ नाम असरपेय है। इसका अभिप्राय यही प्रतीत होता है कि असरपेयके ऊपरकी सरपाए गणनानीत हैं।

असरपेयका परिमाण समय समय पर अत्यन्त बदलता रहा होगा। नेमिचंद्रका असह्यत उपर्युक्त असह्येयमे, जिसका प्रमाण १०^{१५} होता है, निश्चयत भिन्न है।

असह्यत— ऊपर कहा ही जा चुका है कि असह्यतके तीन मुख्य भेद हैं और उनमेंसे भी प्रत्येकके तीन तीन भेद हैं। ऊपर निर्दिष्ट सन्नेतोंके प्रयोग करीमे हमें नेमिचंद्रके अनुसार निम्न प्रमाण प्राप्त होते हैं—

अध्व-परीत-असह्यत (अ प ज) = स उ + १

मध्यम-परीत-असह्यत (अ प म) है > अ प ज, किन्तु < अ प उ

उत्कृष्ट परीत असह्यत (अ प उ) = अ यु ज - १

जहां—

अध्व-युक्त-असह्यत (अ यु ज) = (अ प ज) अ प ज

मध्यम-युक्त-असह्यत (अ यु म) है > अ यु ज, किन्तु < अ यु उ

उत्कृष्ट-युक्त असरयात (अ यु उ = अ अ ज - १

जहाँ—

जघन्य-असख्यातासख्यात (अ अ ज) = (अ यु ज)^१

मध्यम असख्यातासख्यात (अ अ म) है > अ अ ज, किन्तु < अ अ उ.

उत्कृष्ट-असख्यातासख्यात (अ अ उ) = अ प ज - १.

जहाँ—

न प ज जघन्य-परीत-अनन्तका बोधक है ।

अनन्त— अनन्त श्रेणीकी सख्याएँ निम्न प्रकार हैं—

जघन्य-परीत-अनन्त(न प ज) निम्न प्रकारसे प्राप्त होता है—

$$क = \left[\left\{ \begin{matrix} (अअज) \\ (अअज) \end{matrix} \right\} \left\{ \begin{matrix} (अअज) \\ (अअज) \end{matrix} \right\} \right] \left[\left\{ \begin{matrix} (अअज) \\ (अअज) \end{matrix} \right\} \left\{ \begin{matrix} (अअज) \\ (अअज) \end{matrix} \right\} \right]$$

मानलो ख = क + छह द्रव्य^१

$$मानलो ग = \left\{ \begin{matrix} खख \\ (खख) \end{matrix} \right\} \left\{ \begin{matrix} खख \\ (खख) \end{matrix} \right\} + ४ राशियाँ^२$$

तब—

$$जघन्य-परीत-अनन्त (न प ज) = \left\{ \begin{matrix} गग \\ (गग) \end{matrix} \right\} \left\{ \begin{matrix} गग \\ (गग) \end{matrix} \right\}$$

मध्यम-परीत-अनन्त (न प म) है > न प ज, किन्तु < न प उ

उत्कृष्ट परीत-अनन्त (न प उ) = न यु ज - १,

१ छह द्रव्य ये हैं— (१) धर्म, (२) अर्थ, (३) एक जीव, (४) लोककाय, (५) अप्रतिष्ठित (वनस्पति जीव), और (६) प्रतिष्ठित (वनस्पति जीव)

२ चार सयुदाय ये हैं— (१) एक कल्पकालके समय, (२) लोकाकाशके प्रदेश, (३) अत्रुमागवध अय्यवसायस्थान, और (४) योगके अधिभाग प्रतिच्छेद

जहाँ—

(अ प ज)

जघन्य युक्त अनंत (न यु ज) = (अ प ज)

मध्यम युक्त अनंत (न यु म) है > न यु ज, किंतु < न यु उ

उत्कृष्ट युक्त अनंत (न यु उ) = न न ज - १

जहाँ—

जघन्य अनंतान्त (न न ज) = (न यु ज)

मध्यम-अनंतान्त (न न म) > है न न ज, किंतु < न न उ

जहाँ—

न न उ उत्कृष्ट अनंतान्तके लिये पयुक्त है, जो कि नेमिचन्द्रके अनुमार निम्न प्रकारसे प्राप्त होता है—

$$\text{क्ष} = \left[\left\{ \begin{array}{c} \text{ननज} \\ (\text{ननज}) \end{array} \right\} \left\{ \begin{array}{c} \text{ननज} \\ (\text{ननज}) \end{array} \right\} \right] \left[\left\{ \begin{array}{c} \text{ननज} \\ (\text{ननज}) \end{array} \right\} \left\{ \begin{array}{c} \text{ननज} \\ (\text{ननज}) \end{array} \right\} \right] + \text{दृष्ट राशियाँ}$$

$$\text{त्र} = \left\{ \begin{array}{c} \text{क्षक्ष} \\ (\text{क्षक्ष}) \end{array} \right\} \left\{ \begin{array}{c} \text{क्षक्ष} \\ (\text{क्षक्ष}) \end{array} \right\} + \text{दो राशियाँ}$$

$$\text{ज्ञ} = \left\{ \begin{array}{c} \text{त्रत्र} \\ (\text{त्रत्र}) \end{array} \right\} \left\{ \begin{array}{c} \text{त्रत्र} \\ (\text{त्रत्र}) \end{array} \right\}$$

अन, केवलज्ञान राशि ज्ञ से भा बड़ी है और—

$$\text{न न उ} = \text{केवलज्ञान} - \text{ज्ञ} + \text{ज्ञ} = \text{केवलज्ञान}$$

पर्यालोचन— उपर्युक्त निरूपणका यह निष्कर्ष निकलता है—

(१) जघन्य परीत अनंत (न प ज) अनंत नहीं होता जबतक उसमें प्रक्षिप्त किये गये दृष्ट द्रव्यों या चार राशियोंमेंसे एक या अधिक अनंत न मान लिये जाय ।

१ दृष्ट राशियाँ ये हैं— (१) मिद्र, (२) साधारण वनस्पति निगोद, (३) वनस्पति, (४) पुद्रल, (५) भ्रवहाराल और (६) अलोकाश

२ ये दो राशियाँ हैं— (१) घनद्रव्य, (२) जघनद्रव्य, (इन दोनोंके अग्रकल्प गुणके अविभाज्य प्रतिबन्ध)

(२) उत्कृष्ट अनन्त अनन्त (न न उ) केन्द्रज्ञानराशिके समप्रमाण है । उपर्युक्त विवरणसे यह अभिप्राय निरूढता है कि उत्कृष्ट अनन्तानन्त अकरगणितकी किसी प्रक्रियाद्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता, चाहे वह प्रक्रिया कितनी ही दूर क्यों न छे जाई जाय । यथार्थत वह अरुगणितद्वारा प्राप्त ज्ञ की किसी भी सट्टयासे अधिक ही रहेगा । अत मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि केन्द्रज्ञान अनन्त है, और इसीलिये उत्कृष्ट अनन्तानन्त भी अनन्त है ।

इस प्रकार त्रिलोकसारान्तर्गत विवरण हमें कुछ सशयमें ही छोड़ देता है कि परीतानन्त और युक्तान्तके तीन तीन प्रकार तथा जघन्य अनन्तानन्त सचमुच अनन्त है या नहीं, क्योंकि ये सप्त असट्टयातके ही गुणनफल कहे गये हैं, और जो राशिया उनमें जोड़ी गई हैं वे भी असट्टयातमात्र ही हैं । किन्तु धरलाका अनन्त सचमुच अनन्त ही है, क्योंकि यहाँ यह स्पष्टत कह दिया गया है कि 'व्यय होनेसे जो राशि नष्ट हो वह अनन्त नहीं कही जा सकती' । धरलामें यह भी कह दिया गया है कि अनन्तानन्तसे सर्वत्र तात्पर्य मध्यम अनन्तानन्तसे है । अत धरलानुसार मध्यम-अनन्तानन्त अनन्त ही है । धरलामें उल्लिखित दो राशियोंके मिलानकी निम्न रीति बड़ी रोचक है—

एक ओर गतकालकी समस्त अस्तर्षिणी और उत्सर्षिणी अर्थात् कल्पकालके समयोंको (time instants) स्थापित करो । (इनमें अनादि-सातत्य होनेसे अनन्तत्व है ही ।) दूसरी ओर मिथ्यादृष्टि जीवराशि रखो । अब दोनों राशियोंमेंसे एक एक रूप बराबर उठा-उठा कर फेकते जाओ । इस प्रकार करते जानेसे कालराशि नष्ट हो जाती है, किन्तु जीव-राशिका अपहार नहीं होता । धरलामें इस प्रकारसे यह निष्कर्ष निकाला गया है कि मिथ्या-दृष्टि राशि अतीत कल्पोंके समयोंसे अधिक है ।

यह उपर्युक्त रीति और कुछ नहीं केन्द्र एकसे एककी सगति (one-to one correspondence) का प्रकार है जो आधुनिक अनन्त गणनाकोंके सिद्धान्त (Theory of infinite cardinals) का मूलधार है । यह कहा सकता है कि वह रीति परिमित गणनाकोंके मिलानमें भी उपयुक्त होती है, और इसीलिये उसका आलम्बन दो बड़ी परिमित राशियोंके मिलानके लिये लिया गया था— इतनी बड़ी राशिया जिनके अंगों (elements)

१ 'सते वए णडुतस्स अणतवपरिहादो' । ध ३, पृ २५

२ धरला ३, पृ २८

३ 'अणतणत्ताहि ओमप्पिणि उरसप्पिणीहि ण अवहिरति वालेण' । ध ३, पृ २८ सूत्र ३ देखो टीका, पृ २८ 'कथ वालेण मणिजते मिच्छादृष्टी जीवा' ? आदि ।

की गणना किसी सर्यात्मक सङ्गा द्वारा नहीं का जा सकी । यह दृष्टिकोण इस बातसे और भा-
 ' पुष्ट होता है कि जैन प्रथोमें समयके अवानका भी निश्चय कर दिया गया है, और इसलिये
 एक कल्प (अमसर्पिणी-उत्सर्पिणी) के कालप्रदेश परिमित ही होना चाहिये, क्योंकि, व-
 स्वय कोई अनन्त कालमान नहीं है । इस अन्तिम मतके अनुसार जघ-य परीत अनन्त, जो कि
 परिभाषानुसार कल्पके कालप्रदेशोंकी राशिसे अधिक है, परिमित ही है ।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, एकसे एककी सगनिकी रीति अनन्त गणनाओंके
 ' अध्ययनके लिये सभसे प्रबुद्ध साधन सिद्ध हुई है, और उस सिद्धांतके अभेगण तथा सर्व प्रथम
 ' प्रयोगका श्रेय जैनियोंको ही है ।

सर्याओंके उपर्युक्त वर्गीकरणमें मुझे अनन्त गणनाओंके सिद्धांतको प्रिकसित करनेका
 प्राथमिक प्रयत्न दिखाई देता है । कि तु इस सिद्धांतमें कुछ गभीर दोष हैं । ये दोष त्रिोध
 उत्पन्न करेंगे । इनमेंसे एक स-१ की सर्यायी उत्पत्त्या है, जहां स अनन्त है और एक
 वर्गके सीमाका नियामक है । इसके विपरीत जैनियोंका यह सिद्धांत कि एक सर्या स का
 वर्गित स्वर्गित रूप अर्थात् सस एक नवीन सर्या उत्पन्न कर देता है, युक्तपूर्ण है । यदि यह
 ' सच हो कि प्राचीन जैन साहित्यका उल्लूक असह्यत अनन्तसे मेल पाता है, तो अनन्तकी
 सर्याओंकी उत्पत्तिमें आधुनिक अनन्त गणनाओंके सिद्धान्त (Theory of infinite
 - cardinals) का कुछ सीमा तक पूर्वनिरूपण हो गया है । गणितशास्त्राव विनासके उतने
 प्राचीन काठ और उस प्राथमिक स्थितिमें इस प्रकारके किसी भी प्रयत्नकी असफलता अवश्यभावी
 था । आश्चर्य तो यह है कि ऐसा प्रयत्न किया गया था ।

अनन्तके अनेक प्रकारोंकी सत्ताको जार्ज वेटरने उन्नीसवीं शताब्दिके मध्यकालके लग-
 मग प्रयाग-सिद्ध करके दिखाया था । उन्होंने सीमातीत (transfinite) सर्याओंका सिद्धांत
 स्थापित किया । अनन्त राशियोंके क्षेत्र (domain) के विषयमें वेटरके अन्वेषणोंसे गणितशास्त्रके लिये
 ' एक पुष्ट आधार खोजने लिये एक प्रबुद्ध साधन और गणितज्ञान अत्यन्त गूढ विचारोंकी ठीक
 रूपसे व्यक्त करनेके लिये एक भाषा भिन्न गई है । तो भी यह सीमातीत सर्याओंका सिद्धांत
 ' अभी अपनी प्राथमिक अवस्थामें ही है । अभी तक इन सर्याओंका कल्पन (Calculus)
 प्राप्त नहीं हो पाया है, और इसलिये हम उन्हें अभी तक प्रकृततासे गणितशास्त्रीय निरूपणमें
 नहीं उतार सके हैं ।

शब्द-सूची



‘धरतीका गणितशास्त्र’ शीर्षक लेखमें जो गणितसे सम्बन्ध रखनेवाले विशेष हिन्दी शब्दोंका उपयोग किया गया है उनके समरूप अंग्रेजी शब्द निम्न प्रकार हैं—

| | |
|--|---|
| अनन्त-Infinite | घनमूल-Cube root |
| अनन्त गणनाङ्क सिद्धान्त-Theory of infinite cardinals | घात निम्नाना, °करना-Raising of numbers to given powers |
| अनुपात-Proportion | घाताङ्क-Powers |
| अर्धम-Operation of mediation | घाताङ्क सिद्धान्त-Theory of indices |
| अर्धच्छेद-Number of times a number is halved, mediation, logarithm | चतुर्धच्छेद-Number of times that a number can be divided by 4 |
| अपर्याप्त-Innumerable | चिह्न-Trace |
| असम्यक्ता-Inequality | जोड़-Addition |
| अङ्क-Notational place | ज्योतिषविद्या-Astronomy |
| अङ्कगणित-Arithmetic | टिप्पणी-Notes |
| अणु-Element | त्रिधच्छेद-Number of times that a number can be divided by 3 |
| आधार-Base (of logarithm) | त्रिज्या-Radius |
| आविष्कार-Discovery, invention | त्रयशिखर-Rule of three |
| उत्तरोत्तर-Successive | दशमान-Scale of ten |
| एकदिशात्मक-One directional | दशमिस्वरूप-Decimal place-value notation |
| एकमे-एकमे सगति-One to one correspondence | द्विगुणक्रम-Operation of duplication |
| कला-Art | द्विदिशारात्मक-Two dimensional, superficial |
| कालप्रदेश-Time instant | निरूपित-Abstract reasoning |
| कुट्टक-Indeterminate equation | नियम-Rule |
| केन्द्रवर्ती वृत्त-Initial circle, central core | पद्धति-Method |
| क्रिया-Operation | परिणाम-Result |
| क्षेत्रप्रदेश-Locations, points or places | परिमाण-Magnitude |
| क्षेत्रमिति-Mensuration | परिमाणहीन-Dimensionless |
| गणित, °शास्त्र-Mathematics | परिमित गणनाङ्क-Finite cardinals, |
| गणितज्ञ-Mathematician | |
| इष्ट-Multiplication | |

पूर्णाङ्क-Integer
 प्रक्रिया-Process, operation
 अतलतलक अतल तलाराङ्क-Infinite plane area
 प्रश्न-Problem
 प्राथमिक-Elementary, primitive
 बाकी-Subtraction
 बीजगणित-Algebra
 बेलनाकार-Cylindrical
 भाग-Division
 भाजक-Divisor
 भिन्न-Fraction
 मूल, "मौलिक प्रक्रिया-Fundamental
 operation
 राशि-Aggregate
 रूढ सख्या-Prime
 रूपरेखा-General outline
 लघुलघु-Logarithm
 लघ-Quotient
 वर्ग-Square
 वर्गमूल-Square root
 वर्गलघुलघु-Logarithm of logarithm
 वर्गसमीकरण-Quadratic equation
 वर्धित-वर्धित-Raising a number to its
 own power (सख्यातुल्य घात)
 वलय-Ring
 वितरण-Distribution

विज्ञान-Science
 प्रोटन-Protons and electrons
 विनिमय-Barter and exchange
 वितरण-Distribution, spreading
 वितरण देय-Spread and give
 विश्लेषण-Analysis
 विस्तार-Details
 वृत्त-Circle
 व्याज-Interest,
 व्यास-Diameter
 अशान्त शिखा-Super incumbent cone
 शाखा School
 श्रेणीबद्ध करना-Classify
 समवेद द्वाय-Concentric
 सरल समीकरण-Simple equation
 संकेत-Symbol, notation
 संकेतक्रम-Scale of notation
 सख्या-Number
 सख्यात-Numberable
 सख्यातुल्य घात-Raising of a number to
 its own power
 सातत्य-Continuum
 सामान्यीकृत-Generalised
 सीमा-Boundary
 सीमातीत सख्या-Transfinite number
 सूत्र-Formula

२ कन्नड प्रशस्ति

अन्तर-प्ररूपणाके पश्चात् और भाव-प्ररूपणासे पूर्व प्रतियोंमें दो कन्नड पद्योंकी प्रशस्ति पाई जाती है जो इस प्रकार हैं—

पोडप्रियोळु मल्लिदेवन
पडेदर्थवदर्थिजनकवाश्रितचनक ।
पडेदोडमेयादुदिनी
पडेनठनौत्तर्यत्तोत्तने वणिगपुदो ॥

बहुबोधवन्नदान
बेडगुपडेदेसेव जिनगृहगळुन ता ।
नेडेवरियदे माटिसुव
पडेनळनी मल्लिदेनैव विधात्र ॥

ये दोनों पद्य कन्नड भाषाके कदवृत्तमें हैं । इनका अनुवाद इस प्रकार है—

“ इस संसारमें मल्लिदेव द्वाग उपाश्रित धन अर्था और आश्रित जनोंकी सम्पत्ति हो गया । अब सेनापतिनी उदारताका यथार्थ वर्णन किस प्रकार किया जा सकता है ? ”

“ उनका अन्नदान बड़ा आश्चर्यजनक है । ये सेनापति मल्लिदेव नामके विधाता विना किसी स्थानके भेदभावके सुन्दर और महान् जिनगृह निर्माण करा रहे हैं । ”

इन पद्योंमें मल्लिदेव नामके एक सेनापतिके दान-धर्मकी प्रशंसा की गई है । उनके विषयमें यहाँ केवल इतना ही कहा गया है कि वे बड़े दानशील और अनेक जैन मन्दिरोंके निर्माता थे । तेरहवीं शताब्दिके प्रारम्भमें मल्लिदेव नामके एक सिन्द-नरेश हुए हैं । उनके एचण नामके मंत्री थे जो जैनधर्म पालते थे और उन्होंने अनेक जैन मन्दिरोंका निर्माण भी कराया था । उनकी पत्नीका नाम सोत्रिलदेवी था । (ए क ७, लेख न ३१७, ३२० और ३२१)

कर्नाटकके लेखोंमें तेरहवीं शताब्दिके एक मल्लिदेवका भी उल्लेख मिलता है जो होय्सलनरेश नरसिंह तृतीयके सेनापति थे । किन्तु इनके विषयमें यह निश्चय नहीं है कि वे जैनधर्मावलम्बी थे या नहीं । थ्रवणनेलगोलके शिलालेख न १३० (३३५) में भी एक मल्लिदेवका उल्लेख आया है जो होय्सलनरेश वरिबल्लालके पट्टणस्वामी व सचिव नागदेव और उनकी भार्या चन्द्रव्ये (मल्लिसेट्टिकी पुत्री) के पुत्र थे । नागदेव जैनधर्मावलम्बी थे

इसमें कोई संदेह नहीं, क्योंकि, उक्त लेखमें वे नयनार्ति सिद्धा तचक्रार्त्तिके पदमक शिष्य बने गये हैं और उ होने नगरजिनालय तथा कमठागार्त्तिके प्रतिके समुग्र दिष्टपुष्टम और गंगाल निर्माण बगई था तथा नगर जिनालयको कुछ भूमिका दान भी किया था। मन्दिरेना प्रशासमें इस लेखमें जो एक पद्य आया है वह इस प्रकार है—

परमानन्ददिनन्तु नाकपतिग पीत्येमिग पदिदा
 वरसान्द्रव्यजयतनात तुहिन धरिदा कहो मा—
 सुरकात्तवियनगदेरमिमुग चन्द्रध्वेग पुं र।
 शिपरनापट्टणमामिपिधविनुत धामलिदराह्वार ॥ १० ॥

अर्थात् 'जिस प्रकार इन्द्र और पीत्येमा (३ गणों) के परमानन्द पूर्वक सुन्दर जयतर्ती उत्पत्ति हुई थी, उसी प्रकार तुहिन (चर्क) तथा क्षारोदधित्री कछालोत्रे समान भास्वर धार्तिके प्रेमी नागदेव मिमु और चन्द्रध्वेसे इन शिपरयुद्धि विश्वविनुत पट्टणरवामा मन्दिरेनका उत्पत्ति हुई।' इससे आगेके पद्यमें कहा गया है कि वे नागदेव शितिलपर शोभायमान हैं जिनके वामदेव और जोगने माता पिता तथा पणरवामी मन्दिरेन पुत्र हैं। यह लेख शक स १११८ (ईस्वी ११९६) का है, अत यही माल पट्टणरवामा मन्दिरेनका पटता है। अभी निश्चयत तो नहीं कहा जा सकता, किन्तु समभव है कि यही मन्दिरेन हों जिनकी प्रशासा धरला प्रतिके उपर्युक्त दो पद्यों की गई है।

३ शका-समाधान

पुस्तक ४, पृष्ठ ३८

१ शका—पृष्ठ ३८ पर लिखा है— 'मिथ्यादृष्टिसे सेस निगिण शिवेमेणाणि न समपति, तकारणसन्मादिगुणगमभावानो' यानी तेजससमुद्धान प्रमत्तगुणस्थान पर ही होता है, सो इसमें कुछ शका होता है। क्या अशुभ तेजस भी इसी गुणस्थान पर होता है ? प्रमत्तगुणस्थान पर ऐसी तीव्र कायाय होना कि सर्वस्व भस्म कर दे और स्वय भी उससे भस्म हो जाय और नरक तरु चला जाय, ऐसा कुछ समझमें नहीं आता।

समाधान— मिथ्यादृष्टिके शेष तीन विशेषण अर्थात् आहारकसमुद्धान, तेजससमुद्धान और केवलिसमुद्धान समान नहीं हैं, क्योंकि, इनके कारणभूत सपमादि गुणोंका मिथ्यादृष्टिके अभाव है। इस पक्षिकार अर्थ स्पष्ट है कि जिन सपमादि विशिष्ट गुणोंके निमित्तसे आहारकशुद्धि

आदिकी प्राप्ति होती हैं, वे गुण मिथ्यादृष्टि जीवके समन नहीं हैं । शंकाकारके द्वारा उठाई गई आपत्तिका परिहार यह है कि तैजसशक्तिकी प्राप्तिके लिये भी उस समय विशेषकी आवश्यकता है जो कि मिथ्यादृष्टि जीवके हो नहीं सकता । किन्तु अश्रुमत्तैजसका उपयोग प्रमत्तसयत साधु नहीं करते । जो करते हैं, उन्हें उस समय भावलिंगी साधु नहीं, किन्तु द्रव्यलिंगी समझना चाहिए ।

पुस्तक ४, पृष्ठ ४५

२ शंका— त्रिदेहमें सयतराशिका उत्सेध ५०० धनुष लिखा है, सो क्या यह विशेषताकी अपेक्षासे कथन है, या सर्पया नियम ही है ? (नानकचन्द्र जेन, सततोली, पन ता १४४२)

समाधान— त्रिदेहमें सयतराशिका ही उत्सेध नहीं, किन्तु नहा उत्पन्न होनेवाले गनुष्यमात्रका उत्सेध पांचसो धनुष होता है, ऐसा सर्पया नियम ही है जैसा कि उसी चतुर्थ भागके पृ ४५ पर आई हुई “ एदाओ दो त्रि ओगाइणाओ भरह-इरावण्णु चेष हॉति ण त्रिदेहेसु, तथ पचधनुस्मदुस्सेधणियमा ” इस तीसरी पक्तिसे स्पष्ट है । उसी पक्ति पर तिलोयपण्णत्तीसे दी गई टिप्पणीसे भी उक्त नियमकी पुष्टि होती है । विशेषके लिए देखो तिलोयपण्णत्ती, अधिकार ४, गाथा २२५५ आदि ।

पुस्तक ४, पृष्ठ ७६

३ शंका— पृष्ठ ७६ में मूलमें ‘मारणतिय’ के पहलेका ‘मुक्’ शब्द अभी विचारणीय प्रतीत होता है ? (जेनसदेश, ता २३-४-४२)

समाधान— मूलमें ‘मुक्कारणतियरामी’ पाठ आया है, जिसका अर्थ— “ क्रिया है मारणात्तिकसमुद्धान् जिन्होंने ” ऐसा किया है । प्रकरणको देखते हुए यही अर्थ समुचित प्रतीत होता है, जिसकी कि पुष्टि गो जी गा ५४४ (पृ ९५२) की टीकामें आए हुए ‘त्रियमाण मारणान्तिरददस्य, ‘त्रियग्जीवमुक्तेपपादददस्य’, तथा, ५४७ वीं गाथानी टीकामें (पृ ५६७) आये हुए ‘अहमपृथ्वीसवधिमादरपयाप्तपृथ्वीमायेषु उप्पत्तु मुक्कत्तसमुद्धान्तिददधाना’ आदि पाठोंसे भी होती है । “यान देनेकी बात यह है कि द्वितीय व तृतीय उद्धरणमें जिस अर्थमें ‘मुक्’ शब्दका प्रयोग हुआ है, प्रथम अवतरणमें उसी अर्थमें ‘त्रियमाण’ शब्दका उपयोग हुआ है और यह कहनेकी आवश्यकता ही नहीं है कि प्राकृत ‘मुक्क’ शब्दकी संस्कृतच्छाया ‘मुक्’ ही होती है । पठित टोडरमल्लजीने भी उक्त स्थलपर ‘मुक्’ शब्दका यही अर्थ किया है । इस प्रकार ‘मुक्’ शब्दके किये गये अर्थमें कोई शंका नहीं रह जाती है ।

पुस्तक ४, पृष्ठ ३१३

९ शका—पृ ३१३ में— 'स-परप्पयासयमणपमाणपट्टिवादीण' पाठ अशुद्ध प्रतीत होता है, इसके स्थानमें यदि 'सपरप्पयासयमणपमाणपट्टवादीण' पाठ हो तो अर्थकी संगति ठाक बैठ जाती है ।

(जैनसन्देश, ३० ४ ४२)

समाधान—प्रस्तुत स्थलपर उपलब्ध तीनों प्रतियोंमें जो विभिन्न पाठ प्राप्त हुए और मूढबिद्दीसे जो पाठ प्राप्त हुआ उन सबका उल्लेख वहीं टिप्पणीमें दे दिया गया है । उनमें अधिक हेर फेर करना हमने उचित नहीं समझा और यथाशक्ति उपलब्ध पाठोंपरसे ही अर्थकी संगति बैठा दी । यदि पाठ बदलकर और अधिक सुसंगत अर्थ निकालना ही अभीष्ट हो तो उक्त पाठको इस प्रकार रखना अधिक सुसंगत होगा— स परप्पयासयमण पट्टीवादीणमुक्कलमा । इस पाठके अनुसार अर्थ इस प्रकार होगा— " क्योंकि स्व परप्रकाशक प्रमाण व प्रदीपादिक पाये पाये जाते हैं (इसलिये शब्दके भी स्वप्रतिपादकता बन जाती है) " ।

पुस्तक ४, पृष्ठ ३५०

१० शका—धवलराज पट्ट ४, पृष्ठ ३५०, ३६६ पर सम्मूर्च्छन जीवके सम्यग्दर्शन होना लिखा है । परन्तु लब्धिसार गाथा २ में सम्यग्दर्शनकी योग्यता गर्भजके लिखी है, सो इसमें विरोधसा प्रतीत होता है, खुलासा करिए ।

(नानकचन्द्र जैन, खताली, पत्र १६ ३ ४२)

समाधान—लब्धिसार गाथा दूसरीमें जो गर्भजका उल्लेख है, वह प्रथमोपशमसम्पत्त्वकी प्राप्तिकी अपेक्षासे है । किन्तु यहा उपर्युक्त पृष्ठोंमें जो सम्मूर्च्छितम जीवके सयमासयम पानेका निरूपण है, उनमें प्रथमोपशमसम्पत्त्वका उल्लेख नहीं है, जिससे ज्ञात होता है कि यहा वह कथन वेदकसम्पत्त्वकी अपेक्षासे किया गया है । अतएव दोनों कथनोंमें कोई विरोध नहीं समझना चाहिए ।

पुस्तक ४, पृष्ठ ३५३

११ शका—आपने अपूर्णकरण उपशमकको मरण करके अनुत्तर विमानोंमें उत्पन्न होना लिखा है, जब कि मूलमें 'उत्तमो देवो' पाठ है । क्या उपशमश्रेणीमें मरण करनेवाले जाव नियमसे अनुत्तरमें ही जाते हैं ? क्या प्रमत्त और अप्रमत्तवाले भी सर्वार्थसिद्धिमें जा सकते हैं ?

(नानकचन्द्र जैन खताली, पत्र ता १-४-३२)

समाधान—इस शकामें तीन शकामें गर्भित हैं जिनका समाधान क्रमशः इस प्रकार है—

(१) मूलमें 'उत्तमो देवो' पाठ नहीं, किन्तु 'लयसत्तमो देवो' पाठ है । लयसत्तमका अर्थ अनुत्तर विमानवासी देव होता है । यथा—लयसत्तम-लयसत्तम-पु० । पञ्चानुत्तरविमानवत्

देवेसु । सूत्र० १ श्रु ६ अ । सम्प्रतिः एतत्सप्तमदेवस्वरूपमाह—

सत्त एवा जह् आउ पहु पमाण ततो उ सिञ्जतो ।

तत्तियमेत्त न हु त तो ते एवसत्तमा जाया ॥ १३२ ॥

सच्चट्टसिद्धिनामे उक्कोसट्टिई य निजयमादीसु ।

एगाएत्तेसगन्भा भवति एवसत्तमा देवा ॥ १३३ ॥ व्य ५ उ

अभिधानराजेन्द्र, लवसत्तमशब्द

(२) उपशमश्रेणीमें मरण करनेवाले जीव नियमसे अनुत्तर विमानोंमें ही जाते हैं, ऐसा तो नहीं कहा जा सकता, किन्तु त्रिलोकप्रज्ञसिद्धिनी निम्न गाथासे ऐसा अत्रय ज्ञात होता है कि चतुर्दशपूर्ववारी जीव लान्तव कापिष्ठ कल्पसे लगाकर सर्गार्थसिद्धिपर्यंत उत्पन्न होते हैं । चूँकि 'गुके चावे पूरंनिद' के नियमानुसार उपशमश्रेणीवाले भी जीव पूर्ववत् हो जाते हैं, अतएव उनकी लातप्रकल्पसे ऊपर ही उत्पत्ति होती है नीचे नहीं, ऐसा अत्रय कहा जा सकता है । वह गाथा इस प्रकार है—

दमपुचधरा सोहम्मग्गहुदि सच्चट्टसिद्धिपरियत

चोहम्मपुचधरा तह एतवकप्पादि वचते ॥ ति प पत्र २३७, १६

(३) उपशमश्रेणीपर नहीं चटनेवाले, पमत्त अप्रमत्तस्यत गुणस्थानोंमें ही परिवर्तन-सहस्रोंको करनेवाले सावु सर्गार्थसिद्धिमें नहीं जा सकते हैं, ऐसा स्पष्ट उल्लेख देखनेमें नहीं आया । प्रत्युत इसके त्रिलोकसार गाथा न ५४६ के 'सच्चट्टो त्ति सुदिट्ठी महच्चई' पदसे द्रव्य-भावरूपसे महाव्रती सयतोंका सर्गार्थसिद्धि तक जानेका स्पष्ट विधान मिलता है ।

पुस्तक ४, पृष्ठ ४११

१२ शंका—योग परिवर्तन और व्याघात परिवर्तनमें क्या अन्तर है ?

(नानमचन्द्र जेन, खतीली, पत्र ता १४४२)

समाधान—त्रिभक्षित योगका अन्य किसी व्याघातके बिना काल क्षय हो जाने पर अथ योगके परिणमनको योग परिवर्तन कहते हैं । किन्तु त्रिभक्षित योगका कालक्षय होनेके पूर्व ही क्रोधादि निमित्तसे योग परिवर्तनको व्याघात कहते हैं । जैसे—कोई एक जीव मनोयोगके साथ विद्यमान है । जब अन्तर्मुहूर्तप्रमाण मनोयोगका काल पूरा हो गया तब वह वचनयोगी या काययोगी हो गया । यह योग-परिवर्तन है । इसी जीवके मनोयोगका काल पूरा होनेके पूर्व ही कषाय, उपद्रव, उपसर्ग आदिके निमित्तसे मन चंचल हो उठा और वह वचनयोगी या काययोगी हो गया, तो यह योगका परिवर्तन व्याघातकी अपेक्षासे हुआ । योग-परिवर्तनमें काल प्रधान है, जब कि व्याघात-परिवर्तनमें कषाय आदिका व्याघात प्रधान है । यही दोनोंमें अन्तर है ।

१३ श्लोका— पृष्ठ ४५६ में ' अणलेस्सागमणाभवा ' का अर्थ ' अय लेश्या आगमन असम्भव है ' किया है, होना चाहिए— अय लेश्यामें गमन असम्भव है ?

(जैनसंदेश, ता ३०-४-४२)

समाधान— किये गये अर्थमें और सुझाये गये अर्थमें कोई भेद नहीं है। ' अय लेश्याका आगमन ' और ' अय लेश्यामें गमन ' कहनेसे अर्थमें कोई अंतर नहीं पड़ता। मूत्रमें भा दोनों प्रकारके प्रयोग पाये जाते हैं। उदाहरणार्थ— प्रस्तुत पाठके ऊपर ही वाक्य है— ' हीपमाण-वट्टमाणत्रिण्दरेस्साण काउलेस्साण वा थच्छिदस्स णील्लेश्या आगदा ' अर्थात् हीपमाण कृष्ण लेश्यामें अपना वर्धमान कापोतलेश्यामें विद्यमान किसी जीवके नीललेश्या आ गई, इत्यादि।

४ विषय-परिचय



जीवस्थानकी आठ प्ररूपणाओंमेंसे प्रथम पाच प्ररूपणाओंका वर्णन पूर्व प्रकाशित चार भागोंमें किया गया है। अब प्रस्तुत भागमें अवशिष्ट तीन प्ररूपणाएँ प्रकाशित की जा रही हैं— अंतरानुगम, भानुगम और अल्पबहुत्वानुगम।

१ अन्तरानुगम

निश्चित गुणस्थानवर्ती जीवका उस गुणस्थानको छोड़कर अय गुणस्थानमें चले जाने पर पुन उसी गुणस्थानकी प्राप्तिमें पूर्व तकके कालको अंतर, व्युच्छेद या विरहकाल कहते हैं। समझे छोटे विरहकालको जघन्य अंतर और सबसे बड़े विरहकालको उत्कृष्ट अंतर कहते हैं। गुणस्थान और मार्गस्थानोंमें इन दोनों प्रकारोंके अंतरोंके प्रतिपादन करनेवाले अनुयोगद्वाका अंतरानुगम कहते हैं।

पूर्व प्ररूपणाओंके समान इस अंतरप्ररूपणामें भी ओष और आदेशकी अपेक्षा अंतरका निर्णय किया गया है, अर्थात् यह बतलाया गया है कि यह जान किस गुणस्थान या मार्गस्थानसे कबसे कम कितने काळ तक के लिए और अधिकसे अधिक कितने काल तक के लिए अंतरको प्राप्त होता है।

उदाहरणार्थ—ओषकी अपेक्षा मिय्यादृष्टि जीवोंका अंतर कितने काळ होता है प्रश्नके उत्तरमें बताया गया है कि नाना जीवोंकी अपेक्षा अंतर नहीं है, निरंतर है

इसका अभिप्राय यह है कि मिथ्यात्वपर्यायसे परिणत जीवोंका तीनों ही कालोंमें व्युच्छेद, विरह या अभाव नहीं है, अर्थात् इस ससारमें मिथ्यादृष्टि जीव सर्वकाल पाये जाते हैं । किन्तु एक जीवकी अपेक्षा मिथ्यात्वका जघन्य अंतर अन्तर्मुहूर्तकालप्रमाण है । यह जघन्य अन्तरकाल इस प्रकार घटित होता है कि कोई एक मिथ्यादृष्टि जीव परिणामोंकी विशुद्धिके निमित्तसे सम्यक्त्वको प्राप्तकर असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानवर्ती हुआ । वह चतुर्थ गुणस्थानमें सबसे छोटे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण सम्यक्त्वके साथ रहकर सङ्गेश आदि के निमित्तसे गिरा और मिथ्यात्वको प्राप्त होगया, अर्थात् पुन मिथ्यादृष्टि होगया । इस प्रकार मिथ्यात्व गुणस्थानको छोड़कर अन्य गुणस्थानको प्राप्त होकर पुन उसी गुणस्थानमें आनेके पूर्व तक जो अन्तर्मुहूर्तकाल मिथ्यात्वपर्यायसे निरहित रहा, यही उस एक जीवकी अपेक्षा मिथ्यादृष्टि गुणस्थानका जघन्य अंतर माना जायगा ।

इसी एक जीवकी अपेक्षा मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ अर्थात् एक सौ बत्तीस (१३२) सागरोपम काल है । यह उत्कृष्ट अन्तरकाल इस प्रकार घटित होता है कि कोई एक मिथ्यादृष्टि तिर्यंच अथवा मनुष्य चौदह सागरोपम आयुस्थितिवाले तान्त्रिकापिष्ठ कल्पवासी देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहां वह एक सागरोपम कालके पश्चात् सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । तेरह सागरोपम काल वहां सम्यक्त्वके साथ रहकर च्युत हो मनुष्य होगया । उस मनुष्यभ्रममें समयको, अथवा समयसमयको पालन कर बाईस सागरोपम आयुकी स्थितिवाले आरण-अच्युत कल्पवासी देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहासे च्युत होकर पुन मनुष्य हुआ । इस मनुष्यभ्रममें समय धारण कर मरा और इकतीस सागरोपमकी आयुवाले उपरिम प्रैयेयकके अहमिन्द्रोंमें उत्पन्न हुआ । जहासे च्युत हो मनुष्य हुआ, और समय धारण कर पुनः उक्त प्रकारसे बीस, बाईस और चौबीस सागरोपमकी आयुवाले देवों ओर अहमिन्द्रोंमें क्रमशः उत्पन्न हुआ । इस प्रकार वह पूरे एक सौ बत्तीस (१३२) सागरोपम सम्यक्त्वके साथ रहकर अन्तमें पुन मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । इस तरह मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अन्तर सिद्ध होगया । उक्त विवेचनमें यह बात ध्यान रखनेकी है कि वह जीव जिनने बार मनुष्य हुआ, उतने बार मनुष्यभ्रमसम्बन्धी आयुसे कम ही देवायुको प्राप्त हुआ है, अन्यथा बतलाए गए कालसे अधिक अन्तर हो जायगा । कुछ कम दो छयासठ सागरोपम कहनेका अभिप्राय यह है कि वह जीव दो छयासठ सागरोपम कालके प्रारम्भमें ही मिथ्यात्वको छोड़कर सम्यक्त्वकी बना और उसी दो छयासठ सागरोपमकालके अन्तमें पुन मिथ्यात्वको प्राप्त हो गया । इसलिए उतना काल उनमेंसे घटा दिया गया ।

यहां ध्यान रखनेकी खास बात यह है कि काल-प्ररूपणामें जिन-जिन गुणस्थानोंका काल नानाजीवोंकी अपेक्षा सर्वकाल बतलाया गया है, उन-उन गुणस्थानवर्ती जीवोंका नानाजीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं होता है । किन्तु उनके सिवाय शेष सभी गुणस्थानवर्ती जीवोंका नानाजीवोंकी

तथा एक जीवकी अपेक्षा अंतर होता है । इस प्रकार नानाजीवोंकी अपेक्षा कभी भी सिद्धको नहीं प्राप्त होनेवाले छह गुणस्थान हैं— १ मिव्यादृष्टि, २ असयनसम्पन्नदृष्टि, सयतासयत, ४ प्रसक्त सयत, ५ अप्रसक्तसयन और ६ सयोगिकेतर । इन गुणस्थानोंमें केवल एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अंतर बतलाया गया है, जिसे प्रायः अव्ययनसे पाठक मठी भांति जान सकेंगे ।

जिस प्रकार ओरसे अंतरना निरूपण किया गया है, उसी प्रकार आदेशकी अपेक्षा भी उन उन मार्गणाओंमें समस्त गुणस्थानोंका अंतर जानना चाहिए । मार्गणाओंमें आठ सान्तरमार्गणाएँ होती हैं, अर्थात् जिनका अंतर होता है । जैसे— १ उपशमसम्पन्नवमार्गणा, २ सूक्ष्ममाश्रयमयममार्गणा, ३ आहाररूपययोगमार्गणा, ४ आहाररूपमिश्ररूपयोगमार्गणा, ५ वैक्रियिकमिश्ररूपयोगमार्गणा, ६ लक्ष्यपर्याप्तमनुश्रुतिमार्गणा, ७ सासादनसम्पन्नवमार्गणा और सम्यग्निध्यात्वमार्गणा । इन आठोंका उत्कृष्ट अंतर काल क्रमशः १ सात दिन, २ छह मास, ३ वर्षपृथक्त्व, ४ वर्षपृथक्त्व, ५ बारह मूर्त्त, और अन्तिम तीन सांतर मार्गणाओंका अंतरनाले पृथक् पृथक् पल्लोपमना अन्त्यातनां भाग है । इन सत्र सांतर मार्गणाओंका जघन्य अंतरनाले एक समव्यप्रमाण ही है । इन सांतर मार्गणाओंके अतिरिक्त शेष सब मार्गणाएँ नानाजीवोंकी अपेक्षा अंतर रहित हैं, यह प्रायःके स्वाभावसे सरलतापूर्वक हृदयगम किया जा सकेगा ।

२ भावानुगम

कामके उपशम, क्षय आदिके निमित्तसे जावके जो परिणामविशेष होते हैं, उन्हें मात्र कहते हैं । वे भाव पाच प्रकारके होते हैं— १ औदयिकभाव, २ औपशमिकभाव, ३ क्षायिकभाव, ४ क्षायोपशमिकभाव और पारिणामिकभाव । कामोंके उदयसे होनेवाले भावोंको औदयिक मात्र कहते हैं । इसके इक्कीस भेद हैं— चार गतिधा (नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देवगति), तीन लिंग (स्त्री, पुरुष, और नपुमकलिंग), चार त्रयाय (क्रोध, मान, माया और लोभ), मिथ्यादर्शन, असिद्धि, अज्ञान, छह लक्ष्मणाएँ (कृष्ण, नील, कापोत, तेज, पद्म और गुच्छेद्या), तथा असयम । मोहनीयकर्मके उपशमसे (क्योंकि, शेष सात कर्मोंका उपशम नहीं होता है) उत्पन्न होनेवाले भावोंको औपशमिक मात्र कहते हैं । इसके दो भेद हैं— १ औपशमिकसम्पन्न और २ औपशमिकचारित्र । कामोंके क्षयसे उत्पन्न होनेवाले भावोंको क्षायिकभाव कहते हैं । इसके नौ भेद हैं — १ क्षायिकसम्पन्न, २ क्षायिकचारित्र, ३ क्षायिकज्ञान, ४ क्षायिकशान्ति, ५ क्षायिकदान, ६ क्षायिकलाभ, ७ क्षायिकभोग, ८ क्षायिकउपभोग और ९ क्षायिकन्याय । कामके क्षयोपशमसे उत्पन्न होनेवाले भावोंको क्षायोपशमिकभाव कहते हैं । अष्टाह भेद हैं— चार ज्ञान (मति, श्रुत, अविधि आर मन पर्ययज्ञान), तीन अज्ञान

(कुमति, कुश्रुत और विभगावधि), तीन दर्शन (चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अविदर्शन), पाच लब्धियाँ (क्षायोपशमिक दान, लाम, भोग, उपभोग और वीर्य), क्षायोपशमिकसम्पत्कर, क्षायोपशमिकचारित्र और समयमासयम । इन पूर्वोक्त चारों भागोंसे विभिन्न, कर्मोंके उदय, उपशम आदिर्क्षा अपेक्षा न रखते हुए स्वतः उत्पन्न भावोंको परिणामिकभावन कहते हैं । इसके तीन भेद हैं— १ जीवत्व, २ भव्यत्व और ३ अभव्यत्व ।

इन उपर्युक्त भागोंके अनुगमको भागानुगम कहते हैं । इस अनुयोगद्वारमें भी ओष और आदेशकी अपेक्षा भागोंका विवेचन किया गया है । ओषनिर्देशकी अपेक्षा प्रथम किया गया है कि ' मिथ्यादृष्टि ' यह कौनसा भाव है ? इसके उत्तरमें कहा गया है कि मिथ्यादृष्टि यह औदयिकभाव है, क्योंकि, जीवोंके मिथ्या दृष्टि मिथ्यात्वकर्मके उदयसे उत्पन्न होता है । यहाँ यह शका उठाई गई है कि, जब मिथ्यादृष्टि जीवोंके मिथ्यात्वभावके अतिरिक्त ज्ञान, दर्शन, गति, लिंग, कर्पाय भव्यत्व आदि और भी भाव होते हैं, तब यहाँ केवल एक औदयिकभावको ही बतानेका क्या कारण है ? इस शकाके उत्तरमें कहा गया है कि यद्यपि मिथ्यादृष्टि जीवोंके औदयिकभावके अतिरिक्त अन्य भाव भी होते हैं, किन्तु वे मिथ्यादृष्टिःके कारण नहीं हैं, एक मिथ्यात्वकर्मका उदय ही मिथ्यादृष्टिःका कारण होता है, इसलिए मिथ्यादृष्टिःको औदयिकभाव कहा गया है ।

सासादनगुणस्थानमें पारिणामिकभावन बताया गया है, और इसका कारण यह कहा गया है कि जिस प्रकार जीवत्व आदि पारिणामिक भागोंके लिए कर्मोंका उदय आदि कारण नहीं है, उसी प्रकार सासादनसम्पत्करके लिए दर्शनमोहनीयकर्मका उदय, उपशम, क्षय और क्षयोपशम, ये कोई भी कारण नहीं हैं, इसलिए इसे यहाँ पारिणामिकभावन ही मानना चाहिए ।

सम्यग्मिथ्यात्वगुणस्थानमें क्षायोपशमिकभावन होता है । यहाँ शका उठाई गई है कि प्रतिवधीकर्मके उदय होनेपर भी जो जीवोंके स्वाभाविक गुणका अंश पाया जाता है, वह क्षायोपशमिक कहलाता है, किन्तु सम्यग्मिथ्यात्वकर्मके उदय रहते हुए तो सम्यक्त्वगुणकी कणिका भी अवशिष्ट नहीं रहती है, अथवा सम्यग्मिथ्यात्वकर्मके सर्वातीतना नहीं बन सकता है । अतएव सम्यग्मिथ्यात्वभावन क्षायोपशमिक सिद्ध नहीं होता है ? इसके उत्तरमें कहा गया है कि सम्यग्मिथ्यात्वकर्मके उदय होनेपर श्रद्धानाश्रद्धानात्मक एक मिश्रभावन उत्पन्न होता है । उसमें जो श्रद्धानाश है, वह सम्यक्त्वगुणका अंश है । उसे सम्यग्मिथ्यात्वकर्मका उदय नष्ट नहीं करता है, अतएव सम्यग्मिथ्यात्वभावन क्षायोपशमिक है ।

असयनसम्पत्दृष्टिगुणस्थानमें औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक, ये तीन भाव पाये जाते हैं, क्योंकि, यहाँ दर्शनमोहनीयकर्मका उपशम, क्षय और क्षयोपशम, ये तीनों होते हैं ।

यह पट्ट गत ध्यानमें रखने योग्य है कि चौथे गुणस्थान तक भाषोंका प्रख्यापन दत्त मोहनीय कर्मकी अपेक्षा किया गया है। इनका कारण यह है कि गुणस्थानोंका तात्पर्य या निराशा-क्रम मोह और पापके आश्रित है। माहकर्मके दो भेद हैं— एक दर्शनमोहनीय और दूसरा चारित्रमोहनीय। आमाके सम्पूर्णगुणको धारणकरा दर्शनमोहनीय है जिसके निमित्तसे आमा वस्तुस्वरूपको या अपने हित अहितका देखना और जानना हुआ भी, श्रद्धान नहीं कर सकता है। चारित्रगुणको धारणकरा चारित्रमोहनीयकर्म है। यह पट्ट कर्म है जिसके निमित्त वस्तुस्वरूपका यथाय श्रद्धान करने हुए भी, स्वर्गार्थको जाने हुए भी, जीव उत्तर चउ नहीं पाता है। मन, वचन और वाचकी चचरुत्तानों योग कहते हैं। इसको निमित्तसे आमा सर्वे परिस्पन्दनयुक्त रहता है, और कर्माश्रयता कारण भी यही है। प्रारम्भके चार गुणस्थान दर्शन मोहनीय कर्मके उदय, उपशम, क्षयोपशम आदिमें उत्पन्न होते हैं, इसलिये उन गुणस्थानोंमें दर्शनमोहका अपेक्षासे (अथ भावोंके होते हुए भी) भाषोंका प्रख्यापन किया गया है। तपस्विक चौथे गुणस्थान तक रहनेवाला असव्ययमान चारित्रमोहनीयकर्मक उदयकी अपेक्षासे है, अन उस आदिक्रमका ही जानना चाहिए। पाचवेंके उत्तर जाहने तक आठ गुणस्थानोंका आधार चारित्र मोहनीयकर्म है अर्थात् ये आठों गुणस्थान चारित्रमोहनीयकर्मके प्रवेश, क्षयोपशम, उपशम और क्षयसे होते हैं, अर्थात् पाचवें, छठे और सातवें गुणस्थानमें क्षयोपशमिक्रमका, आठवें, नवें, दसवें और ग्यारहवें, इन चारों उपशमक गुणस्थानोंमें औपशमिक्रमका, तथा क्षयकालमें चारों गुणस्थानोंमें, तेहरे और चौदहवें गुणस्थानमें धायिक्रमका कहा गया है। तेहरे गुणस्थानमें मोहका अभाव हो जानेसे केवल योगकी ही प्रज्ञानता है और इसीलिये इन गुणस्थानका नाम सरोगिरागी रखा गया है। चौदहवें गुणस्थानमें योगके अभावकी प्रधानता है, अतएव अवोमि केरुली देसा नाम सार्यक है। इस प्रकार थाहमें यह फलितार्थ जानना चाहिए कि निश्चित गुणस्थानमें मभय अन्य मात्र पाये जाते हैं, किन्तु यह मात्रप्रवृत्तियोंमें केवल उहीं भाषोंको चनाया गया है, जो कि उन गुणस्थानोंके सुख्य आकार हैं।

आदेशकी अपेक्षा भी इसी प्रकारसे मात्रिक प्रतिपादन किया गया है, जो कि प्रयाग-कर्मके व प्रस्तावनामें दिये गये नरुणोंके मिहानरुणमें सहजमें ही जाने जा सकते हैं।

३ अल्पबहुत्वानुगम

द्रव्यप्रमाणानुगममें कलकाले गये सत्या-प्रमाणके आधार पर गुणस्थानों और मार्गस्थानोंमें समान पारस्परिक सत्याहृत हीनता और अधिस्ताका निर्णय करनेवाला अल्पबहुत्वानुगम नामक अनुयोगद्वार है। यद्यपि युक्त पाठक द्रव्यप्रमाणानुगम अनुयोगद्वारके द्वारा ही उत्त अल्पबहुत्वानुगम निर्णय कर सकते हैं, पर आचार्यने विस्ताररुचि शिष्याके लाभार्थ इस नामक

एक पृथक् ही अनुयोगद्वारा बनाया, क्योंकि, संक्षेपरचि शिष्योंकी जिज्ञासाको तृप्त करना ही शास्त्र-प्रणयनका फल बनलाया गया है ।

वन्य प्ररूपणाओंके समान यहा भी ओघनिर्देश और आदेशनिर्देशकी अपेक्षा अल्प-बहुत्वका निर्णय किया गया है । ओघनिर्देशसे अर्पुर्नरुण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा परस्पर तुल्य हैं, तथा शेष सब गुणस्थानोंके प्रमाणसे अल्प हैं, क्योंकि, इन तीनों ही गुणस्थानोंमें पृथक् पृथक् रूपसे प्रवेश करनेवाले जीव एक दो को आदि लेकर अधिकसे अधिक चौपन तक ही पाये जाते हैं । इतने कम जीव इन तीनों उपशामक गुणस्थानोंको छोड़कर और किसी गुणस्थानमें नहीं पाये जाते हैं । उपशान्तरूपायवीतरागद्वयस्थ जीव भी पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं, क्योंकि, उक्त उपशामक जीव ही प्रवेश करते हुए इस म्यारहवें गुणस्थानमें आते हैं । उपशान्तरूपायवीतरागद्वयस्थोंसे अर्पुर्नरुणादि तीन गुणस्थानवर्ती क्षपक सख्यातगुणित हैं, क्योंकि, उपशामकके एक गुणस्थानमें उत्कर्षसे प्रवेश करनेवाले चौपन जीवोंकी अपेक्षा क्षपकके एक गुणस्थानमें उत्कर्षसे प्रवेश करनेवाले एक सौ आठ जीवोंके दूने प्रमाण-स्वरूप सख्यातगुणितता पाई जाती है । क्षीणरूपायवीतरागद्वयस्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं, क्योंकि, उक्त क्षपक जीव ही इस बारहवें गुणस्थानमें प्रवेश करते हैं । सयोगिकेवली और अयोगिकेवली जिन प्रवेशकी अपेक्षा दोनों ही परस्पर तुल्य और पूर्वोक्त प्रमाण अर्थात् एक सौ आठ हैं । किन्तु सयोगिकेवली जिन सचयकालकी अपेक्षा प्रविश्यमान जीवोंसे सख्यातगुणित हैं, क्योंकि, पांचसौ अठानवे मात्र जीवोंकी अपेक्षा आठ लाख अठानवे हजार पांचसौ दो (८९८५०२) सख्याप्रमाण जीवोंके सख्यातगुणितता पाई जाती है । दूसरी बात यह है कि इस तेरहवें गुणस्थानका काल अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षसे कम पूर्वकोटीवर्ष माना गया है । सयोगिकेवली जिनोंसे उपशम और क्षपकश्रेणीपर नहीं चढ़नेवाले अप्रमत्तसयत जीव सख्यातगुणित हैं, क्योंकि, अप्रमत्तसयतोंका प्रमाण दो करोड छयानवे लाख निन्यानवे हजार एकसौ तीन (२९६९९१०३) है । अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयत सख्यातगुणित हैं, क्योंकि, उनसे इनका प्रमाण दूना अर्थात् पांच करोड तेरानवे लाख अठानवे हजार दोसौ छह (५९३९८२०६) है । प्रमत्तसयतोंसे सयतासयत जीव असख्यातगुणित है, क्योंकि, वे पत्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण हैं । सयतासयतोंसे सासादनसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं, क्योंकि, सयमासयमकी अपेक्षा सासादनसम्यक्त्वका पाना बहुत सुलभ है । यहांपर गुणकारका प्रमाण आवलीका असख्यातवें भाग जानना चाहिए, अर्थात् आवलीके असख्यातवें भागमें जितने समय होते हैं, उनके द्वारा सयतासयत जीवोंकी रश्मिको गुणित करने पर जो प्रमाण आता है, इतने सासादनसम्यग्दृष्टि जीव हैं । सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव सख्यातगुणित हैं, क्योंकि,

दूसरे गुणस्थानकी अपेक्षा तीसरे गुणस्थानका ऋतु सख्यातगुणा है। सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंसे असत्य सम्यग्दृष्टि जाव असत्यातगुणित है, क्योंकि, तीसरे गुणस्थानको प्राप्त होनेवाली राशिकी अपेक्षा चौथे गुणस्थानको प्राप्त होनेवाली राशि आवलीके असत्यातरे भागगुणित है। असत्यसम्यग्दृष्टि जीवोंसे मिथ्यादृष्टि भीव अन्तगुणित है, क्योंकि, मिथ्यादृष्टि जीव अन्त होते हैं। इस प्रकार यह चौदहों गुणस्थानोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्व कहा गया है, जिसका मूल आधार द्रव्यप्रमाण है। यह अल्पबहुत्व गुणस्थानोंमें दो दृष्टियोंसे बताया गया है प्रवेशकी अपेक्षा और सचयकालकी अपेक्षा। जिन गुणस्थानोंमें अन्तरका अभाव है अर्थात् जो गुणस्थान सर्वकाल समत हैं, उनका अल्पबहुत्व सचयकालकी ही अपेक्षासे कहा गया है। ऐसे गुणस्थान, जैसा कि अन्तप्ररूपणमें बताया जा चुका है, मिथ्यादृष्टि, असत्यसम्यग्दृष्टि आदि चार ओर सयोगितेजली, ये उह हैं। जिन गुणस्थानोंमें अन्तर पडता है, उनमें अल्पबहुत्व प्रवेश और सचयकाल, इन दोनोंकी अपेक्षा बताया गया है। जैसे— अन्तकाल समाप्त होनेके पश्चात् उपशामक और क्षपक गुणस्थानोंमें कमसे कम एक दो तीनसे उगाकर अधिकसे अधिक ५४ और १०८ तक जीव एक समयमें प्रवेश कर सकते हैं, और निरन्तर आठ समयोंमें प्रवेश करने पर उनके सचयका प्रमाण क्रमशः ३०४ और ६०८ तक एक एक गुणस्थानमें हो जाता है। दूसरे और तीसरे गुणस्थानका प्रवेश और सचय प्रयानुसार जानना चाहिए। ऐसे गुणस्थान चारों उपशामक, चारों क्षपक, अयोगितेजली सम्यग्मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि हैं।

इसके अतिरिक्त इस अनुयोगद्वारमें मूलसूत्रकारने एकही गुणस्थानमें सम्यक्त्वकी अपेक्षासे भी अल्पबहुत्व बताया है। जैसे— अमयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं। उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जाव असत्यातगुणित है और क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असत्यातगुणित हैं। इस हीनाभित्तानका कारण उत्तरोत्तर सचयकालकी अधिकता है। सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं, क्योंकि, देश समयको धारण करनेवाले क्षायिकसम्यग्दृष्टि मनुष्योंका होना अत्यन्त दुर्लभ है। दूसरी बात यह है कि तिर्यचोंमें क्षायिकसम्यक्त्वके साथ देशसमय नहीं पाया जाता है। इसका कारण यह है कि तिर्यचोंमें दर्शनमोहनीयजर्मकी क्षपणा नहीं होती है। इसी सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि मयतासयत असत्यातगुणित है और उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि सयतासयत असत्यातगुणित है। प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं, उनसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सत्यातगुणित हैं, उनसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव सत्यातगुणित हैं। इस अल्पबहुत्वका कारण सचयकालकी हीनाधिकता

गुणस्थानोंकी अपेक्षा जीवोंके अन्तर, मात्र

| गुणस्थान | अन्तर | | | |
|--------------------|--------------------------|----------------------------|----------------------------|------------------------|
| | नाना जीवोंकी अपेक्षा | | एक जीवकी अपेक्षा | |
| | जघन्य | उत्कृष्ट | जघन्य | उत्कृष्ट |
| १ मिष्याण्टि | निरन्तर | | अतर्मुहूर्त | देशीन दो छयासठ सागरीपम |
| २ सासादनसम्यग्टि | एक समय | पल्योपमना असख्या तर्वा भाग | पल्योपमना असख्या तर्वा भाग | „ अर्धपुद्रलपरिवर्तन |
| ३ सम्यग्मिष्याण्टि | „ | „ | अतर्मुहूर्त | „ |
| ४ असयतसम्यग्टि | निरन्तर | | „ | „ |
| ५ संयनासयत | „ | | „ | „ |
| ६ प्रमत्तसयत | „ | | „ | „ |
| ७ अत्रमत्तसयत | „ | | „ | „ |
| ८ अपूर्वकरण | { उपशा एक समय क्षपक „ | वर्षपृथक्कव छह मास | „ | निरन्तर |
| ९ अनितृचिस्तरण | { उपशा „ क्षपक „ | वर्षपृथक्कव छह मास | „ | निरन्तर |
| १० सूक्ष्मसाप्पराय | { उपशा „ क्षपक „ | वर्षपृथक्कव छह मास | „ | निरन्तर |
| ११ उपशान्तनयाय | „ | वर्षपृथक्कव | „ | „ |
| १२ शीणमोह | „ | छह मास | „ | निरन्तर |
| १३ सयागिन्नेवली | निरन्तर | | „ | „ |
| १४ अयोगिन्नेवली | एक समय | छह मास | „ | „ |

दूसरे गुणस्थानकी अपेक्षा तीसरे गुणस्थानका काल सख्यातगुणा है। सम्य, सम्यदृष्टि जीव अक्षरयातगुणित हैं, क्योंकि, तीसरे गुणस्थानको प्राप्त ६। चौथे गुणस्थानको प्राप्त होनेवाली राशि आत्मीके अक्षरयातवें भागगुणित है जीवोंसे मिथ्यादृष्टि जाव अनन्तगुणित हैं, क्योंकि, मिथ्यादृष्टि जीव अनन्त ६ यह चौदहों गुणस्थानोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्व कहा गया है, जिसका मूल आध। यह अल्पबहुत्वगुणम्यानोंमें दो दृष्टियोंसे बताया गया है प्रवेशकी अपेक्षा और मच्चन निन गुणस्थानोंमें अन्तरका अभाव है अर्थात् जो गुणस्थान सर्वकाल समग्र है, वद्वय सचयकालकी ही अपेक्षामें कहा गया है। ऐसे गुणस्थान, जैसा कि अ बताया जा चुका है, मिथ्यादृष्टि, असत्यसम्यदृष्टि आदि चार और सयोगिकेवर्ती, ये निन गुणम्यानोंमें अन्तर पढता है, उनमें अपबहुत्व प्रवेश ओर सचयकाल, इन दोनों बताया गया है। जैसे— अन्तरकाल समाप्त होनेके पश्चात् उपशामक ओर क्षपक गुणस्थानों कम एक दो तीनसे उग्यार अधिरमें अधिक ५४ और १०८ तक जीव एक ममयों कर सकते हैं, और निरन्तर आठ समयोंमें प्रवेश करने पर उनके सचयका प्रमाण क्रमश और ६०८ तक एक एक गुणम्यानों हो जाता है। दूसरे और तीसरे गुणस्थानका प्रवेश सचय प्रयानुसार जानना चाहिए। ऐसे गुणस्थान चारों उपशामक, चारों क्षपक, अयोगिके सम्यमिम्यादृष्टि और सासादनसम्यदृष्टि हैं।

इसके अनिरिक इस अनुयोगद्वारमें मूळसूत्रकारने एक ही गुणस्थानमें सम्यक्त्वकी अपेक्षामें भी अल्पबहुत्व बताया है। जैसे— असत्यसम्यदृष्टि गुणम्यानोंमें उपशामसम्यदृष्टि जीव सबसे कम हैं। उपशामसम्यदृष्टियोंसे क्षायिकसम्यदृष्टि जीव असत्यातगुणित हैं और क्षायिकसम्यदृष्टि योंमें वेदकसम्यदृष्टि जीव असत्यातगुणित हैं। इम हानाधिकताका कारण उत्तरोत्तर सचयकालकी अधिरता है। सपकासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यदृष्टि जीव सबसे कम हैं, क्योंकि, देशसयनको धारण करनेवाले क्षायिकसम्यदृष्टि मनुष्योंका होना अल्पान दुर्लभ है। दूसरी बात यह है कि निर्वचोंमें क्षायिकसम्यक्त्वके माप देशसयन नहीं पाया जाता है। इसका कारण यह है कि निर्वचोंमें दर्शनमोहनीयकमकी क्षपणा नहीं होती है। इसी सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यदृष्टियोंसे उपशामसम्यदृष्टि सयतासयन असत्यातगुणित हैं और उपशामसम्यदृष्टियोंसे वेदकसम्यदृष्टि सपकासयन असत्यातगुणित हैं। प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें उपशामसम्यदृष्टि जीव सबसे कम हैं, उनसे क्षायिकसम्यदृष्टि जीव सत्यातगुणित हैं, वासे वेदकसम्यदृष्टि जीव सत्यातगुणित हैं। इस अल्पबहुत्वका कारण सचयकालकी हीनाधिकता

मार्गणास्थानोंकी अपेक्षा जीवों अल्पबहुत्वका प्रमाण.

| मार्गणा | मार्गणाके अन्तर भेद | अन्तर | | | भाव |
|---------|--|----------------------|----------|-----------|---------|
| | | नाना जीवोंकी अपेक्षा | | परत | |
| | | जघन्य | उत्कृष्ट | जघन | |
| चन्द्र | नित्यरुष्टि | ओषवत् | ओषवत् | ओषवत् | ओषवत् |
| | { छासादनसम्पन्नुष्टि सम्पन्नित्यादृष्टि | " | " | " | " |
| स्तर | { पृथिव्याद्यधिक आदि चार वदस्तरिद्यधिक | निरन्तर | | धूम्रवर्ण | औद्यिक |
| | | " | | " | " |
| रक्षक | नित्यरुष्टि | ओषवत् | ओषवत् | काल | ओषवत् |
| | { छासादनसम्पन्नुष्टि सम्पन्नित्यादृष्टि | " | " | " | " |
| | { कमपत्तादि चार दुमरक्षक | निरन्तर | | काल | " |
| | { चारों उपरामक | ओषवत् | ओषवत् | " | औपचामिक |
| रक्षक | { चारों सुषक कराणिकवर्णी बनाएवकी | " | " | " | सायिक |
| | { नित्यरुष्टि स्तरसम्पन्नुष्टि सम्पन्नित्यादृष्टि कमपत्तादि चार दुमरक्षक चारापवकी | निरन्तर | | " | ओषवत् |

मार्गणास्थानोंकी अपेक्षाओंके अन्तर, भाव और अल्पमहुत्तका प्र

| माना आँवें की अपेक्षा | | सन्त | | भाव |
|-------------------------|------------------------|---|--------------------------------------|-----|
| उत्कृष्ट | वस | उत्कृष्ट | | |
| सन्त | सन्त | देशान १, ३, ७, १०, १७ २२, ३३ सागरोपम | औदयिक औप क्षायिक पारिणामि क्षायोपशमि | |
| पल्यामना अथ क्वाउता भाग | प्यामना अथ भाग क्वाउता | देशान तीन पल्योपम | औदयिक औपक्षय | |
| सन्त | सन्त | देशान तीन पल्योपम पूर्वैकटीपृथक्त्वते अधिक तीन पल्योपम | औदयिक पारिणामि क्षायोपशा औप क्षायिक | |
| सन्त | सन्त | पूर्वैकटीपृथक्त्व | क्षायोपशा | |
| सन्त | सन्त | औपक्षय | औपक्षय | |
| सन्त | सन्त | औपक्षय | क्षायि | |
| सन्त | सन्त | देशान ३१ सागरोपम | औदयिक औप क्षायिक | |
| सन्त | सन्त | पूर्वैकटीपृथक्त्वसे अधिक दो हजार सागरोपम अनन्तकालामक असस्यात पुद्ग परिवतन | औदयिक | |

य

मार्गणास्थानोंकी अपेक्षा की अल्पबहुत्वका प्रमाण.

| मार्गणाक मवान्तर भेद | नाना जीवोंकी अपेक्षा | | अन्तर | भाव | ग्रणरथा |
|--|----------------------------------|---------------------|---|---------------------|---|
| | जघन्य | उत्कृष्ट | वत | | |
| रुनाद्यप्राणी मियाण्टि " समादनसम्यग्दण्टि " अक्षयसम्यग्दण्टि " मानीभवडी | औदारिन् मिश्रवत् | औदारिन्मिश्रवत् | औदारिन् | ओषवत् | सयोगिनेन सासादनसम्य अक्षयसम्य मियाण्टि |
| मियाण्टि { समादनसम्यग्दण्टि मपनिष्याण्टि { अक्षयसम्यग्दण्टिसे बन्धवसवत् तक { अक्षयक अपूर्वकरण " अनिवृत्तिकरण { अक्षयक वर्तमान " अनिवृत्तिकरण | निरन्तर ओषवत् निरन्तर " | ओषवत् ओषवत् " | अक्षय पक्षयसम्यग्दण्टि अक्षय " | औदयिक ओषवत् " | सर्वग्रणरथान |
| निषाण्टि { समादनसम्यग्दण्टि मपनिष्याण्टि { अक्षयसम्यग्दण्टिसे कक्षयसवत् तक { अक्षयक अपूर्वकरण " अनिवृत्तिकरण { अक्षयक वर्तमान " अनिवृत्तिकरण | ओषवत् " | ओषवत् " | अक्षय पक्षयसम्यग्दण्टि अक्षय " | औदयिक ओषवत् " | " |
| निषाण्टि { समादनसम्यग्दण्टि मपनिष्याण्टि { अक्षयसम्यग्दण्टिसे कक्षयसवत् तक { अक्षयक अपूर्वकरण " अनिवृत्तिकरण { अक्षयक वर्तमान " अनिवृत्तिकरण | ओषवत् निरन्तर ओषवत् | ओषवत् " | अक्षय पक्षयसम्यग्दण्टि अक्षय " | औदयिक ओषवत् " | साधिक वर्ष |

मार्गस्थानोंकी अपेक्षा जीवोंके अन्तर, भाव और अल्पबहुत्वका प्रमाण.

| अंतर | | भाव | अल्प |
|--------------------------------|------------------|------------------------------|--------------------------------------|
| ता जीवोंकी अपेक्षा | एक जीवकी अपेक्षा | | |
| उत्कृष्ट | सम | | |
| पत्न्योपमका अम स्यात्तर्वा माग | | ओषवत् | |
| ओषवत् | | ओषवत् | संबन्धुणस्थान |
| " | कान्तवत् | ओषवत् | |
| मनोयोगिवत् | मनोयोगिवत् | ओषवत् | मिथ्यादृष्टि |
| ओषवत् | | | सयोगिकेवली असयत्सम्यग्दृष्टि |
| वपपुषकन्व | | | सामादनसम्यग्दृष्टि |
| " | | क्षायिक, क्षायोपशमिक क्षायिक | मिथ्यादृष्टि |
| मनोयोगिवत् | मनोयोगिवत् | ओषवत् | चारों गुणस्थान |
| बारह सुहृत् | | | |
| दोदरिक्मिथवत् | दोदरिक्मिथवत् | | सामादनसम्यग्दृष्टि असयत्सम्यग्दृष्टि |
| इयपुषकन्व | | | मिथ्यादृष्टि |
| | | क्षायोपशमिक | गुणस्थानभेदाभाव |

मार्गणास्थानोंकी अपेक्षा का प्रमाण.

| प्रकार का तर भेद | नाना जीवोंकी अपेक्षा | | अन्तर | | माय | दुपरधान |
|--|----------------------|-----------------|-------|----|--------|---------|
| | जघय | उत्कृष्ट | सा | वत | | |
| <ul style="list-style-type: none"> सामान्य निम्न सामान्य उच्च सामान्य | औदारिक मिश्रवत् | औदारिक मिश्रवत् | कै | कै | आपन्न | सामान्य |
| <ul style="list-style-type: none"> निम्न उच्च सामान्य उच्च सामान्य | निरन्तर | निरन्तर | कै | कै | औदारिक | उच्च |
| <ul style="list-style-type: none"> निम्न उच्च सामान्य उच्च सामान्य | औषवत् | औषवत् | कै | कै | औषवत् | उच्च |
| <ul style="list-style-type: none"> निम्न उच्च सामान्य उच्च सामान्य | निरन्तर | निरन्तर | कै | कै | " | उच्च |
| <ul style="list-style-type: none"> निम्न उच्च सामान्य उच्च सामान्य | " | " | कै | कै | औषवत् | उच्च |
| <ul style="list-style-type: none"> निम्न उच्च सामान्य उच्च सामान्य | एक समय | वर्ष | कै | कै | साधिक | उच्च |
| <ul style="list-style-type: none"> निम्न उच्च सामान्य उच्च सामान्य | औषवत् | औषवत् | कै | कै | औषवत् | उच्च |
| <ul style="list-style-type: none"> निम्न उच्च सामान्य उच्च सामान्य | " | " | कै | कै | " | उच्च |
| <ul style="list-style-type: none"> निम्न उच्च सामान्य उच्च सामान्य | निरन्तर | निरन्तर | कै | कै | " | उच्च |
| <ul style="list-style-type: none"> निम्न उच्च सामान्य उच्च सामान्य | औषवत् | औषवत् | कै | कै | औषवत् | उच्च |
| <ul style="list-style-type: none"> निम्न उच्च सामान्य उच्च सामान्य | एक समय | साधिक वर्ष | कै | कै | साधिक | उच्च |

जीवोंके अन्तर, भाव और अल्पनहुत्नका प्रमाण.

| एक जीवकी अपेक्षा | | भाव | अल्पनहुत्न | |
|------------------|------------------|-----------|-------------------------------------|---|
| विषय | उद्दष्ट | | गुणस्थान | प्रमाण |
| सर्वहृत् | देशेन ३३ सागरोपम | ओदयिक | | |
| ओषवत् | ओषवत् | ओषवत् | सर्वगुणस्थान | ओषवत् |
| | निरन्तर | क्षायिक | | |
| प्रतसृहर्त | अतसृहर्त | ओषवत् | " | " |
| | निरन्तर | " | | |
| ओषवत् | आषवत् | " | " | " |
| योगिवत् | मनोयोगिवत् | आषवत् | अन्यतमम्यन्दि तत्र मिष्यान्दि | पुरुषवेदिवत् |
| ओषवत् | ओषवत् | " | सूक्ष्म उप " क्षपन् | अनन्तगुणित विशेषाधिक सरपातगुणित |
| | निरन्तर | " | | |
| " | " | क्षायिक | चारों गुणस्थान | ओषवत् |
| | निरन्तर | ओदयिक | सासादनसम्यन्दि मिष्यान्दि | सर्वसे कम असख्यातगुणित अनन्तगुणित |
| | " | पारिणाधिक | | |

ही है । इसी प्रकारका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व अपूर्णकरण आदि तीन उपशामक गुणस्थानोंमें जानना चाहिए । यहा ध्यान रखनेकी बात यह है कि इन गुणस्थानोंमें उपशामसम्यक्त्व और क्षायिकसम्यक्त्व, ये दो ही सम्यक्त्व होते हैं । यहा वेदकसम्यक्त्व नहीं पाया जाता, क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वके साथ उपशामरोगीके आरोहणका अभाव है । अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामसम्यक्त्वकी जीव सबसे कम हैं, उनसे उर्ही गुणस्थानउर्ती क्षायिकसम्यक्त्वकी जीव सख्यात-गुणित हैं । आगेके गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, वहाँ सभी जीवोंके एरुमात्र क्षायिकसम्यक्त्व ही पाया जाता है । इसी प्रकार प्रारभके तीन गुणस्थानोंमें भी यह अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, उनमें सम्यग्दर्शन होता ही नहीं है ।

जिस प्रकार यह ओषधी अपेक्षा अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार आदेशकी अपेक्षा भी मार्गणास्थानोंमें अल्पबहुत्व जानना चाहिए । भिन्न भिन्न मार्गणाओंमें जो खास विशेषता है, वह प्रथके स्वाध्यायसे ही हृदयगम की जा सकेगी । किन्तु स्थूलरीतिकी अल्पबहुत्व द्रव्यप्रमाणानुगम (भाग ३) पृष्ठ ३८ से ४२ तक अकसद्यष्टिके साथ बताया गया है, जो कि वहासे जाना जा सकता है । भेद केवल इतना ही है कि वहाँ वह कम बहुत्वसे अल्पकी ओर रखा गया है ।

इन प्ररूपणाओंका मथितार्थ साथमें लगाये गये नकशोंसे सुस्पष्ट हो जाता है ।

इस प्रकार अल्पबहुत्वप्ररूपणाकी समाप्तिके साथ जीवस्थाननामक प्रथम सङ्की आठों प्ररूपणाए समाप्त हो जाती हैं ।



ही है। इसी प्रकारका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व अपूर्णकरण आदि तीन उपशामक गुणस्थानोंमें जानना चाहिए। यहा ध्यान रखनेकी बात यह है कि इन गुणस्थानोंमें उपशामसम्यक्त्व और क्षायिकसम्यक्त्व, ये दो ही सम्यक्त्व होते हैं। यहा वेदकसम्यक्त्व नहीं पाया जाता, क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वके साथ उपशामश्रेणीके आरोहणका अभाव है। अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामसम्यक्त्वकी जीव सबसे कम हैं, उनसे उन्हीं गुणस्थानवर्ती क्षायिकसम्यक्त्वकी जीव सरयात-गुणित हैं। आगेके गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, वहां सभी जीवोंके एकमात्र क्षायिकसम्यक्त्व ही पाया जाता है। इसी प्रकार प्रारम्भके तीन गुणस्थानोंमें भी यह अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, उनमें सम्यग्दर्शन होता ही नहीं है।

जिस प्रकार यह ओषधी अपेक्षा अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार आदेशकी अपेक्षा भी मार्गणास्थानोंमें अल्पबहुत्व जानना चाहिए। भिन्न भिन्न मार्गणाओंमें जो खास विशेषता है, वह प्रत्येक स्वाध्यायसे ही हृदयगम की जा सकेगी। किन्तु स्थूलरीतिका अल्पबहुत्व द्रव्यप्रमाणानुगम (भाग ३) पृष्ठ ३८ से ४२ तक अरुसदृष्टिके साथ बताया गया है, जो कि बढ़ासि जाना जा सकता है। भेद केवल इतना ही है कि वहा वह कम बहुत्वसे अल्पकी ओर रक्खा गया है।

इन प्ररूपणाओंका मधितार्थ साथमें लगाये गये नकशोंसे सुस्पष्ट हो जाता है।

इस प्रकार अल्पबहुत्वप्ररूपणाकी समाप्तिके साथ जीवस्थाननामक प्रथम खण्डकी आठों प्ररूपणाए समाप्त हो जाती हैं।



| क्रम न | विषय | पृष्ठ न | क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|--|---------|--------|---|---------|
| | १ नृतिमार्गणा (नररुगति) | २२-३१ | | तियचोंका सोपपत्तिक अन्तर- निरूपण | ३३-३७ |
| १८ | नारकियोंमें मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके नाना ओर एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका सोदाहरण निरूपण | २२-२३ | २५ | पचेन्द्रियतिर्यच, पचेन्द्रिय- तिर्यचपर्याप्त और पचेन्द्रिय- तिर्यचयोनिमती मिथ्यादृष्टि- योंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | ३७-३८ |
| १९ | नारकियोंमें सासादनसम्य- ग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका सदृष्टान्त निरूपण | २४-२६ | २६ | तीनों प्रकारके तियचोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | ३८-४१ |
| २० | प्रथम पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके मिथ्या दृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि नारकियोंके दोनों अपेक्षा- ओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका दृष्टान्तपूर्वक प्रति- पादन | २७-२८ | २७ | तीनों प्रकारके असयतसम्य- ग्दृष्टि तिर्यचोंका दोनों अपे- क्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | ४१-४३ |
| २१ | सातों पृथिवियोंके सासादन- सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्या- दृष्टि नारकियोंका नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | २९-३१ | २८ | तीनों प्रकारके सयतासयत तिर्यचोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | ४३-४५ |
| | (तिर्यचगति) | ३१-४६ | २९ | पचेन्द्रिय तिर्यच लब्ध पर्याप्तकोंका दोनों अपेक्षा- ओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | ४७-४६ |
| २२ | तिर्यच मिथ्यादृष्टियोंका नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | ३१-३२ | | (मनुष्यगति) | ४६-५७ |
| २३ | तिर्यच और मनुष्य जन्मके कितने समय पश्चात् सम्यक्त्व और सयमासयम आदिको प्राप्त कर सकते हैं, इस विषयमें दक्षिण और उत्तर प्रतिपात्तिके अनुसार दो प्रकारके उपदेशोंका निरूपण | ३० | ३० | मनुष्य, मनुष्यपर्याप्तक और मनुष्यनी मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर | ४६-४७ |
| २४ | सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे लेकर सयतासयत गुणस्थान तकके | | ३१ | भोगभूमिज मनुष्योंमें जन्म लेनेके पश्चात् सात सप्ताहके द्वारा प्राप्त होनेवाली योग्य ताका वर्णन | ४७ |
| | | | ३२ | उक्त तीनों प्रकारके सासा- दनसम्यग्दृष्टि और सम्य- ग्मिथ्यादृष्टि मनुष्योंका अन्तर | ४८-५० |
| | | | ३३ | तीनों प्रकारके असयतसम्य- ग्दृष्टि मनुष्योंका अन्तर | ५०-५१ |

५ विषय-सूची

(अन्तरानुगम)

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न | क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|--|---------|--------|--|---------|
| | १ विषयकी उत्थानिका | १ ४ | | सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा सोदाहरण जघन्य अन्तर प्रतिपादन | ७ |
| १ | ध्वलाकारका मगलाचरण और प्रतिक्षा | १ | ११ | उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर निरूपण | ८ |
| २ | अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश भेद-वचन | " | १२ | सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा सोदाहरण जघन्य अन्तर निरूपण तथा तदन्तर्गत अनेक शकाओंका समाधान | ९-११ |
| ३ | नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, फाल और भाव, इन छह भेद रूप अन्तरका स्वरूप निरूपण | १ ३ | १३ | उपर्युक्त जीवोंका सोदाहरण उत्कृष्ट अन्तर | ११-१३ |
| ४ | कौनसे अन्तरसे प्रयोजन है, यह बताकर अन्तरके प्रकारके वाचक नाम | ३ | १४ | असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसयत गुणस्थान तक नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका सोदाहरण निरूपण | १३-१७ |
| ५ | अन्तरानुगमका स्वरूप तथा उसके द्विविध निर्देशाका सयुक्तिक निरूपण | " | १५ | चारों उपशामक गुणस्थानोंका नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका सोदाहरण निरूपण | १७-२० |
| | २ ओषसे अन्तरानुगमनिर्देश | ४ २२ | १६ | चारों क्षपक और अयोगि केवलीका नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | २०-२१ |
| ६ | मिथ्यादृष्टि जीवोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर निरूपण, तथा सूत्र पठित 'णत्थि अन्तर, णिरन्तर' इन दोनों पदोंका साधकता प्रतिपादन | ४ ५ | १७ | सयोगिकेवलीके नाना और एक जीवकी अपेक्षा अन्तरके अभावका प्रतिपादन | २१ |
| ७ | मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तरका सोदाहरण निरूपण | " | | | |
| ८ | सम्यक्त्व दृष्टिके पश्चात् होनेवाला अन्तिम मिथ्यात्व पहलेका मिथ्यात्व नहीं हो सकता, इस शकाका समाधान | " | | | |
| ९ | मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तरका सोदाहरण निरूपण | ६ | | | |
| १० | सासादनसम्यग्दृष्टि और | | | | |

आदेशसे अन्तरानुगमनिर्देश २२-१७९

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न | क्रम न | विषय | पृष्ठ नं |
|--------|--|---------|--------|---|----------------|
| | १ गतिमार्गणा (नरकगति) | २२-३१ | | तिर्यचोंका सोपपत्तिक अन्तर- निरूपण | ३३-३७ |
| १८ | नारकियोंमें मिथ्यादृष्टि ओर असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका सोदाहरण निरूपण | २० २३ | २५ | पचेन्द्रियतिर्यच, पचेन्द्रिय- तिर्यचपर्याप्त ओर पचेन्द्रिय- तिर्यचयोनिमती मिथ्यादृष्टि- योंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | ३७ ३८ |
| १९ | नारकियोंमें सासादनसम्य- ग्दृष्टि ओर सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका सदृष्टान्त निरूपण | २४ २६ | २६ | तीनों प्रकारके तिर्यचोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | ३८ ४१ |
| २० | प्रथम पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके मिथ्या- दृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि नारकियोंके दोनों अपेक्षा ओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका दृष्टान्तपूर्वक प्रति- पादन | २७ २८ | २७ | तीनों प्रकारके असयतसम्य- ग्दृष्टि तिर्यचोंका दोनों अपे- क्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | ४१ ४३ |
| २१ | सातों पृथिवियोंके सासादन- सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्या- दृष्टि नारकियोंका नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | २९-३१ | २८ | तीनों प्रकारके सयतासयत तिर्यचोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य ओर उत्कृष्ट अन्तर | ४३ ४५ |
| | (तिर्यचगति) | ३१-४६ | २९ | पचेन्द्रिय तिर्यच लब्ध पर्याप्तकोंका दोनों अपेक्षा ओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | ४५ ४६ ४६-५७ |
| २२ | तिर्यच मिथ्यादृष्टियोंका नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर | ३१-३२ | | (मनुष्यगति) | |
| २३ | तिर्यच और मनुष्य जन्मके द्वितीये समय पश्चात् सम्यक्त्व और सयमासयम आदिकी प्राप्त कर सकते हैं, इस विषयमें दक्षिण और उत्तर प्रतिपत्तिके अनुसार दो प्रकारके उपदेशोंका निरूपण | ३० | ३० | मनुष्य, मनुष्यपर्याप्तिक और मनुष्यनी मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर | ४६ ४७ |
| २४ | सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे लेकर सयतासयत गुणस्थान तकके | | ३१ | भोगभूमिज मनुष्योंमें जन्म लेनेके पश्चात् सात सप्ताहके द्वारा प्राप्त होनेवाली योग्य ताका वर्णन | ४७ |
| | | | ३२ | उक्त तीनों प्रकारके सासा दनसम्यग्दृष्टि और सम्य- ग्मिथ्यादृष्टि मनुष्योंका अन्तर | ४८ ५० |
| | | | ३३ | तीनों प्रकारके असयतसम्य- ग्दृष्टि मनुष्योंका अन्तर | ५० ५१ |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न | क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|---|---------|--------|---|---------|
| ३४ | सयतासयतसे लेकर अप्रमत्त सयत गुणस्थान तक तीनों प्रकारके मनुष्योंका अन्तर | ११३ | | योंमें ले जाकर, अमम्यान्त पुद्गलपरिवर्तन तक उनमें परिभ्रमण कराके पीछे देवोंमें उत्पन्न कराने देखाया अन्तर क्यों नहीं कहा? इस शकाका समाधान | ६ |
| ३५ | चारों उपशामक मनुष्यनिर्माण अन्तर | ५३१५ | | | |
| ३६ | चारों रूप, अयोगिकेवली और सयोगिकेवली मनुष्यनिर्माण अन्तर | ११५२ | ४७ | एकेन्द्रिय जीवको प्रसन्नायिक जीवोंमें उत्पन्न कराने अन्तर कहनेसे मार्गणाका विनाश क्यों नहीं होगा? इस शकाका समाधान | ६६ |
| ३७ | लक्ष्यपर्याप्तक मनुष्योंका अन्तर | ५६५७ | ४८ | वादर एकेन्द्रिय जीवोंका अन्तर | ६६६७ |
| | (देवगति) | ५७६४ | ४९ | वादर एकेन्द्रियपर्याप्त और वादर एकेन्द्रियअपर्याप्तकोंका अन्तर | ६७ |
| ३८ | मिथ्यादृष्टि और अमयत सम्यग्दृष्टि देवोंका अन्तर | १७१८ | ५० | सूक्ष्म एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त और सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्तकोंका अन्तर | ६७६८ |
| ३९ | सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि देवोंका अन्तर | १०२ | ५१ | द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और उर्हीने पर्याप्तक तथा लक्ष्यपर्याप्तक जीवोंका अन्तर | ६८६९ |
| ४० | भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषा तथा सोधम ईशानरूपसे लेकर शतार-सहस्रारकल्प तकके मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि देवोंका अन्तर | ६१६२ | ५२ | पचेन्द्रिय और पचेन्द्रिय पर्याप्तक मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि तथा सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर | ६९७१ |
| ४१ | उक्त देवोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि योंका अन्तर | ६० | ५३ | असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसयत गुणस्थान तक दोनों प्रकारके पचेन्द्रिय जीवोंका अन्तर | ७१७५ |
| ४२ | आनतकल्पसे लेकर नवग्रहेयन—विमानवासी देवोंमें मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टियोंका अन्तर | ६२६३ | ५४ | पचेन्द्रियपर्याप्तकोंके स्तानरोपमगतपृथक्त्वप्रमाण अन्तर कहते समय 'देशान' पद क्यों नहीं कहा? विद्यक्षित जीवको सही, सम्मूर्च्छिम | |
| ४३ | उक्त कल्पोंके सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि देवोंका अन्तर | ६४ | | | |
| ४४ | नव अनुदिश और पाच अनुत्तरविमानवासी देवोंमें अन्तरमाचरन प्रतिपादन | | | | |
| | २ इन्द्रियमार्गणा | ६५७७ | | | |
| | एकेन्द्रिय जीवोंका अन्तर | ६५७६ | | | |
| | देव मिथ्यादृष्टिको एकेन्द्रिय | | | | |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न | क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|--|---------|--------|---|---------|
| | पचेन्द्रियोंमें उत्पन्न कराकर ओर सम्यक्त्वको ग्रहण कराकर मिथ्यात्वके द्वारा अन्तरको प्राप्त क्यों नहीं कराया ? इत्यादि शकाओंका समाधान | ७३ | | सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्या-दृष्टि जीवोंका अन्तर | ८८ |
| ५५ | पचेन्द्रिय और पचेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें चारों उपशाम-कोंका अन्तर | ७५-७६ | ६४ | उक्त योगवाले चारों उपशामक और चारों क्षपकोंका अन्तर | ८८ ८९ |
| ५६ | उक्त जीवोंमें चारों क्षपक, सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीका अन्तर | ७७ | ६५ | एक योगके परिणमन कालसे गुणस्थानका काल सत्यात-गुणा हे, यह कैसे जाना ? इस शकाका समाधान | ८९ |
| ५७ | पचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंका अन्तर | " | ६६ | ओदारिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, असयतसम्यग्दृष्टि और सयोगिकेवलीका पृथक् पृथक् अन्तर प्रतिपादन | ८९ ९१ |
| | ३ कायमार्गणा | ७८ ८७ | ६७ | वैक्रियिककाययोगी चारों गुणस्थानवर्ती जीवोंका अन्तर | ९१ |
| ५८ | पृथिवीकायिक आदि चार स्थावर कायिकोंका अन्तर | ७८ | ६८ | वेक्रियिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर | ९१ ९३ |
| ५९ | वनस्पतिकायिक वादर, सूक्ष्म और पर्याप्तक तथा अपर्याप्तक जीवोंका अन्तर | ७९-८० | ६९ | आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी प्रमत्त-सयतोंका अन्तर | ९३ |
| ६० | प्रसकायिक और प्रसकायिक-पर्याप्तकोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तकके जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर निरूपण | ८० ८६ | ७० | कार्मणकाययोगी मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, असयत सम्यग्दृष्टि और सयोगिके-वलीका अन्तर | " |
| ६१ | प्रसकायिक लब्ध्यपर्याप्तकोंका अन्तर | ८६ ८७ | | ५ वेदमार्गणा | ९४-१११ |
| | ४ योगमार्गणा | ८७-९४ | ७१ | ऋग्वेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर | ९४ |
| ६२ | पाचों मनोयोगी, पाचां वचनयोगी, काययोगी और ओदारिककाययोगी मिथ्या-दृष्टि, असयतसम्यग्दृष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसयत, अप्रमत्तसयत आर सयोगिकेवली जिनका अन्तर | ८७ | ७२ | ऋग्वेदी सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवों का अन्तर | ९५-९६ |
| ६३ | उक्त योगवाले सासादन | | ७३ | असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसयत गुणस्थान तकके ऋग्वेदी जीवोंका अन्तर | ९७ ९८ |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न | क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|--|---------|----------------------|---|---------|
| ७४ | स्त्रीवेदी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण उपशामकका अन्तर | १९ १०० | ८६ | आभिनवोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अघधिज्ञानी असयत सम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर | ११४ ११६ |
| ७५ | स्त्रीवेदी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण क्षपकका अन्तर | १०० | ८७ | उक्त तीनों ज्ञानवाले सयता सयतोंका तदन्तर्गत शका समाधानपूर्वक अन्तर निरूपण | ११६ ११९ |
| ७६ | पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर | " | ८८ | सही, सम्मूर्च्छिम पर्याप्तक जीवोंमें अघधिज्ञान और उपशामसम्यक्त्वका अभाव है, यह कैसे जाना? इस शकाका तथा इसीसे सम्यन्धित अन्य अनेकों शकाओंका सप्रमाण समाधान | ११८ ११९ |
| ७७ | पुरुषवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर | १०१ | ८९ | तीनों ज्ञानवाले प्रमत्त और अध्रमत्तसयतोंका अन्तर तथा तदन्तर्गत विशेषताओंका प्रतिपादन | ११९ १२२ |
| ७८ | असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अध्रमत्तसयत गुणस्थान तरुके पुरुषवेदी जीवोंका अन्तर | १०२ १०४ | ९० | तीनों ज्ञानवाले चारों उपशामक और चारों क्षपकोंका पृथक् पृथक् अन्तर निरूपण | १२२ १२४ |
| ७९ | पुरुषवेदी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण उपशामक तथा क्षपकोंका पृथक् पृथक् अन्तर प्रतिपादन | १०४ १०६ | ९१ | प्रमत्तसयतसे लेकर क्षीण कपाय गुणस्थान तक मन पर्ययज्ञानी जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर निरूपण | १२४ १२७ |
| ८० | नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर | १०६ | ९२ | केवलज्ञानी जीवोंका अन्तर | १२७ |
| ८१ | सासादनसम्यग्दृष्टिसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थान तरु पृथक् पृथक् नपुंसकवेदी जीवोंका अन्तर | १०७-१०९ | ८ सपममार्गणा १२८-१३५ | | |
| ८२ | अपगतवेदी जीवोंका अन्तर | १०९ १११ | ९३ | प्रमत्तसयतसे लेकर अयोगि केवली गुणस्थान तक समस्त सयतोंका पृथक् पृथक् अन्तर | १२८ |
| | ६ कपायमार्गणा | १११ ११३ | ९४ | सामायिक और छेदोपस्थापनासयमी प्रमत्तसयतादि चारों गुणस्थानवर्ती जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर | १२८ १३१ |
| ८३ | मिथ्यादृष्टिसे लेकर सूक्ष्म साम्पराय गुणस्थान तक चारों क्षपायवाले जीवोंका तदन्तर्गत शका-समाधान पूर्वक अन्तर निरूपण | १११ ११२ | ९५ | परिहारशुद्धिसयमी प्रमत्त और अध्रमत्तसयतोंका अन्तर | १३१ |
| ८४ | अनपयो जीवोंका अन्तर | ११३ | | | |
| | ७ ज्ञानमार्गणा | ११४ १२७ | | | |
| ८५ | मत्यज्ञानी, श्रुतज्ञानी और विभगज्ञानी मिथ्यादृष्टि तथा सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर | ११४ | | | |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न | क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|--|---------|--------|---|---------|
| ९६ | सूक्ष्मसाम्परायसयमी उप- शामक और क्षपक सूक्ष्म साम्परायिक सयनोंका अन्तर | १३२ | | लेइया और पद्मलेइयावाले जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर | १४६ १४९ |
| ९७ | यथाख्यातग्रिहारसयमी चारों गुणम्भानोंका अन्तर | " | १०९ | मिथ्यादृष्टिसे लेकर सयोगि केवली गुणस्थान तरु शुद्धलेइयावाले जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर | १४९ १५४ |
| ९८ | सयतासयतोंका अन्तर | १३३ | | ११ भव्यमार्गणा | १५४ |
| ९९ | असयमी चारों गुणस्थानोंका पृथक् पृथक् अन्तर | १३३-१३५ | ११० | समस्त गुणस्थानवर्ती भव्य- जीवोंका अन्तर | " |
| | ९ दर्शनमार्गणा | १३५-१४३ | १११ | अभव्य जीवोंका अन्तर | " |
| १०० | चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर | १३५ | | १२ सम्यक्त्वमार्गणा | १५५-१७१ |
| १०१ | चक्षुदर्शनी सासादनसम्य- ग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्या दृष्टि जीवोंका अन्तर | १३६ १३७ | ११२ | अनयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तरु सम्यग्दृष्टि जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर | १५५ १५६ |
| १०२ | असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसयत गुणस्थान तरुके चक्षुदर्शनी जीवोंका अन्तर | १३८-१४१ | ११३ | क्षायिकसम्यक्त्वी असयत- सम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर | १५६ १५७ |
| १०३ | चक्षुदर्शनी चारों उपशाम कोंका अन्तर | १४१ | ११४ | क्षायिकसम्यक्त्वी सयता- सयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयतोंका अन्तर | १५७-१६० |
| १०४ | चक्षुदर्शनी चारों क्षपकोंका अन्तर | १४२ | ११५ | क्षायिकसम्यक्त्वी चारों उपशामकोंका अन्तर | १६० १६१ |
| १०५ | अचक्षुदर्शनी, अयधिदर्शनी और फलदर्शनी जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर | १४३ | ११६ | क्षायिकसम्यक्त्वी चारों क्षपक, सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीका अन्तर | १६१ १६२ |
| | १० लेइयामार्गणा | १४३-१५४ | ११७ | असयतसम्यग्दृष्टि वादि चार गुणस्थानवर्ती धेदक- सम्यग्दृष्टि जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर | १६२ १६५ |
| १०६ | वृष्ण, नील और कापोत लेइयावाले मिथ्यादृष्टि और अनयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर | १५३ १५५ | ११८ | असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर उपशान्नशपाय गुणस्थान तरु उपशामसम्यग्दृष्टि जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर | १६५ १७० |
| १०७ | उक्त तीनों अशुभलेइयावाले सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर | १४१ १४६ | ११९ | सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्य- ग्मिथ्यादृष्टि और मिथ्या- | |
| १०८ | मिथ्यादृष्टिसे लेकर अप्रमत्त सयत गुणस्थान तरु तेजो | | | | |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न | क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|-----------------|---|---------|--------|---|---------|
| | दृष्टि जावोंका पृथक् पृथक् अन्तर | १७०-१७१ | | विशेषता न होनेसे तीन ही निक्षेप कहना चाहिए ? इस शकाका सयुक्तिक और सप्रमाण समाधान | १८५ १८६ |
| | १३ सतिमार्गणा | १७१-१७२ | | | |
| १२० | मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे छत्र क्षीणकभाय तप सती जीवोंका अन्तर | " | ६ | औदयिकदि पाच भावोंमेंसे प्रवृत्तमें किस भावसे प्रयोजन है ? भावोंके अनेक भेद है, फिर यहा पाच ही भेद क्यों कहे ? इन शकाओंका समाधान | १८६ १८७ |
| १२१ | असती जीवोंका अन्तर | १७२ | | | |
| | १४ आहारमार्गणा | १७३-१७५ | | | |
| १२२ | आहारकमिथ्यादृष्टि, सासा दनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जावोंका अन्तर | १७३ १७४ | ७ | निद्रा, स्वामित्य आदि छह अनुयोगद्वारासे भावका स्वरूप निरूपण | १८६ १८८ |
| १२३ | असयतसम्यग्दृष्टि आदि चार गुणस्थानवाले आहार जीवोंका अन्तर | १७४ १७७ | ८ | औदयिकभावके स्थान और विकल्पकी अपेक्षा भेद तथा स्थानका स्वरूप निरूपण | १८९ |
| १२४ | आहारक चारों उपशामकोंका अन्तर | १७७ १७८ | ९ | असिद्धत्व किसे कहते हैं ? जाति, सस्थान, सहनन आदि औदयिकमात्रोंका किस भावमें अन्तभाव होता है ? इन शकाओंका समाधान | " |
| १२५ | आहारक चारों क्षपक और सयोगिकवलीका अन्तर | १७८ | १० | औपशमिकभावके स्थान और विकल्पकी अपेक्षा भेद निरूपण | १९० |
| १२६ | अनाहारक जीवोंका अन्तर | १७८ १७९ | ११ | औपशमिकचारित्रके सात भेदोंका विवरण | " |
| भावानुगम | | | | | |
| | १ | | | | |
| | विषयकी उत्पत्तिक | १८३ १९३ | १२ | क्षायिकभावके स्थान और विकल्पकी अपेक्षा भेद | १९० १९१ |
| १ | ध्वलाकारका मगलाचरण और प्रतिष्ठा | १८३ | १३ | आयोपशमिकभावके स्थान और विकल्पकी अपेक्षा भेद | १९१ १९२ |
| २ | भावानुगमकी अपेक्षा निद्रेश भेद निरूपण | " | १४ | पारिणात्मिकभावके भेद | " |
| ३ | नामभाव, स्थापनभाव, द्रव्य भाव और भावभाव, इन चार प्रकारके भावोंका अभेद स्वरूप निरूपण | १८२ १८५ | १५ | साधिपातिकभावका स्वरूप और भग निरूपण | १९३ |
| ४ | प्रवृत्तमें नोबागमभावभावने प्रयोजनका उद्देश्य | १८० | १६ | भगोंके निकालनेके त्रिपकरणसूत्र | " |
| | नाम और स्थापनामें धोर | | | | |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|--|---------|
| | २ | |
| | ओघसे भाषानुगमनिर्देश १९४-२०६ | |
| १७ | मिथ्यादृष्टि जीवके भावका निरूपण | १९४ |
| १८ | मिथ्यादृष्टि जीवके अन्य भी ज्ञान-दर्शनादिक भाव पाये जाते हैं, फिर उन्हें क्यों नहीं कहा ? इस शकालो उठाते हुए गुणस्थानोंमें समव भावोंके सयोगी भगोंका निरूपण तथा उक्त शकालो समाधान | १९४ १९६ |
| १९ | सासादनसम्यग्दृष्टि जीवके भावका निरूपण | १९६ |
| २० | दूसरे निमित्तसे उत्पन्न हुए भावको पारिणामिक माना जा सकता है, या नहीं, इस शकालो सयुक्तिक समाधान | " |
| २१ | सत्त्व, प्रमेयत्व आदिक भाव कारणके विना उत्पन्न होनेवाले पाये जाते हैं, फिर यह कैसे कहा कि कारणके विना उत्पन्न होनेवाले परिणामका अभाव है ? इस शकालो समाधान | १९७ |
| २२ | सासादनसम्यग्दृष्टिपना भी सम्यक्त्व और चारित्र्य, इन दोनोंके विरोधी अनन्तानुबन्धी कषायके उदयके विना नहीं होता है, इसलिए उसे ओदयिक क्यों नहीं मानते हैं ? इस शकालो समाधान | " |
| २३ | सासादनसम्यक्त्वको छोड़कर अन्य गुणस्थानसम्यन्धी भावोंमें पारिणामिकपनेका व्यवहार क्यों नहीं किया | |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|---|---------|
| | जाता ? इस शकालो तथा इसी प्रकारकी अन्य शकालोओंका समाधान | १९७ |
| २४ | सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवके भावका अनेक शकालोओंके समाधानपूर्वक विशद निरूपण | १९८-१९९ |
| २५ | असयतसम्यग्दृष्टि जीवके भावोंका अनेक शकालो-समाधानके साथ विशद विवेचन | १९९ २०० |
| २६ | असयतसम्यग्दृष्टिका असयतत्व औदयिकभावकी अपेक्षा है, इस बातको सूत्रकारद्वारा स्पष्टीकरण | २०१ |
| २७ | सयतासयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत जीवोंके भावोंका तदन्तर्गत शकालो-समाधानपूर्वक निरूपण | २०१ २०४ |
| २८ | दर्शनमोहनीयकर्मके उपशम, क्षय और क्षयोपशमकी अपेक्षा सयतासयतोंके औपशमिकादि भाव क्यों नहीं बतलाये ? इस शकालो समाधान | २०३ |
| २९ | चारों उपशमकोंके भावोंका निरूपण | २०४ २०५ |
| ३० | मोहनीयकर्मके उपशमसे रहित अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें औपशमिकभाव कैसे समव है ? इस शकालो अनेक प्रकारोंसे सयुक्तिक समाधान | " |
| ३१ | चारों क्षपक, सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीके भावोंका तदन्तर्गत अनेकों शकालोका समाधान करते हुए विशद विवेचन | २०५ २०६ |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|--|---------|
| | ३ | |
| | आदेशमे भारानुगमनिर्देश | २०६ २३८ |
| | १ गतिमार्गणा | २०६ २१६ |
| | (नरकगति) | २०६ २१२ |
| ३२ | नारकी मिथ्यादृष्टि जीवोंके भाव | २०६ |
| ३३ | सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिके सर्वघाती स्वधर्मोंके उदयक्षयसे, उर्हीने सदाचस्थारूप उपशमसे, तथा सम्यक्त्वप्रकृतिके देशघाती स्वधर्मोंके उदयक्षयसे, उर्हीके सदाचस्थारूप उपशमसे अथवा अनुदयोपशमसे और मिथ्यात्वप्रकृतिके सर्वघाती स्वधर्मोंके उदयसे मिथ्यादृष्टिभाव उत्पन्न होता है, इसलिये उसे क्षायोपशमिन् क्यों न माना जाय ? इस शराना सयुक्तिन समाधान | २०६ २०७ |
| ३४ | नारकी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके भाव | २०७ |
| ३५ | जब कि अनन्तानुन्धी कयायके उदयसे ही जीव सासादनसम्यग्दृष्टि होता है, तब उसे औदयिकभाव क्यों न कहा जाय ? इस शराना समाधान | " |
| ३६ | नारकी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके भावना तदन्तगनशका-समाधानपूर्वक निरूपण | २०८ |
| ३७ | नारकी असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके भाव | २०८ २०९ |
| ३८ | असयतसम्यग्दृष्टि नारकीयोंका असयतत्व औदयिक | |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|---|---------|
| | है, इस घातना स्पष्ट निरूपण | २०९ |
| ३९ | प्रथम पृथिवीमंलेकर सातवीं पृथिवी तक नारकी जीवोंके भावोंका निरूपण | २०९ २१२ |
| | (तिर्यचगति) | २१२ २१३ |
| ४० | सामान्य तिर्यच, पचेन्द्रिय तिर्यच, पचेन्द्रियतिर्यचपर्याप्त और पचेन्द्रियतिर्यच योनिमती जीवोंके सब गुणस्थान सम्यन्धी भावोंका निरूपण तथा योनिमती तिर्यचोंमें क्षायिकभाव न पाये जानेका स्पष्टीकरण | " |
| | (मनुष्यगति) | २१३ |
| ४१ | सामान्यमनुष्य, पर्याप्तमनुष्य और मनुष्यनियोंके सर्वगुणस्थानसम्यन्धी भावोंका निरूपण | " |
| ४२ | लघ्यपर्याप्त मनुष्य और तिर्यचोंके भावोंका सूक्ष्मकारद्वारा सूक्ष्म न होनेका कारण | " |
| | (देवगति) | २१४ २१६ |
| ४३ | चारों गुणस्थानघटा देवोंके भाव | २१४ |
| ४४ | भवनघासी, व्यन्तर ज्योतिषी देव और देवियोंके तथा सौधमे इशानरूपघासी देवियोंके भावोंका निरूपण | २१४ २१५ |
| ४५ | सौधमे-ईशानरूपसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तक देवोंके भावोंका विवरण | २१५ २१६ |
| | २ इन्द्रियमार्गणा | २१६ २१७ |
| ४६ | मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगिकरणी गुणस्थान तक पचेन्द्रियपर्याप्तकोंके भावोंका | |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न | क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|--|---------|--------|--|---------|
| | निरूपण, तथा एकेन्द्रिय, त्रिकलेन्द्रिय और लब्ध पर्याप्तक पचेन्द्रिय जीवोंके भाव न कहनेका कारण | २१६-२१७ | | सम्यग्दृष्टि और सयोगिकेवली जीवोंके भाव | २२१ |
| | ३ कायमार्गणा | २१७-२१८ | ५ | वेदमार्गणा | २२१-२२२ |
| ४७ | त्रसकायिक और त्रसकायिक-पर्याप्तक जीवोंके सर्व गुण स्थानसम्बन्धी भावोंका प्रति-पादन, तथा तत्सम्बन्धी शका समाधान | " | ५५ | स्त्रीवेदी, पुनपवेदी और नपु-सत्रवेदी जीवोंके भाव | २०१ |
| | ४ योगमार्गणा | २१८-२२१ | ५६ | अपगतवेदी जीवोंके भाव | २०२ |
| ४८ | पाचों मनोयोगी, पाचों चचनयोगी, काययोगी और ओदारिककाययोगी जीवोंके भाव | २१८ | ५७ | अपगतवेदी किसे कहा जाय ? इस शकाका सयुक्तिक समाधान | " |
| ४९ | ओदारिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, असयतसम्यग्दृष्टि और सयोगिकेवली जीवोंके भावोंका पृथक् पृथक् निरूपण | २१८-२१९ | | ६ कपायमार्गणा | २२३ |
| ५० | ओदारिकमिश्रकाययोगी अस-यतसम्यग्दृष्टि जीवोंमें ओप शमिकभाव न यतलानेका कारण | २१९ | ५८ | चतुष्कपायी जीवोंके भाव | " |
| ५१ | चारों गुणस्थानवर्ती वैकियिक काययोगी जीवोंके भाव | २१९-२२० | ५९ | अरुपायी जीवोंके भाव | " |
| ५२ | वैकियिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके भाव | २२० | ६० | रुपाय क्या वस्तु है, अरुपा-यता किस प्रकार घटित होती है ? इस शकाका सयुक्तिक समाधान | " |
| ५३ | आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवोंके भाव | " | | ७ ज्ञानमार्गणा | २२४-२२६ |
| ५४ | कार्मणकाययोगी मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, असयत | | ६१ | मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी और त्रिभगज्ञानी जीवोंके भाव | २२४-२२५ |
| | | | ६२ | मिथ्यादृष्टि जीवोंके ज्ञानको अज्ञानपना कैसे है ? ज्ञानका कार्य क्या है ? इत्यादि जनेकों शकाओंका समाधान | " |
| | | | ६३ | मति, श्रुत, अवधि, मन पर्यय और केवलज्ञानी जीवोंके भावोंका पृथक् पृथक् निरूपण | २२५-२२६ |
| | | | ६४ | 'सयोग' यह कौनसा भाव है ? योगको कार्मणशरीरसे उत्पन्न होनेजाला क्यों न माना जाय ? इन शकाओंका सयुक्तिक समाधान | " |
| | | | | ८ सयममार्गणा | २२७-२२८ |
| | | | ६५ | प्रमत्तसयतसे लेकर अयोगि केवली गुणस्थान तक सयमी जीवोंके भाव | २२७ |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|--|---------|
| ६६ | सामायिक, उद्देश्यस्थापना, परिहारविपुलि और शुद्ध साम्प्रदायिक सपनी जीवोंके भाषोंका पृथक् पृथक् विरूपण | २०३ |
| ६७ | यथाक्यातमयमी, सपना सपनी और भ्रमयमी जीवोंके भाषोंका पृथक् पृथक् विरूपण | २२८ |
| | ९ दर्शनमार्गणा | २०८ २२९ |
| ६८ | अशुद्धदर्शनी और अशुद्धदर्शनी जीवोंके भाष | २०८ |
| ६९ | अपविद्धदर्शनी और बेपट्ट दर्शनी जीवोंके भाष | २०९ |
| | १० लक्ष्यमार्गणा | २२९ २३० |
| ७० | पृष्ण, नील और काशाल लक्ष्यमार्गणा आदिक चार गुणस्थानयती जीवोंके भाष | २०९ |
| ७१ | तेजोलेख्या और पद्मलेख्या वाले आदिके सात गुणस्थान यती जीवोंके भाष | " |
| ७२ | शुद्धलेख्यावाले आदिके तरह गुणस्थानयती जीवोंके भाष | २३० |
| | ११ मध्यमार्गणा | २३० २३१ |
| ७३ | सद्यगुणस्थानयती मध्य जीवोंके भाष | २३० |
| ७४ | अमध्य जीवोंके भाष | " |
| ७५ | अमध्यमार्गणामें गुणस्थानके भाषको न कह कर मागणा स्थान-सद्यधी भाषके कहनेका क्या अमिप्राय है ? इस शकका समाधान | २३०-२३१ |
| | १२ सम्यक्त्वमार्गणा | २३१ २३७ |
| ७६ | असत्यतत्त्वमार्गणदृष्टिसे लेखर अयोगिकेवली गुणस्थान तक अमार्गणदृष्टि जीवोंके भाष | २३१ |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|--|---------|
| ७७ | असत्यतत्त्वमार्गणदृष्टिसे लेखर अयोगिके भाषोंका और उनके अमार्गणदृष्टिसे लेखर अयोगिके भाषोंका और अमार्गणदृष्टिसे लेखर अयोगिके भाषोंका विरूपण | २३१-२३४ |
| ७८ | असत्यतत्त्वमार्गणदृष्टिसे लेखर अयोगिके भाषोंका और अमार्गणदृष्टिसे लेखर अयोगिके भाषोंका और अमार्गणदृष्टिसे लेखर अयोगिके भाषोंका विरूपण | २३४-२३५ |
| ७९ | असत्यतत्त्वमार्गणदृष्टिसे लेखर अयोगिके भाषोंका और अमार्गणदृष्टिसे लेखर अयोगिके भाषोंका और अमार्गणदृष्टिसे लेखर अयोगिके भाषोंका विरूपण | २३५-२३६ |
| ८० | असत्यतत्त्वमार्गणदृष्टिसे लेखर अयोगिके भाषोंका और अमार्गणदृष्टिसे लेखर अयोगिके भाषोंका और अमार्गणदृष्टिसे लेखर अयोगिके भाषोंका विरूपण | २३६-२३७ |
| | १३ शीघ्रमार्गणा | २३७ |
| ८१ | मिथ्यादृष्टिसे लेखर शीघ्र कथाय गुणस्थान तक गली जीवोंके भाष | " |
| ८२ | मगरी जीवोंके भाष | " |
| | १४ आदारमार्गणा | २३८ |
| ८३ | मिथ्यादृष्टिसे लेखर गणेशके भाषोंके गुणस्थान तक आदा तक जीवोंके भाष | " |
| ८४ | अनादाएक जीवोंके भाष | " |

अल्पनहुत्वानुगम

| | | |
|---|--|---------|
| १ | विषयकी उत्पत्ति | २४१ २५० |
| २ | अल्पनकारका मगणपरण और प्रतिष्ठा | २४१ |
| | अल्पनद्वयानुगमकी अपेक्षा निर्देश भद्र विरूपण | " |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|--|---------|
| २ | नाम अल्पबहुत्व, स्थापना-अल्पबहुत्व, द्रव्य अल्पबहुत्व और भाव अल्पबहुत्व, इन चार प्रकारके अल्पबहुत्वोंका समेद-स्वरूप निरूपण | २४१ २४२ |
| ३ | प्रकृतमें सचित्त द्रव्याल्प बहुत्वसे प्रयोजनका उल्लेख | २४२ |
| ४ | निर्देश, स्वामित्व, आदि छह अनुयोगद्वारासे अल्पबहुत्वका स्वरूप निरूपण | २४२ २४३ |
| ५ | ओघ और आदेशका स्वरूप | २४३ |
| २ | | |

ओघसे अल्पबहुत्वानुगमनिर्देश २४३-२६१

| | | |
|----|--|---------|
| ६ | अपूर्वकरणदि तीन गुणस्थान-वर्ती उपशामक जीवोंका प्रवेशकी अपेक्षा अल्पबहुत्व | २४३ २४४ |
| ७ | अपूर्वकरण आदिके कालोंमें परस्पर हीनाधिकता होनेसे सचय विसदृश क्यों नहीं होता ? इस शकाका सयुक्तिक समाधान | २४४ |
| ८ | उपशान्तकपायवीतरागद्वन्द्व-स्थोंका अल्पबहुत्व | २४५ |
| ९ | क्षपक जीवोंका अल्पबहुत्व | २४५ २४६ |
| १० | सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीका प्रवेशकी अपेक्षा अल्पबहुत्व | २४६ |
| ११ | सयोगिकेवलीका सचय कालकी अपेक्षा अल्पबहुत्व | २४७ |
| १२ | प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत जीवोंका अल्पबहुत्व | २४७ २४८ |
| १३ | सयतासयतोंका अल्पबहुत्व और तत्सयधी शकाका समाधान | २४८ |
| १४ | सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंका अल्पबहुत्व और तदन्तर्गत अनेक शकाओंका समाधान | २४८ २४९ |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|--|---------|
| १५ | सासादनसम्यग्दृष्टियोंका गुणकार चतुर्लते हुए गुणकारके तीन प्रकारोंका वर्णन | २४९ |
| १६ | सम्यग्मिथ्यादृष्टि, असयत-सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवोंका सयुक्तिक पच सप्रमाण अल्पबहुत्व निरूपण | २५० २५३ |
| १७ | असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें सम्यक्त्वसम्यन्धी अल्पबहुत्वका अनेक शकाओंके समाधानपूर्वक निरूपण | २५३ २५६ |
| १८ | सयतासयत गुणस्थानमें सम्यक्त्वसम्यन्धी अल्पबहुत्वका तदन्तर्गत अनेक शकाओंके समाधानपूर्वक सयुक्तिक निरूपण | २५६ २५७ |
| १९ | प्रमत्त और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें सम्यक्त्वसम्यन्धी अल्पबहुत्व | २५८ |
| २० | उपशामक और क्षपकोंमें सम्यक्त्वसम्यन्धी अल्पबहुत्व तथा तदन्तर्गत अनेक शकाओंका समाधान | २५८ २६१ |
| ३ | | |

आदेशसे अल्पबहुत्वानुगम-निर्देश

| | |
|--------------|---------|
| १ गतिमार्गणा | २६१ ३५० |
| (नरकगति) | २६१-२६७ |

| | | |
|----|---|---------|
| २१ | सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, असयतसम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि नारकी जीवोंके अल्पबहुत्वका प्रमत्त सयुक्तिक निरूपण | २६१ २६३ |
| २२ | असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें नारकीयोंका सम्यक्त्वसयधी अल्पबहुत्व | २६३ २६४ |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न | क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|---|---------|--------|--|---------|
| २३ | पृथक्त्व शब्दका अर्थ वैपुल्य वाचा कैसे किया ? इस शकाका समाधान | २६४ | | अल्पवहृत्यका पृथक् पृथक् निरूपण | २०३ |
| २४ | सातों पृथिवियोंके नारकी जीवोंका पृथक् पृथक् अल्पवहृत्य | २६४ २६७ | ३१ | (देवगति) चारों गुणस्थानवर्ती देवोंका अल्पवहृत्य | २८०-२८७ |
| २५ | अतमुहूर्तना अथ असत्यात आचलियालेनेसे उसका अन्त मुहूर्तपना विरोधको क्यों नहीं प्राप्त होगा ? इस शकाका समाधान | २६६ | ३२ | भयनचामी, व्यं तर, ज्योतिषी, देव और देवियोंका, तथा सौधम-ईशानकल्पयाक्षिनी, देवियोंका अल्पवहृत्य | २८० २८१ |
| | (तिर्यचगति) | २६८ २७३ | ३३ | सौधम ईशानकल्पसे लेकर सवायसिद्ध तत्र विमान चामी देवोंके चारों गुण स्थानसम्बन्धी तथा सम्यक्त्व सम्बन्धी अल्पवहृत्यका तद्गत शका-समाधान पूर्वक पृथक् पृथक् निरूपण | २८२ २८६ |
| २६ | सामान्यतियच पचेन्द्रिय तिर्यच, पचेन्द्रियपर्याप्त और पचेन्द्रिययोनिमता तिर्यचोंके तद्गत अनेक शकाओंके समाधानपूर्वक अल्पवहृत्यका निरूपण | २६८ २७० | ३४ | सर्वाथसिद्धिमें असत्यात देव क्यों नहीं होते ? यद्यप्यपृथक्त्वके अंतरवाले आन तादि कल्पगती देवोंमें सत्यात आचलियोंसे भाजित पत्योपमप्रमाण जीव क्यों नहीं होते ? इत्यादि अनेक शकाओंका सयुक्तिक और सप्रमाण समाधान | २८६ २८७ |
| २७ | असत्यतसम्पगृष्टि और सत्य तासयत गुणस्थानमें उक्त चारों प्रकारके तिर्यचोंका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पवहृत्य | २७० २७३ | | २ इन्द्रियमार्गणा | २८८-२८९ |
| २८ | असत्य तिर्यचोंमें क्षायिक सम्यग्दृष्टियोंसे वेदकमम्य गृष्टि जाय क्यों असत्यात गुणित है, इस यातना सयुक्तिक निरूपण | २७१ | ३५ | पचेन्द्रिय और पचेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंका अल्पवहृत्य | " |
| २९ | स्यतासयत तिर्यचोंमें क्षायिक सम्यग्दृष्टियोंका अल्पवहृत्य क्यों नहीं कहा ? इस शकाका समाधान | २७२ | ३७ | इन्द्रियमागणामें स्वस्थान अल्पवहृत्य और सर्वपरस्थान अल्पवहृत्य क्यों नहीं रहे ? इस शकाका समाधान | २८९ |
| | (मनुष्यगति) | २७३ २८० | | | |
| ३० | सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यनियोंके तद्गत शका-समाधान पूर्वक सत्र गुणस्थानसम्बन्धी | | | | |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न | क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|---|---------|--------|---|---------|
| | ३ कायमार्गणा | २८९-२९० | | का सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्प- ग्रहत्व | २९९ ३०० |
| ३८ | व्रतकायिक और व्रतकायिक- पर्याप्त जीवोंका अल्पग्रहत्व | " | ४८ | पल्योपमके असख्यातवें भाग- प्रमाण क्षायिकसम्यग्दृष्टि- योंमेंसे असख्यात जीव विग्रह क्यों नहीं करते? इस शकाना समाधान | " |
| | ४ योगमार्गणा | २९० ३०० | | ५ वेदमार्गणा | ३००-३११ |
| ३९ | पाचों मनयोगी, पाचों वचनयोगी, काययोगी और औदारिककाययोगी जीवोंके समव गुणस्थानसम्बन्धी और सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्प- ग्रहत्वका पृथक् पृथक् निरूपण | २९० २९४ | ४९ | प्रारम्भके नव गुणस्थानवर्ती एतन्वेदी जीवोंका पृथक् पृथक् अल्पग्रहत्व | ३००-३०२ |
| ४० | औदारिकमिश्रकाययोगी स योगिकेवली, असयतसम्य- ग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवोंका अल्पग्रहत्व | २९४ २९५ | ५० | असयतसम्यग्दृष्टि, सयता सयत, प्रमत्तसयत, अप्रमत्त- सयत, अपूर्वकरण और अनि- वृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती खीवेदियोंका पृथक् पृथक् सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पग्रहत्व | ३०२ ३०४ |
| ४१ | वैक्रियिककाययोगी जीवोंका अल्पग्रहत्व | २९५ २९६ | ५१ | प्रारम्भके नव गुणस्थानवर्ती पुरपवेदी जीवोंका पृथक् पृथक् अल्पग्रहत्व | ३०४ ३०६ |
| ४२ | वैक्रियिकमिश्रकाययोगी सा- सादनसम्यग्दृष्टि, असयत सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवोंका अल्पग्रहत्व | २९६ | ५२ | असयतसम्यग्दृष्टि आदि छह गुणस्थानवर्ती पुरपवेदी जीवोंका सम्यक्त्वसम्बन्धी पृथक् पृथक् अल्पग्रहत्व | ३०६ ३०७ |
| ४३ | वैक्रियिकमिश्रकाययोगी अस यतसम्यग्दृष्टि जीवोंका सम्य- क्त्वसम्बन्धी अल्पग्रहत्व | २९७ | ५३ | आदिके नव गुणस्थानवर्ती नपुसकवेदी जीवोंका पृथक् पृथक् अल्पग्रहत्व | ३०७ ३०८ |
| ४४ | आहारककाययोगी ओर आहारकमिश्रकाययोगी जी- वोंका अल्पग्रहत्व | २९७-२९८ | ५४ | असयतसम्यग्दृष्टि आदि छह गुणस्थानवर्ती नपुसकवेदी जीवोंका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पग्रहत्व | ३०९-३१० |
| ४५ | उपशमसम्यक्त्वके साथ आहारककायिक क्यों नहीं होती? इस शकाना समाधान | २९८ | ५५ | अपगतवेदी जीवोंका अल्प- ग्रहत्व | ३११ |
| ४६ | कार्मणकाययोगी सयोगिके- वली, सासादनसम्यग्दृष्टि, असयतसम्यग्दृष्टि और मि- थ्यादृष्टि जीवोंका अल्पग्रहत्व | २९८ २९९ | | ६ कपायमार्गणा | ३१२-३१६ |
| ४७ | असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्था- नमें कार्मणकाययोगी जीवों- | | ५६ | चारों कपायवाले जीवोंका अल्पग्रहत्व | ३१२ ३१४ |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न | क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|---|---------|--------|---|---------|
| ५७ | अपूर्वकरण और अनिवृत्ति करण, इन दो उपशामक गुणस्थानोंमें प्रवेश करने वाले जीवोंसे सप्यातगुणित प्रमाणवाले इन्हीं दो गुण स्थानोंमें प्रवेश करनेवाले क्षपकोंकी अपेक्षा सूक्ष्मसाम्य रायिक उपशामक जीव विशेष अधिक कैसे हो सकते हैं ? इस शकाका समाधान | ३१२ | ६५ | केवलज्ञानी सयोगिकेवली और अयोगिकेवली जिनोंका अल्पवहुत्व | ३२१ ३२२ |
| ५८ | असयतसम्यग्दृष्टि आदि सात गुणस्थानवर्ती कपायी जीवों का सम्यक्त्वसम्यग्धी पृथक् पृथक् अल्पवहुत्व | ३१५ ३१६ | ६६ | सामान्य सयतोंका प्रमत्त सयतसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक अल्पवहुत्व | ३२२ ३२४ |
| ५९ | अकपायी जीवोंका अल्पवहुत्व | ३१६ | ६७ | उक्त जीवोंका दसवें गुण स्थान तक सम्यक्त्वसम्यग्धी अल्पवहुत्व | ३२४ ३२५ |
| | ७ ज्ञानमार्गणा | ३१६ ३२२ | ६८ | प्रमत्तसयतादि चार गुण-स्थानवर्ती सामायिक और छद्मोपस्थापनाशुद्धिसयतोंका अल्पवहुत्व | ३२५ ३२६ |
| ६० | मल्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी और विभगज्ञानी जीवोंका अल्प वहुत्व | ३१६ ३१७ | ६९ | उक्त जीवोंका सम्यक्त्व सम्यग्धी अल्पवहुत्व | ३२६ |
| ६१ | आभिनियोधिरज्ञानी, श्रुत ज्ञानी और अयधिरज्ञानी जीवों का असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर क्षीणकपायवीतरागछद्मस्थ गुणस्थान तक पृथक् पृथक् अल्पवहुत्व | ३१७-३१९ | ७० | परिहारशुद्धिसयमी प्रमत्त और अप्रमत्तसयत गुणस्थान वर्ती जीवोंका अल्पवहुत्व | ३२७ |
| ६२ | उक्त जीवोंका दसवें गुण स्थान तक सम्यक्त्वसम्यग्धी अल्पवहुत्व | ३१९ | ७१ | उक्त जीवोंका सम्यक्त्व सम्यग्धी अल्पवहुत्व | " |
| ६३ | प्रमत्तसयतसे लेकर क्षीण कपाय गुणस्थान तक मन पययज्ञानी जीवोंका अल्प वहुत्व | ३२० | ७२ | परिहारशुद्धिसयतोंके उप शमसम्यक्त्व नहीं होता है, इस सिद्धान्तका स्पष्टीकरण | " |
| ६४ | उक्त जीवोंका दसवें गुण स्थान तक सम्यक्त्वसम्यग्धी अल्पवहुत्व | ३२१ | ७३ | सूक्ष्मसापरायिकसयमी उप शामक और क्षपक जीवोंका अल्पवहुत्व | ३२८ |
| | | | ७४ | यथाप्यातविहारशुद्धिसय- तोंका अल्पवहुत्व | " |
| | | | ७५ | सयतासयतोंका अल्पवहुत्व नहीं, है इस वातका स्पष्टीकरण | " |
| | | | ७६ | सयतासयत और असयत सम्यग्दृष्टि जीवोंका सम्यक्त्व सम्यग्धी अल्पवहुत्व | ३२८ ३३० |
| | | | | ९ दर्शनमार्गणा | ३३१ |
| | | | ७७ | अचभुदर्शनी, अचभुदर्शनी, अवधिदर्शनी | |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|---|---------|
| | दर्शनी जीवोंका पृथक् पृथक् अल्पबहुत्व | ३२१ |
| | १० लेश्यामार्गणा | ३३२-३३९ |
| ७८ | आदिके चार गुणस्थानवर्ती कृष्ण, नील और कापोत-लेइयावाले जीवोंका अल्प-बहुत्व | ३३२ |
| ७९ | असयतसम्यग्दृष्टि गुण-स्थानमें उक्त जीवोंका सम्य-क्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व | ३३०-३३३ |
| ८० | आदिके सात गुणस्थानवर्ती तेज और पद्मलेइयावाले जीवोंका पृथक् पृथक् अल्प-बहुत्व | ३३४ ३३५ |
| ८१ | असयतसम्यग्दृष्टि आदि चार गुणस्थानोंमें उक्त जीवोंका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व | ३३५ |
| ८२ | मिथ्यादृष्टि आदि तेरह गुण-स्थानवर्ती शुक्ललेइयावाले जीवोंका अल्पबहुत्व | ३३६ ३३८ |
| ८३ | असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्था-नसे लेकर दसवें गुणस्थान तक शुक्ललेइयावाले जीवोंका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व | ३३८ ३३९ |
| | ११ भ्रूयमार्गणा | ३३९-३४० |
| ८४ | सर्गुणस्थानवर्ती भ्रूय जीवोंका अल्पबहुत्व | ३३९ |
| ८५ | अभ्रूय जीवोंका अल्पबहुत्व | ३४० |
| | १२ सम्यक्त्वमार्गणा | ३४०-३४५ |
| ८६ | सामान्य सम्यग्दृष्टि जीवोंका अल्पबहुत्व | ३४० |
| ८७ | चौथे गुणस्थानसे लेकर चौद-हवें गुणस्थान तक क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीवोंका अल्प-बहुत्व | ३४० ३४२ |
| ८८ | असयतसम्यग्दृष्टि आदि चार | |

| क्रम न | विषय | पृष्ठ न |
|--------|---|---------|
| | गुणस्थानोंमें एक ही पद होनेके कारण सम्यक्त्व सम्बन्धी अल्पबहुत्व नहीं है, इस बातका स्पष्टीकरण | ३४२ |
| ८९ | असयतसम्यग्दृष्टि आदि चार गुणस्थानवर्ती वेदकसम्य-ग्दृष्टि जीवोंका अल्पबहुत्व | ३४२ ३४३ |
| ९० | उक्त जीवोंके सम्यक्त्व-सम्बन्धी अल्पबहुत्वके अभा-वका निरूपण | ३४३ |
| ९१ | असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर उपशातकपाय गुणस्थान तक उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंका अल्पबहुत्व | ३४४ |
| ९२ | उक्त जीवोंके सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्वके अभावको स्पष्टी-करण | ३४५ |
| ९३ | सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्य-ग्मिथ्यादृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवोंके अल्पबहुत्वका अभाव प्रदर्शन | ३४५-३४६ |
| | १३ सङ्गिमार्गणा | ३४५-३४६ |
| ९४ | आदिके बारह गुणस्थानवर्ती सङ्गी जीवोंका अल्पबहुत्व | ३४५ |
| ९५ | असङ्गी जीवोंके अल्पबहुत्वका अभाव निरूपण | ३४६ |
| | १४ आहारमार्गणा | ३४६-३५० |
| ९६ | आदिके तेरह गुणस्थानवर्ती आहारक जीवोंका अल्पबहुत्व | ३४६ ३४७ |
| ९७ | चोथेसे दसवें गुणस्थान तक आहारक जीवोंका सम्यक्त्व-सम्बन्धी अल्पबहुत्व | ३४८ |
| ९८ | अनाहारक जीवोंका अल्प-बहुत्व | ३४८ ३४९ |
| ९९ | असयतसम्यग्दृष्टि गुण-स्थानमें अनाहारक जीवोंका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व | ३४९-३५० |

शुद्धिपत्र

१७०८८

(पुस्तक ४)

| पृष्ठ | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|-------|--------|--|--|
| २८ | ५ | णामपत्तिर्द्वीण | णाम पत्तिर्द्वीण |
| " | २० | जिनको ऋद्धि प्राप्त नहीं हुई है, | जिनको ऋद्धि प्राप्त हुई है, |
| ४१ | २९ | विष्कम और आयामसे तिर्यग्लोक है, | घनलोक, उर्ध्वलोक और अगोचर, इन तीनों लोकोंके असत्तातमें भाग क्षेत्रमें विष्कम आर आयामसे एक शतप्रमाण ही तिर्यग्लोक है, |
| ७० | २८ | तिर्यंच पर्याप्त मिथ्यादृष्टि | तिर्यंच मिथ्यादृष्टि |
| ७२ | १२ | तिर्यंच पर्याप्त जीव | तिर्यंच जीव |
| " | १३ | " | " |
| ७४ | १३ | मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य और योनिमती मिथ्यादृष्टि मनुष्य | मिथ्यादृष्टि मनुष्य |
| " | २२ | " | " |
| ८५ | २२ | खडित करके उसका उतनी राशि | खडित करके जो लब्ध आवे उसके असत्तातमें अपना सत्तातमें भाग राशि |
| १२१ | १३ | देखा जाता है, (न कि यथा-र्थत) किन्तु क्षीणमोही | देखा जाता है। इस प्रकारका स्वस्थानपद अयोगिकेवलमें नहीं पाया जाता, क्योंकि क्षीणमोहा |
| १४२ | ० | उसहो अजिचो | उसहो अजिचो |
| " | १३ | यह अजाव है, | यह अजित है, |
| १४७ | ६ | प्रमाणसे | प्रमाणसे |
| १६३ | १६ | किन्तु वे उस गुणस्थानमें | किन्तु वे एकोद्विषोमें |
| " | १७ | न कि वे सासादनसम्प | न कि वे अर्थात् सासादनसम्पदृष्टि जीव |
| | | दृष्टियोंमें उपन | एकोद्विषोमें उपन |

| पृष्ठ | पक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|-------|----------------|--------------------------------------|---|
| १८२ | २३ | चाहिए । | चाहिए । (किन्तु सम्यग्भिष्यादृष्टि गुणस्थानमें मरण नहीं होता है ।) |
| १९१ | १० | और अजस्तन चार पृथिवियों-सम्बन्धी चार | और सातवीं पृथिवीसम्बन्धी अजस्तन चार |
| २६२ | ७ | मारणतिय (-उचवाद्) परिणदेहि | मारणतियपरिणदेहि |
| " | २२ | मारणान्तिरुसमुद्वात और उप-पादपदपरिणत | मारणान्तिरुसमुद्वात-पदपरिणत |
| २६९ | १३ | वैक्रियिऋमिथ्रकाययोगी जीर्णोका | असयतसम्यग्दृष्टि जीर्णोका |
| २७३ | २१ | नारकियोंसे सासादन-सम्यग्दृष्टि | नारकियोंमेंसे तिर्यंचों और मनुष्योंमें मारणान्तिरुसमुद्वात करनेवाले स्त्री और पुरुष-वेदी सासादनसम्यग्दृष्टि |
| ३६९ | १५ | लब्धपर्याप्तकोंमें | अपर्याप्तकोंमें |
| " | १६ | लब्धपर्याप्त | अपर्याप्त |
| ४१० | १७ | अर्थात् उनमें पुन वापिस आनेसे, | अर्थात् अपने विवक्षित गुणस्थानको छोड़कर नवीन गुणस्थानमें जानेसे, |
| ४१७ | ३ | -परियट्टेसुष्पण्णेषु | -परियट्टेसुष्पण्णेषु |
| " | १५ | शेष रहने पर | पूर्ण होने पर |
| ४२२ | २२ | उदयमें आये हैं | उपार्जित क्रिये हैं |
| ४४५ | ५ | गिरयगदीपण | गिरयगदीप ण |
| " | ६ | मणुसगदीपण | मणुसगदीप ण |
| " | ७ | तिरिक्त्तगर्हण | तिरिक्त्तगर्हण ण |
| " | ८ | देवगदीपण | देवगदीप ण |
| " | १९, २०, २२, २४ | उत्पन्न | नहीं उत्पन्न |
| ४६४ | २४ | अन्तर्मुहूर्तसे काल | अन्तर्मुहूर्तसे अधिक अट्ठाई सागरोपम काल |
| " | २५ | अट्ठाई सागरोपमकालके आदि | निश्चित पर्यायके आदि |
| ४६८ | १२ | वर्धमान | शुक्ल-वर्धमान |
| " | १७ | शुक्ल-तेज | तेज |
| ४७७ | १७ | सादि-सान्त | सादि |

पृष्ठ पक्षि अशुद्ध

शुद्ध

(पुस्तक ५)

| | | | |
|-----|------------------------|-------|---------------------------------------|
| २ | १६ अन्तरूप | आगमको | अतरके प्रतिपादक द्रव्यरूप आगमको |
| " | २८ वर्तमानमें इस समय | | वर्तमानमें अय पदार्थके |
| ७ | ९ साक्षात् | | साक्षण |
| १० | १४ कालमें रहने पर | | कालके स्थानमें अन्तर्मुहूर्तके द्वारा |
| १२ | ८ गमिदसम्मत्त | | गहिदसम्मत्त |
| १४ | १७ असपत्तादि | | प्रमत्तादि |
| १८ | ४ चासपुघते | | चासपुघत्ते |
| १९ | १० वेदगसम्मत्तमुचणामिय | | वेदगसम्मत्तमुचसामिय |
| " | २७ प्राप्त कर | | उपशामित कर अर्थात् द्वितीयोपशमस्य |
| १६ | २२ यह तो राशियोग | | क्त्वको प्राप्त कर |
| ५९ | २१,२२ उच्य अन्तर | | यह तो इस राशिका |
| ७१ | १९ आयुके | | जघय अन्तर |
| ७७ | २६ गतिकी | | उसके |
| ९७ | ७ देवीसु | | इन्द्रियकी |
| " | २२ देवीमें | | देवीसु |
| १०६ | २१ अतरसे अधिक अतरना | | देवियोंमें |
| १०८ | ९ उक्त्स्सेण | | अतरना |
| ११७ | १९ तीनों ज्ञानवाले | | उक्त्स्सेण |
| १२१ | १ अतरम्भतरादो | | मति-श्रुतज्ञानवाले |
| " | १५ अप्रमत्तसयतका काल | | अतरम्भतरा दो |
| " | २३ तीनों ज्ञानवाले | | अप्रमत्तसयतके दो काल |
| १३७ | ५ अमममज्जदाण | | मति-श्रुतज्ञानवाले |
| " | ११ अ प्रमत्तसयत | | प्रमत्तसजद-अप्यमत्तसजदाण |
| १४८ | १३ अ अग कता हुआ) सिद्ध | | प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत |
| " | २० अ अग कता हुआ) सिद्ध | | सिद्ध |
| " | २० अ अग कता हुआ) सिद्ध | | आयुके कालक्षयसे |

| पृष्ठ | पक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|-----------|-------|---------------------------------------|--|
| १७० | २१ | जाना जाना है कि अन्तर रहित है । | जाना जाता है कि उपशमश्रेणीके समारोहण योग्य कालसे शेष उपशमसम्पत्त्वका काल अल्प है । |
| १८६ | ० | धम्मभावो । | धम्मभावो य । |
| १९८ २८-२९ | | अवधारारूप अश | अन्यवीरूप सम्यक्त्वगुणका तो निराकरण रहता है, किन्तु सम्यक्त्वगुणका अवयव- रूप अश |
| २०४ | १० | सखेज्जाणत- | असखेज्जाणत- |
| २२४ | १९ | दयाधर्मसे हुए | दयाधर्मको जाननेवाले ज्ञानियोंमें वर्तमान |
| ॥ | २१ | क्योंकि, आप्त यथार्थ | क्योंकि, दयाधर्मके ज्ञाताओंमें भी आप्त, आगम और पदार्थके श्रद्धानसे रहित जीवके यथार्थ |
| २२५ | ९ | सजोगिकेचली | सजोगिकेचली (अजोगिकेचली) |
| २२६ | २८ | पारिणामिकभावकी | भव्यत्वभावकी |
| २३८ | १६ | कार्मणकाययोगियोंमें | कार्मणकाययोगियोंसे |
| ॥ | १७ | कार्मणकाययोगी | अनाहारक |
| २४६ | ८ | पुधसत्तारभो | पुधसुत्तारभो |
| ३६४ | ५ | -मेतो- | -मेत्तो- |
| २५५ | १६ | प्रमाणराशिसे भाजित | फलराशिसे इच्छाराशिको गुणित करके प्रमाणराशिसे भाजित |
| २७५ | २८ | सासादनसम्यग्दृष्टि जीव सख्यातगुणित | सासादनसम्यग्दृष्टि जीव सयतासयत मनुष्य- नियोंसे सख्यातगुणित |
| २८६ | २९ | असख्यातनें | सख्यातनें |

अंतराष्ट्रगमो

मोक्षार्थं अप्पाणमिह पयद्वे । दृग्गणतरं दुग्धिं सन्भावामवभावभेएण । भरह-चाहुइलीणमतर
 मुव्वेल्लतो णदो सवभावदृग्गणतर । अतरमिदि पुट्टीए सरुप्पिय दड-कड-कोदडादओ
 असन्भावदृग्गणतर । दन्तरं दुग्धिं आगम-णोआगमभेएण । अतरपाहुइजाणओ अणुवजुत्ता
 अतरदव्वागमो वा आगमदव्वतर । णोआगमदव्वतर जाणुगमरीर-भणिय-तव्वदिरित्तभएण
 तिग्धिं । आधारे आधेयोअयारेण लद्धतरमण्ण जाणुगमरीर भणिय-वट्टमाण-समुज्जाद
 भेएण तिग्धिं । कधं भणियम्म जणाहारदाए द्विदस्म अंतरवअणो ? ण एम दोमो,
 कूरपज्जायाणाहारोसु मि तदुल्लेसु एत्थ कूरअणसुअलभा । कध भूदे एमो वअहारो ? ण,
 रज्जपज्जायाणाहारो मि पुरिसे राओ आगच्छदि त्ति वअहारुअलभा । भणियणोआगम
 दव्वतर भविस्सकाले अतरपाहुइजाणओ सपहि मते मि उअजोए अतरपाहुइअगम

यह शब्द नाम अन्तरनिक्षेप है। स्थापना अन्तर सद्भाव और असद्भावों के भेदसे दो प्रकारका है। भरत और बाहुबलिके बीच उमङ्गता हुआ नद सद्भावस्थापना अन्तर है। अन्तर इस प्रकारकी बुद्धिमें सकल्प करके दड, वाण, धनुष आदिक असद्भावस्थापना अन्तर है, अर्थात् दड, वाणादिके न होने हुए भी तत्प्रमाण क्षेत्रवर्ती अन्तरकी, यह अन्तर इतने धनुष है ऐसी जा कल्पना कर लेते हैं, उसे असद्भावस्थापना अन्तर कहते हैं।

द्रव्यान्तर आगम और नोआगमके भेदसे दो प्रकारका है। अन्तर विषयक प्राकृतके शायक तथा वर्तमानमें अनुपयुक्त पुरुषको आगमद्रव्यान्तर कहते हैं। अथवा, अन्तररूप द्रव्यके प्रतिपात्क आगमको आगमद्रव्यान्तर कहते हैं। नोआगमद्रव्यान्तर शायकशरीर, भय और तद्व्यतिरिक्तके भेदसे तीन प्रकारका है। आधारमें आधेयके उपचारसे प्राप्त हुए हैं अन्तरसहा जिसको ऐसा शायकशरीर भय, वर्तमान और समुत्पत्तके भेदसे तीन प्रकारका है।

शंका—अनाधारतासे स्थित, अर्थात् वर्तमानमें जो अन्तरागमका आधार नहीं है ऐसे, भावी शरीरके 'अन्तर' इस सद्भावका व्यवहार कैसे हो सकता है?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, कूर (भात) रूप पर्यायके आधार न होने पर भी तदुल्लेखे यहा, अर्थात् व्यवहारमें, कूर सज्ञा पाई जाती है।

शंका—भूत शायकशरीरके यह अन्तरका व्यवहार कैसे वनेगा?

समाधान—नहीं, क्योंकि, राज्यपर्यायके नहीं धारण करनेवाले पुरुषमें भी 'राज्य आता है' इस प्रकारका व्यवहार पाया जाता है।

भविष्यकालमें जो अन्तरशास्त्रका शायक होगा, परंतु वर्तमानमें इस समय उपयोगके होते हुए भी अन्तरशास्त्रके ज्ञानसे रहित है, ऐसे पुरुषको भय नोआगमद्रव्यान्तर कहते हैं।

रहिओ । तव्परिचिद्वन्तरं तिनिहं सचिच्चचित्त-मिस्मभेएण । तत्थ सचिच्चतरं उसह-संभमाण मज्जे द्विओ अजिओ । अचित्ततव्परिचिद्वन्तरं णाम घणोअहि-तणु-वादाणं मज्जे द्विओ घणाणिलो । मिस्संतर जहा उज्जत-सचुंजयाण पिच्चालद्विदगाम-णगराइ । सेत्त-कालतराणि दव्पतरे परिट्ठाणि, उदव्परिचिद्वन्तर-कालाणमभाना । भांन्तरं दुभिह आगम-णोआगमभेएण । अतरपाहुडजाणओ उअजुत्तो भांणामो वा आगम-भांन्तरं । णोआगमभांन्तरं णाम ओदइयादी पच भांण दोण्ह भांणामतरे द्विदा ।

एत्थ केण अतरेण पयदं ? णोआगमदो भावतरेण । तत्थ वि अजीवभांन्तरं मोत्तूण जीवभांन्तरे पयदं, अजीवभावतरेण इह पओजणाभाना । अंतरमुच्छेदो पिरहो परिणामतरंगमण णत्थित्तगमण अण्णभापव्वरहाणमिदि एयट्ठो । एदस्स अंतरस्स अणु-गमो अतराणुगमो । तेण अंतराणुगमेण दुभिहो णिदेमो दव्परिचिद्वय-पज्जमद्वियणयाउलंघणेण । तिभिहो णिदेमो किण्ण^१ होज्ज ? ण, तइज्जस्स णयस्स अभावा । त पि कधं णव्वदे ?

तद्व्यतिरिक्त द्रव्यान्तर सचित्त, अचित्त और मिश्रके भेदसे तीन प्रकारका है । उनमेंसे वृषभ जिन और स्वभ्रव जिनके मध्यमें स्थित अजित जिन सचित्त तद्व्यतिरिक्त द्रव्यान्तरके उदाहरण है । घनोदाधि और तनुवातके मध्यमें स्थित घनवात अचित्त तद्व्यतिरिक्त द्रव्यान्तर है । ऊर्जयन्त और शत्रुञ्जयके मध्यमें स्थित ग्राम नगरादिक मिश्र तद्व्यतिरिक्त द्रव्यान्तर है । क्षेत्रान्तर और कालान्तर, ये दोनों ही द्रव्यान्तरमें प्रविष्ट हो जाते हैं, क्योंकि, छह द्रव्योंसे व्यतिरिक्त क्षेत्र और कालका अभाव है ।

भावान्तर आगम और नोआगमके भेदसे दो प्रकारका है । अन्तरशास्त्रके ज्ञायक और उपयुक्त पुरुषको आगमभावान्तर कहते हैं, अथवा भावरूप अन्तर आगमको आगमभावान्तर कहते हैं । औद्यिक आदि पाच भावोंमेंसे किन्हीं दो भावोंके मध्यमें स्थित विवक्षित भावको नोआगम भावान्तर कहते हैं ।

शंका—यहां पर किस प्रकारके अन्तरसे प्रयोजन है ?

समाधान—नोआगमभावान्तरसे प्रयोजन है । उसमें भी अजीवभावान्तरको छोड़कर जीवभावान्तर प्रकृत है, क्योंकि, यहां पर अजीवभावान्तरसे कोई प्रयोजन नहीं है ।

अन्तर, उच्छेद, विरह, परिणामान्तरगमन, नास्तित्वगमन और अन्यभावव्यवधान, ये सब एकार्थार्थार्थी नाम हैं । इस प्रकारके अन्तरके अनुगमको अन्तरानुगम कहते हैं । उस अन्तरानुगमसे दो प्रकारका निर्देश है, क्योंकि, वह निर्देश द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नयका अवलोकन करनेवाला है ।

शंका—तीन प्रकारका निर्देश क्यों नहीं होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, तीसरे प्रकारका कोई नय ही नहीं है ।

शंका—यह भी कैसे जाना ?

१ प्रतियु 'अजीओ' मप्रती 'अजीओ' इति पाठ ।

२ प्रतियु 'पुणोअहि' इति पाठः ।

३ प्रतियु 'विण्ह' इति पाठः ।

संग्रहामगह्रदिरिचतत्तिसयाणुत्तलभा । एव मणम्मि काऊण ओघेणादेसेण येत्ति' उच ।
एकेण णिदेमेण पञ्चत्तमिदि च ण, एकेण दृणयात्तलत्रिजाणमुत्तरकरणे उगायाभात्त ।

ओघेण मिच्छादिद्विणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं ॥ २ ॥

‘जहा उद्देशो तथा णिदेशो’ चि णायमभालद्ध ओघेणेत्ति उच । भेसगुणद्वय
उदामद्वो मिच्छादिद्विणिदेशो । केवचिरं कालादो इदि पुच्छा एदस्म पमाणत्तपदुप्पायण
फला । णाणाजीवमिदि बहुस्सु एयत्तयणणिदेशो क्व घडदे ? णाणाजीवद्वियसामण
मिक्खाए बहुण पि एगत्तमिगेहाभात्त । णत्थि अतरं मिच्छत्तपञ्चपरिणदजीवण तिसु
पि कालेमु चोच्छेदो निरहो अभात्तो णत्थि चि उच होदि । अतरस्स पडिमेहे कदे सो
पडिमेहो तुच्छो ण होदि चि जाणात्तद्वय णिरंतरमगहण, मिहिरूपेण पडिमेहादो वदिरित्तेण

समाधान—क्योंकि, सग्रह (सामान्य) ओर असग्रह (विशेष) को छोड़करके
किसी अन्य नयका त्रिययभूत कोई पदार्थ नहीं पाया जाता है ।

इस उक्त प्रकारके शशा-समाधानको मनमें धारण करके सूत्रकारने ‘ओघसे
ओर आदेशसे’ ऐसा पद कहा है ।

शका—एक ही निर्देश करना पर्याप्त या ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, एक निर्देशसे दोनों नयोंके अचक्रम्यन करनेवाले
जीवोंके उपकार करनेमें उपायका अभाव है ।

ओघसे मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २ ॥

‘जैसा उद्देश होता है, वैसा निर्देश होता है’ इस न्यायके रक्षणार्थ ‘ओघसे’
यह पद कहा । मिथ्यादृष्टि पदका निर्देश शेष गुणस्थानोंके प्रतिषेधने लिए है । ‘कितने
काल होता है’ इस पृच्छाका फल इस सूत्रकी प्रमाणताका प्रतिपादन करना है ।

शका—‘णाणाजीव’ इस प्रकारका यह एक वचनका निर्देश बहुतसे जीवोंमें
कैसे घटित होता है ?

समाधान—जाना जीवोंमें स्थित सामान्यरी विवक्षासे बहुतोंके लिए भी एक
एकके प्रयोगमें विरोध नहीं आता ।

‘अन्तर नहीं है’ अर्थात् मिथ्यात्वपर्यायसे परिणत जीवोंका तीनों ही फालोंमें
पुच्छेद, विरह या अभाव नहीं होता है, यह अर्थ कहा गया समझना चाहिए । अन्तरके
प्रतिषेध करने पर यह प्रतिषेध तुच्छ अभावरूप नहीं होता है, किन्तु भागान्तरभावरूप
होता है, इस बातके जतलानेके लिए ‘निरन्तर’ पदका ग्रहण किया है । प्रतिषेधसे

१ प्रतिपु ‘ षचि ’ इति पाठः ।

२ सामान्येन दात्तु मिथ्यादृष्टेनानाजीवपक्षया नास्त्यतरम् । स मि १, ८

३ प्रतिपु ‘ अभात्त ’ इति पाठः ।

मिच्छादिद्विगो सव्यकालमच्छति चि उक्त होदि । अधना पञ्जद्वियणयानलंभियजीगणु-
ग्गहण्डं णत्थि अंतरमिदि पडिसेहयणं, दव्यद्वियणयानलभियजीगणुग्गहड्ड णिरंतरमिदि
विहियण । एमो अत्यो उतरि सव्यत्थ उक्तव्यो ।

एगजीवं पडुच्च जहणणेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३ ॥

त जधा— एवो मिच्छादिद्वी सम्मामिच्छत्त-सम्मत्त-सजमामजम-संजमेसु गहुसो
परियद्विदो, परिणामपच्चएण मम्मत्तं गदो, सव्यलहुमतोमुहुत्तत्त सम्मत्तेण अच्छिय
मिच्छत्त गदो, लद्धमतोमुहुत्त मव्यजहणण मिच्छत्ततर । एत्थ चोदगो भणदि— ज पढ-
मिच्छमिणं मिच्छत्त तं पुणो मम्मत्तुत्तरकाले ण होदि, पुव्यकाले गदुत्तस्स उत्तरकाले
पडत्तिपिरोहा । ण च त चे उत्तरकाले उप्पज्जड, उप्पणस्स उप्पत्तिपिरोहा । तदो
अंतिष्ठ मिच्छत्त पढमिच्छ ण होदि चि अंतरस्म अभापो चयेत्ति ? एत्थ परिहारो उच्चदे-
सच्चमेमदं जदि सुद्धो पञ्जयणओ अजलंविज्जदि । किंतु णइगमणयमजलभिय अतर-
व्यतिरिक्त होनेके कारण विधिरूपसे मिथ्यादृष्टि जीव सर्व काल रहते हैं, यह अर्थ कहा
गया है । अथवा, पर्यायार्थिक नयना अवलम्बन करनेवाले जीवोंके अनुग्रहके लिए
'अन्तर नहीं है' इस प्रकारका प्रतिषेधवचन और द्रव्यार्थिक नयना अवलम्बन करने
वाले जीवोंके अनुग्रहके लिये 'निरन्तर' इस प्रकारका विधिपरक वचन कहा गया है ।
यह अर्थ आगेके सभी सूत्रोंमें भी कहना चाहिए ।

एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३ ॥

जैसे—एक मिथ्यादृष्टि जीव, सम्यग्मिथ्यात्व, अत्रिरतसम्यक्त्व, सयमासयम और
सयममें गदुत्तवार परिवर्तित होता हुआ परिणामोंके निमित्तसे सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ,
और वहा पर सर्वलघु अन्तर्मुहूर्तकाल तक सम्यक्त्वके साथ रहकर मिथ्यात्वको प्राप्त
हुआ । इस प्रकारसे सर्वजघन्य अन्तर्मुहूर्त प्रमाण मिथ्यात्व गुणस्थानका अन्तर प्राप्त
हो गया ।

शका—यहा पर शकानार कहता है कि अन्तर करनेके पूर्व जो पहलेका
मिथ्यात्व था, वही पुन सम्यक्त्वके उत्तरकालमें नहीं होता है, क्योंकि, सम्यक्त्व
प्राप्तिके पूर्वकालमें वर्तमान मिथ्यात्वकी उत्तरकालमें, अर्थात् सम्यक्त्व छोडनेके पश्चात्,
प्रवृत्ति होनेका विरोध है । तथा, वही मिथ्यात्व उत्तरकालमें भी उत्पन्न नहीं होता है,
क्योंकि, उत्पन्न हुई वस्तुके पुन उत्पन्न होनेका विरोध है । इसलिए सम्यक्त्व छूटनेके
पश्चात् होनेवाला अन्तिम मिथ्यात्व पहलेका मिथ्यात्व नहीं हो सकता है, इससे
अन्तरका अभाव ही सिद्ध होता है ?

समाधान—यहा उक्त शकाना परिहार करते हैं—उक्त कथन सत्य ही है, यदि
शुद्ध पर्यायार्थिक नयना अजलन किया जाय । किंतु नेगमनयका अवलम्बन लेकर अन्तर-

१ एकजीव प्रति जघनेनात्तर्मुहूर्त । स मि, १, ८

२ प्रतिगु म प्रतिगु च 'पढमिच्छमिण' इति पाठ ।

परुषणा कीरदे, तस्म सामण्णनिमेसुहयनिसयत्तादो । तदो ण एस दोसो । त जहा-पढमतिम-
मिन्ठत्त पज्जाया अभिज्जा, मिच्छत्तक्म्मोदयजादत्तेण अत्तागम-पदत्थाणमसइहणेण
एगजीवाहारत्तेण भेटामाया । ण पुब्बुत्तरकालभेएण ताण भेओ, तथा निवक्खाभाया ।
तम्हा पुब्बुत्तरदासु अच्चिण्णामरूपेण द्विदमिन्ठत्तस्म सामण्णावलण्णेण एक्कत्त पत्तस्स
सम्मत्तपज्जओ अतर होदि । एस जत्थो मव्वत्थ पउज्जिदव्वो ।

उक्कस्सेण वे छावट्टिसागरोवमाणि देसूणाणि ॥ ४ ॥

एदस्म निदरिमणं- एकां तिरिकत्तो मणुस्सो वा लतय-कापिट्ठरूप्यसासिपदेनेसु
चोइममागरोवमाउट्टिदिएसु उप्पण्णो । एक्क सागरोवम गमिय निदियसागरोवमादिसमए
सम्मत्त पडिण्णो । तेरममागरोवमाणि तत्थ अच्चिय मम्मत्तेण मह चुदो मणुसो जादो ।
तत्थ मज्जम मज्जमामज्जम वा अणुपालिय मणुसाउएण्णरागीमसागरोवमाउट्टिदिएसु
आरणच्चुददेनेसु उप्पण्णो । तत्तो चुदो मणुसो जादो । तत्थ सज्जममणुपालिय उपरिमगेवजे

प्ररूपणा की जा रहा है, क्योंकि, यह नैगमनय सामान्य तथा विशेष, इन दोनोंको विषय
करता है, इसलिये यह कोई दोष नहीं है । उसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है-अतरकालके
पहलेका मिथ्यात्व और पीछेका मिथ्यात्व, ये दोनों पर्याय है, जो कि अभिन्न है, क्योंकि,
मिथ्यात्वकमके उदयमे उत्पन्न होनेके कारण, आस, आगम और पदार्थोंके अधिष्ठानकी अपेक्षा।
तथा एक ही जीव इत्येके आधार होनेसे उनमें कोई भेद नहीं है । और न पूर्वकाल तथा
उत्तरकालके भेदकी अपेक्षा भी उन दोनों पर्यायोंमें भेद है, क्योंकि, इस कालभेदकी यहा
विपक्षा नहीं की गई है । इसलिये अन्तरके पहले और पीछेके कालमें अविच्छिन्न स्वरूपसे
स्थित और सामान्य (इत्यार्थिकनय)के अवलम्बनसे एकत्वको प्राप्त मिथ्यात्वका
सम्यक्नय पर्याय अतर होता है, यह निश्च हुआ । यही अर्थ आगे सर्वत्र योजित कर
लेना चाहिए ।

मिथ्यात्वमा उत्कृष्ट अन्तर कुळ कम दो छायासठ सागरोवम काल है ॥ ४ ॥

इसका दृष्टान्त-कोई एक तिर्यच अयना मनुष्य चौदह सागरोवम आयुस्थिति
धाले लातव-कापिट्ठ कल्पवासी देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहा एक सागरोवम काल वितारकर
दृष्टेर सागरोवमके आदि समयमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । तेरह सागरोवम काल वहा
पर रहकर सम्यक्त्वके साथ ही च्युत हुआ और मनुष्य होगया । उस मनुष्यभवंमें
समयको, मयवा समयमासयमको अनुपालन कर इस मनुष्यभवसम्यग्धी आयुसे कम
पारिस सागरोवम आयुकी स्थितिवाले कारण अच्युतकल्पके देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहासे
च्युत होकर पुन मनुष्य हुआ । इस मनुष्यभवमें समयको अनुपालन कर उपरिम

१ प्रतिपु 'वपागम' इति पाठ ।

२ उक्त्वेण इ परुषी दग्नेने सागरोवमाणाम् । त नि १, ८

देवेषु मणुसाउण्णएक्कीसमागरोपमाउट्टिदिएसु उअण्णो । अंतोमुहुत्तमच्छादि-
सागरोपमचरिमसमए परिणामपच्चएण सम्मामिच्छत्तं गदो । तत्थ अंतोमुहुत्तमच्छिअ
पुणो सम्मत्त पट्टिअज्जिय निस्समिय चुदो मणुमो जादो । तत्थ संजम संजमासंजमं वा
अणुपालिय मणुस्साउएण्णणीससागरोपमाउट्टिदिएसुअज्जिय पुणो जहाकमेण मणुसाउ-
वेण्णणीससागरोपमाउट्टिदिएसु देवेषुअज्जिय अंतोमुहुत्तमच्छादिसागरो-
पमचरिमसमए मिच्छत्तं गदो । लद्धमंतरं अंतोमुहुत्तमच्छादिसागरोपमाणि । एसो
उप्पत्तिकमो अउप्पण्णउप्पायणट्ठं उत्तो । परमत्थदो पुण जेण केण पि पयारेण छानट्ठी
पूरेदव्वा ।

सासाणसम्मामिच्छादिट्टि-सम्मामिच्छादिट्टीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच जहण्णेण एगसमयं ॥ ५ ॥

तं जहा, सासाणसम्मामिच्छादिट्टिस्स ताअ उच्चदे- दो जीवमादिं काऊण एगुत्तरकमेण
पलिदोअमस्स असंखेज्जिदिभागमेत्तत्रियप्पेण उअमसम्मामिच्छादिट्टिणो उअसमसम्मत्तद्वाए
एगसमयमादिं काऊण जाव छानलियावसेसाए आसाणं गदा । तेत्तियं पि काल सासण-
प्रवेयकमं मनुप्य आयुसे कम इकतीस सागरोपम आयुकी स्थितिवाले अहमिन्द्र देवोंमें
उत्पन्न हुआ । वहा पर अन्तर्मुहूर्त कम छयासठ सागरोपम कालके चरम समयमें परि-
णामोंके निमित्तसे सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । उस सम्यग्मिथ्यात्वमें अन्तर्मुहूर्त काल
रहकर पुन सम्यक्त्वको प्राप्त होकर, विधाम ले, च्युत हो, मनुप्य हो गया । उस मनुप्य-
भवमें सयमको अथवा सयमासयमको परिपालन कर, इस मनुप्यभवसम्यन्धी आयुसे
कम चाँस सागरोपम आयुकी स्थितिवाले आनत प्राणत कल्पोंके देवोंमें उत्पन्न होकर
पुन यथाक्रमसे मनुप्यायुसे कम चाँस ओर चौबीस सागरोपमनी स्थितिवाले देवोंमें
उत्पन्न होकर, अन्तर्मुहूर्त कम दो छयासठ सागरोपम कालके अन्तिम समयमें मिथ्यात्वको
प्राप्त हुआ । इस प्रकारसे अन्तर्मुहूर्त कम दो छयासठ सागरोपम कालप्रमाण अन्तर प्राप्त
हुआ । यह ऊपर बताया गया उत्पत्तिका क्रम अव्युत्पन्न जनोंके समझानेके लिए कहा है ।
परमार्थसे तो जिस किसी भी प्रकारसे छयासठ सागरोपम काल पूरा किया जा
सकता है ।

सामादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता
है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय होता है ॥ ५ ॥

जैसे, पहले सासादनसम्यग्दृष्टिका अन्तर कहते हैं— दो जीवोंको आदि करके
एक एक अधिकके क्रमसे पल्योपमके जसप्यातवें भागमात्र विकल्पसे उपशमसम्यग्दृष्टि
जीव, उपशमसम्यक्त्वके कालमें एक समयको आदि करके अधिकसे अधिक छह आवली
कालके अवशेष रह जाने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुए । जितना काल अवशेष

१ सामादनसम्यग्दृष्टेस्तर नानाजीवापेक्षया जघनेनेव समय । ××× सम्यग्मिथ्यादृष्टेस्तर नाना
जीवापेक्षया सामादनवद् । स ति १, ८

पुणो चरित्तमोहमुसामेदूण हेट्ठा ओयरिय आसाण गदस्स अतोमुहुत्तंरं किण्ण परूविदं ?
ण, उअममसेदीदो ओदिण्णाणं सासणगमणाभावादो । तं पि कुदो णब्बदे ? एदम्हादो चेव
भूदअलीवयणादो ।

सम्मामिच्छादिद्विस्म उच्चदे— एकको सम्मामिच्छादिद्वी परिणामपच्चएण मिच्छत्त
सम्मत्त ना पडिण्णो अंतरिदो । अतोमुहुत्तेण भूओ सम्मामिच्छत्त गदो । लद्धमतर-
मंतोमुहुत्तं ।

उक्कस्सेण अद्धपोगलपरियट्टं देसूणं ॥ ८ ॥

ताअ सासणस्सुदाहरणं बुच्चदे— एककेण अणादियमिच्छादिद्विणा तिण्णि करणाणि
कादूण उअममम्मत्त पडिण्णवट्टमसमए अणतो संमारो छिण्णो अद्धपोगलपरियट्टमेत्तो
कदो । पुणो अतोमुहुत्त सम्मत्तेणच्छिय आसाणं गदो (१) । मिच्छत्त पडिवज्जिय
अतरिदो अद्धपोगलपरियट्ट मिच्छत्तेण परिभमिय अतोमुहुत्ताअसेमे ससारे उवसमसम्मत्त
पडिण्णो एगममयाअसेमाए उअसममम्मत्तद्वाए आसाण गदो । लद्धमंतर । भूओ मिच्छा-

उपशम करा ओर नीचे उतारकर, सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुए जीवके अन्तर्मुहूर्त
प्रमाण अन्तर क्यों नहीं बताया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमश्रेणीसे उतरनेवाले जीवोंके सासादन गुण-
स्थानमें गमन करनेका उभाव हे ।

शंका—यह कैसे जाना ?

समाधान—भूतवली आचार्यके इसी धचनसे जाना ।

अअ सम्यग्मिध्यादृष्टि गुणस्थानका एक जीवकी अपेक्षा जअन्य अन्तर कहते ह-
एक सम्यग्मिध्यादृष्टि जीव परिणामके निमित्तसे मिध्यात्वको, अथवा सम्यक्त्वको प्राप्त
हो अन्तरको प्राप्त हुआ ओर अन्तर्मुहूर्त कालके पश्चात् ही पुन सम्यग्मिध्यात्वको प्राप्त
हुआ । इस प्रकारसे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तरकाल प्राप्त हो गया ।

उक्त दोनों गुणस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ॥८॥

उनमेंसे पहले सासादन गुणस्थानका उदाहरण कहते हैं— एक अनादि मिध्या-
दृष्टि जीवने अध प्रवृत्तादि तीनों करण करके उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होनेके प्रथम
समयमें अनन्त ससारको छिन्न कर अर्धपुद्गलपरिवर्तनमात्र किया । पुन अन्तर्मुहूर्तकाल
सम्यक्त्वके साथ रहकर वध सासादनसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (१) । पुन मिध्यात्वको प्राप्त
होकर अन्तरको प्राप्त हुआ ओर अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल मिध्यात्वके साथ परिभ्रमणकर
ससारके अन्तर्मुहूर्त अवशेष रह जाने पर उअशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पुन उपशम-
सम्यक्त्वके कालमें एक समय शेष रह जाने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ । इस
प्रकारसे सूत्रोक अन्तरकाल प्राप्त हो गया । पुन मिध्यादृष्टि हुआ (२) । पुन वेदक-

पडिवज्जिय छात्रलियाउसेमाए उउमममममचद्दाए आमाणं गदो । लद्धमतर पल्लिउमसस अमरेज्जदिभागो । अतोमुहुत्तकालेण आसाण क्रिण्ण णीदो ? ण, उउसममममचतेण विणा आसाणगुणगहणाभाया । उवमममममच पि अंतोमुहुत्तेण क्रिण्ण पडिवज्जदे ? ण, उउ समसम्मादिद्वी मिच्छत्तं गतूण सम्मत्त-सम्माभिच्छत्ताणि उव्वेल्लमाणो तेमिमतोउउ-कोडीमेत्तद्विद्विं धादिय सागरोउमदो सागरोउमपुधत्तादो वा जाउ हेद्वा ण कोदि ताव उवसमसम्मत्तगहणमभायाभाया । ताण द्विदोओ अंतोमुहुत्तेण धादिय सागरोउमदो सागरोउमपुधत्तादो वा हेद्वा क्रिण्ण कोदि ? ण, पल्लिउउमसस अमरेज्जदिभागमेत्तायामेण अतोमुहुत्तुक्कीरणकालेहि उव्वेल्लणउउएहि धादिउममाणेण सम्मत्त-सम्माभिच्छत्तद्विद्विं पल्लिउउमसस अमरेज्जदिभागमेत्तकालेण विणा सागरोउमसस वा सागरोउमपुधत्तसस वा हेद्वा पदणायुउमत्तोदो । सासणपच्छायदमिच्छत्तद्विं सजम गेण्हानिय दसणतिपमुउसामिय

भागमात्र कालसे उपशमसम्यक्त्वमे प्राप्त होकर, उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आगली काल अशेष रहने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हो गया । इस प्रकारसे पल्योपमके असत्यातवें भागप्रमाण अन्तकाल उपलब्ध हो गया ।

शुक्रा—पल्योपमके असत्यातवें भागप्रमाण कालमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर सासादन गुणस्थानको क्यों नहीं प्राप्त कराया ?

समाधान—नहा, क्योंकि, उपशमसम्यक्त्वके विना सासादन गुणस्थानके ग्रहण करनेका अभाव है ।

शुक्रा—वही जीव उपशमसम्यक्त्वके भी अन्तर्मुहूर्तकालके पश्चात् ही क्यों नहीं प्राप्त होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमसम्यक्त्वद्वि जीव मिथ्यात्वको प्राप्त होकर, सम्यक्त्वप्रवृत्ति और सम्यग्मिथ्याप्रवृत्तिकी उद्वेलना करता हुआ, उनकी अन्त कोही प्रमाण स्थितिमें घात करके सागरोपमसे, अथवा सागरोपमपृथक्त्वसे जयतक नीचे नहीं करता है, तब तब उपशमसम्यक्त्वका ग्रहण करना ही समय नहीं है ।

शुक्रा—सम्यक्त्वप्रवृत्ति और सम्यग्मिथ्यात्वप्रवृत्तिकी स्थितियोंको अन्तर्मुहूर्त कालमें घात करने सागरोपमसे, अथवा सागरोपमपृथक्त्व कालसे नीचे क्यों नहीं करता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, पल्योपमके असत्यातवें भागमात्र आधामके द्वारा अन्तर्मुहूर्त उत्तरिणकालकाल उद्वेलनाकाडकोंसे घात कीजानेवाली सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वप्रवृत्तिकी स्थितिका, पल्योपमके असत्यातवें भागमात्र कालके विना सागरोपमके, अथवा सागरोपमपृथक्त्वके नीचे पतन नहीं हो सकता है ।

शुक्रा—सासादन गुणस्थानसे पीछे लोटे हुए मिथ्याद्वि जीवको समय ग्रहण कराकर और दर्शनमोहनियकी तीन प्रवृत्तियोंका उपशमन कराकर, पुन चारित्रमोहका

पुणो चरित्तमोहमुत्सामेदूण हेड्डा ओयरिय जासाणं गदस्स अतोमुहुत्तंरं किण्ण परूरिदं ?
ण, उपसमसेदीदो ओदिण्णाणं सासणगमणाभावादो । तं पि हुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेत्त
भूदनलीयणादो ।

सम्मामिच्छादिद्विस्स उच्चदे- एक्को सम्मामिच्छादिद्वी परिणामपच्चएण मिच्छत्त
मम्मत्तं वा पडिण्णो अंतरिदो । अतोमुहुत्तेण भूओ सम्मामिच्छत्त गदो । लद्धमंतर-
मतोमुहुत्त ।

उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं ॥ ८ ॥

तात्त सामणस्सुदाहरणं उच्चदे- एक्केण अणादियमिच्छादिद्विणा तिण्णि करणाणि
कादूण उपसमसम्मत्त पडिण्णपद्धममए अणंतो संमारो डिण्णो अद्धपोग्गलपरियट्टमेत्तो
कदो । पुणो अंतोमुहुत्त सम्मत्तेणच्छिय आमाणं गदो (१) । मिच्छत्त पडिवज्जिय
अंतरिदो अद्धपोग्गलपरियट्ट मिच्छत्तेण परिभमिय अंतोमुहुत्तात्तसेसे ससारे उवसमसम्मत्तं
पडिवण्णो एगममयात्तसेमाए उपसमसम्मत्तद्वाए आसाण गदो । लद्धमंतर । भूओ मिच्छा-

उपशम करा ओर नीचे उतारकर, सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुए जीवके अन्तर्मुहूर्त-
प्रमाण अन्तर क्यो नहीं बताया ?

समाधान—नहीं, क्योकि, उपशमधेर्णासे उतरनेवाले जीवोंके सासादन गुण-
स्थानमें गमन करनेका जभाव हे ।

श्रुता—यह कैसे जाना ?

समाधान—भूतपत्नी आचार्यके इसी वचनसे जाना ।

अत्त सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानका एक्क जीवकी अपेक्षा जत्तन्य अन्तर कहते हैं-
एक्क सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव परिणामोंके निमित्तसे मिथ्यात्वको, अथवा सम्यक्त्वको प्राप्त
हो अन्तरको प्राप्त हुआ और अन्तर्मुहूर्त कालके पश्चात् ही पुन सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त
हुआ । इस प्रकारसे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तरकाल प्राप्त हो गया ।

उक्त दोनों गुणस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ॥८॥

उनमेंसे पहले सासादन गुणस्थानका उदाहरण कहते हैं- एक अनादि मिथ्या-
दृष्टि जीवने अध प्रवृत्तादि तीनों करण करके उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होनेके प्रथम
समयमें अनन्त ससारको छिन्न कर अर्धपुद्गलपरिवर्तनमात्र किया । पुन अन्तर्मुहूर्तकाल
सम्यक्त्वके साथ रहकर वह सासादनसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (१) । पुन मिथ्यात्वको प्राप्त
होकर अन्तरको प्राप्त हुआ और अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल मिथ्यात्वके साथ परिभ्रमणकर
ससारके अन्तर्मुहूर्त अवशेष रह जाने पर उमशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पुन उपशम
सम्यक्त्वके कालमें एक समय शेष रह जाने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ । इस
प्रकारसे सूत्रोक्त अन्तरकाल प्राप्त हो गया । पुन मिथ्यादृष्टि हुआ (२) । पुन वेदक-

१ उत्तर्येणाद्धपुद्गलपरिवर्तो देशेन । स सि १, ८

दिही जादो (२) । वेदगमम्मत्त पडिवज्जिय (३) अणत्ताणुपधिं तिसजोडिय (४) दसणमोहणीय करिय (५) अप्पमत्तो जादो (६) । तदो पमत्तापमत्तपरावत्तमहस्स कादूण (७) खरगमेठीपाओग्गिसोहीए तिसुज्झिऊण (८) अपुच्चररगो (९) अणियट्टिररगो (१०) सुहुमररगो (११) खीणकमाओ (१२) सजोगिकेवली (१३) अजोगिकेवली (१४) होदूण मिद्धो जादो । एउ ममयाहियचोह्मअतोमुहुत्तेहि उण मद्धपोगलपरियट्ट मासणमम्मादिट्टिम्म उक्कस्मत्तर होदि ।

सम्मामिच्छादिट्टिस्स उच्चदे- एउकेण अणाट्टियमिच्छादिट्टिणा तिण्णि नि करणाणि कादूण उवसममम्मत्त गेण्हतेण गमिदमम्मत्तपढममए अणतो समारो छिदिदूण अद्ध पोगलपरियट्टमेत्तो कदो । उउममम्मत्तेण अतोमुहुत्तमन्डिय (१) मम्मामिच्छत्त पडिरण्णो (२) मिच्छत्त गतूणतरिदो । जद्धपोगलपरियट्ट परिभमिय अतोमुहुत्तावम ससारो उउममम्मत्त पडिवण्णो । तत्थेउ अणत्ताणुपधिं तिसजोडिय मम्मामिच्छत्त पडिवण्णो । लद्धमत्तर (३) । ततो वेदगमम्मत्त पडिवज्जिय (४) दसणमोहणीय खरेदूण (५) अप्पमत्तो जादो (६) । पुणो पमत्तापमत्तपरावत्तमहस्स करिय (७) खरगमेठीपाओग्ग-

सम्यक्त्वको प्राप्त होऊर (३) अनन्तानुबन्धीनपायका विसयोजन कर (४) दर्शनमोहनीयता क्षपक (५) अप्रमत्तसयत हुआ (६) । पुन प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानोंमें सहस्रों परावतनोंको करके (७) क्षपन्श्रेणाने प्रायोग्य विशुद्धिसे विशुद्ध होऊर (८) अपूर्वकरण क्षपक (९), अनिवृत्तिकरण क्षपक (१०), सूक्ष्मसागराधिक क्षपक (११), क्षीणकपाय चीतराग छन्नस्थ (१२), सयोगिकेवली (१३) और अयोगिकेवली (१४) होऊरके सिद्ध होगया । इस प्रकारसे एक समय अधिउ चौदह अतमुहुत्तोंसे कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन सासादनसम्यग्दृष्टिमा उत्कृष्ट अतरकाल होता है ।

अउ समयगिम्यादपि गुणस्थानमा एक जावनी अपेक्षा उत्कृष्ट अतर कहते हैं- एक अनाग्नि मिष्यादपि जावने तीनों ही करण करके उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करते हुए सम्यक्त्व ग्रहण करनेक प्रथम समयमें अनन्त ससार छेदकर अर्धपुद्गलपरिवर्तन मात्र किया । उपशमसम्यक्त्वसे साथ अतमुहुत्त रहकर वह (१) समयगिम्यात्वको प्राप्त हुआ (२) । पुनः मिष्यात्वको प्राप्त हो अतरको प्राप्त हो गया । पश्चात् अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल प्रमाण परिध्रमण कर ससारके अन्तमुहुत्तप्रमाण अवशेष रहने पर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ और यहापर ही अनन्तानुबन्धीनपायकी विसयोजना कर सम्यगिम्यात्वको प्राप्त हुआ इस प्रकारसे अतर उपलब्ध हो गया (३) । तत्पश्चात् वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त कर (४) दर्शनमोहनीयता क्षपण करके (५) अप्रमत्तसयत हुआ (६) । पुन प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानसम्यग्धी सहस्रों परावतनोंको करके (७) क्षपन्श्रेणाने प्रायोग्य विशुद्धिसे विशुद्ध

त्रिसोहीए त्रिसुज्झिय (८) अपुव्वसणगो (९) अणियद्विसणगो (१०) सुहुमखवगो (११) खीणकसाओ (१२) सजोगिकेवली (१३) अजोगिकेवली (१४) होदूण सिद्धि गदो। एदेहि चोदमजतोमुहुत्तेहि उणमद्वपोग्गलपरियद्व सम्मामिच्छुक्कस्मतर होदि ।

असजदसम्मादिद्विपहुडि जाव अप्पमत्तसंजदा ति अंतरं केव-
चिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥९॥

कुदो ? सच्चकालमेदाणमुत्तलभा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ १० ॥

एदस्म सुत्तस्स गुणद्वान्णपरिवाडीए अत्थो उच्चदे । तं जहा- एकको अमंजद-
सम्मादिद्वी सजमासजम पडिण्णो । अतोमुहुत्तमंतरिय भूओ अमजदसम्मादिद्वी जादो ।
लद्धमतरमतोमुहुत्त । सजदासजदस्म उच्चदे- एकको सजदासजदो असंजदसम्मादिद्वि
मिच्छादिद्वि सजम या पडिण्णो । अतोमुहुत्तमंतरिय भूओ सजमासजम पडिण्णो ।
लद्धमतोमुहुत्त जहण्णतर सजदासजदस्स । पमत्तसजदस्म उच्चदे- एगो पमत्तो अप्पमत्तो
होकर (८) अपूर्वकरग क्षपक (९) अनिवृत्तिकरण क्षपक (१०) सूक्ष्मसाम्पराय क्षपक (११)
क्षीणकपाय (१२) सयोगिकेवली (१३) और अयोगिकेवली (१४) होकरके सिद्धपदको
प्राप्त हुआ । इन चोदह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम जर्धपुद्गलपरिवर्तन सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट
अन्तरकाल होता है ।

अमयतमम्यग्दृष्टि गुणस्थानको आदि लेकर अप्रमत्तसंयत गुणस्थान तकके प्रत्येक
गुणस्थानमेंती जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर
नहीं है, निरन्तर है ॥ ९ ॥

क्योंकि, सर्वकाल ही सूत्रेक गुणस्थानमेंती जीव पाये जाते ह ।

उक्त गुणस्थानोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ॥१०॥

इस सूत्रका गुणस्थानकी परिपाटीसे अर्थ कहते ह । यह इस प्रकार है- एक
असयतसम्यग्दृष्टि जीव सयमासयमको प्राप्त हुआ । वहापर अन्तर्मुहूर्तकाल रहकर
अन्तरको प्राप्त हो, पुन असयतसम्यग्दृष्टि होगया । इस प्रकारसे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण
अन्तरकाल प्राप्त होगया ।

अत्र सयतासयतना अन्तर कहते ह- एक संयतासयत जीव, असयतसम्यग्दृष्टि
गुणस्थानको, अथवा मिथ्यादृष्टि गुणस्थानको, अथवा सयमको प्राप्त हुआ और अन्तर्मुहूर्त-
काल वहापर रह कर अन्तरको प्राप्त हो पुन संयमासयमको प्राप्त होगया । इस
प्रकारसे सयतासयतना अन्तर्मुहूर्तकाल प्रमाण जग्न्य अन्तर प्राप्त हुआ ।

१ अमयतमम्यग्दृष्टिवाचप्रमत्तानां नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । स मि १, ८

२ एकजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्त । स मि १, ८

होदूण सव्वलहुं पुणो नि पमत्तो जादो । लद्धमतोमुहुत्त जहण्णातर पमत्तस्म । अप्पमत्तस्म उच्चवे- एगो अप्पमत्तो उरसममेटीमारोहिय पडिणियत्तो अप्पमत्तो जादो । लद्धमतो जहण्णमप्पमत्तस्म । हेट्ठिमगुणेषु किण्ण अतराभिदो ? ण, उरसममेटीसच्चगुणद्वयाण द्वाणाहिंतो हेट्ठिमएगगुणद्वयाणद्वाए सरेज्जगुणत्तादो ।

उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्ठ देसूण' ॥ ११ ॥

गुणद्वयपरिवादीए उक्कस्मतरपरूपा वीरदे- एकमेण अणादियमिच्छाणिट्ठिणा तिण्णि करणाणि कादूण पढमसम्मत्त गेण्हतेण अणतो ससारो छिदिदूण गहिदसम्मत्त पढमसमए अद्धपोग्गलपरियट्ठमेत्तो क्खो । उरसममम्मत्तेण अतोमुहुत्तमच्छिय (१) छात्रलियाससाए उरसमसम्मत्तद्वाए आसाण गतूणतरिदो । मिच्छतेगद्धपोग्गलपरियट्ठ ममिय अपच्छिमे भरे संजम सजमामजम वा गतूण क्खरणिज्जे होदूण अतोमुहुत्ताससे

अर प्रमत्तसयतका अन्तर कहते हैं- एक प्रमत्तसयत जीव, अप्रमत्तसयत होकर सर्वलघु कालके पश्चात् फिर भी प्रमत्तसयत होगया । इस प्रकारसे प्रमत्तसयतका अन्तमुद्भूतकालप्रमाण जघन्य अन्तर प्राप्त हुआ ।

अर अप्रमत्तसयतका अन्तर कहते हैं- एक अप्रमत्तसयत जीव उपशमश्रेणिपर चडकर पुन लौटा और अप्रमत्तसयत होगया । इस प्रकारसे अन्तमुद्भूतकाल प्रमाण जघन्य अन्तर अप्रमत्तसयतका उपलब्ध हुआ ।

शुक्रा—नीचेके असयतादि गुणस्थानोंमें भेजकर अप्रमत्तसयतका जघन्य अन्तर क्यों नहीं बताया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमश्रेणीके सभी गुणस्थानोंके कालोंसे प्रमत्तादि नीचेके एक गुणस्थानका काल भी सख्यातगुणा होता है ।

उक्त असयतादि चारों गुणस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है ॥ ११ ॥

अर गुणस्थान-परिपाटीसे उत्कृष्ट अन्तरकी प्ररूपणा करते हैं- एक अनादि मिथ्या दृष्टि जीवने तीनों करण करके प्रथमोपशमसम्यक्त्वकी ग्रहण करते हुए अनन्त ससार छेदकर सम्यक्त्व ग्रहण करनेके प्रथम समयमें वह ससार अधपुद्गलपरिवर्तनमान किया पुन उपशमसम्यक्त्वके साथ अन्तमुद्भूतकाल रह कर (१) उपशमसम्यक्त्वके कालमें छा आवलिया अवशेष रह जाने पर सासात्त गुणस्थानको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ । पुन मिथ्यात्वके साथ अधपुद्गलपरिवर्तन परिभ्रमण कर अन्तिम भवमें सयमको अपना सयमासयमको प्राप्त होकर, दृतदृत्य वेदकसम्यक्त्वकी होकर अन्तमुद्भूत काल प्रमाण संसारके अवशेष रह जाने पर परिणामोंके निमित्तसे असयतसम्यक्त्वा

संसारे परिणामपच्चएण असंजदसम्मादिट्टी जादो । लद्धमतर (२) । पुणो अप्पमत्त-
भायेण सजमं पडिअज्जिय (३) पमत्तापमत्तपरावत्तसहस्स कादूण (४) खणगमेडी-
पाओग्गविसोहीए विसुञ्जिय (५) अपुच्चो (६) अणियट्टी (७) सुहुमो (८)
रीणो (९) सजोगी (१०) अजोगी (११) होदूण परिणिउदो । एवमेक्कारसेहि
अंतोमुहुत्तेहि ऊणमद्वपोग्गलपरियट्टमसजदसम्मादिट्टीणमुक्कस्संतर होदि ।

सजदासजदस्म उच्चदे- एककेण अणादियमिच्छादिट्टिणा तिण्णिण करणाणि
कादूण गहिदसम्मत्तपढमसमए सम्मत्तगुणेण अणतो ससारो छिण्णो अद्वपोग्गलपरियट्ट-
मेत्तो कदो । सम्मत्तेण सह गहिदमजमासंजमेण अंतोमुहुत्तमच्छिय छाअलियाअसेसाए
उअसमसम्मत्तद्वाए आसाण गदो (१) अतरिदो मिच्छत्तेण अद्वपोग्गलपरियट्टं परिभामिय
अपच्छिमे भये सामंजम सम्मत्त सजम वा पडिअज्जिय कदकरणिज्जो होदूण परिणाम-
पच्चएण सजमासजमं पडिवण्णो (२) । लद्धमतर । अप्पमत्तभायेण सजमं पडिअज्जिय (३)
पमत्तापमत्तपरावत्तसहस्स कादूण (४) खणगमेडीपाओग्गविसोहीए विसुञ्जिय (५)
अपुच्चो (६) अणियट्टी (७) सुहुमो (८) रीणकसाओ (९) सजोगी (१०)

होगया । इस प्रकार सूत्रोक्त अन्तर्काल प्राप्त हुआ (२) । पुन अप्रमत्त-
भावके साथ सयमको प्राप्त होकर (३) प्रमत्त-अप्रमत्त गुणस्थानसम्बन्धी
सहस्रों परावर्तनोंको करके (४) क्षपकश्रेणीके प्रायोग्य विशुद्धिसे विशुद्ध
होकर (५) अपूर्वकरणसयत (६) अनिवृत्तिकरणसयत (७) सूक्ष्मसाम्परायसयत (८)
क्षीणकपायवीतरागछद्मस्थ (९) सयोगिकेवली (१०) और अयोगिकेवली (११) होकर
निर्वाणको प्राप्त हो गया । इस प्रकारसे इन ग्यारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अर्धपुद्गलपरि-
वर्तनकाल असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका उत्लृष्ट अन्तर होता है ।

अअ सयतासयतका उत्लृष्ट अन्तर कहते हैं— एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीवने
तीनों करण करके सम्यक्त्तव ग्रहण करनेके प्रथम समयमें सम्यक्त्वगुणके द्वारा अनन्त
ससार छेदकर अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण किया । पुन सम्यक्त्वके साथ ही ग्रहण किये
गये सयमासयमके साथ अन्तर्मुहूर्तकाल रहकर, उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह
आवलिया अशेष रहजाने पर सासादनगुणस्थानको प्राप्त हो (१) अन्तरको प्राप्त हो
गया, और मिथ्यात्वके साथ अर्धपुद्गलपरिवर्तन परिभ्रमण कर अन्तिम भवमें असयम
सहित सम्यक्त्वको, अथवा सयमको प्राप्त होकर कृतकृत्य वेदकसम्यक्त्वी हो, परि-
णामोंके निमित्तसे सयमासयमको प्राप्त हुआ (२) । इस प्रकारसे इस गुणस्थानका अन्तर
प्राप्त होगया । पुन अप्रमत्तभावके साथ सयमको प्राप्त होकर (३) प्रमत्त अप्रमत्त
गुणस्थानसम्बन्धी सहस्रों परावर्तनोंको करके (४) क्षपकश्रेणीके योग्य विशुद्धिसे विशुद्ध
होकर (५) अपूर्वकरण (६) अनिवृत्तिकरण (७) सूक्ष्मसाम्पराय (८) क्षीणकपाय (९)

जोगी (११) होदूण पणिणिवुदो। एरमेधारमेहि अतोमुहुत्तेहि ऊणमद्वपोगलपरियद्व
कस्मत्तर सजगसंजदस्म होदि।

पमत्तस्स उच्चदे- एवेण अणादियमिच्छादिद्विणा तिण्णि करणाणि कादूण
उवसमसम्मत्त सजम च जुगम पडिउज्जेतेण अणतो ससारो डिदिओ, अद्वपोगलपरियद्व
मेत्तो कदो। अतोमुहुत्तमच्छिय (१) पमत्तो जादो (२)। आदी दिट्ठा। छावलिया
वसेसाए उरसमसम्मत्तद्वाए आमाण गतुगतिय मिच्छत्तेणद्वपोगलपरियद्व परियद्विप
अपच्छिमे भरे सासजमसम्मत्त सजमामंजम ग पडिवज्जिय कदकरणिज्जो होऊण
अप्पमत्तभावेण सजम पटिउज्जिय पमत्तो जादो (३)। लद्धमत्तर। तदो खगसेदी
पाओग्गेत्त अप्पमत्तो जादो (४)। पुणो जपुत्तो (५) अणियदी (६) सुहुमो (७)
खीणकमाओ (८) सजोगी (९) अजोगी (१०) होदूण णिव्वाण गदो। एर दसहि
अतोमुहुत्तेहि ऊणमद्वपोगलपरियद्व पमत्तस्सुक्कस्सत्तर होदि।

अप्पमत्तस्म उच्चदे- एवेण अणादियमिच्छादिद्विणा तिण्णि नि करणाणि करिय
उवसमसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगम पडिउण्णेण छेत्तूण अणतो ससारो अद्वपोगल

सयोगिकेउरी (१०) और अयोगिकेउरी (११) होकर निर्वाणको प्राप्त हुआ। इस प्रकारसे
इन ग्यारह अन्तमुहुत्तोंसे कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल सयतासयतका उत्पद्य अन्तर
होता है।

अत्र प्रमत्तमयतना अन्तर कहते हैं— एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीवने तीनों ही
करण करके उपनामसम्यक्त्व और सयमको एक साथ प्राप्त होते हुए अनन्त ससार छेदकर
अर्धपुद्गलपरिवर्तनमात्र किया। पुन उस अवस्थामें अन्तमुहुत्त रह कर (१) प्रमत्तसयत
हुआ (२)। इस प्रकारसे यह अर्धपुद्गलपरिवर्तनकी आदि दृष्टिगोचर हुई। पुन उपशम
सम्यक्त्वके कालमें छह आवलिया अवशेष रहजाने पर सासादन गुणस्थानको जाकर
अन्तरको प्राप्त होकर मिथ्यात्वके साथ अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल परिभ्रमण कर अन्तिम
भवमें असमयमसाहित सम्यक्त्वको, अथवा सयमासयमको प्राप्त होकर कृतकृत्य वेदक
सम्यक्त्वो हो अप्रमत्तभावके साथ सयमको प्राप्त होकर प्रमत्तसयत हो गया (३)।
इस प्रकारसे इस गुणस्थानका अन्तर प्राप्त होगया। पश्चात् क्षपकश्रेणीके प्रायोग्य
अप्रमत्तसयत हुआ (४)। पुन अपूवकरणसयत (५) अनिवृत्तिकरणसयत (६) सूक्ष्म
साम्परायसयत (७) शीणकपायवीतरागछद्म (८) सयोगिकेउरी (९) और अयोगि
केउरी (१०) हानर निगणको प्राप्त हुआ। इस प्रकारसे दश अन्तमुहुत्तोंने कम अर्ध
पुद्गलपरिवर्तनकाल प्रमत्तसयतका उत्पद्य अन्तर होना है।

अथ अप्रमत्तसयतना अन्तर कहते हैं— एर अनादि मिथ्यादृष्टि जीवने तीनों ही
करके उपनामसम्यक्त्वको और अप्रमत्तसयत गुणस्थानको एक साथ प्राप्त होकर
प्रद्वण करनेसे प्रथम समयमें ही अनन्त ससार छेदकर अर्धपुद्गलपरिवर्तन मात्र

परियट्टमेतो पढममए कदो । तत्थतोमुहुत्तमच्छिय (१) पमत्तो जादो अंतरिदो मिच्छत्तेण अद्दपोग्गलपरियट्ट परियट्टिय अपन्निउमे भेे सम्मत्तं सज्जमासंजमं वा पडि-वज्जिय सत्त कम्माणि स्रियिय जप्पमत्तो जादो (२) । लद्धमतर । पमत्तापमत्तपरात्त-सहस्स कादूण (३) अप्पमत्तो जादो (४) । अपुव्वो (५) अणियट्टी (६) सुहुमो (७) सीणरूमाओ (८) मज्जोगी (९) जजोगी (१०) होदूण णिच्चाण गदो । (एवं) दसहि अंतोमुहुत्तेहि ऊणमद्दपोग्गलपरियट्ट (अप्पमत्तस्सुकम्मतर होदि) ।

चतुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ १२ ॥

अपुव्वम्म ताव उच्चदे- मत्तट्ट जणा ऱहुआ वा अपुव्वकरणउत्सामगद्वाए सीणाए अणियट्टिउत्सामगा ना अप्पमत्ता वा काल करिय देना जादा । एगसमय-मंतरिदमपुव्वगुणट्टाण । तदो विदियममए अप्पमत्ता ना ओदरता अणियट्टिणो वा अपुव्व-करणउत्सामगा जादा । लद्धमेगसमयमतर । एव चेत्त जणियट्टिउत्सामगाणं सुहुम-उत्सामगाणं उत्संतरूमायाण च जहण्णतरमेगममओ वत्तव्वो ।

भिया । उस अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें अन्तर्मुहूर्त रहकर (१) प्रमत्तसयत हुआ और अन्तरको प्राप्त होकर मिथ्यात्वके साथ अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल परिवर्तन कर अन्तिम भवमें सम्यक्त्व जयना सयमासयमको प्राप्त होकर दर्शनमोहकी तीन ओर अनन्तानुपधीकी चार, इन सात प्रकृतियोंका क्षण कर अप्रमत्तसयत हो गया (२) । इस प्रकार अप्रमत्त सयतका अन्तरकाल उपलब्ध हुआ । पुन प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानमें सहस्रों परा-प्रतनोंको करके (३) अप्रमत्तसयत हुआ (४) । पुन अपूर्वकरण (५) अनिवृत्तिकरण (६) सूक्ष्मसाम्पराय (७) क्षीणरूपाय (८) सयोगिन्वली (९) जार जयोगिकेवली (१०) होकर निर्वाणको प्राप्त हुआ । इस प्रकार दश अन्तर्मुहूर्तोंने मम अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल अप्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर है ।

उपशमश्रेणीके चारों उपशामकोका अन्तर कितने काल तक होता है ? नाना जीर्णों अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ १२ ॥

उनमेंसे पहले अपूर्वकरण उपशामकका अन्तर रहते हैं- सात आठ जन, अथवा षट्ठसे जीव, अपूर्वकरण गुणस्थानके उपशामककाल क्षीण हो जाने पर अनिवृत्तिकरण उप-शामक अथवा अप्रमत्तसयत होकर तथा मरण करके देव हुए । इस प्रकार एक समयके लिये अपूर्वकरण गुणस्थान अन्तरको प्राप्त होगया । तत्पश्चात् द्वितीय समयमें अप्रमत्त सयत, अथवा उतरते हुए अनिवृत्तिकरण उपशामक जीव, अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती उपशामक होगए । इस प्रकार एक समय प्रमाण अन्तरकाल लब्ध होगया । इसी प्रकारसे अनिवृत्तिकरण उपशामक, सूक्ष्मसाम्पराय उपशामक और उपशान्तकदाय उप-शामकोंका एक समय प्रमाण जघन्य अन्तर कहना चाहिये ।

१ चतुर्णोपशमकानां नानाजीवापेक्षया जघन्येनेक समय । स ति १, ८

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ १३ ॥

त जघा- सत्तद्ध जणा बहुआ वा अपुव्वउत्तसामगा अणियट्ठिउत्तसामगा अप्प मत्ता वा काल करिय देना जादा । अतरिदमपुव्वगुणद्वान जाअ उक्कस्सेण वासपुधत्त । तदो अदिक्कते वासपुधते सत्तद्ध जणा बहुआ वा अप्पमत्ता अपुव्वकरणउत्तसामगा जादा । लद्धमुक्कस्सतर वासपुधत्त । एअ चेअ सेसतिण्हमुत्तसामगाण वासपुधत्ततर वत्तव्वं, विसेसाभाया ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ १४ ॥

त जघा- एकको अपुव्वकरणो अणियट्ठिउत्तसामगो सुहुमउत्तसामगो उत्तमत क्कमाओ होदूण पुणो वि सुहुमउत्तसामगो अणियट्ठिउत्तसामगो होदूण अपुव्वउत्तसामगो जादो । लद्धमतर । एदाओ पच वि अद्दाओ एककद्ध कदे वि अतोमुहुत्तमेव होदि ति जहण्णतरमतोमुहुत्त होदि ।

एअ चेअ सेसतिण्हमुत्तसामगाणमेगजीअजहण्णतर वत्तव्व । णअरि अणियट्ठि

उत्त चारो उपशामकोका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ १३ ॥

जैसे-सात आठ जन, अथवा बहुतसे अपूर्वकरण उपशामक जीव, अनिवृत्तिकरण उपशामक अथवा अप्रमत्तसयत हुए और वे मरण करके देव हुए । इस प्रकार यह अपूर्वकरण उपशामक गुणस्थान उत्कृष्टरूपसे वर्षपृथक्त्वके लिए अन्तरको प्राप्त होगया । तत्पश्चात् वर्षपृथक्त्वकालके व्यतीत होनेपर सात आठ जन, अथवा बहुतसे अप्रमत्तसयत जीव, अपूर्वकरण उपशामक हुए । इस प्रकार वर्षपृथक्त्व प्रमाण उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होगया । इसी प्रकार अनिवृत्तिकरणादि तीनों उपशामकोंका अन्तर वर्षपृथक्त्व प्रमाण कहना चाहिए, क्योंकि, अपूर्वकरण उपशामकके अन्तरसे तीनों उपशामकोंके अन्तरमें कोई विशेषता नहीं है ।

चारों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १४ ॥

जैसे-एक अपूर्वकरण उपशामक जीव, अनिवृत्ति उपशामक, सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामक और उपशान्तकषाय उपशामक होकर फिर भी सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामक और अनिवृत्तिकरण उपशामक होकर अपूर्वकरण उपशामक होगया । इस प्रकार अन्तर्मुहूर्तकाल प्रमाण जघन्य अन्तर उपलब्ध हुआ । ये अनिवृत्तिकरणसे लगाकर पुन अपूर्वकरण उपशामक होनेके पूर्व तकके पाचों ही गुणस्थानोंके कालोंको एकत्र करने पर भी यह बात अन्तर्मुहूर्त ही होता है, इसलिए जघन्य अन्तर भी अन्तर्मुहूर्त ही होता है । इसी प्रकार दोष तीनों उपशामकोंका एक जीवसम्बन्धी जघन्य अन्तर कहना चाहिए । विशेष यात यह है कि अनिवृत्तिकरण उपशामकके सूक्ष्मसाम्परायिक

१ उत्तमेण वर्षपृथक्त्वम् । स मि १, ८

२ एकजीव प्रति जघन्येनात्तर्मुहूर्तम् । स मि

उवसामगस्त दो सुहुमद्वाओ एगा उरसंतकसायद्वा च जहण्णंतरं होदि । सुहुमउव-
सामगस्त उरसंतकसायद्वा एकका चैव जहण्णतर होदि । उवसंतकसायस्त पुण हेद्वा
उवसंतकसायमोदरिय सुहुमसापराओ अणियट्टिकरणो अपुव्वकरणो अप्पमत्तो होदूण
पमत्तापमत्तपरावत्तसहस्मं करिय अप्पमत्तो अपुव्वो अणियट्टी सुहुमो होदूण पुणो उवसत-
कसायगुणट्टाण पडिण्णस्त णरद्वासमूहमेत्तमतोमुहुत्तमत होदि ।

उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं ॥ १५ ॥

अपुव्वस्त ताव उच्चदे- एककेण अणादियमिच्छादिट्टिणा तिण्णि करणाणि
करिय उरसमसम्मत्त सजम च अक्कमेण पडिण्णपढमसमए अणंतससार छिंदिय
अद्धपोग्गलपरियट्टमेत्त कट्टेण अप्पमत्तद्वा अतोमुहुत्तमेत्ता अणुपालिदा (१) । तदो
पमत्तो जादो (२) । वेदगसम्मत्तमुत्तमियं (३) पमत्तापमत्तपरावत्तसहस्म कादूण (४)
उरसमसेदीपाओग्गो अप्पमत्तो जादो (५) । अपुव्वो (६) अणियट्टी (७) सुहुमो (८)
उरसतकसायो (९) पुणो सुहुमो (१०) अणियट्टी (११) अपुव्वकरणो जादो (१२) ।

सम्यग्धी दो अन्तर्मुहूर्तकाल आर उपशान्तकपायसम्यग्धी एक अन्तर्मुहूर्तकाल, ये तीनों
मिलकर जघन्य अन्तर होता है । सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामकके उपशान्तकपाय-
सम्यग्धी एक अन्तर्मुहूर्तकाल ही जघन्य अन्तर होता है । किन्तु उपशान्तकपाय उप-
शामकका उपशान्तकपायसे नीचे उतरकर सूक्ष्मसाम्पराय (१) अनिवृत्तिकरण (२)
अपूर्वकरण (३) और अप्रमत्तसयत (४) होकर, प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानसम्यग्धी
सहस्रों परावर्तनोंको करके (५) पुन अप्रमत्त (६) अपूर्वकरण (७) अनिवृत्तिकरण (८)
और सूक्ष्मसाम्परायिक होकर (९) पुन उपशान्तकपाय गुणस्थानको प्राप्त हुए जीवके
नौ अद्धाओंका सम्मिलित प्रमाण अन्तर्मुहूर्तकाल अन्तर होता है ।

उक्त चार्गे उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्ध-
पुद्गलपरिवर्तन काल है ॥ १५ ॥

इनमेंसे पहले एक जीवकी अपेक्षा अपूर्वकरण गुणस्थानका उत्कृष्ट अन्तर कहते
हैं- एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीवने तीनों ही करण करके उपशामसम्यग्त्व और सयमको
एक साथ प्राप्त होनेके प्रथम समयमें ही जनन्त ससारको छेदकर अर्धपुद्गलपरिवर्तनमात्र
करके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अप्रमत्तसयतके कालका अनुपालन किया (१) । पीछे प्रमत्तसयत
हुआ २) । पुन वेदकसम्यग्त्वको प्राप्त कर (३) सहस्रों प्रमत्त अप्रमत्त परावर्तनोंको
करके (४) उपशामश्रेणीके योग्य अप्रमत्तसयत होगया (५) । पुन अपूर्वकरण (६) अनि-
वृत्तिकरण (७) सूक्ष्मसाम्पराय (८) उपशान्तकपाय (९), पुन सूक्ष्मसाम्पराय (१०)
अनिवृत्तिकरण (११) और पुन अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती होगया (१२) । पश्चात् नीचे

१ उत्कर्षेणार्धपुद्गलपरिवर्तों देशेन । स मि १, ८

२ प्रतियु 'सुवसामिय' इति पाठ ।

हेट्टा पडिय अंतरिदो अद्वययोगलपरियट्ट पणियट्टिदूण अपच्छिडमे भये दमणत्तिग तविय अपुच्चुत्तमामगो जाते (१३) । लद्धमतर । ततो जगियट्टी (१४) सुद्धमो (१५) उन्नतकमाओ (१६) जाते । पुणो पडिगियत्तो सुद्धमो (१७) अणियट्टी (१८) अपुच्चो (१९) अप्पमत्तो (२०) पमत्तो (२१) पृगो अप्पमत्तो (२२) अपुच्च ससगो (२३) अणियट्टी (२४) सुद्धमो (२५) गीणरग्गाओ (२६) मनोगी (२७) अचागी (२८) होदूण णिउदो । एत्तमुद्धारीमहि अतोमुद्धुत्तेहि उगमद्वययोगलपरियट्टमपुव्वरुणस्सुद्धस्मत्तर होदि । एत्त तिण्हमुत्तमामगण । एत्तरि परिपाटीए छव्वीम चउत्तीम वारीम अतोमुद्धुत्तेहि उगमद्वयपागलपरियट्ट तिण्हमुत्तस्मत्तर होदि ।

चटुहं सवग-अजोगिकेवलीणमंतर केवचिरं कालदो होदि,
णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ १६ ॥

त जहा- मत्तद्व जणा अट्टत्तमद वा अपुव्वरुणरसगो एक्कस्मिह चैव मए सव्वे जणियट्टिसगो जादा । एगममयमंतरिदमपुत्तगुणद्वयण । त्रिदियममए मत्तद्व जणा अट्टत्तमद वा अप्पमत्तो अपुव्वरुणरसगो जादा । लद्धमतरमेगममत्तो । एत्त

गिरर अन्तरको प्राप्त हुआ और अधपुट्टलपरिवर्तनका प्रमाण परिवर्तन करके अन्तिम भवमें दशानमोहनीयता तीनों प्रतियोंका क्षपण करके अपूर्वकरण उपशामक हुआ (१३) । इस प्रकार अन्तरकाल उपलब्ध होगया । पुन अनिष्टित्तिकरण (१४) सूक्ष्मसाध्य रायिक (१५) और उपशान्तस्वाय उपशामक हागया (१६) । पुन लौटकर सूक्ष्मसाध्य रायिक (१७) अनिष्टित्तिकरण (१८) अपूर्वकरण (१९) अग्रमत्तसयत (२०) प्रमत्तसयत (२१) पुन अग्रमत्तसयत (२२) अपूर्वकरण शपक (२३) अनिष्टित्तिकरण शपक (२४) सूक्ष्मसाध्य रायिक क्षपक (२५) क्षीणस्वाय क्षपक (२६) सयागिकेवली (२७) और अयोमिकेवली (२८) होकर निर्वाणको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अट्टाहम अन्तमुद्धुत्तमे कम अधपुट्टलपरिवर्तन काल अपुव्वकरणका उत्पन्न अन्तर होता है । इसी प्रकारसे तीना उपशामकोंका अन्तर जानना चाहिये । किन्तु विशेष बात यह है कि परिपाटीवमसे अनिष्टित्तिकरण उपशामकके छत्रास, सूक्ष्मसाध्यराय उपशामकके चौयास और उपशान्तस्वायके बाहस अन्तमुद्धुत्तमे कम अधपुट्टलपरिवर्तनकाल तीनों उपशामकोंका उत्पन्न अन्तर होता है ।

चात्त क्षपक और जयोगिकेवलीका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय होता है ॥ १६ ॥

जमे- सात आठ जन, अथवा अधिकसे अधिक एत सौ आठ अपूर्वकरण क्षपक एत ही समयमें समे सब अनिष्टित्तिपण हागये । इस प्रकार एक समयके लिए अपूर्वकरण गुणस्थान अन्तरको प्राप्त होगया । द्वितीय समयमें सात आठ जन, अथवा एक सौ आठ अग्रमत्तसयत एक साथ अपूर्वकरण क्षपक हुए । इस प्रकारसे अपूर्वकरण क्षपकका एक समय प्रमाण अन्तरका उपलब्ध हागया । इसी प्रकारसे शेष गुणस्थानोंका भी

मेसगुणद्व्याणाण वि' अंतरमेगसमयो वत्तव्वो ।

उक्कस्सेण छम्मासं ॥ १७ ॥

त जधा- सत्तद्ध जणा अट्टुत्तरसदं वा अपुव्वरुणखगगा अणियट्टिसगगा जादा । अंतरिदमपुव्वखगगुणद्व्याणं उक्कस्सेण जाण छम्मामा त्ति । तदो सत्तद्ध जणा अट्टुत्तरसद वा अप्पमत्ता अपुव्वरुणगगा जादा । लद्ध छम्मासुक्कस्संतरं । एण मेसगुणद्व्याणाण पि छम्मासुक्कस्संतरं वत्तव्व ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं' ॥ १८ ॥

कुदो ? खगगाण पदणाभाणा ।

सजोगिकेवलीणमंतरं केवचिरं कालदो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं' ॥ १९ ॥

कुदो ? सजोगिकेनलिनिरहिदकालाभाणा ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं ॥ २० ॥

अन्तरकाल एक समय प्रमाण कहना चाहिए ।

चारों क्षपक आर अयोगिकेनलीका नाना जीमोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तरकाल छह मास है ॥ १७ ॥

जैसे— सात आठ जन, अथवा एक सो आठ अपूर्वकरणक्षपक जीव अनिवृत्तिकरण क्षपक हुए । अत अपूर्वकरणक्षपक गुणस्थान उत्कर्षसे छह मासके लिए अन्तरको प्राप्त होगया । तत्पश्चात् सात आठ जन, अथवा एक सो आठ अप्रमत्तसयत जीव अपूर्वकरणक्षपक हुए । इस प्रकारसे छह मास उत्कृष्ट अन्तरकाल उपलब्ध होगया । इसी प्रकारसे शेष गुणस्थानोंका भी छह मासका उत्कृष्ट अन्तरकाल कहना चाहिए ।

एक जीमोंकी अपेक्षा उक्त चारों क्षपकोंका आर अयोगिकेनलीका अन्तर नहीं होता है, निरन्तर है ॥ १८ ॥

क्योंकि, क्षपक श्रेणीवाले जीवोंके पतनका अभाव है ।

सजोगिकेनलियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीमोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं होता है, निरन्तर है ॥ १९ ॥

क्योंकि, सजोगिकेनली जिनसे विरहित कालका अभाव है ।

उक्त जीमोंका एक जीमोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २० ॥

१ प्रतिपु ' हि ' इति पाठ ।

२ उत्कर्षेण पण्मासा । स सि १, ८

३ एकजीव प्रति नास्त्यन्तरम् । स सि १, ८

४ सजोगिकेनलिनां नानाजीमापेक्षया एणजीवापेक्षया च नास्त्यन्तरम् । स सि २, ८

कुदो ? सजोगीणमजोगिभारेण परिणदाण पुणो सजोगिभारेण परिणमणाभावा ।
एयमोपाणुगमो समत्तो ।

आदेसेण गदियाणुवादेण गिरयगदीए णेरइएसु मिच्छादिद्वि
असंजदसम्मादिद्वीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च
णत्थि अतर. गिरंतरं ॥ २१ ॥

कुदो ? मिच्छादिद्वि अमजदसम्मादिद्वीहि परिहिदपुट्टीण सव्वद्वमणुवलभा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ २२ ॥

मिच्छादिद्विस्म उच्यते— एको मिच्छादिद्वी दिद्वमगो परिणामपच्चएण सम्मा
मिच्छत्त वा मम्मत्त वा पडिवाजिय मव्वजहण्णमतोमुहुत्तमच्छिय पुणो मिच्छादिद्वी
जादो । लद्धमंतोमुहुत्तमतर । मम्मादिद्वि पि मिच्छत्त णेदूण सव्वजहण्णेणतोमुहुत्तेण
मम्मत्त पडिवाजिय अमजदसम्मादिद्विस्म जहण्णतर वत्तव्व ।

क्योंकि, अयोगिकवलीरूपसे परिणत हुए सयोगिकवलीरूपोंका पुन सयोगी
केरलीरूपसे परिणमन नहीं होता है ।

इस प्रकारसे जोघानुगम समाप्त हुआ ।

आदेशरी अपेक्षा गतिमार्गणाके अनुवादमे नरकगतिमें, नारकियोंमें मिथ्यादृष्टि
और असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा
अन्तर नहीं है, निगन्तर है ॥ २१ ॥

क्योंकि, मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंसे रहित रत्नप्रभादि पृथिविया
किसी भी कालमें नहीं पायी जाती ह ।

एक जीवरी अपेक्षा उक्त दोनों गुणस्थानोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २२ ॥

इनमेंसे पहले मिथ्यादृष्टिवा जघन्य अन्तर कहते हैं— देखा है मागको तिलके
दोना एक मिथ्यादृष्टि जीव परिणामोंके निमित्तमे सम्यग्मिथ्यात्वको अथवा सम्यक्त्वको
प्राप्त होकर, भयजघन्य अन्तर्मुहूर्तकाल रहकर, पुन मिथ्यादृष्टि होगया । इस
प्रकारसे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण जघन्य अन्तरकाल लब्ध हुआ । इसी प्रकार किसी एक
असयतसम्यग्दृष्टि नारकीको मिथ्यात्व गुणस्थानमें ले जाकर सर्वजघन्य अन्तर्मुहूर्तकाल
द्वारा पुन सम्यक्त्वका प्राप्त कराने असयतसम्यग्दृष्टि जीवका जघन्य अन्तर
कहना चाहिये ।

१ विद्वान् कस्तुतिर नरकगती नारकणां सप्तह पृथिवीसु मिथ्यादृष्टवसयतसम्यग्दृष्टयो नानाजीवितरूप
नात्यन्तम् । ४ मि १, ८

२ षड्जीव प्रति अय कनात्सर्वम् । ५ मि

उक्कस्सेण तेत्तीसं सागरोवमाणिं देसूणाणि' ॥ २३ ॥

त जहा—मिच्छादिद्विस्म उक्कम्मंतरं बुच्चदे। एक्को तिरिकखो मणुसो वा अट्टापीम-
मंतकम्मिओ अधो सत्तमीए पुढीए गेरइएसु उअण्णो उहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१)
विस्सतो (२) निसुद्धो (३) वेदगसम्मत्त पडिअज्जिय अंतरिदो थोअणमेमे आउए
मिच्छत्त गदो (४)। लद्धमंतरं। तिरिकपाउअ वंधिय (५) विस्समिय (६) उअट्टिदो।
एअं छहि अतोमुहुत्तेहि उणाणि तेत्तीसं सागरोवमाणिं मिच्छत्तुअस्समतर होदि।

असंजदमम्मादिद्विस्म उक्कस्समतर बुच्चदे—एक्को तिरिकखो मणुसो वा अट्टापीम-
सतकम्मिओ मिच्छादिद्वी अधो सत्तमीए पुढीए गेरइएसु उअण्णो। छहि पज्जत्तीहि
पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) निसुद्धो (३) वेदगसम्मत्त पडिअण्णो (४) सकिलिद्धो
मिच्छत्त गंतूणतरिदो। अण्णो तिरिकपाउअ वंधिय अतोमुहुत्त विस्समिय निसुद्धो
होदूण उअमममम्मत्त पडिअण्णो (५)। लद्धमंतरं। भूओ मिच्छत्त गतूणुव्वट्टिदो (६)।
एअं छहि अंतोमुहुत्तेहि उणाणि तेत्तीसं सागरोवमाणिं असंजदमम्मादिद्वि-उक्कस्समतर होदि।

मिथ्यादृष्टि और असंयतमम्यग्दृष्टि नारकियोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस
सागरोपम है ॥ २३ ॥

जैसे, पहले मिथ्यादृष्टि नारकीका उत्कृष्ट अन्तर रहते हैं— मोह कर्मकी अट्टाईस
प्रवृत्तियोंकी सत्तावाला कोई एक तिर्यंच अथवा मनुष्य, नीचे सातवीं पृथिवीके नार-
कियोंमें उत्पन्न हुआ, और छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होकर (१), विश्राम ले (२), विशुद्ध
हो (३), वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त कर आयुके थोड़े अंशपर रहने पर अन्तरको प्राप्त हो
मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (४)। इस प्रकार अन्तर प्राप्त हुआ। पुन तिर्यंच आयुको
वाधकर (५), विश्राम लेकर (६) निकला। इस प्रकार छह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम तेतीस
सागरोपम काल मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अन्तर है।

अब असंयतसम्यग्दृष्टि नारकीका उत्कृष्ट अन्तर रहते हैं— मोह कर्मकी अट्टाईस
कर्मप्रवृत्तियोंकी सत्तावाला कोई एक तिर्यंच, अथवा मनुष्य मिथ्यादृष्टि जीव नीचे सातवीं
पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न हुआ, और छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होकर (१) विश्राम
लेकर (२) विशुद्ध होकर (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४)। पुन साह्रिष्ट हो
मिथ्यात्वको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ। आयुके अन्तमें तिर्यंचायु वाधकर पुन
अन्तर्मुहूर्त विश्राम करके विशुद्ध होकर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (५)। इस
प्रकार इस गुणस्थानका अन्तर लघु हुआ। पुन मिथ्यात्वको जानकर नरकसे निकला।
इस प्रकार छह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम तेतीस सागरोपम काल असंयतसम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट
अन्तर होता है।

सासणसम्मादिद्वि-सम्मामिच्छादिद्विणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २४ ॥

त जहा- णिरयगदीए द्विदसासणसम्मामिच्छादिद्विणो सम्मामिच्छादिद्विणो च मत्वे
गुणतरं गदा । दो वि गुणद्व्याणाणि एगसमयमतरिदाणि । पुणो विदियमए के वि
उपसमसम्मामिच्छादिद्विणो आसाण गदा, मिच्छादिद्विणो असंजटमम्मामिच्छादिद्विणो च ममा
मिच्छत्त पडिउणा । लद्धमतर दोण्ह गुणद्व्याणाणमेगसमओ ।

उक्कस्सेण पलिदोउमस्स असखेज्जदिभागो ॥ २५ ॥

त जहा- णिरयगदीए द्विदसासणसम्मामिच्छादिद्विणो सम्मामिच्छादिद्विणो च सत्त्वे
अण्णगुण गदा । दोणि वि गुणद्व्याणाणि अतरिदाणि । उक्कस्सेण पलिदोउमस्स असखेज्जदि
भागमेत्ते दोण्ह गुणद्व्याणाणमतग्गालो हेदि । पुणो तेत्तियमेत्तकाले पडिक्के अप्पण्णो
करणीभूदगुणद्व्याणेहिंते दोण्ह गुणद्व्याणाण सभये जादे लद्धमुक्कस्मतर पलिदोउमस्स
असखेज्जदिभागो ।

सामादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिध्यादृष्टि नारकियोंका अन्तर कितने काल होता
है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर होता है ॥ २४ ॥

जैसे- नरकगतियों स्थित सामादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिध्यादृष्टि सभी
जाय अन्य गुणस्थानको प्राप्त हुए, और दोनों ही गुणस्थान एक समयके लिए
अन्तरको प्राप्त होगये । पुन द्वितीय समयमें कितने ही उपशमसम्यग्दृष्टि नारकी जाय
सामादन गुणस्थानको प्राप्त हुए और मिध्यादृष्टि तथा असयतसम्यग्दृष्टि नारकी जीव
सम्यग्मिध्यात्त्व गुणस्थानको प्राप्त हुए । इस प्रकार दोनों ही गुणस्थानोंका अन्तर एक
समय प्रमाण लब्ध होगया ।

उक्त दोनों गुणस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असंख्यातमें भाग है ॥ २५ ॥

जैसे- नरकगतियों स्थित सामादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिध्यादृष्टि, सभी
जाय अन्य गुणस्थानको प्राप्त हुए और दोनों ही गुणस्थान अन्तरको प्राप्त होगये
इन दोनों गुणस्थानोंका अन्तरकाल उत्कृष्टसे पल्योपमके असंख्यातमें भागमात्र होता है
पुन उतना फाट व्यतीत होनेपर अपने अपने कारणभूत गुणस्थानोंसे उक्त दोनों
गुणस्थानोंके समय होजानेपर पल्योपमका असंख्यातवा भागप्रमाण उत्कृष्ट अन्त
लब्ध होगया ।

१ सामादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिध्यादृष्टीनानाजीवोपेक्षया जघन्यतर समय । म वि १, ८

२ उत्कृष्टेण पल्योपमसम्ययमाणा । स वि १, ८

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्तं ॥ २६ ॥

त जहा— 'जहा उदेसो तथा णिदेसो' चि णायादो सासणस्स पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो, मम्मामिच्छाद्विस्स अतोमुहुत्त जहण्णतर होदि । दोण्ह णिदरिसण-एक्को णेरइओ अणादियमिच्छादिद्वी उपसममम्मत्तप्पाओग्गसादियमिच्छादिद्वी वा तिण्णि करणाणि कादूण उपसमसम्मत्त पडिण्णो । उपसमसम्मत्तेण केत्तियं हि कालमच्छिय आसाणं गतूण मिच्छत्त गदो अतरिदो । पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तकालेण उव्वेलेणसडएहि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तद्विद्वीओ सागरोपमपुधत्तादो हेट्ठा करिय पुणो तिण्णि करणाणि कादूण उपसममम्मत्त पडिण्णज्जिय उपसमसम्मत्तद्वाए छावलियापसेसाए आसाण गदो । लद्धमतंरं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो । एक्को सम्मामिच्छादिद्वी मिच्छत्त सम्मत्त वा गतूणंतोमुहुत्तमतरिय पुणो सम्मामिच्छत्त पडिण्णो । लद्धमंतोमुहुत्त-मंतंरं सम्मामिच्छादिद्विस्स ।

उक्त दोनों गुणस्थानोंका जघन्य अन्तर एक जीवकी अपेक्षा पल्योपमका अमंरयातना भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ २६ ॥

जैसे—जैसा उद्देश होता है, उसी प्रकारका निर्देश होता है, इस न्यायके अनुसार सासादनसम्यग्दृष्टिका जघन्य अन्तर पल्योपमका असख्यातवा भाग, और सम्यग्मिथ्यादृष्टिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

अब क्रमशः सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि, इन दोनों गुणस्थानोंके अन्तरका उदाहरण कहते हैं—एक अनादि मिथ्यादृष्टि नारकी जीव अथवा उपशमसम्यक्त्वके प्रायोग्य सादि मिथ्यादृष्टि जीव, तीनों करणोंको करके उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ और उपशमसम्यक्त्वके साथ मिलने ही काल रहकर पुनः सासादन गुणस्थानको जाकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तरको प्राप्त होकर पल्योपमके असख्यातवै भागमान कालसे उठेलना-काढनेसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व, इन दोनों प्रकृतियोंकी स्थितियोंको सागरोपमपृथक्त्वसे नीचे अर्थात् कम करके पुनः तीनों करण करके और उपशमसम्यक्त्वके प्राप्त करके उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवली काल उपशेष रह जाने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ । इस प्रकार पल्योपमके असख्यातवै भाग प्रमाण अन्तरकाल उपलब्ध होगया । एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यात्वको अथवा सम्यक्त्वको प्राप्त होकर ओर घटा पर अन्तर्मुहूर्तका अन्तर देकर पुनः सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । इस प्रकार सम्यग्मिथ्यादृष्टिका अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर लब्ध होगया ।

उक्कस्सेण तेत्तीस सागरोवमाणि देसूसाणि ॥ २७ ॥

त जया- एको सादिओ अणादिओ वा मिच्छादिद्वी सत्तमपुढणीणरइएसु उ वण्णो छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) विसुद्धो (३) उवसमसम्मत्त पडिवण्णो (४) आमाण गत्तूण मिच्छत्त गदो अतरिदो । अपमाणे त्तिरिक्खाउअ रीओ विसुद्धो होदूण उवसमसम्मत्त पडिवण्णो । उवसमसम्मत्तद्वाए एगममयाउमेणए आसत्त गदो । लद्धमत्तर । तदो मिच्छत्त गत्तूण अतोमुहुत्तमच्छिय (५) उपट्ठिदो । एव एत्त अतोमुहुत्तेहि समयाहिएहि उणाणि तेनीम सागरोवमाणि मासणुवस्संत्तर होदि ।

सम्मामिच्छादिद्विस्स उच्छेदे- एकको त्तिरिक्खो मणुसो या अट्ठावीससत्तमिणरइएसु सत्तमपुढणीणरइएसु उवण्णो छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) विसुद्धो (३) सम्मामिच्छत्त पडिवण्णो (४) । पुणो सम्मत्त मिच्छत्त वा देसूणतेत्तीसाउट्ठिदिमत्तरिय मिच्छत्तेणाउअ अधिय विस्समिय सम्मामिच्छत्त गत्त (५) तदो मिच्छत्त गत्तूण अतोमुहुत्तमच्छिय (६) उपट्ठिदो । छहि अतोमुहुत्तेहि तेत्तीस सागरोवमाणि सम्मामिच्छत्तुक्कस्सत्तर होदि ।

मन्यग्मिध्यादृष्टिका उच्छेद अन्तर कुठ कम तेतीस सागरोपम काल है ।

जैसे- एक सादि अथवा अनादि मिध्यादृष्टि जीव सातवीं पृथिवी में उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होकर (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४) । पुन सासादन गुणस्थानमें जाकर मिध्यात्वको अन्तरको प्राप्त हुआ । आयुके अन्तमें तिर्यंच आयुको बाधकर विशुद्ध हो कत्वको प्राप्त हुआ । पुन उपशमसम्यक्त्वके कालमें एक समय अवशेष रहने वन गुणस्थानको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तर प्राप्त हुआ । पुन अन्तर्मुहूर्त रह (५) निकला । इस प्रकार समयाधिक पांच अन्तर्मुहूर्तोंसे सागरोपमकाल सासादन गुणस्थानका उत्पन्न अन्तर है ।

अथ मन्यग्मिध्यादृष्टिका उत्पन्न अन्तर कहने ह- मोहकमजी सत्ता रखनेवाला एक तिर्यंच अथवा मनुष्य सातवीं पृथिवीमें नारकियोंमें छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) हुआ (४) । पुन सम्यक्त्वको अथवा मिध्यात्वको जाकर देशोन तेनीम आयुस्थितिको अन्तररूपसे निताकर मिध्यात्वके द्वारा आयुको बाधकर सम्यग्मिध्यात्वको प्राप्त हुआ (५) । पश्चात् मिध्यात्वका प्राप्त होकर अन्तर्मुहूर्त निकला । इस प्रकार छह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम तेतीस सागरोपमकाल उत्पन्न अन्तर होता है ।

पढमादि जाव सत्तमीए पुढवीए णेरइएसु मिच्छादिट्ठि-असंजद-
सम्मादिट्ठिणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि
अंतरं, णिरंतरं ॥ २८ ॥

कुदो ? मिच्छादिट्ठि-असंजदसम्मादिट्ठिणिरिहिदसत्तमपुढवीणेरइयाणं सव्वकाल-
मणुपलंभा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २९ ॥

कुदो ? मिच्छादिट्ठि असंजदसम्मादिट्ठि अण्णगुण णेदूण सव्वजहण्णेण अतो-
मुहुत्तकालेण पुणो त चेव गुणं पडिबज्जाविदे अतोमुहुत्तमेत्तंतरुपलंभा ।

उक्कस्सेण सागरोवमं तिण्णि सत्त दस सत्तारस वावीस तेत्तीसं
सागरोवमाणि देसूणाणि ॥ ३० ॥

एत्थ तिण्णि-आदीसु सागरोपमसदो पादेक्क संघणिज्जो । 'जहा उदोसो तहा
णिदोसो' ति णायादो पढमीए पुढवीए देसूणमेग सागरोपम, निदियाए देसूणतिण्णि
सागरोपमाणि, तदियाए देसूणसत्तसागरोपमाणि, चउत्थीए देसूणदससागरोवमाणि,

प्रथम पृथिवीमे लेकर मातरी पृथिवी तरुके नारकियोमें मिथ्यादृष्टे और अस-
यतमम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा कोई अन्तर नहीं
है, निरन्तर है ॥ २८ ॥

क्योंकि, मिथ्यादृष्टि ओर असयतसम्यग्दृष्टियोंसे रहित, सातों पृथिवियोंमें नार-
कियोंका सर्वकाल अभाव है ।

उक्त दोनों गुणस्थानोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥२९॥

क्योंकि, मिथ्यादृष्टि ओर असयतसम्यग्दृष्टि, इन दोनोंको ही अन्य गुणस्थानमें
ले जाकर सर्वजघन्य अन्तर्मुहूर्त कालसे पुन उसी गुणस्थानमें पहुचाने पर अन्तर्मुहूर्त
मान कालका अन्तर पाया जाता है ।

उक्त दोनों गुणस्थानोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर देशोन एक, तीन,
सात, दश, सत्तरह, गार्हस और तैत्तिस सागरोपम काल है ॥ ३० ॥

यहा पर तीन आदि सख्याओंमें सागरोपम शब्द प्रत्येक पर सम्बन्धित करना
चाहिए । जैसा उद्देश होता है, वैसा निर्देश होता है, इस न्यायसे प्रथम पृथिवीमें देशोन
एक सागरोपम, द्वितीय पृथिवीमें देशोन तीन सागरोपम, तीसरी पृथिवीमें देशोन सात
सागरोपम, चौथीमें देशोन दश सागरोपम, पाचवींमें देशोन सत्तरह सागरोपम, छठीमें

सासणसग्मादिट्टि-सम्मामिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ३१ ॥

एदस्स अत्यो सुगमो ।

उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ॥ ३२ ॥

जघा णिरओघम्हि पलिदोवमस्स अमखेज्जदिभागपरूणणा कदा, तहा एत्थ
पि कादच्चा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अतोमुहुत्तं ॥ ३३ ॥

एदं पि सुत्त सुगम चेय, णिरओघम्हि परूभिदत्तादो ।

उक्कस्सेण सागरोवमं तिण्णि सत्त दस सत्तारस वावीस तेत्तीसं
सागरोवमाणि देसूणाणि ॥ ३४ ॥

एदस्म सुत्तस्म अत्थे भण्णमाणे- सत्तमपुट्ठीसासणसग्मादिट्टि-सम्मामिच्छा-

उक्त सातों ही पृथिवियोंके सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिव्यादृष्टि नारकि-
योंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय
है ॥ ३१ ॥

इस सूत्रका अर्थ सुगम है ।

उक्त पृथिवियोंमें ही उक्त गुणस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें
भाग है ॥ ३२ ॥

जिस प्रकार नारकियोंके ओघ अन्तरवर्णनमें पल्योपमके असंख्यातवें भागकी
प्ररूपणा की है, उसी प्रकार यहा पर भी करना चाहिए ।

उक्त गुणस्थानोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्रमशः पल्योपमका
जसरयातत्रा भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३३ ॥

यह सूत्र भी सरल ही है, क्योंकि, नारकियोंके ओघ अन्तरवर्णनमें प्ररूपित
किया जा चुका है ।

सातों ही पृथिवियोंमें उक्त दोनों गुणस्थानोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अंतर
क्रमशः देशोन एक, तीन, सात, दश, सत्तरह, बाईस और तेत्तीस सागरोपम है ॥ ३४ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहने पर- सातवीं पृथिवीके सासादन सम्यग्दृष्टि ओर सम्य

दिद्वीण गिरओषुककस्मभगो, सत्तमपुटां चेमस्सिदूण तत्थेदेसिमुक्कस्मपरूणादो ।
 पदमादिउपुद्रीमामाणाणपुःरुस्मे भण्णमाणे- एक्को तिरिक्खो मणुस्सो वा पदमादिउसु
 पुद्रीसु उववणां । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) निस्मतो (२) निमुद्वो (३)
 उरसममम्मत्त पडिपज्जिऊण आसाण गदो (४) मिच्छत्त गतूणतरिदो । सग-सगुक्कस्म
 द्विदीओ अण्ठिय अण्णो उरसमसम्मत्त पडिपण्णो उरसममम्मत्तद्वाए एगसमया
 सेमाए सासण गतूण्णद्विदो । एउ समययाहियचदुहि अतोमुहुत्तेहि ऊणाओ सग
 सगुक्कस्मद्विदीओ सासणाणुःरुस्सतर होदि ।

एदोमि सम्माभिच्छादिद्वीण उच्चदे- एक्को अद्वीससत्तकम्मिओ अप्पिदणेर
 इएसु उरसणो छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) निस्मतो (२) निमुद्वो (३) सम्मा
 मिच्छत्त पडिपण्णो (४) मिच्छत्त सम्मत्त वा गतूणतरिदो । सगद्विदिमण्ठिय सम्मा
 मिच्छत्त पडिपण्णो (५) लद्धमत्त । मिच्छत्त सम्मत्त वा गतूण उव्वद्विदो (६) । छहि

मिथ्यादष्टि नारकियोंका उत्पत्त अन्तर नारक्यामान्यके उत्पत्त अन्तरके समान है, न्योंकि,
 धोषवर्णनमें सातरीं पृथिवीका जाथय लेकर ही इन दोनों गुणस्थानोंकी उत्पत्त अन्तर
 प्ररूपणा का गइ है। प्रथमादि छह पृथिवियोंके सामादन सम्यग्दष्टि जीवाना उत्पत्त अन्तर
 कहने पर-एक तिर्यच अथवा मनुष्य प्रथमादि छह पृथिवियोंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ पर्याप्ति
 योंसे पर्याप्त हो (१) विभ्राम ले (२) विगुद्ध हो (३) उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होकर
 सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ (४)। फिर मिथ्यात्वकी जाकर अन्तरको प्राप्त होगया।
 पुन अपनी अपनी पृथिवियोंकी उत्पत्त स्थिति प्रमाण रहकर आयुके अन्तमें उपशमसम्य
 क्त्वको प्राप्त हुआ। उपशमसम्यक्त्वके कालमें एक समय अवशेष रह जाने पर सासादन
 गुणस्थानको प्राप्त होकर निकला। इस प्रकार एक समयमें अधिच चार अतमुहूर्तोंसे
 कम अपनी अपनी पृथिवीकी उत्पत्त स्थिति उस उस पृथिवीके सासादनसम्यग्दष्टियोंका
 उत्पत्त अन्तर होता है।

अउ इहा पृथिवियोंके सम्यग्मिथ्यादष्टि नारकियोंका उत्पत्त अन्तर कहते हैं-
 मोहकर्मकी बद्धाइस प्रवृत्तियोंकी सत्ता रखनेवाला कोई एक तिर्यच अथवा मनुष्य विव
 क्षित पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विभ्राम
 ले (२) विगुद्ध हो (३) सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (४)। पुन मिथ्यात्वको अथवा
 सम्यक्त्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हुआ, और जिस गुणस्थानको गया उसमें अपनी
 आयुस्थितिप्रमाण रहकर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (५)। इस प्रकार अन्तरकाल प्राप्त
 होगया। पुन मिथ्यात्वको अथवा सम्यक्त्वको प्राप्त होकर निकला (६)। इन छहों

अंतोमुहुत्तेहि उणाओ मग-सगुन्कस्सट्टिदीओ सम्मामिच्छत्तुन्कस्समंतर होदि । सव्व-
गदीहितो सम्मामिच्छादिट्टिणिस्मरणरुमो वुन्चदे । त जहा— जो जीओ सम्मादिट्टी होदूण
आउअ वंधिय मम्मामिच्छत्त पडिअज्जदि, मो सम्मत्तेणेअ णिप्फिददि । अह मिच्छादिट्टी
होदूण आउअ वंधिय जो सम्मामिच्छत्तं पडिअज्जदि, सो मिच्छत्तेणेअ णिप्फिददि ।
कधमेदं णव्वदे ? आइरियपरपरागदुअदेसादो ।

तिरिक्खगदीए तिरिक्खेसु मिच्छादिट्टीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरतरं ॥ ३५ ॥

सुगममेद सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३६ ॥

कुदो ? तिरिक्खमिच्छादिट्टिमण्णगुण णेदूण सव्वजहण्णेण कालेण पुणो तस्सेअ
गुणस्स तम्मि दोइदे अंतोमुहुत्ततरुणलमा ।

अन्तर्मुहूर्तसे कम अपनी अपनी पृथिवीकी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण नारकी सम्यग्मिथ्या
दृष्टियोंका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

अथ सर्व गतियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके निकलनेका प्रश्न कहते हैं । वह इस
प्रकार है— जो जीव सम्यग्दृष्टि होकर और आयुको बाधकर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होता
है, वह सम्यक्त्वके साथ ही उस गतिसे निकलता है । अथवा, जो मिथ्यादृष्टि होकर
और आयुको बाधकर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होता है, वह मिथ्यात्वके साथ ही
निकलता है ।

शंका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—आचार्यपरम्परागत उपदेशसे जाना जाता है ।

तिर्यंच गतिमें, तिर्यंचोंमें मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निगन्तर है ॥ ३५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त
है ॥ ३६ ॥

फर्योन्नि, तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवको अन्य गुणस्थानमें ले जाकर सर्वजघन्य कालसे
पुन उसी गुणस्थानमें लौटा ले जानेपर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर प्राप्त होता है ।

१ सम्म वा मिच्छ या पडिअज्जिय मरादि गियमण ॥ सम्मत्तमिच्छयणिणामेसु जहि आउअ पुरा वद ।
तहि मरण मरणतसमुत्थादो वि य ण मित्तमि ॥ गो जा २३, २४

२ निर्यंगतो निरथां मिथ्यादृष्टेनानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । स रि १, <

३ एकजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्त । स मि १, <

उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोवमाणि देसूणाणि ॥ ३७ ॥

णिरिसण- एको तिरिकसो मणुस्सो वा अट्टारीससतकम्मिओ तिपलिदोवमाउ
द्विदिण्णु कुक्कुड-मन्कटादिण्णु उररण्णो, वे मासे गन्हे अट्टिउदूण णिसरतो ।

एत्थ वे उवदेसा । त जहा- तिरिकसेसु वेमास-मुहुत्तपुधत्तस्सुरि सम्मत्त
सजमामजम च जीरो पडिउज्जदि । मणुमेसु गन्हादिअट्टरस्सेसु अंतोमुहुत्तन्महिण्णु
सम्मत्त सजम सजमामजम च पडिउज्जदि त्ति । एसा दक्खिणपडिउत्ती । दम्मिण
उज्जुअ आइरियपरंपरागदमिदि एयट्टो । तिरिकसेसु तिण्णिपक्ख-तिण्णिदिवस-अतामुहुत्त-
स्सुरि सम्मत्त सजमासजम च पडिउज्जदि । मणुमेसु अट्टरसाणमुवरि सम्मत्त संजम
सजमासजम च पडिउज्जदि त्ति । एसा उत्तरपडिउत्ती । उत्तरमणुज्जुअ आइरियपरंपराए
णागदमिदि एयट्टो ।

पुणो मुहुत्तपुधत्तेण विसुद्धो वेदगसम्मत्त पडिउण्णो । अरसाणे आउअ रंधिय
मिच्छत्त गदो । पुणो सम्मत्त पडिउज्जिय काल कादूण सोहम्मिसाणदेसेसु उररण्णो ।
आदिहेहि मुहुत्तपुधत्तन्महिय वेमासेहि अरसाणे उररद्व-वेरतोमुहुत्तेहि य उणाणि तिण्णि

तियंच मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुठ कम तीन
पल्योपम है ॥ ३७ ॥

इसका उदाहरण- मोहनमकी अट्टाइन प्रकृतियोंकी सत्तावाला फोर्ड एक तिर्यंच
अथवा मनुष्य तीन पल्योपमकी आयुस्थितियाले कुन्हुट मर्केट आदिमें उत्पन्न हुआ और
दो मास गर्भमें रहकर निरला ।

इस विषयमें दो उपदेश हैं । वे इस प्रकार हैं— तिर्यंचोंमें उत्पन्न हुआ जीव,
दो मास और मुहुत्त-पृथक्त्वसे ऊपर सम्यक्त्व और सयमासयमको प्राप्त करता है ।
मनुष्योंमें गर्भकालसे प्रारम्भकर, अन्तमुहुत्तसे अधिक आठ वर्षोंके ध्यर्तात हो जाने
पर सम्यक्त्व, सयम और सयमासयमको प्राप्त होता है । यह दक्षिण प्रतिपत्ति है ।
दक्षिण, ऋतु और आचार्यपरम्परागत, ये तीनों शब्द एकाथक ह । तिर्यंचोंमें उत्पन्न हुआ
जीव तीन पक्ष, तीन दिवस और अन्तमुहुत्तसे ऊपर सम्यक्त्व और सयमासयमको प्राप्त
होता है । मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ जीव आठ वर्षोंके ऊपर सम्यक्त्व, सयम और सयमा
सयमको प्राप्त होता है । यह उत्तर प्रतिपत्ति है । उत्तर, अन्तु और आचार्यपरम्परासे
अनागत, ये तीनों एकार्यवाची हैं ।

पुन मुहुत्तपृथक्त्वसे विशुद्ध होकर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पश्चात् अपर
आयुके अन्तमें आयुको बाधकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । पुन सम्यक्त्वको प्राप्त हो
काल करके सौधमवेदान देवोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार आदिके मुहुत्तपृथक्त्व
अधिक दो मासोंमें और आयुके अवसानमें उपलब्ध दो अन्तमुहुत्तोंसे कम तीन

पलिदोममाणि मिच्छत्तुकस्मतरं होदि ।

सासणसम्मादिट्टिप्पहुडि जाव सजदासंजदा ति ओघं ॥ ३८ ॥

कुदो ? ओघचदुगुणट्टाणणाणेगीज-जहण्णुककस्मंतरकालेहिंतो तिरिक्खगदिचदु-
गुणट्टाणणाणेगीज-जहण्णुककस्मंतरकालाण भेदाभावा । त जहा- सासणसम्मादिट्टीण
णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमओ, उक्कस्मेण पलिदोमस्म असखेज्जदिभागो ।

एव अतरमाहप्पजाणात्रणट्टमप्पात्रहुग उचदे- सव्वत्थोना सामणमम्मादिट्टि-
रासी । तस्सेव कालो णाणाजीवगदो अमखेज्जगुणो । तस्सेव अतरममखेज्जगुणं । एदमप्पा-
वहुग ओघादिमव्वमग्गणासु सासणाणं पउजिदव्वं ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलिदोमस्म असखेज्जदिभागो । एदस्स
कालस्स साहणउत्तमो उचदे । त जहा- तसेसु अच्छिदूण जेण सम्मत्त-सम्मा-
मिच्छत्ताणि उव्वेल्लिदाणि मो सागरोत्तमपुवत्तेण सम्मत्त-मम्मामिच्छत्तट्टिदिसत्त-
कस्मेण उत्तममम्मत्त पडिउज्जदि । एदम्हादो उत्तरिमासु ट्टिदासु जदि सम्मत्त
गेण्हदि, तो णिच्छएण वेदगमम्मत्तमेव गेण्हदि । जघ एंडिएसु जेण सम्मत्त-
पल्योपमकाल मिव्यात्वका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

तिर्यंचोमें सासादनमम्यग्दष्टिसे लेकर सयतासंयत गुणस्थान तरुका अन्तर जोघने
समान है ॥ ३८ ॥

फ्योंकि, जोघने इन चार गुणस्थानोंसम्बन्धी नाना ओर एक जीवके जघन्य और
उत्कृष्ट अन्तरकालोंसे तिर्यंचगतिसम्बन्धी इन्हीं चार गुणस्थानोंसम्बन्धी नाना ओर एक
जीवके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकालोंका कोई भेद नहीं है । वह इस प्रकार है- सासा-
दनमम्यग्दष्टि जीवोंका अन्तर नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय ओर उत्कर्षसे
पल्योपमका असख्यातवा भाग है ।

यहापर अन्तरके माहात्म्यको बतलानेके लिए अल्पग्रहृत्य कहते हैं- सासादन-
सम्यग्दष्टिराशि सरने कम है । नानाजीवगत उसीका काल असख्यातगुणा है । ओर
उसीका अन्तर, कालसे असख्यातगुणा है । यह अल्पग्रहृत्य ओघादि सभी मार्गणाओंमें
सासादनमम्यग्दष्टियोंका कहना चाहिए ।

सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंका अन्तर एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे पल्योपमका
असख्यातवा भाग है । इस कालके साधक उपदेशको कहते हैं । वह इस प्रकार
है- इस जीवोंमें रहकर जिसने सम्यक्त्व ओर सम्यग्मिथ्यात्व, इन दो प्रकृ-
तियोंका उद्वेगन किया है, वह जीव सम्यक्त्व ओर सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थितिके सत्त्वरूप
सागरोत्तमपृथक्त्वके पश्चात् उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होता है । यदि इससे ऊपरकी
स्थिति रहनेपर सम्यक्त्वको ग्रहण करता है, तो निश्चयसे वेदकसम्यक्त्वको ही प्राप्त
होता है । ओर पक्षेन्द्रियोंमें जा करके जिसने सम्यक्त्व ओर सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेगना

सम्प्राप्तिच्छत्ताणि उच्चेल्लिदाणि, सो पलिदोमम्म असखेज्जदिभागेषूणमागो वममेत्ते सम्पत्त-सम्प्राप्तिच्छत्ताण द्विदिसतकम्मे सेसे तसेसुअज्जिय उअममम्मत्त पडिवज्जदि । एदाहि द्विदीहि ऊणसेसकम्मद्विदिउच्चेल्लणकालो जेण पलिदोवमम्म असखेज्जदिभागो तेण सासणेगजीअजहण्णतर पि पलिदोमम्मत्त असखेज्जदिभागमेत्त होटि ।

उक्त्सेण अद्दपोगलपरियट्ट देसूण । णअरि विमेषो एत्थ अन्थि तं भणिसामो- एको तिरिक्खो अणादियमिच्छादिट्ठी तिण्णि करणाणि करिय सम्पत्तं पडिअण्णपडममपए संसारमणत्त छिंदिय पोगलपरियट्टट्ट काऊण उअममम्मत्त पडिअण्णो आसाण गदा मिच्छत्त गत्तूणतरिय (१) अद्दपोगलपरियट्ट परिममिय दुचरिमे भेरे पंचिट्ठिपतिरिक्खेसु उअज्जिय मणुसेसु आउअ वधिय तिण्णि करणाणि करिय उअसममम्मत्त पडिअण्णो । उअसमसम्मत्तद्वाए मणुमगदियाओग्गाआरलियासखेज्जदिभागानसेसाए आसाणं गदो । लद्धमतर । आरलियाए अमखेज्जदिभागमेत्तसामणद्धमच्छिय मदो मणुसो जादो सत्त मासे गग्गे अच्छिद्धूण णिकरुत्तो सत्त वस्माणि अंतोमुहुत्तवमहियपचमामे च गमेदूण (२) वेदगसम्मत्त पडिअण्णो (३) अणताणुवधी विसजोडय (४) दसणमोहणीय रानिय (५) अप्पमत्तो (६) पमत्तो (७) पुणो अप्पमत्तो (८) पुणो अप्पुआदिछहि अंतोमुहुत्तोहि

की है, वह पत्योपमके असख्यातवें भागसे कम सागरोपमकालमात्र सम्यक्त्य और सम्यग्मिध्यात्वका स्थितिसत्त्व अवशेष रहनेपर प्रथम जीवोंमें उत्पन्न होकर उपशमसम्यक्त्यको प्राप्त होता है । इन स्थितिओंसे कम शेष कर्मस्थिति-उद्वेलनकाल चूकि पत्योपमके असख्यातवें भाग है, इसलिए सासादन गुणस्थानका एकजीवसम्यन्धी जघन्य अन्तर भी पत्योपमके असख्यातवें भागमात्र ही होता है ।

सासादन गुणस्थानका एक जीवसम्यन्धी उत्पन्न अन्तर देशोन अर्धपुत्रल परिवर्तनप्रमाण है । पर यहा जो विशेष बात है, उसे कहते हैं- अनादि मिध्या दृष्टि एक तिर्यंच तीनों करणोंको करके सम्यक्त्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें धनन्त ससारको छेदकर और अर्धपुत्रलपरिवर्तनप्रमाण करके उपशमसम्यक्त्यको प्राप्त हुआ और सासादन गुणस्थानको गया । पुन मिध्यात्वको जाकर और अन्तरको प्राप्त होकर (१) अर्धपुत्रलपरिवर्तन परिभ्रमण करके द्विचरम भवमें पचे द्विय तिर्यंचोंमें उत्पन्न होकर और मनुष्योंमें आयुको वाधकर, तीनों करणोंको करके उपशमसम्यक्त्यको प्राप्त हुआ । पुन उपशमसम्यक्त्यके कालमें मनुष्यगतिके योग्य आब लीके असख्यातवें भागमात्र कालके अवशेष रहनेपर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ । इस प्रकारसे उक्त अन्तर लघु हो गया । आबलीके असख्यातवें भागमात्र काल सासादन गुणस्थानमें रहकर मत्ता और मनुष्य होगया । यहापर सात मास गर्भमें रहकर निकला तथा सात वष और अन्तर्मुहूर्तसे अधिक पाच मास विताकर (२) वेदक सम्यक्त्यको प्राप्त हुआ (३) । पुन अनन्तानुदन्धीकपायत्ता विम्ययोजन करके (४) दर्शन मोहनीयका क्षयकर (५) अग्रमत्त (६) प्रमत्त (७) पुन अप्रमत्त (८) हो, पुन अपूर्व

(१४) णिव्वाणं गदो । एणं चोदसअंतोमुहुत्तेहि आवलियाए असंखेज्जदिभागेण अन्महिएहि अट्टमस्मेहि य ऊणमद्वपोग्गलपरियट्टमतरं होदि । एत्थुअवज्जतो अत्थो वुच्चदे । तं जधा- सामण पडिउण्णविदियसमए जदि मरदि, तो णियमेण देवगदीए उअवज्जदि । एव जाअ आवलियाए अमखेज्जदिभागो देवगदिपाओग्गो कालो होदि । तदो उववि मणुमगदिपाओग्गो आअलियाए असखेज्जदिभागमेत्तो कालो होदि । एव सण्णिपंचिदिय-तिरिक्ख-असण्णिपंचिदियतिरिक्ख-उउरिंदिय-तेइदिय-वेइदिय-एइदियपाओग्गो होदि । एसो णियमो सअत्थ सामणगुण पडिउज्जमाणाण ।

सम्मामिच्छादिद्विस्स णाणाजीअ पडुच्च जहण्णेण एयसमओ, उक्कस्मेण पलिदोअमस्म अमखेज्जदिभागो । एत्थ दच्च-कालंतरअप्पाअहुगस्स सासणभंगो । एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्त, उक्कस्मेण अद्वपोग्गलपरियट्ट देसण । अवरि एत्थ विसेसो उच्चदे- एकओ तिरिक्खो अणादियमिच्छादिद्वी तिण्णि करणाणि काऊण सम्मत्त पडिउण्णपढमममए अद्वपोग्गलपरियट्टमेत्त ममारं काऊण पढमसम्मत्तं पडिउण्णो सम्मामिच्छत्त गदो (१) मिच्छत्तं गत्तूण (२) अद्वपोग्गलपरियट्टं परियट्टिदूण दुअरिमभवे

करणादि छह गुणस्थानोंसम्यन्धी छह अन्तर्मुहूर्तोंसे (१४) निर्वाणको प्राप्त हुआ । इस प्रकार चौदह अन्तर्मुहूर्तोंसे तथा आवलीके असख्यातवें भागसे अधिक आठ वर्षोंसे कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन सासादन सम्यग्दृष्टि गुणस्थानका उत्कृष्ट अन्तरकाल होता है ।

अअ यहापर उपयुक्त होनेवाला अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है- सासादन गुणस्थानको प्राप्त होनेके द्वितीय समयमें यदि वह जीव मरता है तो नियमसे देवगतिमें उत्पन्न होता है । इस प्रकार आवलीके असख्यातवें भागप्रमाण काल देवगतिमें उत्पन्न होनेके योग्य होता है । उसके ऊपर मनुष्यगतिके योग्य काल आवलीके असख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकारसे आगे आगे सग्री पचेन्द्रिय तिर्यच, असग्री पचेन्द्रिय तिर्यच, चतुरिन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, द्वीन्द्रिय ओर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होने योग्य होता है । यह नियम सर्वत्र सासादन गुणस्थानको प्राप्त होनेवालोंका जानना चाहिए ।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानका नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे पत्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण अंतर है । यहा पर द्रव्य, काल और अन्तर सम्यन्धी अल्पअहुत्थ सासादनगुणस्थानके समान है । इसी गुणस्थानका अन्तर एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे देशोन अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल है । केवल यहा जो विशेषता है उसे कहते हैं- अनादि मिथ्यादृष्टि एक तिर्यच तीनों करणोंको करके सम्यक्त्वके प्राप्त होनेके प्रथम समयमें अर्धपुद्गलपरिवर्तनमात्र सासादकी स्थितिको करके प्रथमोपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ और सम्यग्मिथ्यात्वको गया (१) फिर मिथ्यात्वको जाकर (२) अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण परिभ्रमण करके द्विचरम भवमें पचेन्द्रिय तिर्यचोंमें

पचिदियतिरिक्तेषु उपज्जिय मणुमाउअं पचिय जमणे उपममम्मत्त पडिउज्जिय सम्मामिच्छत्त गदो (३) । लद्धमतरं । तदो मिच्छत्त गदो (४) मणुमेसुउपणो । उवो सामणभगे । एउ सत्तरमअतोमुहुत्तंअहिय-उहुत्तमेहि उणमद्वपोग्गलपरियद्व सम्मामिच्छत्तकस्मतर हेदि ।

जमनदसम्मादिद्विस्म णाणानीं पडुच्च णरिय अतर, एगजीम पडुच्च उहुत्तमे अतोमुहुत्तं, उरुस्मेण अद्वपोग्गलपरियद्व देसुण । णरि रिमेमो उच्चै-एक्क जणादियमिच्छादिद्वी तिष्णि क्कणाणि सउण पठममम्मत्त पडिउणो (१) उपम सम्मत्तद्वाए ठारिलियाउमेमाए जासाण गतूणतरिदो । अद्वपोग्गलपरियद्व परियद्विद्विण दुचरिमभगे पचिदियतिरिक्तेषु उपणो । मणुमेसु वामपुधत्ताउअ वविय उपममम्मत्त पडिउणो । तदो आरिलियाए अउरेअदिभागमेत्ताए वा एउ गतूण समउणठारिलिय मेत्ताए ता उपसममम्मत्तद्वाए मेमाण आमाण गतूण मणुमगदिपाओग्गहि मण मणुसो जाणे (२) । उपरि सामणभगे । एउ पण्णारमेहि अतोमुहुत्तेहि उवमहिपअहु वस्सेहि उणमद्वपोग्गलपरियद्व सम्मत्तकस्मतर हेदि ।

उत्पन्न होकर मनुष्य आयुको वायकर अन्तमें उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होकर सम्यग्मिथ्यात्वको गया (३) । इस प्रकार अन्तर प्राप्त हुआ । पुन मिथ्यात्वको गया (४) और मरकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । इसमें पथात्का कथन सासादनसम्यग्दृष्टिके समान ही है । इस प्रकार सत्तरह अन्तमुहूर्तोंसे अधिक आठ वर्षोंमें कम अधपुद्गलपरिवर्तनका सम्यग्मिथ्यात्वका उत्पन्न अन्तर होता है ।

असयतसम्यग्दृष्टिना नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नही है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे अन्तमुहूर्त और उत्कर्षसे देशोन अधपुद्गलपरिवर्तन प्रमाण अन्तरकाल है । केवल जो विशेषता है वह कही जाती है- एक जनादिमिथ्यादृष्टि जीव तीनों ही करणोंको करने प्रथमोपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (१) और उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आयुलिया अवशेष रह जाने पर सासादन गुणस्थानको जाकर अन्तरको प्राप्त होगया । पश्चात् अधपुद्गलपरिवर्तन काल परिवर्तित होकर द्विचरम भवमें पचेन्द्रिय तिर्यचामे उत्पन्न हुआ । पुन मनुष्योंमें वपस्थक्त्वकी आयुकी वायकर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पाछे आयुलिये असम्यात्तमें भागमार कालके, जववा यहासे लगाकर एक सम कम छह आयुल कालप्रमाण तक, उपशमसम्यक्त्वके कालमें अवशेष रह जानेपर सासादन गुणस्थानको जाकर मनुष्यगतिके योग्य कालमें मरा जोर मनुष्य हुआ (२) । इस ऊपर सासादनके समान कथन जानना चाहिए । इस प्रकार पद्दह अन्तमुहूर्तोंसे अधिक आठ वर्षसे कम अधपुद्गलपरिवर्तनकाल असयतसम्यग्दृष्टिना उत्पन्न अन्तर होता है ।

सुगममेद सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ४० ॥

कुदो ? तिण्ह पंचिन्द्रियतिरिक्खाण तिण्णि मिच्छादिट्ठिजीवे दिट्ठमग्गे सम्मत्तं
येदूण सव्वजहण्णकालेण पुणो मिच्छत्ते गग्गापिदे अतोमुहुत्तकालउत्तलभा ।

उक्कस्सेण तिण्णि पल्लिदोवमाणि देमूणाणि ॥ ४१ ॥

त जघा- तिण्णि तिग्गिया मणुसा या जह्वारीससत्तकम्मिया तिपल्लिदोवमाउ
ट्ठिदिएसु पंचिन्द्रियतिरिक्खतिगग्गुक्कुड मक्कडादिणसु उपपण्णा, ये मासे गग्गं अट्ठिदूण
णिक्खता, मुहुत्तपुवत्तेण त्रिमुद्दा वेदगमम्मत्त पडिपण्णा अपमाणे आउअ वधिय
मिच्छत्त गग्गा । लद्धमत्तर । भूओ सम्मत्त पट्टियज्जिय कालं कम्मिय मोधम्मसाणदेसेसु
उपपण्णा । एय वेअतामुद्दुत्तेहि मुहुत्तपुवत्तम्महिय येमावेहि य ऊणाणि तिण्णि पल्लिदोव
माणि तिण्ह मिच्छादिट्ठिणमुक्कस्सत्तर होदि ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठिणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ॥ ४२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंमें एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ४० ॥

क्योंकि, तीनों ही प्रकारके पंचेन्द्रिय तिर्यचोंके तीन मिथ्यादृष्टि दृष्टमार्गी
जीवोंमें अमयत्तसंयन्त्र गुणस्वानमें ले जाकर सर्वजघन्यकालसे पुन मिथ्यात्वके
ग्रहण करने पर अतमुहूर्तकालप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उक्त तीनों ही प्रकारके मिथ्यादृष्टि तिर्यचोंका अन्तर कुछ कम तीन पल्पोपम
प्रमाण है ॥ ४१ ॥

जैसे- मोहकर्मकी अट्टारिस प्रवृत्तियोंकी सत्ता रखनेवाले तीन तिर्यच अथवा
मनुष्य, तीन पल्पोपमकी आयुस्त्रिभिवाले पंचेन्द्रिय तिर्यच त्रिक कुक्कुट, मर्कट आदिमें
उत्पन्न हुए व वे माय गर्भमें रहकर निकट और मुहूर्तपृथक्त्वसे विशुद्ध होकर वेदक
सम्यक्त्वको प्राप्त हुए और आयुके अन्तमें आगामी आयुको बाधकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुए ।
इस प्रकारसे अन्तर प्राप्त हुआ । पुन सम्यक्त्वको प्राप्त कर और मरण करके सोधर्म-ईशान
देवोंमें उत्पन्न हुए । इस प्रकार इन दो अतर्मुहूर्तोंसे ओर मुहूर्तपृथक्त्वसे अधिक दो
मासोंसे कम तीन पल्पोपमकाल तीनों जातिवाले तिर्यच मिथ्यादृष्टियोंका उत्कृष्ट अन्तर
होता है ।

उक्त तीनों प्रकारके तिर्यच सामान्यसम्यग्दृष्टि और भ्रम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका
अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमें एक समय होता है ॥ ४२ ॥

१ प्रविण्डु 'सम्पत्तल' इति पाठ ।

त जहा- पंचिदियतिरिक्खतिगसाणमम्मादिद्विपनाहो केत्तिर्यं पि काल णिरंतर-
मागढो । पुणो सच्चेसु मासणेषु मिच्छत्त पडिण्णेषु एगममय सासणगुणभिरहो होदूण
विदियसमए उअसमसम्मादिद्विजीपेसु मामण पडिण्णेषु लद्धमेगममयमतर । एअ चेअ
तिरिक्खतिगसम्मामिच्छादिद्वीण पि वत्तव्वं ।

उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ॥ ४३ ॥

तं जहा- पंचिदियतिरिक्खतिगसाणमम्मादिद्वि-मम्मामिच्छादिद्विजीपेसु सव्वेसु
अण्णगुण गढेषु दोण्हं गुणट्ठाणाण पंचिदियतिरिक्खतिएसु उक्कस्सेण पलिदोवमस्स
असंखेज्जदिभागमेत्ततर होदूण पुणो दोण्हं गुणट्ठाणाण सभवे जादे लद्धमतर होदि ।

**एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अतोमुहुत्तं ॥ ४४ ॥**

पंचिदियतिरिक्खतियसामणाण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो, सम्मामिच्छा-
दिद्वीण अतोमुहुत्तमेगजीअजहण्णतर होदि । सेअ सुगम ।

जैसे- पचेन्द्रिय तिर्यंच त्रिक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंका प्रवाह कितने ही काल
तक निरन्तर आया । पुन सभी सासादन जीवोंके मिथ्यात्वको प्राप्त हो जानेपर एक
समयके लिए सासादन गुणस्थानका धिरह होकर द्वितीय समयमें उपशमसम्यग्दृष्टि
जीवोंके सासादन गुणस्थानको प्राप्त होनेपर एक समय प्रमाण अन्तरकाल प्राप्त
होगया । इसी प्रकार तीनों ही जातिवाले तिर्यच सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका भी अन्तर
कहना चाहिए ।

उक्त तीनों प्रकारके तिर्यंच सासादन और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका नाना जीवोंकी
अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असंख्यातमें भागप्रमाण है ॥ ४३ ॥

जैसे- तीनों ही जातिवाले पचेन्द्रिय तिर्यच सामादनसम्यग्दृष्टि जोर सम्य
ग्मिथ्यादृष्टि सभी जीवोंके अन्य गुणस्थानको चले जानेपर इन दोनों गुणस्थानोंका
पचेन्द्रिय तिर्यंचत्रिकमें उत्कर्षसे पल्योपमके असख्यातमें भागमात्र अन्तर होकर पुन
दोनों गुणस्थानोंके सभय हो जानेपर उक्त अन्तर प्राप्त हो जाता है ।

सामादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानका एक जीवकी अपेक्षा
जघन्य अन्तर क्रमशः पल्योपमके अगत्यातमें भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ४४ ॥

पचेन्द्रिय तिर्यंचत्रिक सामादनसम्यग्दृष्टियोंका पल्योपममें असख्यातमें भाग
और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर्मुहूर्तप्रमाण एक जीवका जघन्य अन्तर होता है । शेष
सुगम है ।

उक्कस्सेण तिणिण पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणम्भी
याणि ॥ ४५ ॥

एथ ताव पचिदियतिरिस्सममाणण उच्चदे । त जहा- एस्सो मणुमो णेरडो
देवो वा एगसमयावसेसाण मामणद्वाए पचिदियतिरिक्खेसु उव्वणो । तत्थ पचा
णउडिपुव्वकोडिअम्भियतिणिण पलिदोवमाणि गमिय अउमाणे (उव्वसममम्मत्त घेत्तूण)
एगसमयावसेमे आउए आमाण गणे काल करिय देवो जादे । एव दुममऊणमगद्धिदी
सासणुक्कस्मतर होदि ।

सम्मामिच्छादिद्वीणमुच्चदे - एक्को मणुमो अट्टारीमसत्तकम्मिओ सणिपच्चि
दियतिरिस्ससम्मुच्छिमपज्जत्तएसु उव्वणो छहि पज्जचीहि पज्जत्तपदे (१) विस्सतो
(२) विमुद्धो (३) मम्मामिच्छत्त पडिउणो (४) अत्तरिय पचाणउडिपुव्वकोडीओ
परिममिय तिपलिदोवमिणसु उव्वजिनय अउमाणे पढमसम्मत्त घेत्तूण सम्मामिच्छत्त
गणे । लद्धमतर (५) । सम्मत्त वा मिच्छत्त वा जेण गुणेण आउअ उद्ध त पडिउज्जिय
(६) देवेषु उव्वणो । छहि अतोमुद्धत्तेहि ऊणा मगद्धिदी उक्कस्मतर होदि । एव पच्चि

उक्त दोनों गुणस्थानरतीं तीना प्रकारके तिर्यचोक्का अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वसे
अधिक तीन पल्योपम है ॥ ४५ ॥

इनमेंसे पहले पचेन्द्रिय तियच्च सासादनसम्यग्दृष्टिना अन्तर कहते हैं । जैसे-
कोई एक मनुष्य, नारसी अथवा देव सासादन गुणस्थानके कालमें एक समय अवशेष
रह जानेपर पचेन्द्रिय तिर्यचोक्के उत्पन्न हुआ । उनमें पचानवे पूर्वकोटिकालसे अधिक तीन
पल्योपम प्रितानर अतमें (उपशमसम्यक्त्व ग्रहण करके) आयुके एक समय अवशेष रह
जाने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ और मरण करके देव उत्पन्न हुआ । इस
प्रकार दो समय कम अपनी स्थिति सासादन गुणस्थानका उत्त्पष्ट अन्तर होता है ।

अत्र तिर्यचोक्कसम्यग्मिथ्यादृष्टियोक्का अन्तर कहते हैं- मोहकमकी अट्टाईस प्रवृत्ति
योकी सत्ता रखनेवाला कोई एक मनुष्य, सभी पचेन्द्रिय तिर्यच सम्मूर्च्छिम पर्याप्तकोंमें
उत्पन्न हुआ और छहों पर्याप्तियोंमें पर्याप्त हो (१) त्रिधाम ले (२) विमुद्ध हो (३) सम्य
ग्मिथ्यात्वका प्राप्त हुआ (४) तथा अन्तरको प्राप्त होकर पचानवे पूर्वकोटि कालप्रमाण
उद्धों तिर्यचोक्के परिभ्रमण करके तीन पल्योपमकी आयुवाले तिर्यचोक्के उत्पन्न होकर आर
अतमें प्रथम सम्यक्त्वको ग्रहण करके सम्यग्मिथ्यात्वको गया । इस प्रकार अन्तर प्राप्त
हुआ (५) । पीछे निम्न गुणस्थानसे आयु बाची थी उसी सम्यक्त्व अथवा मिथ्यात्व
गुणस्थानको प्राप्त होकर (६) देवोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार छह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी
स्थिति ही इस गुणस्थानका उत्त्पष्ट अन्तर है । इसी प्रकार पचेन्द्रिय तिर्यच पर्याप्तकोंका

दियतिरिक्खपज्जत्ताण । गवरि सत्तेतालीसपुच्चकोडीओ तिण्णि पलिदोममाणि च पुच्चुत्त-
दोममयल्लंअंतोमुहुत्तेहि य ऊणाणि उक्कस्मतर होदि । एवं जोणिणीसु मि । गवरि सम्मा-
मिच्छादिद्विउक्कस्समिह अत्थि निमेषो । उच्चदे- एकको गेरइओ देवो वा मणुसो वा
अट्टारीससत्तकम्मिओ पंचिदियतिरिक्खजोणिणिकुम्भुड-मक्कडेसु उअण्णो वे मासे गम्भे
अच्छिय णिक्खसतो मुहुत्तपुधत्तेण मिसुद्धो सम्मामिच्छत्त पडिअण्णो । पण्णारस पुक्क-
कोडीओ परिभमिय कुरेसु उअण्णो । सम्मत्तेण ना मिच्छत्तेण वा अच्छिय अअसाणे
सम्मामिच्छत्त गदो । लद्धमंतर । जेण गुणेण आअअ नद्ध, तेणेअ गुणेण मदो देवो
जादो । दोहि अतोमुहुत्तेहि मुहुत्तपुधत्ताहिय-अेमामेहि य ऊणाणि पुच्चकोडिपुधत्तम्भहिय-
तिण्णि पलिदोममाणि उक्कस्सतर होदि । सम्मुच्छिमेषुप्पाडय सम्मामिच्छत्त किण्ण
पडिअज्जाभिदो ? ण, तत्थ इत्थियेदाभावा । सम्मुच्छिमेषु इत्थि-पुरिससेदा किमट्ठ ण
होति ? सहाअदो चेष ।

असजदसम्मादिट्ठीणमंतर केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ४६ ॥

उत्कृष्ट अन्तर जानना चाहिए । विशेषतया यह है कि सतालीस पूर्वकोटिया और पूर्वोक्त
दो समय ओर छह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम तीन पल्योपमकाल इनका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।
इसी प्रकार योनिमतियोंका भी अन्तर जानना चाहिए । केवल उनके सम्यग्मिथ्यादृष्टि-
सम्बन्धी उत्कृष्ट अन्तरमें विशेषतया हे, उसे कहते हैं- मोहकर्मकी अट्टारिस प्रकृतियोंकी
सत्ता रखनेवाला एक नारकी, देव अथवा मनुष्य, पचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती कुक्कुट,
मकट आदिमें उत्पन्न हुआ, दो मास गर्भमें रहकर निकला व मुहूर्तपृथक्त्वसे विमुक्त
होकर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । (पश्चात् मिथ्यात्वमें जाकर) पन्द्रह पूर्वकोटि-
कालप्रमाण परिभ्रमण करके देवकुर, उत्तरकुर, इन दो भोगभूमियोंमें उत्पन्न हुआ । वहा
सम्यक्त्व अथवा मिथ्यात्वके साथ रहकर आयुके अन्तमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ ।
इस प्रकार अन्तर प्राप्त होगया । पश्चात् जिस गुणस्थानसे आयुको बाधा था उसी
गुणस्थानसे मरकर देव हुआ । इस प्रकार दो अन्तर्मुहूर्त ओर मुहूर्तपृथक्त्वसे अधिक दो
मासोंसे हीन पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक तीन पल्योपमकाल उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

शंका—सम्मुच्छिम तिर्यंचोंमें उत्पन्न करारर पुन सम्यग्मिथ्यात्वको क्यों नहीं
प्राप्त कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सम्मुच्छिम जीवोंमें खविदका अभाव है ।

शंका—सम्मुच्छिम जीवोंमें खविद ओर पुरुपवेद क्यों नहीं होते हैं ?

समाधान—स्वभावासे ही नहीं होते हैं ।

उक्त तीनों अमयतमम्यगदृष्टि तिर्यंचोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ४६ ॥

१ प्रविष्ट ' छ ' इति पाठो नास्ति ।

कुदो ? पंचिन्द्रियतिरिक्त्वातिगसजटासजदम्स दिष्टमग्गस्म अण्णगुण गतूण अद्
हरकालेण पुणरागदस्म अतोमुद्दत्तरुलभा ।

उक्कस्सेण पुव्वकोडिपुधत्तं ॥ ५१ ॥

तत्थ ताव पंचिन्द्रियतिरिक्त्वातिगसजटामजदाण उच्चदे । तं जहा- एवो अट्टावीप
सत्तकम्मिओ सण्णिपंचिन्द्रियतिरिक्त्वात्तस्समुत्थिमपञ्जत्तएमु उररण्णो छिहे पञ्जर्कडि
पञ्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) विमुद्धो (३) वेदग्गम्मत्त मजमामजम च जुगं पडि
वण्णो (४) संकिल्लित्तो भिच्छत्त गतूर्णतरिय छण्णउदिपुव्वकोडीओ परिभमिय अपाळमए
पुव्वकोडीए भिच्छत्तेण सम्मत्तेण वा सोहम्मदिमु जाउज नधिय अतोमुद्दत्ताग्गेम जीविए
सजमासजम पडिवण्णो (५) काल करिय देवो जादो । पचहि अतोमुद्दत्तेहि ऊआओ
छण्णउदिपुव्वकोडीओ उक्कस्सत्तर जाद ।

पंचिन्द्रियतिरिक्त्वात्तएमु एअं चेव । णरि अट्टेवालीसपुव्वकोडीओ वि
भाणिदव्व । पंचिन्द्रियतिरिक्त्वात्तजोणिणीमु वि एअं चेव । णरि नेड विमेवो अविन
भाणिम्मामो । त जहा- एकओ अट्टावीससत्तकम्मिओ पंचिन्द्रियतिरिक्त्वात्तजोणिणीमु उपप्यो

पर्योकि, देखा है मार्गको जिहाने, ऐसे तीनों प्रकारके पचेन्द्रिय तिर्यंच सयता
सयतके अन्य गुणस्थानको जाकर अतिस्वप्नमात्रमे पुन उसी गुणस्थानमें आन पर
अन्तर्मुहूर्तप्रमाण काल पाया जाता है ।

उन्हीं तीनों प्रकारके तिर्यंच मयतासयत जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि
पृथक्त्व है ॥ ५१ ॥

इनमेंसे पहले पचेन्द्रिय तिर्यंच सयतासयतोंका अन्तर कहते हैं । जैसे-मोह
कर्मकी अट्टावीस प्रवृत्तियोंकी सत्तावाला एक जीव सही पचेन्द्रिय तिर्यंच सम्मूर्च्छित्तम
पर्याप्तमें उररण्ण हुआ, व छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विधाम ले (२) विमुद्द
हो (३) वेदग्गम्मत्तय और सयमासयतको एक साथ प्राप्त हुआ (४) तथा सक्किए हा
मिध्यात्तको जाकर और अन्तरको प्राप्त हो छथाव्रजे पूर्वकोटिप्रमाण परिभ्रमण कर
अन्तम पूर्वकोटिमें मिध्यात्त अथवा सम्यस्त्यके साथ सौधर्मदि कर्त्योंकी आयुको वाधकर
व जीवनके अन्तर्मुहूर्त अवशेष रह जाने पर सयमासयतको प्राप्त हुआ (५) और मरण
कर देव हुआ । इस प्रकार पांच अन्तर्मुहूर्तोंसे हीन छथाव्रजे पूर्वकोटिया पचेन्द्रिय तिर्यंच
सयतासयतोंका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

पचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्तमें भी इसी प्रकार अन्तर होता है । विशेषता यह है कि
इनके अट्टावीस पूर्वकोटिप्रमाण अन्तरकाल रहना चाहिए । पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि
मत्तियोंमें भी इसी प्रकार अन्तर होता है । केवल कुछ विशेषता है उसे कहते हैं । जैसे
मोहकर्मकी अट्टावीस प्रवृत्तियोंकी सत्तावाला एक जीव पचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमत्तियों

वे मासे गव्भे अच्चिय णिकसतो मुहुत्तपुवत्तेण विसुद्धो वेदगसम्मत्त सजमासंजम च जुगवं पडिण्णो (१) । संकिल्लो मिच्छत्तं गंतूणतरिय सोलसपुच्चकोडीओ परिभमिय देवाउअं ग्रथिय अतोमुहुत्तानसे जीणिए मजमासंजम पडिण्णो (२) । लद्धमंतर । मदो देवो जादो । वेहि अतोमुहुत्तेहि मुहुत्तपुधत्तव्भहिय-वेमासेहि य ऊणाओ सोलहपुच्च-कोडीओ उक्कस्सतर होदि ।

पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्ताणमंतरं केवचिरं कालादो होदि,
णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ५२ ॥

मुगममेद सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण खुदाभवग्गहणं ॥ ५३ ॥

कुदो ? पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तयस्म अण्णेषु अपज्जत्तएसु खुदाभवग्गहणाउ-
द्धिदीएसु उपगज्जिय पडिणियत्तिय आगट्ठम खुदाभवग्गहणमेत्ततरुलभा ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्ठं ॥ ५४ ॥

कुदो ? पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तयस्म अणप्पिदजीणेषु उप्पज्जिय आगलियाए

उत्पन्न हुआ व दो मास गर्भमें रहकर निकला, मुहूर्तपृथक्त्वसे विशुद्ध होकर, वेदकसभ्य-
क्त्वको और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पुन सङ्घिष्ट हो मिथ्यात्वको
जाकर, अन्तरको प्राप्त हो, सोलह पूर्वकोटिप्रमाण परिभ्रमण कर ओर देवायु राधकर
जीवनके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अवशेष रहनेपर सयमासयमको प्राप्त हुआ (२) । इस प्रकार
अन्तर प्राप्त हुआ । पश्चात् मरकर देव हुआ । इस प्रकार दो अन्तर्मुहूर्तों और मुहूर्तपृथक्त्वसे
अधिक दो माससे हीन सोलह पूर्वकोटिया पचेन्द्रिय तियच योनिमतियोंका उत्कृष्ट
अन्तर होता है ।

पचेन्द्रिय तियच लब्ध्यपर्याप्तकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ५२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

पचेन्द्रिय तियच लब्ध्यपर्याप्तकोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्षुद्रभव-
ग्रहणप्रमाण है ॥ ५३ ॥

क्योंकि, पचेन्द्रिय तियच लब्ध्यपर्याप्तकोंका क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण आयुस्थितिवाले
अन्य अपर्याप्तक जीवोंमें उत्पन्न होकर ओर लोटकर आये हुए जीवका क्षुद्रभवग्रहण-
प्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

पंचेन्द्रिय तियच लब्ध्यपर्याप्तकोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अनन्त-
कालप्रमाण अमरयात पुद्गलपरिवर्तन है ॥ ५४ ॥

क्योंकि, पचेन्द्रिय तियच लब्ध्यपर्याप्तकके अधिप्रक्षित जीवोंमें उत्पन्न होकर आव

सासणसम्मादिद्वि-सम्माभिच्छादिद्वीणमतरं केवचिर कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ६० ॥

कुदो ? तिनिहमणुसेसु द्विदसासणसम्मादिद्वि-सम्माभिच्छादिद्विगुणपरिणदजीनेसु
अण्णगुण गदेसु गुणतरस्म जहण्णेण एगसमयदसणादो ।

उमकस्सेण पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो ॥ ६१ ॥

कुदो ? सासणसम्मादिद्वि-सम्माभिच्छादिद्विगुणद्वानेहि णिणा तिनिहमणुस्माण
पलिदोवमस्स अमखेज्जदिभागमेत्तकालमज्जानदसणादो ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अतोमुहुत्तं ॥ ६२ ॥

सासणसम जहण्णतर पलिदोवमस्स अमखेज्जदिभागो । कुदो ? एत्तिण कालेण
णिणा पढममम्मत्तग्गहणपाओग्गाए सम्मत्त-सम्माभिच्छत्तद्विद्वीण सागरोपमपुधत्तादो
हेद्विमाए उत्पत्तीए अभावा । सम्माभिच्छादिद्विस्स अतोमुहुत्त जहण्णतर, अण्णगुण

उक्त तीनों प्रकारके मनुष्य सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका
अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर
है ॥ ६० ॥

क्योंकि, तीनों ही प्रकारके मनुष्योंमें स्थित सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्य
ग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानके परिणत सभी जीवोंके अथ गुणस्थानको चले जानेपर इन गुण
स्थानोंका अन्तर जघन्यसे एक समय देखा जाता है ।

उक्त मनुष्योंका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असख्यातमें भागप्रमाण है ॥ ६१ ॥
क्योंकि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानके बिना तीनों ही
प्रकारके मनुष्योंके पल्योपमके असख्यातमें भागमात्र काल तक अस्थान देखा जाता है ।

उक्त तीनों प्रकारके मनुष्योंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर कमशु-
पल्योपमका अमरयातना भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ६२ ॥

सासादन गुणस्थानका जघन्य अन्तर पल्योपमका असख्यातका भाग है, क्योंकि,
इतने कालके बिना प्रथमसम्यक्त्वके ग्रहण करने योग्य सागरोपमपृथक्त्वसे नीचे
होनेवाली सम्यक्त्वप्रवृत्ति तथा सम्यग्मिथ्यात्वप्रवृत्तिनी स्थितिकी उत्पत्तिका अभाव
है । सम्यग्मिथ्यादृष्टिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त होता है, क्योंकि, उसका अन्य गुणस्थानको

१ सासादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टिवातानाजीवपक्षया सामा यवन् । त मि १, ८

२ एद्विजीवं प्रति जघन्य पल्योपमपल्योपमगोन्तमुहूर्तय । त मि १

गंतूण अंतोमुहुत्तेण पुणरागमुपलभा ।

उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणव्वहियाणि'

॥ ६३ ॥

मणुससासणसम्मादिट्ठीण तात्र उच्चदे- एक्को तिरिक्खो देवो णेरइओ वा सासणद्वाए एगो समओ अत्थि चि मणुमो जादो । निदियसमए मिच्छत्त गंतूण अंतरिय सत्तेतालीसपुव्वकोडिअव्वहियतिण्णि पलिदोवमाणि भमिय पच्छा उपसमसम्मर्च गदो । तग्धि एगो समओ अत्थि चि मासणं गतूण मदो देवो जादो । दुसमऊणा मणुसुक्कस्स-ट्ठीदीं सासणुक्कस्सतरं जाद ।

सम्मामिच्छादिट्ठिस्स उच्चदे - एक्को अट्ठासीससत्तकम्मिओ अण्णगदीदो आगदो मणुसेसु उववण्णो । गव्व्हादिअट्ठवस्सेसु गदेसु निसुद्धो सम्मामिच्छत्त पडिउण्णो (१) । मिच्छत्त गदो सत्तेतालीसपुव्वकोडीओ गमेदूण तिपलिदोवमिएसु मणुसेसु उववण्णो आउअ वंधिय अवसाणे सम्मामिच्छत्त गदो । लद्धमतर (२) । तदो मिच्छत्त-सम्मत्ताणं जेण आउअ चद्ध तं गुण गतूण मदो देवो जादो (३) । एवं तीहि अंतोमुहुत्तेहि अट्ठवस्सेहि जाकर अन्तमुहूर्तसे पुन आगमन पाया जाता है ।

उक्त मनुष्योंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिर्पृथक्त्वसे अधिक तीन पल्योपम-काल है ॥ ६३ ॥

पहले मनुष्य सासादनसम्यग्दृष्टियोंका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- एक तिर्यच, देव अथवा नारकी जीव सासादन गुणस्थानके कालमें एक समय अवशेष रहने पर मनुष्य हुआ । द्वितीय समयमें मिथ्यात्वको जाकर और अन्तरको प्राप्त होकर संतालीस पूर्व-कोटियोंसे अधिक तीन पल्योपमकाल परिभ्रमणकर पीछे उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । उस उपशमसम्यक्त्वके कालमें एक समय अवशेष रहनेपर सासादन गुणस्थानको जाकर मरा और देव होगया । इस प्रकार दो समय कम मनुष्यकी उत्कृष्ट स्थिति सासादन गुणस्थानका उत्कृष्ट अन्तर होगया ।

अथ मनुष्यसम्यग्मिथ्यादृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्ठाईस प्रवृत्तियोंकी सत्तावाला कोई एक जीव अन्य गतिसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । गर्भको आदि लेकर आठ वर्षोंके व्यतीत होने पर विशुद्ध हो सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (१) । पुन मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ, संतालीस पूर्वकोटिया प्रिताकर, तीन पल्योपमकी स्थिति-वाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और आयुको वाधकर अन्तमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । इस प्रकारसे अन्तर लब्ध हुआ (२) । तत्पश्चात् मिथ्यात्व ओर सम्यक्त्वमेंसे जिसके द्वारा आयु धाधी थी, उन्हीं गुणस्थानको जाकर मरा और देव होगया (३) । इस प्रकार तीन

१ उत्कर्षेण श्रीणि पल्योपमानि पूव्वकोटीपृथक्त्वेरभ्यधिरानि । स पि १, ८

२ प्रतिपु ' दुसमऊणाणमणुक्कस्सट्ठीदीं ' इति पाठ ।

य उणा सगड्ढिदी सम्मामि-उत्तुक्कस्मतर ।

एय मणुमपज्जत्त-मणुमिणीण पि । णयसि मणुमपज्जत्तेसु तेरिम पुव्वकोडोअ,
मणुसिणीसु गत्त पुव्वकोडोओ तिसु पलिदोपमेसु अहियाओ त्ति वत्तव्व ।

असजदसम्मादिद्वीणमतर केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीव
पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरतरं ॥ ६४ ॥

सुगममेद मुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ६५ ॥

बुदो ? तिनिहमणुसेसु द्विदमजदसम्मादिद्विस्स अण्णगुणं गत्तूणतरिय पडिणिय
चिय अतोमुहुत्तेण आगमणुपलभा ।

उक्कस्सेण तिण्णिण पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणव्वहियाणि
॥ ६६ ॥

मणुमअसजदसम्मादिद्वीण ताव उच्चदे- एकको अट्टाणीमसतक्कम्मिओ अण्णगदीदो

अन्तर्मुहूर्त और आठ वर्षोंसे कम अपनी स्थिति सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अन्तर है ।

इसी प्रकार मनुष्यपयास और मनुष्यनियोंका भी अन्तर जानना चाहिए । विशेष
यात यह है कि मनुष्यपर्याप्तमोंमें तर्वास पूर्वकोटिया और तीन पल्योपमना अन्तर
पहना चाहिए । और मनुष्यनियोंमें गात पूर्वकोटिया तीन पल्योपमोंमें अधिक
कहना चाहिए ।

अमयतमम्यगदष्टि मनुष्यत्रिकका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंका
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ६४ ॥

पह सूत्र सुगम है ।

एक जीवकी अपेक्षा मनुष्यत्रिकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ६५ ॥

क्योंकि, तीन प्रकारके मनुष्योंमें स्थित अमयतमम्यगदष्टिका अन्य गुणस्थानको
जाकर अन्तरको प्राप्त हो और लौटकर अन्तर्मुहूर्तसे आगमन पाया जाता है ।

असपतमम्यगदष्टि मनुष्यत्रिकका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपर्यपृथक्त्वसे अधिक
तीन पल्योपम है ॥ ६६ ॥

इनमेंसे पहले मनुष्य अमयतसम्यगदष्टिका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- अट्टाहस मोह

१ अमयतसम्यगदष्टिनानाजीवोपेक्षया नात्यतरम् । स सि १, ८

२ एकजीवोपेक्षया अल्पनातमुहूर्तम् । स सि १, ८

३ उत्कर्षणं त्रीणि पल्योपमानि पूर्वकोटिपर्यपृथक्त्वस्यधिकानि । स सि १, ८

आगदो मणुमेसु उग्रण्णो । गवभादिअट्टग्रस्मेसु गदेसु तिसुद्धो वेदगसम्मत्तं पडिग्रण्णो (१) ।
मिच्छत्तं गंतूणतरिय मत्तेचालीसपुव्वकौडीओ गमेदूण तिपल्लिदोअमिएसु उग्रण्णो । तदो
वद्दाउओ संतो उग्रसमसम्मत्त पडिग्रण्णो (२) । उग्रममम्मत्तद्वाए छ आग्रलियाअसेसाए
सामण गंतूण मदो देवो जादो । अट्टग्रस्मेहि नेहि अतोमुहुत्तेहि ऊणा सगट्ठिदी असजद-
सम्मादिट्ठिण उव्वरुस्मतरं होदि । एअ मणुमपज्जत्त-मणुमिणीणं पि । गअरि तेवीस-सत्त-
पुव्वकौडीओ तिपल्लिदोअमेसु अहियाओ त्ति उत्तव्वं ।

सजदासजदप्पहुडि जाव अप्पमतसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ६७ ॥

सुगमेदं सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ६८ ॥

कुदो ? तिपिहमणुसेसु ट्ठिट्ठिगुणट्ठाणजीअस्स अण्णगुण गंतूणतरिय पुणो अतो-
मुहुत्तेण पौराणगुणस्मागमुअलभा ।

प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक जीव अन्यगतिसे आया और मनुष्यमें उत्पन्न हुआ ।
पुन गर्भमें जादि लेकर आठ वर्षके वीतनेपर त्रिशुद्ध हो वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त
हुआ (१) । पुन मिव्यात्त्रको जाअर अन्तरको प्राप्त हो सतालीस पूर्वकोटिया वितारकर
तीन पल्योपममाले मनुष्यमें उत्पन्न हुआ । तत्पश्चात् आयुको मायता हुआ उपशमसम्य-
त्वको प्राप्त हुआ (२) । उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह जाग्रलिया अग्रशेष रहनेपर
सासादन गुणस्थानको जाअर मरत और देअ हुआ । इस प्रकार आठ वर्ष और दो अन्त-
मुहूर्तोंमें मम जपनी स्थिति असयतसम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर हे ।

इसी प्रकार मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यनियोंका भी अन्तर कहना चाहिए । विशेष
घात यह है कि मनुष्यपर्याप्त असयतसम्यग्दृष्टियोंका अन्तर तेइस पूर्वकोटिया तीन
पल्योपममें अधिक तथा मनुष्यनियोंमें सात पूर्वकोटिया तीन पल्योपममें अधिक होती है,
ऐसा कहना चाहिए ।

मयतासयतामें लेकर अप्रमत्तमयतां तकके मनुष्यविकोंका अन्तर कितने काल
होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ६७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जअन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ६८ ॥

पर्योकि, तीन प्रकारके मनुष्योंमें स्थित सयतासयतादि तीन गुणस्थानवर्ती
जीवका अन्य गुणस्थानको जाअर अन्तरको प्राप्त होकर और पुन लोटकर अन्तर्मुहूर्त
द्वारा पुराने गुणस्थानका होना पाया जाता है ।

१ सयतासयतप्रमत्तप्रमत्तानां नानानावापेक्षया नास्वन्तरम् । स मि १, ८

२ एकजीव प्रति जअयेनात्तर्मुहूर्त । स मि १, ८

उक्कस्सेण पुव्वकोडिपुधत्तं ॥ ६९ ॥

मणुसमजदासजदाण ताव उच्ये— एक्को अट्टाणीससतरुम्मिओ अण्णगदीदा आगतूण मणुसेसु उवण्णो । अट्टास्सिओ जादो वेदगमम्मत्त मजमासनम च ममग पडिवण्णो (१) । मिच्छत्त गतूगतरिय अट्टेदालीसपुव्वकोडीओ परिभमिय अण्णो देवाउअ ब्रधिय सजमासजम पडिवण्णो । लद्धमतर (२) । मदो देवो जादो । एव अट्टास्सेहि वे-अतोमुहुत्तेहि य उणाओ अट्टेदालीसपुव्वकोडीओ सजदासजदुक्कस्मतर हादि ।

पमत्तस्स उरुस्मतर उच्ये— एक्को अट्टाणीससतरुम्मिओ अण्णगदीदो आगतूण मणुसेसु उवण्णो । गन्भादिअट्टास्सेहि वेदगमम्मत्त सजम च पडिवण्णो अप्पमत्तो (१) पमत्तो होदूण (२) मिच्छत्त गतूगतरिय अट्टेदालीसपुव्वकोडीओ परिभमिय अपच्छिमाए पुव्वकोडीए बद्धाउओ सतो अप्पमत्तो होदूण पमत्तो जादो । लद्धमतर (३) । मदो देवो जादो । तिण्णिअतोमुहुत्तव्वभहिय अट्टास्सेणूण अट्टेदालीसपुव्वकोडीओ पमत्तुक्कस्सतर हादि ।

उक्त तीनों गुणस्थानगले मनुष्यत्रिकोंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटीपृथक्त्व है ॥ ६९ ॥

इनमेंसे पहले मनुष्य सयतासयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं— मोहकर्मकी अट्टाईस प्रहरियोंकी सत्ता रखनेवाला कोई एक जीव अथगतिसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो आठ वर्षका हुआ । और वेदकसम्बन्धत्व तथा सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पुन मिष्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हो अट्टालीस पूर्वकोटिया परिभ्रमण कर आयुके अन्तमें देवायुको बाधकर सयमासयमको प्राप्त हुआ । इस प्रकारसे उक्त अन्तर लब्ध हुआ (२) । पुन मरा और देव हुआ । इस प्रकार आठ वर्ष और दो अतमुहुत्तोंसे कम अट्टालीस पूर्वकोटिया सयतासयतका उत्कृष्ट अन्तर होता है

अब प्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं— मोहकर्मकी अट्टाईस प्रहरियोंकी सत्ता रखनेवाला कोई एक जीव अथगतिसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । पुन गभको भादि लेकर आठ वर्षमें वेदकसम्बन्धत्व और सयमको प्राप्त हुआ । पश्चात् वह अप्रमत्तसयत (१) प्रमत्तसयत होकर (२) मिष्यात्वमें जाकर और अन्तरको प्राप्त होकर, अट्टालीस पूर्वकोटिया परिभ्रमण कर अन्तिम पूर्वकोटिमें बद्धायुष्क होता हुआ अप्रमत्तसयत होकर पुन प्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकारसे अन्तर लब्ध होगया (३) । पश्चात् मरा और देव होगया । इस प्रकार तीन अतमुहुत्तोंमें अधिक आठ वर्षसे कम अट्टालीस पूर्वकोटिया प्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

अप्पमत्तस्म उक्कस्सतर उच्चदे- एक्को अट्टाणीससत्तकम्मिओ अण्णगदीदो आगंतूण मणुसेसु उप्पज्जिय गव्भादिअट्टास्सिओ जादो । सम्मत्त अप्पमत्तगुणं च जुगमं पड्डिण्णो (१) । पमत्तो होदूअंतरिदो अट्टेतालीसपुव्वफोडीओ परिभमिय अपच्छिमाए पुव्वफोडीए वद्धदेनाउओ मंतो अप्पमत्तो जादो । लद्धमंतरं (२) । तदो पमत्तो होदूण (३) मदो देवो जादो । तीहि अंतोसुहुत्तेहि अब्भहियअट्टवस्सेहि ऊणाओ अट्टेतालीस-पुव्वफोडीओ उक्कस्सतर । पज्जत्त-मणुमिणीसु एव चेव । णरि पज्जत्तेसु चउवीस-पुव्वफोडीओ. मणुसिणीसु अट्टपुव्वफोडीओ ति वत्तव्वं ।

चटुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमय ॥ ७० ॥

कुदो ? तिविहमणुस्साणं चउव्विहउत्तमामगेहि णिणा एगममयात्तट्टाणुत्तंभा ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ ७१ ॥

कुदो ? तिविहमणुस्साण चउव्विहउत्तसामगेहि णिणा उक्कस्सेण वासपुधत्तावट्टाणु-वलभादो ।

अत्र अप्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्ता रखनेवाला कोई एक जीव अन्य गतिसे जाकर मनुष्योंमें उत्पन्न होकर गर्भको आदि लेकर आठ वर्षका हुआ और सम्यक्त्व तथा अप्रमत्त गुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१)। पुन प्रमत्तसयत हां अन्तरको प्राप्त हुआ और अबतालीस पूर्वकोटिया परिभ्रमण कर अन्तिम पूर्वकोटिमें देवायुको धाधता हुआ अप्रमत्तसयत होगया। इस प्रकारसे अन्तर प्राप्त हुआ (२)। तत्पश्चात् प्रमत्तसयत होकर (३) मरा और देव होगया। ऐसे तीन अन्तर्मुहूर्तोंसे अधिक आठ वर्षोंसे कम अबतालीस पूर्वकोटिया उत्कृष्ट अन्तर होता है।

पर्याप्त मनुष्यनियोंमें इसी प्रकारका अन्तर होता है। विशेष धात यह है कि इन पर्याप्तमनुष्योंके चौबीस पूर्वकोटि और मनुष्यनियोंमें आठ पूर्वकोटिकालप्रमाण अन्तर रहना चाहिए।

चारों उपशामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ ७० ॥

फ्योंकि, तीनों ही प्रकारके मनुष्योंका चारों प्रकारके उपशामकोंके विना एक समय अवस्थान पाया जाता है।

चारों उपशामकोंका उत्कर्षसे वर्षपृथक्त्व अन्तर है ॥ ७१ ॥

फ्योंकि, तीनों प्रकारके मनुष्योंका चारों प्रकारके उपशामकोंके विना उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व रहनेवाला पाया जाता है।

णपरि अट्टहि अतोमुट्टुत्तेहि एगममयाहियअट्टमस्मेहि य ऊणाओ अट्टेदालीमपुव्व-
कोटीओ उक्कस्मतर होदि त्ति वत्तव्व । पज्जत्त-मणुमिणीसु एय चेत्त । णपरि पज्जत्तेसु
चउत्तमिं पुव्वकोडीओ, मणुमिणीसु अट्ट पुव्वकोडीओ त्ति वत्तव्व ।

चट्टुण्हं खवा अजोगिकेवलीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि,
णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ७४ ॥

कुटो ? एदेसु गुणट्टाणेसु अणुगुण णिव्वुट्ठिं च गदेसु एदेमिमेगममयमेत्त-
जहण्णतरुवलभा ।

उक्कस्सेण छम्मासं, वासपुधत्तं ॥ ७५ ॥

मणुस-मणुमपज्जत्ताणं छमासमतर होदि । मणुमिणीसु नामपुधत्तमतर होदि ।
जहाससाए पिणा रुधमेठ णव्वदे ? गुम्भदेमादो ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरतरं ॥ ७६ ॥

कुटो ? भूओ जागमणाभात्ता । णिरतराणिदेसो किमट्ट पुच्चदे ? णिग्गयमतर जम्हा
होता है । किन्तु उनमें जमज दश, नो और आठ अन्तर्मुहूर्तोंसे और एक समय अधिक
आठ वर्षोंमें कम अब्दतालीस पूर्वकोटिया उत्कृष्ट अन्तर होता है, ऐसा कहना चाहिए ।
मनुष्यपर्याप्तोंमें या मनुष्यनियोंमें भी ऐसा ही अन्तर होता है । विशेषता यह है कि
पर्याप्तोंमें चौबीस पूर्वकोटियों और मनुष्यनियोंमें आठ पूर्वकोटियोंके कालप्रमाण अन्तर
कहना चाहिए ।

चारों अपरु और अयोगिकेप्रलियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा जवन्यमे एक समय है ॥ ७४ ॥

क्योंकि, इन गुणस्थानोंके जीवोंसे चारों अपरुके अन्य गुणस्थानोंमें तथा अयो-
गिकेप्रलिके निवृत्तिके चल जानेपर एक समयमात्र जवन्य अन्तर पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर, उह माम और वर्षपृथक्प्रमाण होता है ॥ ७५ ॥

मनुष्य और मनुष्यपर्याप्त अपरु वा अयोगिकेप्रलियोंका उत्कृष्ट अन्तर उह मास
प्रमाण है । मनुष्यनियोंमें वर्षपृथक्प्रमाण अन्तर होता है ।

अरु—सूत्रमें यथासस्य पदके विना यह बात कैसे जानी जाती है ?

समाधान—गुरुके उपदेशसे ।

चारों अपरुओंका एक जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ७६ ॥

क्योंकि चारों अपरु और अयोगिकेप्रलिके पुन आगमनका अभाव है ।

श्रीका—सूत्रमें निरन्तर पदका निर्देश किस णिण है ?

समाधान—निरन्तर गया है अन्तर जिस गुणस्थानसे, उस गुणस्थानको निरन्तर

१ शेषार्थो गणान्वयत् । ए णि १, ८

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ७२ ॥

सुगममेदं सुत्त, ओघमिह उच्चतादो ।

उक्कस्सेण पुव्वकोडिपुधत्तं ॥ ७३ ॥

मणुस्माण ताव उच्चदे- एकको अट्टापीसमतकम्मिओ मणुमेसु उत्रण्णो गभादि
अट्टमस्मेहि मम्मत्त मज्जम च समगं पडिउण्णो (१) । पमत्तापमत्तमज्जदट्टाणे सादामाद
मधपरात्तमिहस्स कादूण (२) दसणमोहणीयमुत्रमामिय (३) उत्रसमसेटीपात्रोग्ग
अप्पमत्तो जादो (४) । अपुव्वो (५) अणियट्ठी (६) सुट्टुमो (७) उत्रमतो (८)
सुट्टुमो (९) अणियट्ठी (१०) अपुव्वो (११) अपमत्तो होदूणतरिदो । अट्टेतालीम
पुव्वकोडीओ परिभमिय अपच्छिमाए पुव्वकोडीए बद्धदेनाउओ सम्मत्त मज्जम च पडि
मज्जिय दसणमोहणीयमुत्रमामिय उत्रसमसेटीपात्रोग्गत्रिमेहीए तिसुज्जिय अपमत्तो होदूण
अपुव्वो जादो । लद्धमत्तर । तदो णिहा पयलाण उधरोच्छेदपट्टममए काल गदो दवो
जादो । अट्टमस्मेहि एककारमअतोमुहुत्तेहि य अपुव्वद्वए मत्तमभागेण च उणाओ
अट्टेतालीमपुव्वकोडीओ उक्कस्मत्तर होदि । एव चेत्तिण्णुसामगाण । णत्तरि दमहि

उक्त गुणव्यानात्ता एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ७२ ॥

यह सत्र सुगम है, क्योंकि, ओघमें कहा जा चुका है ।

चारों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा उक्कट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व है ॥ ७३ ॥

इनमेंसे पहल मनुष्य सामान्य उपशामकोंका अन्तर कहते हैं-मोहकमर्फी अट्टाईस

प्रवृत्तियोंका सत्ता रखनेवाला कोई एक जीव मनुष्यामें उत्पन्न हुआ, और गर्भको
आदि लेकर बाढ वपने सम्यक्त्वर जोर समयमें एक साथ प्राप्त हुआ (१) । प्रसन्न और
अप्रसन्नसयत गुणरक्षणमें साता और जसता वेदनीयमें बध परावर्तन सहस्रोंमें
करके (२) दर्शनमोहनीयका उपशाम करके (३) उपशामश्रेणीके योग्य अप्रसन्नसयत
हुआ (४) । पुन अपूर्णकरण (५) अनितृत्तिकरण (६) सूक्ष्मस्वाम्पराय (७) उपशात
कषाय (८) सूक्ष्मस्वाम्पराय (९) अनितृत्तिकरण (१०) अपूर्णकरण (११) और अप्रसन्न
सयत हो अन्तरमें प्राप्त होकर अट्टेतालीस पूर्वकोटियों तत्र परिभ्रमण कर अन्तिम
पूर्वकोटिमें देवायुको बाध कर सम्यक्त्व और समयमें युगपत् प्राप्त होकर दर्शन
मोहनीयका उपशामकर उपशामश्रेणीके योग्य त्रिगुद्धिस त्रिगुद्ध होना हुआ अप्रसन्नसयत
होकर अपूर्णकरणसयत हुआ । इस प्रकारसे अन्तर उपलब्ध होगया । तत्पश्चात् निद्रा
और प्रचलने उध विच्छेदके प्रथम समयमें जागने प्राप्त हो देव हुआ । इस प्रकार
बाढ वप और ग्यारह अन्तर्मुहूर्तोंसे तत्रा अपूर्णकरणके सन्तप्त भागसे कम अट्टेतालीस
पूर्वकोटिका उक्कट अन्तर होता है । इसी प्रकारसे शेष तीस उपशामकोंका भी अन्तर

१ एकजीव प्रति जघन्येत्तन्मुहूर्त । स नि १, ८

२ उत्तरमें पूर्वकोटीपृथक्त्वानि । स नि १, ८

णरहि अट्टुहि अतोमणुत्तेहि एगसमयाहियअट्टुस्मेहि य ऊणाओ अट्टेढालीसपुव्व-
कोडीओ उक्कस्सतर होदि त्ति वत्तव्वं । पज्जत्त-मणुसिणीसु एवं चेव । णररि पज्जत्तेसु
चउर्रासि पुव्वकोडीओ, मणुसिणीसु अट्ट पुव्वकोडीओ त्ति वत्तव्व ।

चट्टुण्हं खवा अजोगिकेवलीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि,
णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ७४ ॥

कुदो ? एदेसु गुणङ्गणेसु अण्णगुणं णिव्वुदिं च गदेसु एदेमिमेगममयमेत्त-
जहण्णतरुलभा ।

उक्कस्सेण छम्मासं, वासपुधत्तं ॥ ७५ ॥

मणुस-मणुसपज्जत्ताणं छमासमतर होदि । मणुसिणीसु वासपुधत्तमतर होदि ।
जहामंसाए णिणा कधमेद णव्वदे ? गुरूग्गदेसादो ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरतरं ॥ ७६ ॥

कुदो ? भूओ आगमणाभागा । णिग्गतरणिदेसो किमट्टु पुच्चदे ? णिग्गयमतर जम्हा
होता है । किन्तु उनमें क्रमशः दश, नौ ओर आठ अन्तर्मुहूर्तोंसे ओर एक समय अधिक
आठ वर्षोंसे कम अट्टतालीस पूर्वकोटिया उत्कृष्ट अन्तर होता है, ऐसा कहना चाहिए ।
मनुष्यपर्याप्तोंमें या मनुष्यनियोंमें भी ऐसा ही अन्तर होता है । विशेषता यह है कि
पर्याप्तोंमें चौबीस पूर्वकोटियों ओर मनुष्यनियोंमें जाठ पूर्वकोटियोंके कालप्रमाण अन्तर
कहना चाहिए ।

चारों क्षपक और अयोगिकेजलियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा जत्रन्यमे एक समय है ॥ ७४ ॥

क्योंकि, इन गुणस्थानोंके जीवोंसे चारों क्षपकोंके अथ गुणस्थानोंमें तथा अयो
गिकेजलियोंके निर्वृत्तिमें चले जानेपर एक समयमात्र जत्रन्य अन्तर पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर, छह मास और वर्षपृथक्त्व होता है ॥ ७५ ॥

मनुष्य और मनुष्यपर्याप्तक क्षपक वा अयोगिकेवलयोंका उत्कृष्ट अन्तर छह मास-
प्रमाण है । मनुष्यनियोंमें वर्षपृथक्त्वप्रमाण अन्तर होता है ।

शका—सूत्रमें यथास्वरय पदके णिना यह बात कैसे जानी जाती है ?

समाधान—सूत्रके उपदेशसे ।

चारों क्षपकोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ७६ ॥

न्यायिक, चारों क्षपक बार अयोगिकेजलोंके पुन आगमनका अभाव है ।

शका—सूत्रमें निरन्तर पदका निदश किस लिपि है ?

समाधान—निरन्तर गया है अन्तर जिस गुणस्थानसे, उस गुणस्थानको निरन्तर

गुणद्वारा त गुणद्वारा गिरतरमिदि विहिमुहेण दच्चद्विषणयावलंविमिस्माण पडिमह
परुणह ।

सजोगिकेवली ओघं ॥ ७७ ॥

णाणेगजीव पडुच्च णत्थि अंतर, गिरतरमिन्चेटेण भेदाभाया ।

मणुसअपज्जत्ताणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ७८ ॥

किमद्वेदस्स एम्महतस्स गमिस्स अतर होदि ? एसो सहाओ एदस्स । ण च
सहाणे जुत्तिमादस्स पेसो अत्थि, भिण्णविमयादो ।

उक्कस्सेण पालिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ॥ ७९ ॥

सुगममेद सुत्त ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण खुदाभवग्गहणं ॥ ८० ॥

कुदो ? अणप्पिदअपज्जत्तएसु उप्पज्जिय अइदहरकालेण आगदस्स खुदाभव
ग्गहणमेत्तत्तल्लभा ।

बहते हैं। इस प्रकार विधिमुखसे द्रव्याधिकनयके अवलम्बन करनेवाले शिष्योंके प्रतिपद्य
प्ररूपण करनेके लिए 'निरन्तर' इस पदका निर्देश स्वयं किया गया है।

सजोगिकेवलीका अन्तर औघके समान है ॥ ७७ ॥

क्योंकि, आघमें वणित नाना जीव और एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है,
निरन्तर है, इस प्रकारसे इस प्ररूपणमें कोई भेद नहीं है।

मनुष्य लब्धपर्याप्तकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा
जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ ७८ ॥

शंका—इस इतनी महान् राशिना अन्तर किस लिए होता है ?

समाधान—यह तो रागियोंका स्वभाव ही है। और स्वभावमें युक्तिवादका
प्रवेश है नहीं, क्योंकि, उसका विषय भिन्न है।

मनुष्य लब्धपर्याप्तकोंका उत्कृष्ट अन्तर पर्योपमके असंग्यातन भाग है ॥ ७९ ॥

यह स्व सुगम है।

एक जीवकी अपेक्षा लब्धपर्याप्तक मनुष्योंका जघन्य अन्तर क्षुद्रभयग्रहणप्रमाण
है ॥ ८० ॥

क्योंकि, अत्रिधमित्त लब्धपर्याप्तकोंमें उत्पन्न होकर अति एककालसे पुन
लब्धपर्याप्तकोंमें आए हुए जीवके क्षुद्रभयग्रहणप्रमाण अन्तर पाया

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्ठं ॥ ८१ ॥

कुदो ? मणुसअपज्जत्तस्म एड्ढिय गढस्म आमलियाए अससेज्जदिभागमेत्त-
पोग्गलपरियट्ठी परियट्ठिदूण पडिणियत्तिय आगढस्स सुत्तुत्तरुलंभा ।

एदं गदिं पडुच्च अंतरं ॥ ८२ ॥

मिस्माणमतरसभमपदुप्पायणट्ठमेढ सुत्त ।

गुणं पडुच्च उभयदो वि णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ८३ ॥

उभयदो जहण्णुककस्सेण णाणेगजीवेहि णा णत्थि अतरमिदि वुत्त होदि । कुदो ?
मग्गणमच्छडिय गुणतरग्गहणाभागा ।

देवगदीए देवेषु मिच्छादिट्ठि-असंजदसम्मादिट्ठीणमतरं केवचिरं
कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ८४ ॥

सुगमेढ सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ८५ ॥

उक्त लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्योंका उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकालात्मक असरयात्
पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ॥ ८१ ॥

क्योंकि, फेकेन्द्रियोंमें गये हुए लब्ध्यपर्याप्त मनुष्यका आवर्तके असख्यातवै
भागमात्र पुद्गलपरिवर्तन परिभ्रमण कर पुन लोटकर आये हुए जीवके सूत्रोक्त उत्कृष्ट
अन्तर पाया जाता है ।

यह अन्तर गतिकी अपेक्षा कहा है ॥ ८२ ॥

यह सूत्र शिष्योंको अन्तरकी सभावना उतलानेके लिए कहा गया है ।

गुणस्थानकी अपेक्षा तो दोनों प्रकारमें भी अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ८३ ॥

उभयत अर्थात् जघन्य ओर उत्कृष्टसे, अथवा नाना जीव ओर एक जीवकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, यह अर्थ कहा गया समझना चाहिए । क्योंकि, मार्गणाको छोड़े
बिना लब्ध्यपर्याप्तक जीवोंमें अन्य गुणस्थानका ग्रहण हो नहीं सकता ।

देवगतियों, देवोंमें मिथ्यादृष्टि और अमयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर कितने
काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ८४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त मिथ्यादृष्टि और अनयतसम्यग्दृष्टि देवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य
अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ८५ ॥

१ देवगता देवाना मिथ्यादृष्टयसयतसम्यग्दृष्टो नानावापेक्षया नास्ति तरम् । स सि १, ८

२ एगजीवं प्रति जघयेना तर्ह्वर्तं । स सि १, ८

कुदो ? मिच्छादिद्वि-अमनदमम्मादिद्वीण दिद्वमग्गाण देवाणं गुणतर गतूण ज्ञ
हरकालेण पडिणियत्तिय आगदाण अतोमुद्दुत्तअतकरलमा ।

उक्कस्सेण एककीस सागरोवमाणि देसूणाणि ॥ ८६ ॥

मिच्छादिद्विस्म नाप उच्चदे- एधो दव्वलिगी अट्टाणीमभतरम्मिआ उरिमि
गेवज्जेसु उररणां । छहि पज्जतीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२) विमुद्धो (३)
वेदगमम्मत्त पडिण्णो । एककीस सागरोवमाणि गम्मत्तेणत्तिय अरमाणे मिच्छत्त
गदो । लद्धमतर (४) । चुदो मणुमो जादो । चदुहि अतोमुद्दुत्तेहि ऊणाणि एककीस
सागरोवमाणि उररस्सतर होदि ।

अमज्जदमम्मादिद्विस्म उच्चदे- एकको दव्वलिगी अट्टाणीसमत्तम्मिआ उरिमि
गेवज्जेसु उररणां । छहि पज्जतीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२) विमुद्धो (३)
वेदगमम्मत्त पडिण्णो (४) मिच्छत्त गतूणत्तिय एक्कीस सागरोवमाणि अचिच्छत्त
आउअ तथिय मम्मत्त पडिण्णो । लद्धमतर (५) । पचहि अतोमुद्दुत्तेहि ऊणाणि एक
कीस सागरोवमाणि असज्जदमम्मादिद्विस्म उक्कस्सतर होदि ।

क्योंकि, जिहॉन पहले अन्य गुणस्थानोंमें जाने जानेसे अन्य गुणस्थानोंका माग
देखा है ऐसे मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि देवोंका अन्य गुणस्थानको जाकर भक्ति
स्वल्पकालसे प्रतिनिवृत्त हाकर आये हुए जीवोंने अन्तमुद्दुत्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है।

उक्त मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि देवोंका उन्कृष्ट अन्तर कुछ कम
इकतीस सागरोपमकालप्रमाण है ॥ ८६ ॥

इतमेंसे पहले मिथ्यादृष्टि देवका अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृति
योंके मत्तवाल एक त्र्यङ्गी साधु उपरिम प्रवेयनोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंमें
पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विमुक्त हो (३) वेदसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । इकतीस
सागरोपमकाल सम्यक्त्वसे साथ विनाकर आयुके अन्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । इस
प्रकारसे अन्तर लघु हो (४) । पश्चात् यहाँ न्युत हो मजुप्प हुआ । इस प्रकार चार
अन्तमुद्दुत्तोंसे कम इकतीस सागरोपमकाल मिथ्यादृष्टि देवका उन्कृष्ट अन्तर होता है ।

अर असयतसम्यग्दृष्टि देवका अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंके
सत्तवाल कोई एक द्रव्यङ्गी साधु उपरिम प्रवेयनोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंमें
पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विमुक्त हो (३) वेदसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४) ।
पश्चात् मिथ्यात्वका जाकर अन्तरको प्राप्त हो इकतीस सागरोपम गहकर और आयुको
साधन, पुन सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तमुद्दुत्त हुआ (५) । ऐसे पांच
अन्तमुद्दुत्तोंसे कम इकतीस सागरोपमकाल असयतसम्यग्दृष्टि देवका अन्तर होता है ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ८७ ॥

कुदो ? दोण्ह पि मातररासीण णिरउसेसेण अण्णागुणं गदाणं एगसमयंतरुलंभा ।

उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो ॥ ८८ ॥

कुदो ? एदामिं दोण्ह रामीण मातराण णिरउसेसेण अण्णागुणं गदाण उक्कस्सेण
पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागमेत्ते अंतरं पडि पिरोहाभावा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो,
अतोमुहुत्तं ॥ ८९ ॥

सासणसम्मादिट्ठिस्स पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो अतर, सम्मामिच्छादिट्ठिस्स
अतोमुहुत्त । सेस सुगम, नहुसो परुषिदत्तादो ।

सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि देवोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय है ॥ ८७ ॥

क्योंकि, इन दोनों ही सान्तर राशियोंका निरवशेषरूपसे अन्य गुणस्थानको
गये हुए जीवोंके एक समयप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमका असरयातवा भाग है ॥ ८८ ॥

क्योंकि, इन दोनों सान्तर राशियोंके सामस्यरूपसे अन्य गुणस्थानको चले
जानेपर उत्कर्षसे पल्योपमके असख्यातवें भागमात्र कालमें अन्तरके प्रति कोई विरोध
नहीं है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्रमशः पल्योपमका अस-
रयातवा भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ८९ ॥

सासादनसम्यग्दृष्टि देवका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण है
और सम्यग्मिथ्यादृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । दोष सूत्रार्थ सुगम है, क्योंकि,
पहले बहुतवार प्ररुषण किया जा चुका है ।

१ सासादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टयोनानाजीवापेक्षया सामान्यत्वं । स ति

२ पञ्चजीव प्रति जघन्य पल्योपमाणयेयमाणाऽन्तर्मुहूर्तम् । स नि १, ८

एगमजन्मममादिद्विम्भ वि । णवरि पचहि अतोमुहुत्तेहि उणउक्कस्मद्विदीओ
अंतर होदि ।

सासणसम्मादिद्वि-सम्माभिच्छादिद्वीणं सत्थाणोधं ॥ ९४ ॥

हुदो ? णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमओ, उक्कस्मेण पलिदोवमस्स अं
खेज्जन्निभागो, एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स अमरोज्जदिभागो, अतोमुहुत्त,
उक्कस्मेण वेदि ममएहि छहि अतोमुहुत्तेहि उणाओ उक्कस्मद्विदीओ अतरमिच्चेणहि
भेदाभावा । णवरि सग सगुक्कस्मद्विदीओ देसुणाओ उक्कस्संतगमिदि एत्थ वत्तच्च,
सत्थाणोधणहाणुयत्तीदो ।

आणद जाव णवगेवज्जविमाणवासियदेवेषु मिच्छादिद्वि-असंजद
सम्मादिद्वीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि
अतर, णिरतर ॥ ९५ ॥

सुगममेदं सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ॥ ९६ ॥

इसा प्रकारसे असयतसम्यग्दृष्टि देवोंका भी अंतर जानना चाहिए । विशेष
घात यह है कि उनसे पांच अन्तमुहूर्तोंसे कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण अन्तर होता है ।

उक्त स्वर्गोंके सामादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि देवोंका अन्तर स्वस्थान
ओषके समान है ॥ ९४ ॥

क्योंकि, जाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय, उत्कर्षसे पल्योपमका
असत्ख्यातवा भाग अन्तर है एक जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे पल्योपमका असत्ख्यातवा
भाग और अतमुहूर्त अंतर है, उत्कर्षसे दो समय और छह अन्तमुहूर्तोंसे कम अपनी उत्कृष्ट
स्थितिप्रमाण अन्तर है, इत्यादि रूपसे ओषके अंतरस इनके अन्तरमें भेदका अभाव
है । विशेष घात यह है कि अपनी अपनी कुछ कम उत्कृष्ट स्थितिया ही यहाँ पर उत्कृष्ट
अन्तर है ऐसा कहना चाहिए; क्योंकि, अन्यथा सूक्ष्म कहा गया स्वस्थान ओष
अंतर यत्र नहीं सकता ।

आनतकल्पमे लेसर नवप्रवेयकविमाननामी देवोंमें मिथ्यादृष्टि और असयत-
सम्यग्दृष्टियोंका अन्तर स्थाने माल होता है ? अपेक्षा अन्तर नहीं
निरन्तर है ॥ ९५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवोंकी

कुदो ? तेरसभुगणद्विदमिच्छादिद्वि-सम्मादिद्वीणं दिद्वमग्गाणमण्णगुण गतूण लहु-
मागदाणमतोमुहुत्तरुत्तलभा ।

उक्कस्सेण वीसं वावीस तेवीसं चउवीसं पणवीसं छवीसं सत्ता-
वीसं अट्टावीसं ऊणत्तीस तीस एकक्कीसं सागरोवमाणि देसूणाणि
॥ ९७ ॥

मिच्छादिद्विस्स उच्चदे- एकको दव्वलिगी मणुसो अप्पिददेवेसु उअण्णो । उहि
पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) त्रिस्मतो (२) त्रिसुद्धो (३) वेदगसम्मत्त पडिअग्जिय अतरिदो ।
अप्पप्पणो उक्कस्साउट्टिदीओ अणुपालिय अअमाणे मिच्छत्त गदो (४) । चदुहि अतो-
मुहुत्तेहि उणाओ अप्पप्पणो उक्कस्साउट्टिदीओ मिच्छादिद्विस्स उक्कस्सतर होदि ।

असजदसम्मादिद्विस्स उच्चदे- एवो दव्वलिगी वदुक्कस्साउओ अप्पिददेवेसु
उअण्णो । उहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) त्रिस्मतो (२) त्रिसुद्धो (३) वेदग-
सम्मत्त पडिअणो (४) मिच्छत्त गतूणतरिदो । अप्पप्पणो उक्कस्साउट्टिदियमणु-
पालिय सम्मत्त गतूण (५) मदो मणुसो जादो । पचहि अतोमुहुत्तेहि उणउक्कस्स-
द्विदिमेत्त लद्धमंतर ।

पर्योकि, आनत प्राणत आदि तेरह भुजनोंमें रहनेवाले दृष्टमार्गी मिथ्यादृष्टि
और असयतसम्यग्दृष्टि देवोंका अथ गुणस्थानको जाकर पुन शीघ्रतासे आनेवाले उन
जीवोंके अतर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उक्त तेरह भुजनोंमें रहनेवाले देवोंका उत्कृष्ट अन्तर क्रमशः देशोन वीस, वाईम
तेईस, चौबीस, पचीस, छवीस, सत्ताईस, अट्टाईस, उनतीस, तीस और इकतीस
सागरोपम कालप्रमाण होता है ॥ ९७ ॥

इनमेंसे पहले मिथ्यादृष्टि देवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- एक द्रव्यलिगी मनुष्य
विवक्षित देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध
हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होकर अंतरको प्राप्त हुआ और अपनी अपनी उत्कृष्ट
आयुस्थितिको अनुपालन कर जीवनके अन्तमें मिथ्यात्वको गया (४) । इन चार
अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण उक्त मिथ्यादृष्टि देवोंका उत्कृष्ट
अन्तर होता है ।

अथ असयतसम्यग्दृष्टि देवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- बाधी है देवोंमें उत्कृष्ट
आयुको जिसने, ऐसा एक द्रव्यलिगी साधु विवक्षित देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्ति-
योंमें पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४) ।
पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हुआ । अपनी अपनी उत्कृष्ट आयुस्थितिको
अनुपालन कर सम्यक्त्वको जाकर (५) मरा और मनुष्य हुआ । इस प्रकार इन पांच
अतर्मुहूर्तोंसे कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण अन्तर लघ हुआ ।

एवमसंजडमस्मादिदृष्टिस्मि । गणरि पचहि अतोमुहुत्तेहि ऊणउक्कस्मद्वितीआ अतर होदि ।

सासणसम्मादिद्वि-सम्मा मिच्छादिद्विणीणं सत्थाणोघ ॥ ९४ ॥

कुदो ? पाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगममओ, उक्कम्मेण पलिदोपमस्म अस येज्जदिभागो, एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलिदोपमस्म अमरेज्जदिभागो, अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण वेहि ममएहि ठहि अतोमुहुत्तेहि ऊणाओ उक्कस्मद्वितीओ अतरमिच्छेएहि भेदाभावा । गणरि मग मगुक्कस्मद्वितीओ देसणाओ उक्कस्संतगमिदि एत्थ वचच्च, सत्थाणोघण्णहाणुमत्तीदो ।

आणद जाव णवगेवज्जविमाणवासियेदेवेसु मिच्छादिद्वि-असजड सम्मादिद्विणीणमंतरं केवचिर कालादो होदि, पाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ॥ ९५ ॥

सुगममेद सुत्तं ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ९६ ॥

इसी प्रकारसे असयतमभ्यर्हण्टि देवोंका भी अन्तर जानना चाहिए । विशेष यात यह है कि उनके पाच अंतर्मुहूर्तोंसे कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण अन्तर होता है ।

उक्त संज्ञाके सामादनमभ्यर्हण्टि और सम्यग्मिच्छाद्विष्टि देवोंका अन्तर स्वस्थान ओषके समान है ॥ ९४ ॥

फ्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एउ समय, उत्कर्षसे पल्योपमका असल्यातवा भाग अतर है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे पल्योपमका असल्यातवा भाग और अंतर्मुहूर्त अन्तर है, उत्कृष्टसे दो समय और छह अंतर्मुहूर्तोंसे कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण अतर है, इत्यादि रूपसे जोषके अतरसे इनके अन्तरमें भेदका अभाव है । विशेष यात यह है कि अपनी अपनी कुछ कम उत्कृष्ट स्थितिया ही यहा पर उत्कृष्ट अन्तर है घेसा कहना चाहिए, फ्योंकि, अन्यत्र स्वयं कहा गया स्वस्थान ओष अतर वन नहीं सक्ता ।

आनतररूपमें लेकर नानाभेदविमानवासी देवोंमें मिच्छाद्विष्टि और असयत सम्यग्दृष्टियोंका अन्तर कितन काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ९५ ॥

यह मूल सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ९६ ॥

कुटो ? तेरसभुण्णद्धिदमिच्छादिद्धि-सम्मादिद्धीणं दिद्धमग्गाणमण्णुण गतूण लहु-
मागदाणमतोमुहुत्तंरुणलभा ।

उक्कस्सेण वीसं वावीस तेवीसं चउवीसं पणवीसं छव्वीसं सत्ता-
वीसं अट्ठावीसं ऊणत्तीस तीस एक्कत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि
॥ ९७ ॥

मिच्छादिद्धिस्म उच्यते- एकको द्रव्यलिङ्गी मणुसो अप्पिददेनेसु उण्णणो । छहि
पज्जत्तीहि पज्जत्तपदो (१) त्रिस्मतो (२) त्रिसुद्धो (३) वेदगसम्मत्त पडिण्णो अतरिदो ।
अप्पप्पणो उक्कस्माउद्धिदीओ जणुपालिय अण्णणे मिच्छत्त गदो (४) । चदुहि अतो-
मुहुत्तेहि ऊणाओ अप्पप्पणो उक्कस्माद्धिदीओ मिच्छादिद्धिस्म उक्कस्सतर होदि ।

असज्जदमम्मादिद्धिस्म उच्यते- एको द्रव्यलिङ्गी उक्कस्माउओ अप्पिददेनेसु
उण्णणो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तपदो (१) त्रिस्मतो (२) त्रिसुद्धो (३) वेदग-
सम्मत्त पडिण्णो (४) मिच्छत्त गतूणतरिदो । अप्पप्पणो उक्कस्माउद्धिदियमणु-
पालिय सम्मत्त गतूण (५) मदो मणुसो जादो । पंचहि अतोमुहुत्तेहि ऊणउक्कस्म-
द्धिदिमेत्त लद्धमतर ।

क्योंकि, आनत प्राणत आदि तरह भुण्णोंमें रहनेवाले दृष्टमार्गी मिथ्यादृष्टि
आर असयतसम्यग्दृष्टि देवोंका अथ गुणस्थानको जाकर पुन शीघ्रतासे आनेवाले उन
जीवोंके अतर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उक्त तरह भुण्णोंमें रहनेवाले देवोंका उत्कृष्ट अन्तर 'क्रमशः' देशोन वीम, वाईम
तेईम, चौवीम, पचीम, छव्वीम, मचाईम, अट्ठाईम, उनतीम, तीस और इक्कीम
सागरोपम कालप्रमाण होता है ॥ ९७ ॥

इनमेंसे पहले मिथ्यादृष्टि देवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- एक द्रव्यलिङ्गी मनुष्य
विवक्षित देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध
हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ और अपनी अपनी उत्कृष्ट
आयुस्थितिको अनुपालन कर जीवनेके अन्तमें मिथ्यात्वको गया (४) । इन चार
अन्तमुहूर्तोंसे कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण उक्त मिथ्यादृष्टि देवोंका उत्कृष्ट
अन्तर होता है ।

अब असयतसम्यग्दृष्टि देवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- बाधी है देवोंमें उत्कृष्ट
आयुको जिसने, ऐसा एक द्रव्यलिङ्गी साधु विवक्षित देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्ति-
योंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४) ।
यथात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हुआ । अपनी अपनी उत्कृष्ट आयुस्थितिको
अनुपालन कर सम्यक्त्वको जाकर (५) मरा और मनुष्य हुआ । इस प्रकार इन पांच
अतर्मुहूर्तोंसे कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण अन्तर लब्ध हुआ ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्माभिच्छादिट्ठिणं सत्थाणमोघं ॥ ९८ ॥

कुदो ? णाणजीव पडुच्च जहण्णेण एगममओ, उक्कस्मेण पलिदोमस्स असयेज्जदिभागो, एगजीव पडुच्च जहण्णेण (पलिदोमस्स) अमरोज्जदिभागो, अतो मुहुत्त, उक्कस्मेण वेहि समण्हि अतोमुट्टत्तेहि उणाओ अप्पप्पणो उक्कस्माट्ठिदीजो अतर होदि, एदेहि भेदाभाजा ।

अणुदिसादि जाव सच्चद्विसिद्धिविमाणवासियदेवेषु असंजद सम्मादिट्ठिणमंतर केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च (णत्थि) अंतरं, णिरंतरं ॥ ९९ ॥

सुगममेद सुत्तं ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरंतरं ॥ १०० ॥

एगगुणत्तादो अणुगुणगमणाभाजा ।

एव गदिमगणा समत्ता ।

उक्त आनतादि तेरह भुवनशासी मासादनसम्यग्दष्टि और सम्यग्मिध्यादष्टि देवोंका अन्तर स्वस्थान ओघके समान है ॥ ९८ ॥

क्योंकि, नाना जीवोंका अपेक्षा जघन्यसे एव समय, उत्कृष्टसे पद्योपमके अस ब्याप्तवै भागप्रमाण अन्तर है, एक जावकी अपेक्षा जघन्यसे पद्योपमका असब्यातवा भाग और अतमुहूर्त है, उत्कृष्टसे दो समय और अतमुहूर्त कम अपनी अपना उन्मृष्ट स्थितिप्रमाण अन्तर होता है, इस प्रकार ओघके साथ इनका कोई भेद नहीं है ।

अनुदिसादी आदि लेजर सर्गार्थमिद्धि विमानशासी देवोंमें असयत्तसम्यग्दष्टि देवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ९९ ॥

यह सत्य सुगम है ।

उक्त देवोंमें एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १०० ॥

उक्त अनुदिसा आदि देवोंमें एव ही असयत्तगुणस्थान होनेसे अन्य गुणस्थानमें जानेका अभाव है ।

इस प्रकार गतिमार्गणा समाप्त करें ।

इंदियाणुवादेण एइंदियाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणा-
जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १०१ ॥

सुगमेद सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ १०२ ॥ “

कुदो ? एइदियस्स तसकाइयापज्जत्तएसु उप्पज्जिय सव्वलहुएण कालेण पुणो
एइदियमागदस्स खुद्दाभवग्गहणमेत्ततरुत्तलभा ।

उक्कस्सेण वे सागरोवमसहस्साणि पुव्वकोडिपुधत्तेणग्गभिहि-
याणि ॥ १०३ ॥

तं जहा— एइदिओ तमकाइएसु उव्वज्जिय अतरिदो पुव्वकोडीपुधत्तेणग्गभिहि-
वेमागरोवमसहस्समेत्त तसद्धिदिं परिभमिय एइंदिय गदो । लद्धमेइदियाणमुक्कस्सतर तस-
द्धिदिमेत्त । देवमिच्छादिट्ठिमेइदिएसु पवोसिय असंखेज्जपोग्गलपरियट्ठी तत्थ ममाडिभ
पच्छा देवेसुप्पाइय देवाणमतर किण्ण परुत्तिद ? ण, णिरुद्धदेवगदिमग्गणाए अभात्तप्पमंगा ।

इन्द्रियमार्गणाके अनुवादमे एकेन्द्रियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १०१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

एक जीवकी अपेक्षा एकेन्द्रियोंका जघन्य अन्तर क्षुद्रभयग्रहणप्रमाण है ॥ १०२ ॥

फ्योंकि, एकेन्द्रियके त्रसकायिक अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न होकर सर्वलघु कालसे
पुन एकेन्द्रियपर्यायको प्राप्त हुए जीवके क्षुद्रभयग्रहणप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

एकेन्द्रियोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अतर पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक दो
हजार सागरोपम है ॥ १०३ ॥

जैसे— कोई एक एकेन्द्रिय जीव त्रसकायियोंमें उत्पन्न होकर अन्तरको प्राप्त हुआ
और पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक दो हजार सागरोपमप्रमित त्रसकाय स्थितिप्रमाण परि-
भ्रमण कर पुन एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार एकेन्द्रियोंका उत्कृष्ट अन्तर त्रस-
स्थितिप्रमाण लघु हुआ ।

शुका—देव मिथ्यादृष्टियोंको एकेन्द्रियोंमें प्रवेश करा, असख्यात पुद्गलपरिवर्तन
उनमें परिभ्रमण कराके पीछे देवोंमें उत्पन्न कराकर देवोंका अन्तर फ्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, फ्योंकि, वेसा करनेपर प्ररूपणा की जानेवाली देवगति

१ इन्द्रियावुत्तदन एवेदियाणां नानाजावापेक्षया नास्त्यन्तरम् । स ति १, ८

२ एगजीवपेक्षया जघन्येन क्षुद्रभयग्रहणम् । स ति १, ८

३ उत्कृष्टेण द्वे सागरोपमसहसे पूर्वकोटीपृथक्त्वैरन्यधिके । स ति १, ८

सासणसम्मादिद्वि सम्मामिच्छादिद्वीण सत्थाणमोघ ॥ ९८ ॥

बुद्धो ? णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगममओ, उक्कस्सेण पल्लोपमस्स असखेज्जदिभागो, एगजीवं पडुच्च जहण्णेण (पल्लोपमस्स) असखेज्जदिभागो, अतो-
मुदुच्च, उक्कस्सेण नेहि समएहि अतोमुदुच्चेहि ऊणाओ जप्पप्पणो उक्कस्साद्विदीशो
अतर होदि, एदेहि भेदाभावा ।

अणुदिसादि जाव सब्वद्वसिद्विविमाणवासियदेवेषु असंजद
सम्मादिद्वीणमतर केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च (णत्थि)
अंतरं, णिरतर ॥ ९९ ॥

सुगममेद सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ॥ १०० ॥

एगगुणत्तादो अणुगुणगमणाभावा ।

एव गदिमग्गणा समत्ता ।

उक्त आनतादि तेरह भुवनवासी मासादनसम्यग्दृष्टि जौर सम्यग्मिथ्यादृष्टि
देवोंका अन्तर स्वस्थान ओघके समान है ॥ ९८ ॥

क्योंकि, नाना जीवोंका अपेक्षा जघयसे एव समय, उत्कर्षसे पल्लोपमके अस-
ग्यातव्ये भागप्रमाण अन्तर है, एक जायकी अपेक्षा जघयसे पल्लोपमका असग्यातका
भाग और अन्तमुद्धत है, उत्कर्षसे दो समय और अन्तमुद्धत कम अपनी अपना उत्कर्ष
स्थितिप्रमाण अन्तर होता है इस प्रकार ओघके साथ इनका कोई भेद नहीं है ।

अनुदिशने जादि लेकर सर्वावसिद्धि निमाननामी देवोंमें असयतमस्यग्दृष्टि
देवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है,
निगन्तर है ॥ ९९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त देवोंमें एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निगन्तर है ॥ १०० ॥

उक्त अनुदिश आदि कथोंमें एक ही असयतगुणस्थान होनेसे अथ गुणस्थानमें
जानेका अभाव है ।

इस प्रकार गतिमागणा समाप्त हुई ।

त जहा- णत्त हि निगल्लिदिया एडंदिद्याएइंदिएसु उप्पज्जिय आमलियाए असंखे-
ज्जदिभागमेत्तपोग्गलपरियट्ठे परियट्ठिय षुणो षत्तसु निगल्लिदिएसु उप्पण्णा । रुद्धमंतर
असखेज्जपोग्गलपरियट्ठमेत्त ।

पचिदिय-पंचिदियपञ्जत्तएसु मिच्छादिट्ठी ओघं ॥ ११४ ॥

कुदो ? णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतर, एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त,
उक्कस्सेण वे छात्तड्डिसागरोत्तमाणि जतोमुहुत्तेण उणाणि इच्चेएण भेदाभावा ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ११५ ॥

दोगुणट्ठाणजीवसु सव्वेसु अण्णगुण गदेसु दोण्ह गुणट्ठाणाणं एगसमयविरहु-
वलभा ।

उक्कस्सेण पालिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ॥ ११६ ॥

कुदो ? सातररासित्तादो । उहुगमतर किण्ण होदि ? सभावा ।

जैसे- नवों प्रकारके विकलेन्द्रिय जीव, एकेन्द्रिय या अनेकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर
आवलीके असख्यातवें भागमान पुद्गलपरिवर्तन कालतक परिभ्रमण कर पुन नवों
प्रकारके विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुए । इस प्रकारसे असख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण उत्कृष्ट
अन्तर प्राप्त हुआ ।

पचेन्द्रिय और पचेन्द्रियपर्याप्तकोंमें मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर ओघके समान
है ॥ ११४ ॥

फ्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे
अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त कम दो दृष्ट्यासठ सागरोपमकाल अन्तर है, इस
प्रकार ओघकी अपेक्षा इनमें कोई भेद नहीं है ।

उक्त दोनों प्रकारके पचेन्द्रिय सासादनमभ्यगदृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका
अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर
है ॥ ११५ ॥

उक्त दोनों गुणस्थानोंके सभी जीवोंके अन्य गुणस्थानको चले जाने पर दोनों
गुणस्थानोंका एक समय विरह पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्लोपमके जसरयातवें भागप्रमाण है ॥ ११६ ॥

फ्योंकि, ये दोनों सान्तर राशिया ह ।

शका—इनका पल्लोपमके असख्यातवें भागसे अधिक अतर फ्यों नहीं होता ?

समाधान—स्वभावसे ही अधिक अन्तर नहीं होता है ।

१ पचेन्द्रियेयु मिथ्यादृष्टे सामान्यवत् । स सि १, ८

२ सामादनमभ्यगदृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टपोनानाजीवापेक्षया सामा १वत् । स सि १, ८,

तं जहा-एकको मुहुमेइदिओ पज्जचो अपज्जचो च वादेरेइदिएसु उअण्णो । तसकाइएसु वादेरेइदिएसु च असखेज्जासखेज्जा ओमपिणि-उस्सपिणीपमाणमगुलस असखेज्जदिभाग परिभमिय पुणो तिसु मुहुमेइदिण्णसु आगतूण उअण्णो । लद्धमत वादेरेइदियतममाइयाणसुक्कस्सट्ठिदी ।

वीइदिय तीइदिय-चदुरिदिय-तस्सेव पज्जत्त अपज्जत्ताणमतारं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं ॥१११॥

सुगममेद सुत्त ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ११२ ॥

हुदो ? अणपिदअपज्जत्तएसु उप्पज्जिय सअत्थोमेण कालेण पुणो णसु णिग लिदिएसु आगतूण उप्पणस्स सुद्दाभवग्गहणमेत्तत्तत्तलमा ।

उक्कस्सेण अणतकालमसखेज्जपोग्गलपरियट्ठं ॥ ११३ ॥

जैसे- एक सूक्ष्म एकेन्द्रियपर्याप्तक, अथवा लब्धपर्याप्तक जीव वादर एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ। वह प्रसकारिकोंमें, और वादर एकेन्द्रियोंमें अगुलके असख्यातवें भाग असख्यातासख्यात उत्सपिणी और अउसपिणी कालप्रमाण परिभ्रमण कर पुन उक्त तीनों प्रकारके सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें आकर उत्पन्न हुआ। इस प्रकार वादर एकेन्द्रियों और प्रसकारिकोंकी उत्पत्ति स्थितिप्रमाण सूक्ष्मत्रिकका उत्कृष्ट अन्तर उपलब्ध हुआ।

द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और उन्हींके पर्याप्तक तथा लब्धपर्याप्तक जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निम्नतर है ॥ १११ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त द्वीन्द्रियादि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण है ॥ ११२ ॥

पर्योकि, अविचक्षित अणपर्याप्तकोंमें उत्पन्न होकर सर्वस्तोक कालसे पुन नौ प्रकारके विन्दुलेन्द्रियोंमें आकर उत्पन्न होनेवाले जीवके शुद्धभवग्रहणमात्र अन्तरकाल पाया जाता है ।

उन्हीं विन्दुलेन्द्रियोंका उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकालात्मक असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन है ॥ ११३ ॥

१ विन्दुलेन्द्रियाणां नानाजीवविषया नास्त्यन्तरम् । स सि १, ८

२ पृष्ठजीवविषया जघ येन क्षुद्रभवग्रहणम् । स सि १, ८

३ उत्कृष्टमानत कालो-मस्येया पुद्गलपरिवर्तना । स सि १, ८

मम्माभिच्छादिद्विस्स उच्चदे- एकको जीरो एइदियद्विदिमच्छिदो असण्णि-
पचिदिएसु उअण्णो । पचहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) विसुद्धो (३)
अण्णसिय वाणंतेरेसु आउअ वविय (४) विस्समिय (५) देसेसु उअण्णो । छहि
पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (६) विस्सतो (७) विसुद्धो (८) उअसममम्मत्त पडिअण्णो
(९) सम्माभिच्छत्त गदो (१०) । मिच्छत्त गतूणतरिय सगद्विदिं परिभमिय अंतोमुहुत्तान-
सेसे सम्माभिच्छत्त गदो (११) । लद्धमतर । मिच्छत्तं गंतूण (१२) एइंदिएसु उअ-
ण्णो । चारमेहि अंतोमुहुत्तेहि ऊणसगद्विदी सम्माभिच्छत्तुकरुस्सतर ।

‘जहा उद्देशो तथा णिद्देशो’ ति णायादो पचिदियद्विदी पुव्वकोडिपुधत्तेणव्वाहिय-
सागरोपममहस्समेत्ता, पज्जत्ताण सागरोपमसदपुधत्तमेत्ता ति उत्तव्वं ।

असंजदसम्मादिद्विष्णुडि जाव अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं
कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ११९ ॥
सुगममेद सुत्त ।

अत्र सम्यग्मिथ्यादृष्टि पचेन्द्रिय जीवका उत्पद्यन्तः अन्तरं कर्तव्यं- एकेन्द्रियकी
स्थितिमें स्थित एक जीव असङ्गी पचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ । मनके बिना शेष पाचों
पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) भवनवासी या चान-
व्यतरोंमें आयुको वाधकर (४) विश्राम ले (५) देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे
पर्याप्त हो (६) विश्राम ले (७) विशुद्ध हो (८) उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हो (९)
सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (१०) । पुन मिथ्यात्वको जाकर और अन्तरको प्राप्त हो
अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण कर आयुके अन्तर्मुहूर्तकाल अद्योप रह जाने पर सम्य-
ग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (११) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पश्चात् मिथ्यात्वको
जाकर (१२) एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ । ऐसे इन गारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम स्वस्थिति
सम्यग्मिथ्यात्वना उत्पद्यन्तः अन्तरं हे ।

‘जैसा उद्देश होता है, उसीके अनुसार निर्देश होता है,’ इस न्यायसे पचेन्द्रिय
सामान्यकी स्थिति पूर्वकोटीपृथक्त्वसे अधिक एक हजार सागरोपमप्रमाण होती है,
और पचेन्द्रिय पर्याप्तकोंकी स्थिति शतपृथक्त्वमागरोपमप्रमाण होती है, ऐसा कहना
चाहिए ।

असयतसम्यग्दृष्टिमे लेकर अप्रमत्तमयत गुणस्थान तरु प्रत्येक गुणस्थानर्ती
जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर
है ॥ ११९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अतोसुहुत्तं ॥ ११७ ॥

सुगममेदं सुत्तं, बहुसो उत्तत्तादो ।

उक्कस्सेण सागरोवमसहस्साणि पुव्वकोडिपुधत्तेणव्भहियाणि
सागरोवमसदपुधत्तं ॥ ११८ ॥

मामणस्म तां उच्चदे- एकको अणत्तकालममरोज्जलोगमेत्तं वा एइदिएसु द्विणे
असण्णिपंचिदिएसु आगतूण उग्रण्णो । पंचहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२)
मिसुदो (३) भरणरामिय-वाणपंतरेसु आउअ बधिय (४) विस्मतो (५) कमेण काल
रुग्गिय भरणरामिय-वाणपंतरदेसेसुप्पण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (६) विस्मतो (७)
मिसुदो (८) उग्रममम्मत्त पडिण्णो (९) सामणं गदो । आदी दिट्ठा । मिच्छत्त
गतूणंतरिय सगट्ठिदिं परियट्ठियाग्रमाणे सासणं गदो । लद्धमत्तर । तदो धारयाओग्गमाव
लियाए असरोज्जदिभागमिच्छिय काल करिय धारकाएसु उग्रण्णो जागलियाए असत्ते
ज्जदिभागेण णरहि अतोसुहुत्तेहि ऊग्गिया मगट्ठिदी अतर ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्रमशः पल्योपमके अस्-
रयातवें भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ११७ ॥

यह सूत्र सुगम है, क्योंकि, बहुत बार कहा गया है ।

उक्त दोनों गुणस्थानरती पचेन्द्रियाका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटीपृथक्त्वमे अधिक
एक हजार सागरोपम काल है, तथा पचेन्द्रिय पर्याप्तकोंका उत्कृष्ट अन्तर सागरोपम
शतपृथक्त्व है ॥ ११८ ॥

इनमेंसे पहले सासादनसम्यग्दृष्टिमा अंतर कहते हैं- अनन्तकाल या असंख्यात
लोकमात्र काल तक एकीट्रयोंमें रहा हुआ कोई एक जीव असंखी पचेन्द्रियोंमें आवर
उत्पन्न हुआ । पाचों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३)
भरणरामी या वानयतवोंमें आयुको राधकर (४) विश्राम ले (५) प्रमसे मरण कर
भरणरामी, या ज्ञानयन्तरवैदोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (६)
यिग्राम ले (७) विशुद्ध हो (८) उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (९) । पुन सासादन
गुणस्थानको प्राप्त हुआ । इस प्रकार इस गुणस्थानका प्रारम्भ दृष्ट हुआ । पश्चात् मिथ्या
त्यको ज्ञानर अंतरको प्राप्त हो अपनी स्थितिप्रमाण परिवर्तित होकर आयुके अन्तमें
सासादन गुणस्थानको गया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पश्चात् स्यावरकायके
योग्य आगलके असत्यानयें भरणप्रमाण काल तक उनमें रह कर, मरण करके स्यावर
कायियोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार आवलीके असख्यातवें भाग और नौ अतर्मुहूर्तोंसे
कम अपनी स्थिति ही इनमा उत्कृष्ट अंतर है ।

१ एकजीव प्रति जघनेन पल्योपमात्तस्येयमागो-तमुहूर्तं । स ति १, ८

२ उक्तेण मापरोपमस्य पूर्वकोटीपृथक्त्वस्यभिन्म् । स ति १, ८

अणिया सगडिदी लद्दमुम्फुस्सतर । मागरोपममदपुवत्तं देसूणमिदि वत्तव्वं ? ण, पंचि-
दियपज्जत्तडिदीए देसूणाए णि मागरोपममदपुवत्तत्तादो । तं पि ऋध णव्वदे ? सुत्ते
देसूणय्यणाभारादो । मण्णिमम्मुच्छिमपंचिदिणमुप्पाइय सम्मत्त गेण्हारिय मिच्छत्तेण
क्किण्णातरादिदो ? ण, तत्थ पढमम्मत्तगहणाभागा । वेदगसम्मत्त क्किण्ण पडिवज्जादिदो ?
ण, एडिणसु दीहद्दमगडिदस्स उव्वेच्छिदसम्मत्त सम्मा मिच्छत्तस्स तदुप्पायणे संभवामागा ।

संजदाभंजदस्म बुच्चदे— एकको एडंदिपडिदिमच्छिदो सण्णिपंचिदियपज्जत्तएसु
उपण्णो तिण्णिपक्ख-तिण्णिदिपस-अंतोमुहुत्तेहि (१) पढमम्मत्त संजमासजमं च
जुगं पडिण्णो (२) छागलियाओ पढमम्मत्तद्वाए अत्थि ति आसाणं गतूणंतदिदो ।
मिच्छत्तं गतूण सगडिदिं परिभमिय अपण्णित्थे पंचिदियभने सम्मत्त धेत्तूण दसणमोहणीय

उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

शंका—पचेन्द्रिय पर्याप्तकोंका जो सागरोपमशतपृथक्त्वप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर
यताया है, उसमें 'देशोन' ऐसा पद और कहना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, पचेन्द्रिय पर्याप्तकी देशोन स्थिति भी सागरोपम
शतपृथक्त्वप्रमाण ही होती है ।

शंका—यह भी कैसे जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि, सूत्रमें 'देशोन' इस वचनका अभाव है ।

शंका—सही सम्मूच्छिम पचेन्द्रियोंमें उत्पन्न कराकर और सम्यक्त्वको ग्रहण
कराकर मिथ्यात्वके द्वारा अन्तरको प्राप्त क्यों नहीं कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सही सम्मूच्छिम पचेन्द्रियोंमें प्रथमोपशमसम्यक्त्वके
ग्रहण करनेका अभाव है ।

शंका—वेदकसम्यक्त्वको क्यों नहीं प्राप्त कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, पचेन्द्रियोंमें दीर्घ काल तक रहनेवाले और उठेलना
की है सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिनी जिसने, ऐसे जीवके वेदकसम्यक्त्वका
उत्पन्न कराना समय नहीं है ।

सयतामयतना उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं— एकेन्द्रियकी स्थितिको प्राप्त एक
जीव, सही पचेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ । तीन पक्ष, तीन दिवस और अन्त
सुहंतसे (१) प्रथमोपशमसम्यक्त्वको तथा सयमासयमको युगपत् प्राप्त हुआ (२) । प्रथ
मापशमसम्यक्त्वके कालमें यह आवलिया अपशेष रहने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त
कर अन्तरको प्राप्त हुआ । मिथ्यात्वको जाकर अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण करके
अन्तिम पचेन्द्रिय भ्रम सम्यक्त्वको ग्रहण कर दर्शनमोहनीयका क्षय कर और ससारके

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ १२० ॥

कुदो ? एदेसिमण्णगुण गतूण सच्चदहरेण कालेण पडिणियत्तिय अप्पप्पणा गुण
सागडाणमेतोमुहुत्ततरुलभा ।

उक्कस्सेण सागरोवमसहस्साणि पुव्वकोडिपुधत्तेणअभियाणि,
सागरोवमसदपुधत्तं ॥ १२१ ॥

असजदसम्मदिद्विस्म उच्चदे- एको एइदियद्विदिमच्छिदो असण्णिपचिदियसम्भु
च्छिमपज्जत्तएसु उअण्णो । पचहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) विसुद्धो
(३) भवणरासिय-चाणनेतरदेसेसु आउअ वधिय (४) विस्समिय (५) मदो देवेसु
उअण्णो । छहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (६) विस्सतो (७) विसुद्धो (८) उवसममम्मत्त
पडिवण्णो (९) । उअसमसम्मत्तद्वाए छाअलियाओ अत्थि त्ति आसाण गदो अतरिदो
मिच्छत्त गतूण सगद्धिदि परिममिय अते उअसमसम्मत्त पडिअण्णो (१०) । पुणो मासण गणे
आअलियाए असरोज्जदिभाग कालमच्छिदूण थाअरकाएसु उअण्णो । दसहि अतोमुहुत्तेहि

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १२० ॥

पर्योक्ति, इन असयतादि चार गुणस्थानवर्ती जीवोंका अन्य गुणस्थानको जाकर
सयलघु कालसे लौटकर अपने अपने गुणस्थानको आये हुआके अन्तर्मुहूर्तमात्र अन्तर
पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटीपृथक्तरसे अधिक सहस्र सागरोपम तथा
शतपृथक्त्र सागरोपम है ॥ १२१ ॥

इनमेंसे पहले असयतसम्पददृष्टिका अन्तर कहते हैं- एकेन्द्रिय भवस्थितिको
प्राप्त कोर एक जीव, असयती पचेन्द्रिय सम्मूर्च्छिम पर्याप्तनोंमें उत्पन्न हुआ । पावों पर्या
प्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) भजनवासी या चानव्य तर देवोंमें
आयुको वापकर (४) विश्राम ले (५) मरा और देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे
पराप्त हो (६) विश्राम ले (७) विशुद्ध हो (८) उपशमसम्पदको प्राप्त हुआ (९) ।
उपशमसम्पदके कालमें छह आर्वलिया अवशेष रहने पर सासादन गुणस्थानको गया
और अन्तरको प्राप्त हुआ । परिले मिथ्यात्वको जाकर अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तमें
उपशमसम्पदको प्राप्त हुआ (१०) । पुन सासादन गुणस्थानको गया और बहापर
आयुके असयतानके भागप्रमाण काल तक रहकर स्थावरकायिनमें उत्पन्न हुआ । इस
प्रकार इन दस अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी स्थितिप्रमाणकाल उक्त असयतसम्पददृष्टिका

१ एगजीवं प्रति जघयेनात्तर्मुहूर्त । स वि १, ८

२ उत्कृष्टेण सागरोपमसहस्र पूर्वकोटीपृथक्त्वैरभ्याधिकम् । स वि १, ८.

अप्पमत्तस्म उच्चदे- एको एडदियट्टिदिमच्छिडो मणुसेसु उग्रणो गन्मादिअट्ट-
वस्माणुगुरि उग्रमसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगं पडिण्णो । आदी दिट्ठा (१) । अत्त-
रिदो अपच्छिमे पंचिदियभं मणुस्सेसु उग्रणो । टंमणमोहणीय खयिय अतोमुट्टाग्रसे
ससोर मिसुद्धो अप्पमत्तो जादो (२) । तदो पमत्तो (३) अप्पमत्तो (४) । उग्रि छ
अतोमुट्टा । एमट्टग्रस्मेहि दमहि अतोमुट्टेहि य ऊणिया पंचिदियट्टिटी उरुस्सतर ।

चटुण्हमुवसामगाणं गाणाजीवं पडि ओघं ॥ १२२ ॥

कुदो ? जहण्णेण एगममओ, उरुस्सेण तसपुधत्तमिन्चेएहि ओपादो भेदाभावा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुट्टं ॥ १२३ ॥

तिण्हमुग्रमामगाणगुरि चट्टिय हेट्ठा ओट्टिण्णे जहण्णमतर होदि । उग्रमत्तमायस्स
हेट्ठा ओदरिय पुणो मवजहण्णेण कालेण उग्रमत्तमायत्त पडिण्णे जहण्णमतर होदि ।

उक्कस्सेण सागरोवमसहस्साणि पुव्वकोट्टिपुधत्तेणवभहियाणि,
सागरोवमसदपुधत्तं ॥ १२४ ॥

अग्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते ह- एकेन्द्रियकी स्थितिम स्थित एक जीव
मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और गर्भादि जाठ वर्णमें ऊपर उपशामसम्यक्त्त तथा अग्रमत्तगुण-
स्थानको युगपत् प्राप्त हुआ । इस प्रकार इस गुणज्ञानका आरम्भ दिखाई दिया । पश्चात्
अंतरको प्राप्त हो अन्तिम पचेन्द्रिय भवमें मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । दशममोहनीयका
क्षय कर सन्तारके अन्तर्मुहूर्त अवशेष रहने पर त्रिशुद्ध हो अग्रमत्तसयत हुआ (२) । पश्चात्
प्रमत्तसयत (३) अग्रमत्तसयत (४) हुआ । इनमें ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त मिलाने पर आठ
वर्ष और दश अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पचेन्द्रियकी स्थिति अग्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर है ।

चारों उपशामकोंका अन्तर नाना जीवोंकी अपेक्षा जोघके समान है ॥ १२२ ॥

क्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा जगन्मत्ते एक समय और उत्कर्षसे वर्षपृथक्त्व,
इस प्रकार जोघसे इनमें कोई भेद नहीं है ।

चारों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १२३ ॥

अपूर्वकरणसयत आदि तीनों उपशामकोंका ऊपर चढकर नीचे उतरनेपर
जघन्य अन्तर होता है । किन्तु उपशान्तरूपायका नीचे उतरकर पुन सर्वजघन्य कालसे
उपशान्तरूपायको प्राप्त होनेपर जघन्य अन्तर होना है ।

चारों उपशामकोंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अविक्र सागरोपमसहस्र
और सागरोपमशतपृथक्त्व है ॥ १२४ ॥

१ चतुष्पुत्रपशमकां नानाजीवोपेक्षया मामापवत् । स वि १, ८

२ एगजीव प्रति जघयेनातर्मुहूर्त । स वि १, ८

३ उत्कर्षण सागरोपमसहस्र पूर्वकोटिपृथक्त्वस्यविक्र । स वि १, ८

स्वयं अतोमुहुत्तावसेमे मयारे मजमामजम च पट्टिण्णो (३) अप्पमत्तो (४)। पमत्तो (५) अप्पमत्तो (६)। उररि छ मुहुत्ता। तिण्णिपम्मेहि तिण्णिट्ठिण्णोत्तं हि यारमत्ता मुहुत्तेहि य ऊणिया मग्गिट्ठि लद्ध मज्जामत्तान्णमुक्कस्मत्तर। एद्धि एसु ण्णिण्ण उप्पात्ता। लद्धमत्तरं करिय उररि मिच्छण्णालादो मिच्छत्त गत्तूण एद्धि एसु आउत्त वपिय त्थुप्पज्जण्णालो मत्तेज्जगुणो त्ति एद्धि एसु ण उप्पात्तिदो। उररिमाणं पि एरयेण कारण वत्तच्च।

पमत्तस्म उच्यते— एकतो एद्धियट्ठिदिमत्तिट्ठो मणुसेसु उररण्णो। मग्गादिअद्ध वस्सेहि उरममम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगत्त पट्टिण्णो (१) पमत्तो जादो (२)। हेत्ता पट्टिण्णत्तरिणे सग्गिट्ठि परिममिय जपत्तिट्ठे भये मणुमो जादो। दसण्णमोहणीय स्वयं अतोमुहुत्तावसेमे मयारे अप्पमत्तो होदूण पमत्तो जादो (३)। लद्धमत्तर। भूओ अप्प मत्तो (४) उररि छ अतोमुहुत्ता। अद्धहि वस्सेहि दमहि जतोमुहुत्तेहि य ऊणिया मग्गिट्ठि पमत्तस्सुक्कस्मत्तर लद्ध।

अतमुहुत्तप्रमाण अप्रशोप रहने पर मयमात्मयमने प्राप्त हुआ (३)। पश्चात् अप्रमत्त सयत (४) प्रमत्तसयत (५) अप्रमत्तसयत (६) हुआ। इनमें अप्रमत्तकरणविसम्भवा ऊपरके छह मुहुत्तोंका मिलानर तीन पथ, तान त्विस और धारह अतमुहुत्तोंसे कम अपनी स्थितिप्रमाण सयतासयतोंका उत्पद्य अन्तर है।

शंका—उक्त जीवने एकेन्द्रियोंमें क्यों नहा उत्पन्न करण्य ?

समाधान—सयतासयतना जन्म लब्ध होनेके पश्चात् ऊपर सिद्ध होने तकके कालमें मिथ्यात्वना जन्म एकेन्द्रियोंमें आयुना वाधनर उनम उत्पन्न होतेका काल मत्स्यातगुणा हे, इसलिये एकेन्द्रियोंमें नहा उत्पन्न करण्य। इसी प्रकार प्रमत्तादि उपरितन गुणस्थानवर्ती जात्रोंके भी यहा कारण रहना चाहिये।

प्रमत्तसयतना उत्पद्य - तर कहते ह—एकेन्द्रियस्थितिको प्राप्त एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ आर गर्भादि आठ वर्षोंमें उपशमस्वयन्व और अप्रमत्तगुणस्थानना एक साथ प्राप्त हुआ (१)। पश्चात् प्रमत्तसयत हुआ (२)। पीछे नीचे गिरकर अन्तरको प्राप्त हा अपनी स्थितिप्रमाण परिध्रमण कर अन्तिम भयमें मनुष्य हुआ। दर्शनमोहनतायका क्षयनर अतमुहुत्तना सत्कारके अवशिष्ट रहने पर अप्रमत्तसयत होकर पुन प्रमत्तसयत हुआ (३)। इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ। पुन अप्रमत्तसयत (४) हुआ। इनमें ऊपरके छह अतमुहुत्त मित्रकर आठ पथ और दश अतमुहुत्तोंसे कम अपनी स्थिति प्रमत्तसयतका उत्पद्य अन्तर प्राप्त होता है।

चट्टुहं खवा अजोगिकेवली ओघं ॥ १२५ ॥

णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमओ, उक्कस्सेण छम्मासा; एगजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरतरमिन्चेएहि ओघादो भेदाभावा ।

सजोगिकेवली ओघं ॥ १२६ ॥

कुदो ? णाणेगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतरमिन्चेदेण ओघादो भेदाभावा ।

पंचिन्द्रियअपज्जत्ताणं वेइंदियअपज्जत्ताणं भगो ॥ १२७ ॥

णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतर, एगजीव पडुच्च जहण्णेण सुद्धाभयग्गहण, उक्कस्सेण अणतकालममरेज्जपोग्गलपरियट्टमिच्चेएहि वेइंदियअपज्जत्तेहिंतो पंचिन्द्रिय-अपज्जत्ताण भेदाभावा ।

एदमिदियं पडुच्च अतरं ॥ १२८ ॥

गुण पडुच्च उभयदो वि णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १२९ ॥

एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एदमिदियमगणा समत्ता ।

चारों क्षपक और जयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ १२५ ॥

नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय ओर उत्कर्षसे छह मास अन्तर है, एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है, इस प्रकार ओघप्ररूपणासे कोई भेद नहीं है ।

सजोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ १२६ ॥

क्योंकि, नाना जीव ओर एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है, इस प्रकार ओघसे कोई भेद नहीं है ।

पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंका अन्तर द्वीन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंके समान है ॥ १२७ ॥

नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे क्षुद्रभयग्रहणप्रमाण ओर उत्कर्षसे अनन्तकालात्मक असम्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अन्तर होता है, इस प्रकार द्वीन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंके पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंके अन्तरमें कोई भेद नहीं है ।

यह गतिकी अपेक्षा अन्तर कहा है ॥ १२८ ॥

गुणस्थानकी अपेक्षा दोनों ही प्रकारसे अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १२९ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम है ।

इस प्रकार इन्द्रियमार्गणा समाप्त हुई ।

१ शेषाणां सामायोक्तम् । स ति १, ८

२ एदमिन्द्रिय प्रत्यतरसुत्तम् । स ति १, ८

३ गुण प्रत्युभयतोऽपि नास्त्यन्तरम् । स ति १, ८

एकको एंडीयडिदिमच्छिदो मणुसेसु उन्नयणो । गन्नादिअद्विस्मेहि किन्तु
 उवसमसम्मत्तमप्यमत्तगुण च जुगप पडिउण्णो अतोमुहुत्तेण (१) वेदगमम्मत्त पदा। को
 अतोमुहुत्तेण (२) अणत्ताणुगधी विसनोजिय (३) त्रिस्ममिय (४) दमणमाहणी मनुक्कणी
 (५) पमत्तापमत्तवरात्तसहस्म कादूण (६) उन्नममेदीपाओम्मअप्पमत्तो जत्ता (७)।
 अपुव्वो (८) अणियड्डी (९) सुहुमो (१०) उन्नसतो (११) सुहुमो (१२) अणियड्डी (१३)
 अपुव्वो (१४)। हेट्ठा आदग्दिण पंचिदियड्दिदि परिभमिय पच्छिमे भरे मणुसेसु वररको।
 दमणमोहणीय सतिथ अंतोमुहुत्तागमेमे ससारे त्रिसुद्धो अप्पमत्तो जादो। पुणा पमत्त
 पमत्तपरात्तसहस्म कादूण उन्नममेदीपाओम्मअप्पमत्तो हेदूण अपुव्वउन्नयण
 जादो। लद्धमत्तर (१५)। तदो अणियड्डी (१६) सुहुमो (१७) उन्नमत्तमाओ (१८)
 सुहुमो (१९) अणियड्डी (२०) अपुव्वो (२१) अप्पमत्तो (२२) पमत्ता (२३)
 अप्पमत्तो (२४)। उन्नरि छ अतोमुहुत्ता। एव अद्विहि वस्मेहि त्तोसहि अतोमुहुत्तेहि
 उणिया सगड्ढिदी अपुव्वुकस्संतर। एव चेव तिण्हमुवसामगाण वत्तव। णररि अद्विहीम
 छच्चीस चदुमीस जतोमुहुत्तेहि अब्भहिय अद्विस्सुणा सगड्ढिदी अतर होदि।

पंचेन्द्रिय स्थितिमें स्थित एक जीव, मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। गन्नादि आठ वर्षोंमें
 विशुद्ध हो उपशान्तमध्यकत्वको ओर अप्रमत्तगुणस्थानको युगपत् प्राप्त होता हुआ अन्त
 मुंहतसे (१) वेदकत्वम्यकत्वको प्राप्त हुआ। पश्चात् अन्तमुंहतसे (२) अन ताणुगधी
 कथायचतुष्कका त्रिसयोजन करके (३) विश्राम ले (४) दर्शनमोहनीयका उपशान्त कर ()
 प्रमत्त अप्रमत्तगुणस्थानसम्बन्धी परावर्तन सहस्रोंका करके (६) उपशान्तश्रेणीके प्रायाग
 अप्रमत्तसयत हुआ (७)। पश्चात् अपूर्वकरणसयत (८) अनिवृत्तिकरणसयत (९) सूक्ष्म
 साम्परायसयत (१०) उपशान्तकपाय (११) मूढमसाम्पराय (१२) अतिवृत्तिकरण
 सयत (१३) अपूर्वकरणसयत (१४) हो, नीचे उतरकर पंचेन्द्रियकी स्थितिप्रमाण परी
 भ्रमणकर अन्तिम भवमें मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। पश्चात् दर्शनमोहनीयका क्षयर
 मसारके अन्तमुंहतमान अवशेष रहनेपर विशुद्ध हो अप्रमत्तसयत हुआ। पुन प्रमत्त
 अप्रमत्तपरावर्तन सहस्रोंको करके उपशान्तश्रेणिके योग्य अप्रमत्तसयत होकर अपूर्वकरण
 उपशान्तक हुआ। इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ (१५)। पश्चात् अनिवृत्तिकरणसयत (१६)
 सूक्ष्मसाम्परायसयत (१७) उपशान्तकपाय (१८) सूक्ष्मसाम्परायसयत (१९) अनिवृत्ति
 करणसयत (२०) अपूर्वकरणसयत (२१) अप्रमत्तसयत (२२) प्रमत्तसयत (२३)
 और अप्रमत्तसयत हुआ (२४)। इसके ऊपर क्षपकश्रेणिसम्बन्धी उह अन्तमुंहत
 होते हैं। इस प्रकार तीस अन्तमुंहत और आठ वर्षोंमें कम पंचेन्द्रियस्थितिप्रमाण
 अपूर्वकरणका उत्पन्न अन्तर होना है। इसी प्रकारसे शेष तीनों उपशान्तकोंका भी अन्तर
 कहना चाहिये। विशेष बात यह है कि उनके प्रमत्त अद्विहि वस्मेहि छच्चीस और चौरीस
 अन्तमुंहतोंसे अधिक आठ वर्ष कम पंचेन्द्रिय स्थितिप्रमाण अन्तर होता है।

एगजीवं पडुच्च जहणणेण अंतोमुहुत्तं ॥ १४४ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण वे सागरोवमसहस्साणि पुव्वकोडिपुधत्तेणभंहि-
याणि, वे सागरोवमसहस्साणि देसूणाणि ॥ १४५ ॥

असंजदमम्माटिड्विस्स उच्चदे- एको एइदियट्टिदिमच्छिदो असण्णिपच्चिदियसम्मु-
च्छिमपज्जत्तएसु उववण्णो । पच्चहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२) विसुद्धो
(३) भण्णससिय-वाणत्तरेदेसेसु आउअ वधिय (४) विस्मतो (५) कालं करिय
भण्णससिएसु वाणत्तरेसे वा देसेसु उववण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (६)
विस्सतो (७) विसुद्धो (८) उवमसम्मत्त पडिवण्णो (९) । उवसमसम्मत्तद्वाए
छायलियावसेसाए आसाण गदो । अतरिदो मिच्छत्तं गतूण सगट्टिदिं परिभमिय अंते
उवसमसम्मत्त पडिवण्णो (१०) । लद्धमत्तर । पुणो मासण गदो आयलियाए असंखे-
ज्जदिभागं कालमच्छिदूण एइदिएसु उववण्णो । ढसहि अतोमुहुत्तेहि ऊणिया तमत्तस-
पज्जत्तट्टिदी उक्कस्संतर ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १४४ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त असंयतादि चारों गुणस्थानवर्ती ब्रह्म और ब्रह्मपर्याप्त जीवोंका उत्कृष्ट
अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वमे अधिक दो महत्समागरोपम और कुछ कम दो महत्स सागरोपम
है ॥ १४५ ॥

इनमेंसे पहले ब्रह्म और ब्रह्मपर्याप्तक असंयतसम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर कहते
हैं- एकेन्द्रियस्थितिको प्राप्त कोई एक जीव असंखी पचेन्द्रिय सम्मूर्च्छिम पर्याप्तक
जीवोंमें उत्पन्न हुआ । पाचों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध
हो (३) भवनवासी या धानव्यन्तर देवोंमें आयुको बाधकर (४) विश्राम ले (५)
काल कर भवनवासी या धानव्यन्तर देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त
हो (६) विश्राम ले (७) विशुद्ध हो (८) उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (९) ।
उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आयलिया अवशेष रहने पर साम्नावनगुणस्थानको गया
और अन्तरको प्राप्त हो मिथ्यात्वमें जाकर अपनी स्थितिप्रमाण परिध्रमणकर अन्तमें
उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (१०) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पुन सासावन-
गुणस्थानको जाकर वहा आवर्त्तिके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक रहकर एकेन्द्रियोंमें
उत्पन्न हुआ । इस प्रकार इन दश अन्तर्मुहूर्तोंसे कम ब्रह्म और ब्रह्मपर्याप्तककी उत्कृष्ट
स्थिति उन्हींके असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर है ।

१ उक्कस्सेण वे सागरोवमसहस्से पूर्वकोटीपृथक्त्वमेधिके । त पि १, ८.

धावरकाएसु उरगण्णो । आगलियाए अमखेज्जदिभागेण णगहि अंतोमुहुत्तेहि य ऊणिया तसकाइयत्तसकाइयपज्जत्तद्विदी अतर होदि ।

सम्माभिच्छादिद्विस्स उच्चदे- एकको एइदियद्विदिमच्छिय जीवो अग्णि पचिदिएसु उरगण्णो । पचहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) निस्सतो (२) निमुद्धो (३) भरणरासिय वाणपंतदेवेसु आउअ वधिय (४) निस्समिय (५) पुच्चुत्तेदेसु उववण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (६) निस्सतो (७) निमुद्धो (८) उवसमसम्मत्त पठिक्खो (९) । सम्माभिच्छत्त गदो (१०) । मिच्छत्त गतूणंतरिदो सगाद्विदिं परिभमिय अतोमुहुत्ताव ससाए तम-तमपज्जत्तद्विदीए सम्माभिच्छत्त गदो । लद्धमतर (११) । मिच्छत्त गणूण (१२) एइदिएसु उरगण्णो । वारमअंतोमुहुत्तेहि ऊणिया तस तसपज्जत्तद्विदी उक्क स्सतर होदि ।

असजदसम्मादिद्विप्पहुडि जाव अप्पमत्तसजदाणमतर केवचि
कालादो होदि, गाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरतर ॥ १४३ ॥
सुगममेद ।

तक रह कर मरा और स्थावरकायिकोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार आधलीके असख्यातवें भाग और नौ अतर्मुहूर्तोंसे कम प्रसकायिक और प्रसकायिकपर्याप्तकोंकी स्थितिप्रमाण अन्तर होता है ।

प्रसकायिक और प्रसकायिकपर्याप्तक सम्यग्मिथ्यादृष्टिका अंतर कहते हैं- एकेन्द्रिय जीवोंकी स्थितिमें प्राप्त कोई एक जीव असखी पचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ । पाव पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विगुद्ध हो (३) भयनवासी या घानव्यन्तर देवोंमें आयुको बाधकर (४) विश्राम ले (५) पूर्वोक्त देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (६) विश्राम ले (७) विगुद्ध हो (८) उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (९) । पश्चात् सम्यग्मिथ्यात्वको गया (१०) । पुन मिथ्यात्वको जाकर अंतरको प्राप्त हुआ और अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण करके प्रसकायिक और प्रसकायिकपर्याप्तकोंकी स्थितिके अतर्मुहूर्त अवशेष रह जानेपर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ (११) । पीछे मिथ्यात्वको जाकर (१२) एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार इन बारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम प्रस और प्रसपर्याप्तकोंकी स्थिति ही उक्त दोनों प्रकारके सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका उत्पन्न अंतर होता है ।

अमपतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अप्रमत्तसयत तक प्रसकायिक और प्रसकायिकपर्याप्तक जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १४३ ॥
यह सत्य सुगम है ।

खनिय अप्पमत्तो होदूण पमत्तो जादो (३) लद्धमंतरं । भूओ अप्पमत्तो (४) । उररि छ अतोमुहुत्ता । एवं अड्ढहि वस्सेहि दसहि अतोमुहुत्तेहि य ऊणा तस-तमपज्जत्तद्धिदी उक्कस्सतर ।

अप्पमत्तस्स उच्चदे- एकको थाररट्ठिदिमच्छिदो मणुमेसु उररण्णो गन्भादिअड्ढ-वस्सेण उरसमसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगग पडिण्णो (१) । अंतरिदो सगट्ठिदिं परिभ-मिय पच्छिमे भेरे मणुसो जादो । सम्मत्त पडिण्णो दसणमोहणीयं खनिय अतोमुहुत्ता-वसेसे संसारे निमुद्धो अप्पमत्तो जादो (२) । लद्धमतर । तदो पमत्तो (३) अप्पमत्तो (४) । उररि छ अतोमुहुत्ता । एवमड्ढहि वस्सेहि दसहि अतोमुहुत्तेहि य ऊणिया तस-तसपज्जत्तद्धिदी उक्कस्सतर ।

चटुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च ओघं ॥ १४६ ॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहणणेण अंतोमुहुत्तं ॥ १४७ ॥

क्षय करके अप्रमत्तसयत हो प्रमत्तसयत हुआ (३) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हो गया । पुन अप्रमत्तसयत हुआ (४) । इनमें ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त और मिलाये । इस प्रकार दश अन्तर्मुहूर्त और आठ वर्षसे कम ब्रस ओर ब्रसपर्याप्तक्री उत्कृष्ट स्थिति ही उन प्रमत्त-सयत जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर है ।

ब्रसकायिक ओर ब्रसकायिकपर्याप्त अप्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- स्थावरकायकी स्थितिमें विद्यमान कोई एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और गर्भको आदि ले आठ वर्षसे उपशमसम्यक्त्व और अप्रमत्त गुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पश्चात् अन्तरको प्राप्त हो अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तिम भवमें मनुष्य हुआ । सम्यक्त्वको प्राप्त कर पुन दर्शनमोहनीयका क्षय कर संसारके अन्तर्मुहूर्त अवशिष्ट रह जानेपर विशुद्ध हो अप्रमत्तसयत हुआ (२) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हो गया । तत्पश्चात् प्रमत्तसयत (३) ओर अप्रमत्तसयत हुआ (४) । इनमें ऊपरके क्षपकश्रेणी-सम्यन्धी छह अन्तर्मुहूर्त और मिलाये । इस प्रकार आठ वर्ष ओर दश अन्तर्मुहूर्तोंसे कम ब्रस और ब्रसपर्याप्तकोंकी उत्कृष्ट स्थिति ही उन अप्रमत्तसयत जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर है ।

त्रसकायिक और ब्रसकायिकपर्याप्तक चारों उपशामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा ओघके समान अन्तर है ॥ १४६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

चारों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १४७ ॥

१ चतुर्णांमुपशमनानां नानाजीवोपेक्षया सामान्यवत् । स ति १, ८

२ एकजीव प्रति जघनयान्तर्मुहूर्त । स ति १, ८.

संज्ञदासजदसस उच्चदे- एकको एइदियद्विदिमच्छिदो सण्णिपंचिदियपजत्तएसु उअण्णो । असण्णिमम्मच्छिमपज्जत्तएसु क्खिण्ण उप्पादिदो ? ण, तत्थ मज्जामानम ग्गहणाभावा । तिण्णिपक्ख-तिण्णिदिअसेहि अंतोमुहुत्तेण य पढमसम्मत्त सज्जामानम च जुअर पडिअण्णो (१) । पढमसम्मत्तद्वाए छाअलियाओ अत्थि त्ति सासण गदो । अंतरिदो मिच्छत्त गत्तूण सगद्धिदिं परिअमिय पच्छिमे तमभेअे सम्मत्तं घेत्तूण दत्तण मोहणीय खअिय अतोमुहुत्ताअसेसे ससारे मज्जामासजम पडिअण्णो (३) । लद्धमत्तर । अप्पमत्तो (४) पमत्तो (५) अप्पमत्तो (६) । उअरि अअगसेद्धिदिं छ मुहुत्ता । एअ वारसअतोमुहुत्ताहिय-अेद्धतालीसदिअसेहि ऊणिया तम-तमपज्जत्तद्विदी सअदा सजदुक्कम्मतर ।

पमत्तस उच्चदे- एकको एइदियद्विदिमच्छिदो मणुमेसु उअण्णो । गअ्मादिअद्ध वस्सेण उअमसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुअर पडिअण्णो (१) पमत्तो (२) हेद्धा परिअदिअ अतरिदो । सगद्धिदिं परिअमिय अपच्छिमे भेअे सम्मादिद्धी मणुमो जादो । दमणमोहणीय

अस ओर अमपयात्तव सयतासयतका उत्तए अन्तर कहते हैं- एकेन्द्रिय जीवोंकी स्थितिमें स्थित कोई एक जीव मणी पचेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ ।

शुक्रा—उक्त जीवको असक्षी सम्मूच्छिम पर्याप्तकोंमें क्यों नहीं उत्पन्न कराया ? समाधान—तथा, क्योंकि, उनमें सयमासयमके ग्रहण करनेका अभाव है ।

पुन उत्पन्न होनेके पश्चात् तीन पक्ष, तीन दिवस ओर अतमुहूर्तसे प्रथमो पशमसम्यक्त्व और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । प्रथमोपशसम्यक्त्वके कालमें छह आयलिया शेष रहने पर सासादनगुणस्थानको गया और अन्तरको प्राप्त हो मिथ्यात्वमें जाकर अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण करने अन्तिम असभवमें सम्यक्त्वको ग्रहणकर और दर्शनमोहनीयका क्षय कर अतमुहूर्तप्रमाण ससारके अवशिष्ट रहने पर सयमासयमको प्राप्त हुआ (३) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पश्चात् अप्रमत्तसयत (४) प्रमत्तसयत (५) ओर अप्रमत्तसयत (६) हुआ । इनमें क्षपत्रश्रेणीसम्यन्धी ऊपरके छह अन्तमुहूर्त और मिलाये । इस प्रकार गारह अतमुहूर्तोंस अधिक अहतालीस दिनोंसे कम अस और असपर्याप्तकोंकी उत्तए स्थिति ही उन सयतासयत जीवोंका उत्तए अन्तर है ।

असगयिअ ओर असकायिकपर्याप्त प्रमत्तसयतका उत्तए अन्तर कहते हैं- एकेन्द्रिय स्थितिको प्राप्त कोई एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और गर्भको आदि ले आठ वर्षके पश्चात् उपशमसम्यक्त्व ओर अप्रमत्त गुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पश्चात् प्रमत्तसयत हो (२) नीचे गिर कर अन्तरको प्राप्त हुआ । अपनी उत्तए स्थिति प्रमाण परिभ्रमण करके अन्तिम भवमें सम्यग्दृष्टि मनुष्य हुआ । पुन दर्शनमोहनीयका

एदं कायं पडुच्च अंतरं । गुणं पडुच्च उभयदो वि णत्थि अंतरं,
णिरंतरं ॥ १५२ ॥

सुगममेद सुत्त ।

एव कायमगणा समत्ता ।

जोगाणुवादेण पंचमणजोगि-पचवचिजोगीसु कायजोगि-ओरा-
लियकायजोगीसु मिच्छादिट्ठि-असजदसम्मादिट्ठि-संजदासंजद-पमत्त-
अप्पमत्तसंजद-सजोगिकेवलीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणेग-
जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १५३ ॥

कुदो ? अप्पिदजोगसहिदअप्पिदगुणट्ठाणाण सव्वकाल सभयादो । कधमेग-
जीमामेज्ज अतराभायो ? ण ताव जोगतरगमणेणतर सभयादि, मग्गणाए णिणामापचीदो ।
ण च अण्णगुणगमणेण अतर सभयादि, गुणतर गट्ठस्म जीमस्स जोगतरगमणेण णिणा
पुणो आगमणाभायादो । तम्हा एगजीमस्स णि णत्थि चेव अंतरं ।

यह अन्तर कायकी अपेक्षा कहा है । गुणस्थानकी अपेक्षा दोनों ही प्रकारसे
अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १५२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इस प्रकार कायमार्गणा समाप्त हुई ।

योगमार्गणाके अनुवादमे पाचों मनोयोगी, पाचों वचनयोगी, काययोगी और
औदारिककाययोगियोंमें, मिथ्यादृष्टि, असत्यतमभ्यगृष्टि, सत्यतासंयत, प्रमत्तसयत, अप्र-
मत्तसयत और सयोगिकेप्रलियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीमोंकी और
एक जीमकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १५३ ॥

क्योंकि, सूत्रोक्त विवक्षित योगोंमें सहित विवक्षित गुणस्थान सर्वकाल सभय हैं ।

शंका—एक जीमकी अपेक्षा अन्तरका अभाव कैसे कहा ?

समाधान—सूत्रोक्त गुणस्थानोंमें न तो अन्य योगमें गमनद्वारा अन्तर सम्भव है,

क्योंकि, ऐसा मानने पर विवक्षित मार्गणाके विनाशकी आपत्ति आती है । ओर न अन्य
गुणस्थानमें जानेसे भी अन्तर सम्भव है, क्योंकि, दूसरे गुणस्थानको गये हुए जीवके
अन्य योगको प्राप्त हुए विना पुन आगमनका अभाव है । इसलिये सूत्रमें बताया गये
जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं होता है ।

१ योगानुवादेन कायवाइमानसयोगिनां मिथ्यादृष्टयसयतसम्यगृष्टिसयतामयतप्रमत्ताप्रमत्तसयोगेवद्विना
नानाजीवपेक्षया एकजीवपेक्षया च नास्त्यन्तरम् । स मि १, ८ २ प्रतिशु 'अपगद' इति पाठ ।

सासणसम्मादिट्टि सम्मामिच्छादिट्टीणमंतरं केवचिर कालादो
होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ १५४ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ॥ १५५ ॥

कुदो ? दोण्ह रासीण सातरत्तादो । सातरत्ते नि अहियमंतर किण्ण होदि ?
महारत्ते ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतरं ॥ १५६ ॥

कुदो ? गुण-जोगतरगमणेहि तदसभमा ।

चदुण्हमुवसामगाणमतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च ओघं ॥ १५७ ॥

कुदो ? जहण्णेण एगममओ, उक्कस्सेण वासपुधत्तमिच्चेएहि ओघादो भेढामाना ।

उक्त योगशाले मासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्भिध्यादृष्टियोंका अन्तर कितने
काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है ॥ १५४ ॥

यह स्र्य सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असरयातवें भाग है ॥ १५५ ॥

क्योंकि, ये दोनों ही राशिया सातर हैं ।

शङ्का—राशियोंके सातर रहने पर भी अधिक अन्तर क्यों नहीं होता है ?

समाधान—स्वभावमे ही अधिक अन्तर नहीं होता है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १५६ ॥

क्योंकि, अन्य गुणस्थानों और अन्य योगोंमें गमनद्वारा उनका अन्तर अस्तभय है ।

उक्त योगशाले चारों उपशामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा ओघके समान अन्तर है ॥ १५७ ॥

क्योंकि, जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे चरंपृथक्त्व अन्तर है, इस प्रकार
ओघके अन्तरमे इनके अन्तरमें कोई भेद नहीं है ।

१ सागादनसम्यग्दृष्टिमप्यभिध्यादृष्टीणानाजीवपेक्कया सामायवत् । स ति १, ८

२ एक्कजीव प्रति नास्त्यन्तरम् । स ति, १, ८

३ चदुण्णोपपन्नमकाना नानाजीवपेक्कया सामायवत् । स ति १, ८

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं' ॥ १५८ ॥

जोग गुणंतरगमणेण तदसंभवा । एगजोगपरिणमणकालादो गुणकालो सखेज्जगुणो
त्ति क्ख णच्चदे ? एगजीवस्स अतराभापपदुप्पायणमुत्तादो ।

चटुण्हं ख्वाणमोघं' ॥ १५९ ॥

णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं, उक्कस्सेण छम्मासं; एगजीव पडुच्च
णत्थि अंतरमिच्चेदेहि भेदाभावा ।

ओरालियमिस्सकायजोगीसु मिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणेगजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं ॥ १६० ॥

तम्हि जोग-गुणंतरसंफुतीए अभावादो ।

सासणसम्मादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च ओघं ॥ १६१ ॥

एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १५८ ॥

क्योंकि, अन्य योग और अन्य गुणस्थानमें गमनद्वारा उनका अन्तर असंभव है ।

शंका—एक योगके परिणमन कालसे गुणस्थानका काल सख्यातगुणा है, यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—एक जीवके अन्तरका अभाव घतानेवाले सूत्रसे जाना जाता है कि
एक योगके परिवर्तन-कालसे गुणस्थानका काल सख्यातगुणा है ।

उक्त योगकाले चारों क्षपकोंका अन्तर ओघके समान है ॥ १५९ ॥

नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय, उत्कर्षसे छह मास अन्तर है, तथा
एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, इस प्रकार ओघसे अन्तरमें कोई भेद नहीं है ।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीव और एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १६० ॥

क्योंकि, औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें योग और गुणस्थानके परिवर्तनका
अभाव है ।

औदारिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टियोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥ १६१ ॥

१ एकजीव प्रति नास्त्यन्तरे । स सि १, ८

२ चतुर्णां क्षपकायामयोगिभ्योना च सामान्यवत् । स सि १, ८

कुदो ? जहण्णेण एगममओ, उक्कस्सेण पल्लिदोऽमस्म अससेज्जदिभागो, इच्चेदेहि ओघादो भेदाभावा ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ॥ १६२ ॥

कुदो ? तत्त्व जोगतरगमणाभावा । गुणतर गदस्म त्रि पडिणियत्तिय सामणगुणेण तम्हि चेर जोगे परिणमणाभावा ।

असजदसम्मादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ॥ १६३ ॥

कुदो ? देव णेरइय-मणुमअसजदसम्मादिट्ठीण मणुमेसु उप्पत्तीए त्रिणा मणुम-असजदसम्मादिट्ठीण तिरिउत्सेसु उप्पत्तीए त्रिणा एगसमय अमजदसम्मादिट्ठिनिरिहदि-ओरालियमिस्मकायजोगस्म मभवादो ।

उक्कस्सेण वासपुधत्त ॥ १६४ ॥

तिरिउत्-मणुस्सेसु नामपुधत्तमेत्तकालमसजदसम्मादिट्ठीणमुवसादाभावा ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ॥ १६५ ॥

क्योंकि, जघन्यसे एक समय, जोर उत्कर्षसे पत्योपमना असत्यातया भाग अन्तर है, इस प्रकार ओघसे कोई भेद नहीं है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १६२ ॥

क्योंकि, औदारिकमिश्रणाययोगकी अद्यस्थामें अन्य योगमें गमनका अभाव है । तथा अन्य गुणस्थानको गये हुए भी जीवके लौटकर सासादनगुणस्थानके साथ उसी ही योगमें परिणमनका अभाव है ।

औदारिकमिश्रणाययोगी अमयतमम्यग्दृष्टियोंका अन्तर क्लृप्ते काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ १६३ ॥

क्योंकि, देव, नारदी और मनुष्य असयतसम्यग्दृष्टियोंका मनुष्योंमें उत्पत्तिके बिना, तथा मनुष्य असयतसम्यग्दृष्टियोंका तिर्यचोंमें उत्पत्तिके बिना असयतसम्यग्दृष्टियोंसे रहित औदारिकमिश्रणाययोगका एक समयप्रमाण काल सम्भव है ।

औदारिकमिश्रणाययोगी अमयतमम्यग्दृष्टियोंका उत्कृष्ट अन्तर त्रिपृथक्त्वप्रमाण है ॥ १६४ ॥

क्योंकि, तिर्यच और मनुष्योंमें त्रिपृथक्त्वप्रमाण कालतरु असयतसम्यग्दृष्टियोंका उत्पाद नहीं होता है ।

औदारिकमिश्रणाययोगी असयतमम्यग्दृष्टियोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १६५ ॥

तस्मि तस्स गुण-जोगतरसंक्रुतीए अभावा ।

सजोगिकेवलीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च
जहण्णेण एगसमयं ॥ १६६ ॥

कुदो ? कनाडपज्जायभिरहिदकेनलीणमेगममओपलभा ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ १६७ ॥

कनाडपज्जाएण णिणा केनलीण वासपुधत्तच्छणमभमादो ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १६८ ॥

कुदो ? जोगतरमंगतूण ओरालियमिस्सकायजोगे चेव द्विदस्स अतरासंभवा ।

वेडव्वियकायजोगीसु च्चदुट्टाणीणं मणजोगिभंगो ॥ १६९ ॥

कुदो ? णाणेगजीव पडुच्च अतराभाणेण माधम्मादो ।

वेडव्वियमिस्सकायजोगीसु मिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ १७० ॥

फ्योंकि, औदारिकमिश्रकाययोगी असयतसम्यग्दृष्टि जीवमें उक्त गुणस्थान और
औदारिकमिश्रकाययोगके परिवर्तनका अभाव हे ।

औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेनली जिनोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ १६६ ॥

फ्योंकि, कपाटपर्यायसे रहित केनली जिनोंका एक समय अन्तर पाया जाता हे ।
औदारिकमिश्रकाययोगी केनली जिनोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर
वर्षपृथक्त्व हे ॥ १६७ ॥

फ्योंकि, कपाटपर्यायके बिना केनली जिनोंका वर्षपृथक्त्व तक रहना सम्भव हे ।
औदारिकमिश्रकाययोगी केनली जिनोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है,
निरन्तर हे ॥ १६८ ॥

फ्योंकि, अन्य योगको नहीं प्राप्त होकर औदारिकमिश्रकाययोगमें ही स्थित
केनलीके अन्तरका होना असंभव हे ।

वैकियिककाययोगियोंमें आदिके चागें गुणस्थानवर्ती जीवोंका अन्तर मनो-
योगियोंके समान हे ॥ १६९ ॥

फ्योंकि, नाना जीव और एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेमे दोनोंमें
समानता हे ।

वैकियिकमिश्रकाययोगियोंमें मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है, ॥ १७० ॥

त जहा- वेदवियमिस्त्रकायजोगिमिच्छादिद्विणो सचे वेदवियकायजोग गदा । एगममय वेदवियमिस्त्रकायजोगो मिच्छादिद्वीहि त्रिहिदो दिद्वो । त्रिदियममण सचद्व जणा वेदवियमिस्त्रकायजोगे दिद्वो । लद्धमेगसमयमतर ।

उक्कस्सेण वारस मुहुत्त ॥ १७१ ॥

त जहा- वेदवियमिस्त्रमिच्छादिद्वीसु सचेसु वेदवियकायजोग गदेसु वारस-मुहुत्तमेत्तमतरिय पुणो सचद्वजगेसु वेदवियमिस्त्रकायजोग पडिउण्णेषु वारसमुहुत्ततर होदि ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरंतरं ॥ १७२ ॥

तत्थ जोग-गुणतरगमणाभावा ।

सासणसम्मादिद्वि-असंजदसम्मादिद्वीण ओरालियमिस्त्रभंगो ॥ १७३ ॥

हुदो? सामणमम्मादिद्वीण पाणाजीव पडुच्च जहणुक्कस्सेण एगसमय, पलिदो-वमसस असखेज्जदिभागो तेहि, एगजीव पडुच्च णत्थि अतर तेण, असजदसम्मादिद्वीण

जैसे- सभी वेत्रियिन्मिथ्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीव वेत्रियिन्काययोगको प्राप्त हुए । इस प्रकार एक समय वेत्रियिकमिथ्रकाययोग, मिथ्यादृष्टि जीवोंसे रहित दिव्याई दिया । द्वितीय समयमें सात आठ जीव वेत्रियिकमिथ्रकाययोगमें दृष्टिगोचर हुए । इस प्रकार एक समय अंतर उपलब्ध हुआ ।

वैत्रियिकमिथ्रकाययोगी मिथ्यादृष्टियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर वारह मुहूर्त है ॥ १७१ ॥

जैसे- सभी वैत्रियिन्मिथ्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंके वेत्रियिककाययोगको प्राप्त हो जाने पर वारह मुहूर्तप्रमाण अंतर होकर पुन सात जाठ जीवोंके वेत्रियिक मिथ्रकाययोगको प्राप्त होने पर वारह मुहूर्तप्रमाण अंतर होता है ।

वैत्रियिन्मिथ्रकाययोगी मिथ्यादृष्टियोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १७२ ॥

क्योंकि, उन वैत्रियिन्मिथ्रकाययोगी मिथ्यादृष्टियोंके अन्य योग और अन्य गुणस्वरानमें गमनका अभाव है ।

वैत्रियिन्मिथ्रकाययोगी सासादनमभ्यगृष्टि और असयतमभ्यगृष्टि जीवोंका अन्तर औरारिन्मिथ्रकाययोगियोंके समान है ॥ १७३ ॥

क्योंकि, सासादनसभ्यगृष्टियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा अचान्य और उत्कृष्ट अन्तर प्रमत्ता एक समय और पत्योपमका असख्यातना भाग है इनमें, एक

१ अत्रती 'सावेदि', आत्रती 'सागाचेदि', अत्रती 'सागच्छि' इति पाठ ।

णाणाजीव पडुच्च जहण्णुक्कस्सगयएगममय-मासपुधत्तरेण', एगजीव पडुच्च अंतरा-
भावेण च तदो भेदाभावा ।

आहारकायजोगीसु आहारमिस्सकायजोगीसु पमत्तसंजदाण-
मंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं
॥ १७४ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ १७५ ॥

एदं पि सुगममेव ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १७६ ॥

तस्मिं जोग-गुणतरग्गहणाभावा ।

कम्मइयकायजोगीसु मिच्छादिट्ठि-सासणसम्मादिट्ठि-असंजद-
सम्मादिट्ठि-सजोगिकेवलीणं ओरालियमिस्सभंगो ॥ १७७ ॥

जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है इससे, असयतसम्यग्दृष्टियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा
जघन्य एक समय और उत्कृष्ट मासपृथक्त्व अन्तर होनेसे, तथा एक जीवकी अपेक्षा
अन्तरका अभाव होनेसे इन वैत्रियिकमिश्रकाययोगी सासादन और असयतसम्यग्दृष्टियोंके
अन्तरमें कोई भेद नहीं है ।

आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमें प्रमत्तसयतोंका अन्तर
कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है ॥ १७४ ॥
यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर र्पपृथक्त्व है ॥ १७५ ॥

यह सूत्र भी सुगम ही है ।

आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमें प्रमत्तसयतोंका एक जीवकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १७६ ॥

क्योंकि, आहारककाययोग या आहारकमिश्रकाययोगमें अन्य योग या अन्य
गुणस्थानके ग्रहण करनेका अभाव है ।

कार्मणकाययोगियोंमें मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, असयतसम्यग्दृष्टि और
सयोगिकेवलियोंका अन्तर औदारिकमिश्रकाययोगियोंके समान है ॥ १७७ ॥

मिच्छादिद्विषण णाणज्जीव पडुच्च अतराभावेण, सामणमम्मादिद्विषण णाणाजीव-
गयएयसमय पलिदोममामखेज्जदिभागत्तरेहि, एगजीवगयअतराभावेण, अमंनदमम्मा-
दिद्विषण णाणाजीवगयएयसमयमाम-पुधत्तरेहि, एगजीवगयअतराभावेण, सनोगिकेकलि-
णाणाजीवगयएगममय-वासपुधत्तरेहि, एगजीवगयअतराभावेण च दोण्ट ममाणचुवलभा ।

एव जोगमग्गणा समत्ता ।

वेदानुवादेण इत्थिवेदेसु मिच्छादिद्विषणमंतरं केवचिर कालादो
होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर' ॥ १७८ ॥

सुगममेद सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त' ॥ १७९ ॥

हुदो ? इत्थिवेदमिच्छादिद्विषण दिद्वमग्गस्स अण्णगुण गतूण पडिणियत्थिय लहु
मिच्छत्त पडिण्णस्स अतोमुहुत्तनरुत्तभा ।

उक्कस्सेण पणवण्ण पलिदोवमाणि देसूणाणि' ॥ १८० ॥

स्वयंति, मिथ्यादृष्टियोंका नाना जीव और एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव
होनेसे, सासादनसम्यग्दृष्टियोंका नाना जीवगत जघन्य एक समय और उत्कृष्ट पल्यो
पमके अस्तित्वातमें भागप्रमाण अंतरसे, तथा एक जीवगत अंतरके अभावसे, अस्तित्
सम्यग्दृष्टियोंका नाना जीवगत जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अंतर मास
पृथक्त्वमे, तथा एक जीवगत अन्तरका अभाव होनेसे, सयोगिकेवलियोंका नाना
जीवोंकी अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट वर्षपृथक्त्व अंतरसे, तथा एक जीवगत
अंतरका अभाव होनेसे जोदास्मिध्र्माययोगी और कर्मणकाययोगी, इन दोनोंके
समानता पाइ जाती है ।

इस प्रकार योगमागणा समाप्त हुई ।

वेदमार्गणके अनुवादसे स्त्रीवेदियोंमें मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल
होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १७८ ॥

यद्द सूत्र सुगम ह ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १७९ ॥

स्वयंति, इष्टमार्गा खविदी मिथ्यादृष्टि जीवके अय गुणस्वरूपको जानने और
लौटकर शीघ्र ही मिथ्यात्वको प्राप्त होनेपर अन्तर्मुहूर्त अन्तर पाया जाता है ।

स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम
पचनन पल्योपम है ॥ १८० ॥

१ वेदानुवादेन वेदवेदु मिथ्यादृष्टीनाजीवोपेक्षा नास्त्यन्तरम् । स ति १, ८

२ एवजीव प्रति जघन्यनात्पहूर्त । स ति १, ८

३ उत्तर्येण पचपचाश्लस्योपमानी देशानानि । स ति १, ८

त जहा- एको पुरिसवेदो णउसपवेदो वा अट्टानीसमोहमतकम्मिओ पणवण्ण-
पलिदोममाउट्टिदिदेनीसु' उअण्णो । छहि पज्जचीहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२)
विमुट्ठो (३) वेदगसम्मत्त पडिअण्णो अतरिदो अग्गामे आउअं गधिय मिच्छत्त गदो ।
लद्धमंतरं (४) । सम्मत्तेण उद्दाउअत्तादो सम्मत्तेणेअ णिगगदो (५) मणुसो जादो ।
पंचहि अंतोमुहुत्तेहि ऊणाणि पणवण्ण पलिदोममाणि उअरुस्सतर होदि । छप्पुट्ठविणेरइएसु
सोहम्मादिदेनेसु च सम्माइट्ठी वद्दाउओ पुअ मिच्छत्तेण णिस्मारिदो । एत्थ पुण
पणवण्णपलिदोममाउट्टिदिदेनीसु तथा ण णिस्मारिदो । एत्थ कारण जाणिय उत्तव ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीव पडुच्च ओघं ॥ १८१ ॥

सुगममेद ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्तं ॥ १८२ ॥

जैसे-मोहनीयकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक पुरपवेदी, अथवा
नपुंसकवेदी जीव, पचअन पल्योपमनी आयुस्थितिवाली देवियोंमें उत्पन्न हुआ । छहों
पर्यातियोंसे पर्याप्त हो (१) विध्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वकी प्राप्त होकर
अन्तरको प्राप्त हुआ और आयुके अन्तमें आगामी भवकी आयुको बाधकर मिथ्यात्वको
प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया (४) । सम्यक्त्वके साथ आयुके बाधनेसे
सम्यक्त्वके साथ ही निकला (५) और मनुष्य हुआ । इस प्रकार पाच अन्तर्मुहूर्तोंसे
कम पचअन पल्योपम खीनेदी मिथ्यादृष्टिका उत्पन्न अन्तर हाता है ।

पहले ओपप्ररूपणामें छह पृथिवियोंके नारकियों तथा सोचनीय देवोंमें बद्धा-
युक्त सम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्वके द्वारा निकाला या । किन्तु यहा पचअन पल्योपमकी
आयुस्थितिवाली देवियोंमें उस प्रकारसे नहीं निकाला । यहापर इसका कारण जानकर
कहना चाहिए ।

खीनेदी सामादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल
होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा ओघके समान अन्तर है ॥ १८१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

खीनेदी सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका एक जीवकी अपेक्षा
जघन्य अन्तर क्रमशः, पल्योपमका अन्तरयातना भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ १८२ ॥

१ प्रतिपु 'देवतु' इति पठ ।

२ सामादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टीनानाजावापेक्षया सामा यक्त् । स सि १, ८

३ एकजीव प्रति जघ येन पल्योपमासरयेयमागोअन्तर्मुहूर्तश्च । स सि १, ८

एद पि सुत्त सुगममेव ।

उक्कस्सेण पलिदोवमसदपुधत्तं ॥ १८३ ॥

त जहा- एको अण्णवेदद्विदिमच्छिदो सासणद्वाए एगो समओ अत्थि त्ति इत्थिपेदेसु उअण्णो एगसमय सामणगुणेण दिट्ठो । त्थिदिममए मिच्छत्त गतूणतरिदो । त्थीपेदद्विदि परिभमिय अउसाणे त्थीपेदद्विदीए एगसमयाउतेमाए सामणं गदो । लद्धमत्तर । मद्दो वेदतर गदो । वेहि समणहि ऊणय पलिदोअममदपुधत्तमत्तर लद्ध ।

सम्मामिच्छादिट्ठिम्म उच्चदे- एको अट्ठारीममोहमतक्कम्मिओ अण्णवेदो देरीसु उअण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) निस्सतो (२) निमुट्ठो (३) सम्मामिच्छत्त पडिअण्णो (४) मिच्छत्त गंतूणतरिदो । त्थीपेदद्विदि परिभमिय अते सम्मामिच्छत्त गदो (५) । लद्धमत्तर । जेण गुणेण आउअ वद्धं त गुण पडिअज्जिय अण्णवेदे उअण्णो (६) । एअ छहि अंतोमुहुत्तेहि ऊणिया त्थीपेदद्विदी सम्मामिच्छत्तुक्कस्सत्तर हेदि ।

यह सूत्र भी सुगम ही है ।

स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवनी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमशतपृथक्त्व है ॥ १८३ ॥

जैसे अन्य वेदकी स्थितिको प्राप्त कोई एक जीव सासादनगुणस्थानके कालमें एक समय अशिशु रहने पर स्त्रीवेदियोंमें उत्पन्न हुआ और एक समय सासादनगुण स्थानके साथ दिखाई दिया । द्वितीय समयमें मिथ्यात्वको जाकर अंतरको प्राप्त हुआ । स्त्रीवेदकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण करके अन्तमें स्त्रीवेदकी स्थितिमें एक समय अवशेष रहने पर सासादनगुणस्थानको गया । इस प्रकार अंतर लब्ध हुआ । पुन मरा और अन्य वेदको प्राप्त होगया । इस प्रकार दो समयोंसे कम पल्योपमशतपृथक्त्वकाल स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवका उत्कृष्ट अंतर प्राप्त हुआ ।

अउ सम्यग्मिथ्यादृष्टि स्त्रीवेदी जीवका उत्कृष्ट अंतर कहते हैं- मोहनीयकमकी अट्ठारंस प्रवृत्तियोंकी सत्ताजाला कोई एक अन्य वेदी जीव वेदियोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विध्राम ले (२) विमुद्ध हो (३) सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (४) । पश्चात् मिथ्यात्वको प्राप्त होकर अंतरको प्राप्त हुआ । स्त्रीवेदकी स्थिति प्रमाण परिभ्रमणकर अतमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (५) । इस प्रकार अंतर लब्ध हो गया । पीछे जिस गुणस्थानसे आयुको बाधा था, उसी गुणस्थानको प्राप्त होकर अन्य तीनोंमें उत्पन्न हुआ (६) । इस प्रकार छह अतमुहत्तोंसे कम स्त्रीवेदकी स्थिति सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

असंजदसम्मादिट्ठिपहुडि जाव अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं
गलादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १८४ ॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहणणेण अंतोमुहुत्तं ॥ १८५ ॥

कुदो ? अण्णगुणं गत्तूण पडिणियत्तिय त चेव गुणमागदाणमंतोमुहुत्तंरुलभा ।

उक्कस्सेण पलिदोवमसदपुधत्तं ॥ १८६ ॥

अमंजडसम्मादिट्ठिस्स उच्चदे । त जहा— एकको अट्टाणीममतकम्मिओ देवैसु
उत्तण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२) विसुद्धो (३) वेदग-
त्तमत्त पडिण्णो (४) मिन्लत्त गदो अतरिदो त्थीमेदिट्ठिदि परिभमिय अते उत्तस-
त्तमत्तं पडिण्णो (५) । लद्धमतर । छागलियाणमेसे पडमसम्मचकाले सामणं गत्तूण
मदो वेदंतर गदो । पचहि अंतोमुहुत्तेहि उणय पलिदोवमसदपुधत्तमतर होदि । देखण-

अमयत्तसम्यग्दष्टिसे लेकर अप्रमत्तसयत्त गुणस्थान तरु प्रत्येक गुणस्थानगतीं
स्त्रीमेदियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है,
निरन्तर है ॥ १८४ ॥

यह सून सुगम है ।

उक्त गुणस्थानगले स्त्रीमेदियोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त
है ॥ १८५ ॥

क्योंकि, अन्य गुणस्थानको जाकर और लौटकर उसी ही गुणस्थानको आये हुए
जीवोंका अन्तर्मुहूर्त अलग पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमशतपृथक्त्व है ॥ १८६ ॥

इनमेंसे पहले खीवेदी असयत्तसम्यग्दष्टि जीवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं— मोहकी
अट्टाईस कर्मप्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक जीव देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्ति-
योंसे पर्याप्त हो (१) विधाम ले (२) विगुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त
हुआ (४) । पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हो, खीवेदकी स्थितिप्रमाण
परिभ्रमणकर अन्तमें उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (५) । इस प्रकार अन्तर लब्ध
हुआ । प्रथमोपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलिया अवशेष रहने पर सासादनगुण
स्थानको जाकर मरा और अन्य वेदको गया । इस प्रकार पाच अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पल्यो-
पमशतपृथक्त्वप्रमाण अन्तर होता है ।

१ अमयत्तसम्यग्दष्टिप्राप्यप्रमत्तानाना नानाजीवपंथया नारुयतरम् । स सि १, ८

२ एकजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्त । स सि १, ८

३ उत्तरेण पल्योपमशतपृथक्त्वम् । स सि १, ८

वयण मुचे ऋण कदं ? ण, पुधचणिहेसेणेन तस्म अवगमादो ।

सजदासजदस्त उच्चदे- एकको अट्टारीसमोहसतकम्मिओ अण्णोदो त्थीवेदो उअण्णो वे मासे गभे अच्छिदूण णिक्खतो द्विअमपुधत्तेण त्रिमुद्धो वेदगसम्मत्त सजमा सजम च जुगर पडिअण्णो (१) । मिच्छत्त गत्तूणतरिदो त्थीवेदद्विदिं परिअभिय अते पढममम्मत्त देमसजम च जुगर पडिअण्णो (२) । आमाण गंतूण मदो देवो जादो । वेदि मुद्धुत्तेहि दिवसपुधत्ताहिय-वेमासेहि य ऊणा त्थीवेदद्विदी उक्कस्सतर होदि ।

पमत्तम्म उच्चदे- एवो अट्टारीसमोहमतकम्मिओ अण्णोदो त्थीवेदमपुमेषु उअण्णो । गन्मादिअट्टारिसओ वेदगमम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगर पडिअण्णो (१) । पुणो पमतो जादो (२) । मिच्छत्त गत्तूणतरिदो त्थीवेदद्विदिं परिअभिय पमतो जादो । लद्धमत्त (३) । मदो देवो जादो । अट्टममेहि तीहि अंतोमुद्धुत्तेहि ऊणिया त्थीवेदद्विदी लद्धमुक्कस्सतर । एअमप्पमत्तस्स पि उक्कस्सतर भाणिदब्ब, निमैसाभावा ।

शंका—स्वप्नमें 'देशोन' घेसा; वचन क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, 'पृथक्च' इस पदके निर्देशसे ही उस देशोनताका ज्ञान हो जाता है ।

खावेदा सयतासयत जीवना उत्त्थ अन्तर कहते हैं- मोहनीयकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक अन्य वेदी जीव, खावेदियोंमें उत्पन्न हुआ । दो मास गर्भमें रह कर निकला और दिवसपृथक्त्वसे विगुद्ध हो वेदकसम्यक्त्व और सयमा सयमको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हो स्त्री वेदकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण कर अन्तमें प्रथमोपशमसम्यक्त्व और देशसयमको एक साथ प्राप्त हुआ (२) । पुन सासात्न गुणस्थानको जाकर मरा और देव होगया । इस प्रकार दो मुहूर्त और दिवसपृथक्त्वसे अधिक दा माससे कम खावेदकी स्थिति खावेदी सयतासयतका उत्त्थ अन्तर होता है ।

खावेदी प्रमत्तसयतना उत्त्थ अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक अन्य वेदी जीव, खावेदी मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । गर्भको आवि लेकर आठ वर्षका हो वेदकसम्यक्त्व और अप्रमत्त गुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पुन प्रमत्तसयत हुआ (२) । पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हो खावेदकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तमें प्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ (३) । पश्चात् मरा और देव हुआ । इस प्रकार आठ वर्ष और तीन अन्तमुहूर्तोंसे कम खावेदकी स्थितिप्रमाण उत्त्थ अन्तर लब्ध हुआ ।

इसी प्रकारसे खावेदी अप्रमत्तसयतका भी उत्त्थ अन्तर कहना चाहिए क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

दोहमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च जहणुक्कस्समोघं ॥ १८७ ॥

कुदो? एगममय-नासपुधत्तरेहि ओघादो भेदाभावा ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ १८८ ॥

सुगममेदं ।

उक्कस्सेण पालिदोवमसदपुधत्तं ॥ १८९ ॥

त जहा—एकओ अण्णेदेओ अट्टाणीसमोहसतकम्मिओ त्थीरेदमणुसेसुवण्णो । अट्ट-
वम्मिओ सम्मत्त सज्जम च जुगग पडिण्णो (१) । अणताणुवधी तिसजोडय (२)
दसणमोहणीयमुवसामिय (३) अप्पमत्तो (४) पमत्तो (५) अप्पमत्तो (६) अपुच्चो
(७) अणियट्ठी (८) सुहुमो (९) उवमत्तो (१०) भूओ पटिणियत्तो सुहुमो (११)
अणियट्ठी (१२) अपुच्चो (१३) हेट्ठा पडिदूणतरिदो त्थीरेदडिदि भमिय अण्णो
सज्जम पडिण्णियज्जिय कदकरणिज्जो होदूण अपुणुवसामगो जादो । लद्धमतरं । तदो णिहा-

स्त्रीवेदी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों उपशामकोंका अन्तर कितने
काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर ओघके
समान है ॥ १८७ ॥

क्योंकि, जघन्य अन्तर एक समय ओर उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है, इनकी अपेक्षा
ओघसे इनमें कोई भेद नहीं है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १८८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पर्योपमशतपृथक्त्व है ॥ १८९ ॥

जैसे—मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक अन्य वेदी जीव,
स्त्रीवेदी मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और आठ वर्षका होकर सम्यक्त्व ओर सयमको एक साथ
प्राप्त हुआ (१) । पश्चात् अनन्तानुवन्धी कपायका तिसयोजन कर (२) दर्शनमोहनीयका
उपशाम कर (३) अप्रमत्तसयत (४) प्रमत्तसयत (५) अप्रमत्तसयत (६) अपूर्वकरण (७)
अनिवृत्तिकरण (८) सूक्ष्मनाम्पराय (९) और उपदान्तकपाय (१०) होकर पुन
प्रतिनिवृत्त हो सूक्ष्मनाम्पराय (११) अनिवृत्तिकरण (१२) और अपूर्वकरणसयत हो (१३)
नीच गिरकर अन्तरको प्राप्त हुआ और स्त्रीवेदीकी स्थितिप्रमाण परिध्रमण कर अन्तमें
सयमको प्राप्त हो वृत्तव्यवेदक होकर अपूर्वकरण उपशामक हुआ । इस प्रकार

१ इयोरुपघमरयानानाज्जीवापेक्षया सामायवत् । स ति १, ८

२ एकजीव प्रति जघनेनान्तर्मुहूर्त । स ति १, ८

३ उत्कृष्ट पर्योपमशतपृथक्त्व । स ति १, ८

पयलाण वधे वोन्डिण्णे मद्रो देमो जादो । अट्टस्सेहि तेरमतोमुहुत्तेहि य अपुच्चकरणद्वाए सत्तमभागेण च उणिया सगट्ठिदी अतर । अणियट्ठिस्म पि एअ चेर । णअरि वारम अंतोमुहुत्ता एगममओ च वत्तवो ।

दोण्ह खवाणमंतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय' ॥ १९० ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ १९१ ॥

अप्पमत्तत्थीयेदाण वामपुधत्तेण णिणा अण्णास्म अतरस्म अणुअलभादो ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर' ॥ १९२ ॥

सुगममेद ।

पुरिसवेदएसु मिच्छादिट्ठी ओघ' ॥ १९३ ॥

अन्तर लय हुआ । पाछे निद्रा और प्रचलाके वध विच्छेद हो जाने पर मरा ओर देव होगया । इस प्रकार आठ वर्ष ओर तेरह अन्तमुहूर्तोंमें, तथा अपूर्णकरण कालके सातवें भागसे ही अपनी स्थितिप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर है । अनिवृत्तिकरण उपशामरुका भी इसी प्रकारसे अन्तर होता है । विशेष बात यह है कि उनके तेरह अन्तमुहूर्तोंके स्थानपर बारह अन्तमुहूर्त ओर एक समय कम कहना चाहिए ।

स्त्रीयेदी अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों क्षपकोंका अन्तर नितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है ॥ १९० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

स्त्रीयेदी अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण क्षपकोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ १९१ ॥

क्योंकि, अप्रमत्तसयत स्त्रीयेदियोंका वर्षपृथक्त्वके अतिरिक्त अन्य अन्तर नहीं पाया जाता है ।

एक जीवकी अपेक्षा उक्त दोनों गुणस्थानभर्ता जीवोंका अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १९२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

पुरुषयेदियोंमें मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर ओघके समान है ॥ १९३ ॥

१ इयो क्षपस्थानानाजीवापत्तया जघन्येक समयः । स वि १, ८

२ उत्तरेण वर्षपृथक्त्वम् । स सि १, ८

३ पृक्जीव प्रति नास्त्यतरम् । स सि, १, ८

४ पुत्रेषु मिथ्याये सामान्यत्वं । स वि १, ८

कुदो? णाणाजीवं पडुच्च अंतराभाणेण, एगजीमिसयअतोमुहुत्त-देसणनेच्छानट्टि-
सागरोपमत्तरेहि य तदो भेदाभागा ।

सासणसम्मादिट्टि-सम्मादिच्छादिट्टीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ १९४ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ॥ १९५ ॥

एदं पि सुगम ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्तं ॥ १९६ ॥

एदं पि सुगमं ।

उक्कस्सेण सागरोवमसदपुधत्तं ॥ १९७ ॥

त जहा- एकको अण्णपेदो उत्रममम्मादिट्टी सासण गतूण सासणद्वाए एगो
समओ अत्थि त्ति पुरिस्रोदो जादो । सासणगुणेण एगसमय दिट्टो, निदियसमए मिच्छत्त

क्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे, एक जीवकी अपेक्षा
जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट कुछ कम दो दृष्टासठ सागरोपम अन्तरकी अपेक्षा
योगमिथ्यादृष्टिके अन्तरसे पुरपवेदी मिथ्यादृष्टियोंके अन्तरमें कोई भेद नहीं है ।

पुरुपवेदी सामादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर कितने काल
होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ १९४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमका असख्यातना भाग है ॥ १९५ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

पुरुपवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा
जघन्य अन्तर क्रमशः पल्योपमका असख्यातना भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ १९६ ॥

यह सूत्र भी सुबोध है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर सागरोपमशतपृथक्त्व है ॥ १९७ ॥

जैसे- अन्य वेदवाला एक उपशमसम्यग्दृष्टि जीव, सासादन गुणस्थानमें जाकर,
सासादन गुणस्थानके कालमें एक समय अवाशिष्ट रहने पर पुरपवेदी होगया और
सासादन गुणस्थानके साथ एक समय दृष्टिगोचर हुआ । द्वितीय समयमें मिथ्यात्वको

१ सामादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टोर्नाजावापेक्षया सामायवत् । स ति १, ८

२ एकजीव प्रति जघनेन पल्योपमानल्ययमागोऽन्तर्मुहूर्तश्च । स ति १, ८

३ उत्तर्येण सागरोपमशतपृथक्त्वम् । स ति १, ८

गतूणतरिदो पुरिमरेड्डिदिं भमिय अत्रमाणे उत्रमसम्मत्त घेत्तूण सामण पडिउण्णो ।
विदियम्मणए मद्रो देसेसु उत्रण्णो । एउ वि ससऊगमागरोउममदपुवत्तमुक्कस्मतर होदि ।

मम्मामिन्छादिट्टिस्म उच्चदे- एक्को अट्टाणीससत्तकम्मिओ अण्णोदेदो देवेसु
उत्रण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) रिस्मतो (२) तिसुद्धो (३) मम्मा-
मिन्छत्त पडिउण्णो (४) मिच्छत्त गतूणतरिदो मगट्टिदिं परिभमिय अते सम्मामिच्छत्त
गदो (५) । लद्धमतर । अण्णमुण गतूण (६) अण्णोदे उत्रण्णो । छहि अतोमुहुत्तेहि
ऊग मागरोउमसदपुवत्तमुक्कस्मतर होदि ।

असजदसम्मादिट्टिप्पहुडि जाव अप्पमत्तसजदाणमंतर केवचिर
कालादो हेदि णागाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर' ॥ १९८ ॥

सुगममेद ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ॥ १९९ ॥

एद पि सुगम ।

जाकर अंतरको प्राप्त हुआ । पुरुषवेदकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण करके आयुके अन्तमें
उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण कर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ । पश्चात् द्वितीय
समयमें मरा ओर देवोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार उक्त जीवोंका दो समय कम सागरोपम
शतपृथस्त्य अंतर होता है ।

पुरुषवेदी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवका उत्पष्ट अंतर कहते हैं- मोहकमकी
अट्टाइस प्रतियौंकी सत्तात्राग फोइ एक अन्य वेदी जीव, देवोंमें उत्पन्न हुआ, छहों
पयाप्तियोंसे पयाप्त हो (१) विधाम ले (२) तिशुद्ध हो (३) सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त
हुआ (४) । पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हो अपनी स्थितिप्रमाण परि-
भ्रमण करने अतमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (५) । इस प्रकार अंतर लघु होगया ।
तत्पश्चात् अन्य गुणस्थानको जाकर (६) अन्य वेदमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार छह
अतमुहुत्तोंस कम सागरोपमशतपृथस्त्य पुरुषवेदी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवका उत्पष्ट
अंतर होता है ।

अमयतमम्यगदृष्टिमे लेकर उप्रमत्तमयत गुणस्थान तरु पुरुषवेदी जीवोंका अन्तर
मिनने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १९८ ॥

यह स्रष्ट सुगम है ।

उक्त गुणस्थानरती जीवोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १९९ ॥

यह स्रष्ट भी सुगम है ।

१ अयतमम्यगदृष्टिप्रमाणगतानां नानाजीवोपेक्षया नास्त्यतस् । स ति १, ८

२ एकीव प्रति जघन्यनान्तमुहूर्त । स ति १, ८

उक्कस्सेण सागरोवमसदपुधत्तं ॥ २०० ॥

अमजदसम्मादिट्ठिस्म उच्चदे- एकको अट्ठापीससतकम्मिओ अण्णवेदो देवेसु उअण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२) भिसुद्धो (३) वेदगसम्मत्त पडिअण्णो (४) । मिच्छत्त गत्तूणतरिदो सगाट्ठिदिं भमिय अंते उअममम्मत्त पडिअण्णो (५) । छाअलियाअमेमे उअसममम्मत्तकाले आसाण गत्तूण मदो देवेसु उअण्णो । पंचहि अंतोमुहुत्तेहि उण मागरोवमसदपुधत्तमतर होदि ।

मंजदामजदस्म वुच्चदे- एकको अण्णवेदो पुरिमवेदेसु उअण्णो । वे मासे गच्छे अन्निट्ठदूण णिकरतो दिअसपुवत्तेण उअमममम्मत्त सजमामजम च जुगं पडिअण्णो । उअमममम्मत्तद्वारा छाअलियाओ अरियि त्ति सामण गदो (१) मिच्छत्त गत्तूण पुरिमवेद-ट्ठिदिं परिभमिय अंते मणुमेसु उअण्णो । कट्ठकरणिज्जो होदूण संजमामजम पडिअण्णो (२) । लद्धमतर । तदो अप्पमत्तो (३) पमत्तो (४) अप्पमत्तो (५) । उअरि छ अंतोमुहुत्ता । एअ वेहि मामेहि तीहि दिअसेहि एककारमेहि अतोमुहुत्तेहि य उणा पुरिस-वेदट्ठिदी उक्कस्मततर होदि । किं कारण अतरे लद्धे मिच्छत्त वेदूण अण्णवेदेसु ण

असंयतादि चार गुणस्थानरतीं पुरुपवेदियांका उत्कृष्ट अन्तर सागरोपमशत-पृथक्त्वं हे ॥ २०० ॥

असयतसम्यग्दष्टि पुरुपवेदी जीवका उत्कृष्ट अन्तर कहते ह- मोहसर्मकी अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सत्ताजाला कोई एक अन्य वेदी जीव देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विद्याम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४) । पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हो अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तमें उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (५) । उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आअलिया अअशेष रहने पर सासादनको जाकर मरा और देवोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार पाच अन्तर्मुहूर्तोंसे कम सागरोपमशतपृथक्त्व पुरुपवेदी असयतसम्यग्दष्टि जीवोंका अन्तर होता ह ।

सयतासयत पुरुपवेदी जीवका उत्कृष्ट अन्तर कहते ह- कोई एक अय वेदी जीव पुरुपवेदियोंमें उत्पन्न हुआ । दो मास गर्भमें रहकर निकलता हुआ दिवस पृथक्त्वसे उपशमसम्यक्त्व और सयमासयमत्रो एक साथ प्राप्त हुआ । जब उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलिया रहीं तब सासादनगुणस्थानको प्राप्त हो (१) मिथ्यात्वको जाकर पुरुपवेदकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तमें मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और वृत्तव्यपेदक होकर सयमासयमको प्राप्त हुआ (२) । इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया । पश्चात् अप्रमत्त सयत (३) प्रमत्तसयत (४) और अप्रमत्तसयत हुआ (५) । इनमें ऊपरके गुणस्थानों-सम्यन्धी छह अन्तर्मुहूर्त और मिलाये । इस प्रकार दो मास, तीन दिन और ग्यारह अन्त-मुहूर्तोंसे कम पुरुपवेदकी स्थिति ही पुरुपवेदी सयतासयतका उत्कृष्ट अन्तर होता हे ।

ज्ञाना-अन्तर प्राप्त हो जानेपर पुन मिथ्यात्वको ले जाकर अय वेदियोंमें

उष्पादिदो ? ण एम दोसो, जेण कालेण मिच्छत्त गत्तूण आउअ वधिय अण्णवेदेसु उग्रज्जनिदि, सो कालो भिज्जणकालादो सखेज्जगुणो त्ति कट्ठु अण्णपाइदत्तादो । उग्ररिह्णण पि एद चेय कारण उत्तव्व । पमत्त अप्पमत्तमनदाण पच्चिदियपज्जत्तभगो । णररि निमेम जाणिय वत्तव्व ।

दोण्हमुवसामगाणमंतर केवचिर कालादो हेदि, णाणाजीवं पडुच्च ओघ' ॥ २०१ ॥

सुगममेद ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त' ॥ २०२ ॥

एद पि सुगम ।

उत्कस्सेण सागरोवमसदपुधत्त' ॥ २०३ ॥

उत्पन्न नहीं कराया, इसका क्या कारण है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जिस कालसे मिथ्यात्वकी जापर और आयुको बाधकर अन्य वेदियोंमें उत्पन्न होता है, वह काल सिद्ध होनेवाले कालसे सख्यातगुणा है, इस अपेक्षासे उसे मिथ्यात्वमें ले जाकर पुन अन्य वेदियोंमें नहीं उत्पन्न कराया ।

ऊपरके गुणस्थानोंमें भी यही कारण कहना चाहिए । पुरुषवेदी प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयतोंका भी अन्तर पचेन्द्रिय पर्याप्तोंके समान है । केवल इनमें जो विशेषता है उसे जानकर कहना चाहिए ।

पुरुषवेदी अपूर्णकरण और अनिष्टात्तिकरण, इन दो उपशामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा इन दोनों गुणस्थानोंका अन्तर ओघके समान है ॥ २०१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २०२ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर सागरोपमशतपृथक्त्व है ॥ २०३ ॥

१ इयमरूपशमक्यानानाजावापेक्षया सामान्यम् । स ति १, ८

२ एकजीव प्रति जघयेनान्तपृहत् । स मि १, ८

३ उत्तरेण सागरोपमशतपृथक्त्वम् । स मि १, ८

त जहा-एक्को अट्टापीससत्तकम्मिओ अण्णवेदो पुरिसवेदमणुसेसु उववण्णो अट्टाप्पिस्सिओ जादो । सम्मत्त संजमं च जुगं पडिण्णो (१) । अणताणुग्धिं निसजोइय (२) दसणमोहणीयमुत्तमिय (३) अप्पमत्तो (४) पमत्तो (५) अप्पमत्तो (६) अपुच्चो (७) अणियट्ठी (८) सुट्ठमो (९) उग्गमत्तकमाओ (१०) पडिणियत्तो सुट्ठमो (११) अणियट्ठी (१२) अपुच्चो (१३) हेट्ठा परियट्ठिय अंतरिदो । सागरो-वममदपुधत्त परिभमिय कट्ठरणिज्जो होट्ठण सजम पडिणज्जिय अपुच्चो जादो । लद्धमंतरं । उग्गरे पच्चिदियभगो । एवमट्टवस्मेहि एग्गुणीसअतोमुट्ठुत्तेहि य ऊणा सगट्ठिदी अतर होदि । अणियट्ठिस्म मि एव चेत्त वत्तव । णग्गरे अट्टवस्मेहि सत्तापीसअतो-मुट्ठुत्तेहि य ऊण सागरोपमसदपुवत्तमतर होदि ।

दोण्हं खवाणमंतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २०४ ॥

सुगममेद ।

जेसे-मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक अन्यवेदी जीव पुरपवेदी मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । आठ वर्षका होकर सम्यक्त्व और सयमको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । अनन्तानुग्धीका विसयोजन कर (२) दर्शनमोहनीयका उपशमन कर (३) अप्रमत्तसयन (४) प्रमत्तसयन (५) अप्रमत्तसयन (६) अपूर्वकरण (७) अनिवृत्तिकरण (८) मूलमसाम्पराय (९) उपशान्तरूपय (१०) पुन लौटकर सूक्ष्म-साम्पराय (११) अनिवृत्तिकरण (१२) अपूर्वकरण (१३) होता हुआ नीचे गिरकर अन्तरको प्राप्त हुआ । सागरोपमशतपृथक्त्वप्रमाण परिभ्रमण कर कृतकृत्यवेदकसम्यक्त्वी होकर सयमको प्राप्त कर अपूर्वकरणसयन हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । इसके ऊपर का कथन पचेन्द्रियोंके समान है । इस प्रकार आठ वर्ष और उनतीस अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी स्थितिप्रमाण पुरपवेदी अपूर्वकरण उपशामकका उत्कृष्ट अन्तर होता है । अनिवृत्तिकरण उपशामरूपा भी इसी प्रकारसे अन्तर कहना चाहिए । विशेष बात यह है कि आठ वर्ष और सत्ताईस अन्तर्मुहूर्तोंसे कम सागरोपमशतपृथक्त्व इनका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

पुरुपवेदी अपूर्वकरणमयत और अनिवृत्तिकरणमयत, इन दोनों क्षयकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है ॥ २०४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्कस्सेण वासं सादिरेयं ॥ २०५ ॥

त जहा- पुरिसवेदेण अपुञ्जगुण पडिण्णा सव्वे जीया उअरिमगुण गदा । अतरिदमपुञ्जगुणद्वान् । पुणो छमामेसु अटिककतेसु सव्वे इत्थिवेदेण चैव सव्वग सेदिमास्सदा । पुणो चत्तारि वा पच्च या मामे अतरिदूण समगसेदि चढमाणा णजुमप वेदोएण चढिदा । पुणो वि एस्स दो मामे अतरिदूण इत्थिवेदेण चढिदा । एव सत्तेज वारमित्थि-णजुमपवेदोएण चैव समगसेदि चढागिय पच्छा पुरिसवेदोएण समगसेदि चढिदे नाम सादिरेयमतर होदि । कुदो ? णिरतर छम्मामतरस्स जसभमादो । एअमणि-यद्धिस्स वि वत्तव्व । केसु वि सुत्तपोत्थएसु पुरिसवेदस्सतर छम्मासा ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरंतरं ॥ २०६ ॥

कुदो ? सममाण पडिणियचीए जसभमा ।

णउसयवेदएसु मिच्छादिट्ठीणमतर केवचिरं कालादो होदि,
णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतरं, णिरतरं ॥ २०७ ॥

उक्त दोना क्षपकोरा उत्कृष्ट अन्तर माधिक एक वर्ष है ॥ २०५ ॥

जैसे- पुण्यवेदके द्वारा अपूर्वकरणक्षपण गुणस्थानको प्राप्त हुए सभी जीव ऊपरके गुणस्थानोंको चले गए और अपूर्वकरणगुणस्थान अन्तरको प्राप्त होगया । पुन छह मास व्यतीत हो जाने पर सभा जाव खीवेदके द्वारा ही क्षपणश्रेणी पर आरुह हुए । पुन चार या पाच मासका अन्तर करके नपुंसकवेदके उदयसे कुछ जीव क्षपणश्रेणीपर चढ़े । पुन एन दो मास अन्तरकर कुछ जीव खीवेदके द्वारा क्षपणश्रेणीपर चढे । इस प्रकार सत्यात चार खीवेद और नपुंसकवेदके उदयसे ही क्षपणश्रेणीपर चढ़ा करके पीछे पुण्यवेदके उदयसे क्षपणश्रेणी चढनेपर माधिक यथप्रमाण अन्तर हो जाता है, क्योंकि, निरन्तर छह मासके अन्तरसे अधिक अन्तरना होना असम्भव है । इसी प्रकार पुण्यवेदी अनिर्वाच्यकरणक्षपणका भी अन्तर कहना चाहिये । कितनी ही सूत्रपौयियोंमें पुण्यवेदका उत्कृष्ट अन्तर छह मास पाया जाता है ।

दोनों क्षपकोरा एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २०६ ॥

क्योंकि, क्षपकोरा पुन लौटना असम्भव है ।

नपुंसकपौयियोंमें मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २०७ ॥

१ उक्कस्सेण मयरा सादिरं । स सि १ ८ २ एगजीव प्रति नास्त्यतरम् । स सि १, ८

३ अपुण्यवेदसु मिच्छादिट्ठीणमतरा नास्त्यतरम् । स सि १, ८

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २०८ ॥

एदं पि सुगमं ।

उक्कस्सेण तेत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि ॥ २०९ ॥

त जघा- एक्को मिच्छादिट्ठी अट्ठासीससत्तकम्मिओ सत्तमपुढ्डीए उअवण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२) विमुद्धो (३) सम्मत्त पडिबज्जिय अतरिदो । अत्ताणे मिच्छत्त गत्तूण (४) आउअं उधिय (५) विस्समिय (६) मदो तिरिक्खो जादो । एअं छहि अतोमुद्धुचेहि उणाणि तेत्तीस सागरोवमाणि उक्कस्संतर होदि ।

सासणसम्मादिट्ठिपहुडि जाव अणियट्ठिउवसामिदो त्ति मूलोघं

॥ २१० ॥

यह सूत्र सुगम हे ।

एक जीवकी अपेक्षा नपुमरूपेदी मिथ्यादृष्टियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २०८ ॥

यह सूत्र भी सुगम हे ।

एक जीवकी अपेक्षा नपुमरूपेदी मिथ्यादृष्टियोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागरोपम है ॥ २०९ ॥

जैसे- मोहकर्मकी अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सत्तागाल कोई एक मिथ्यादृष्टि जीव सातवीं पृथिवीमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विधाम ले (२) निमुद्ध हो (३) सम्यक्त्वको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ । आयुके अन्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त होकर (४) आयुको बाध (५) विधाम ले (६) मरा ओर तिर्यक् हुआ । इस प्रकार छह अन्तर्मुहूर्तोंमें कम तेतीस सागरोपमकाल नपुसरूपेदी मिथ्यादृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

सामादनमभ्यग्दृष्टिमे लेकर अनिवृत्तिकरण उपशामक गुणस्थान नरु नपुमरूपेदी जीवोंका अन्तर मूलोघके समान है ॥ २१० ॥

१ एकजीव प्रति जघयेनान्तर्मुहूर्त । स वि १, ८

२ उत्कर्षण त्रयमिदमागोपमाणि देशानामि । स वि १, ८

३ सागादनमभ्यग्दृष्टिनिवृत्त्युपशमनात्तानां मामापोनम् । स वि १, ८.

दुदो ? सामणमम्मादिद्विस्म गाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगममओ, उक्कस्सेण पल्लिनेमस्स अससेज्जदिभागो, एगजीव पडुच्च जहण्णेण पल्लिदोमस्स अससेज्जदिभागो, उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्ट देसूण । सम्मामिच्छादिद्विस्म गाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगममओ, उक्कस्सेण पल्लिदोमस्स अससेज्जदिभागो, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्ट देसूण । असजदग्गम्मादिद्विस्म गाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्ट देसूण । सनदासजदस्म गाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्ट देसूण । पमत्तस्म गाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्ट देसूण । अप्पमत्तस्म गाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्ट देसूण । अप्पव्वरुणस्म गाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगममओ, उक्कस्सेण रासपुधत्त, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्ट देसूण । एग्गणियद्विस्स णि ति । एदेमिमेदेहि ओघादो भेदाभावा ।

क्योंकि, नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टिना नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अतर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्लोपमना असख्यातवा भाग है; एक जीवकी अपेक्षा जघय अन्तर पल्लोपमना अमरयातवा भाग और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । सम्यग्मिथ्यादृष्टिना नाना जीवोंकी अपेक्षा जघय अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अतर पल्लोपमना असख्यातवा भाग है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अतमुद्दत और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । असयतसम्यग्दृष्टिना नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, एक जीवकी अपेक्षा जघय अन्तर अन्तमुद्दत और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । स्वयतासयतका नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, एक जीवकी अपेक्षा जघय अन्तर अन्तमुद्दत और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । प्रमत्तसयतका नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे अतमुद्दत और उत्कृष्टसे कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन प्रमाण है । अप्रमत्तसयतका नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे अतमुद्दत और उत्कृष्टसे कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है । अपूर्वरुणका नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय और उत्कृष्टसे वपपृथक्त्व, तथा एक जीवकी अपेक्षा जघयसे अतमुद्दत और उत्कृष्टसे कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अन्तर है । इसी प्रकार अनिवृत्तिकरणका भी अन्तर जानना चाहिए । इन उक्त जीवोंका उक्त जघन्य और उत्कृष्ट अन्तोंकी अपेक्षा बोधसे कोई भेद नहा है ।

दोण्हं खवाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च
जहण्णेण एगसमयं ॥ २११ ॥

सुगममेद सुत्त ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ २१२ ॥

कुदो ? अप्पसत्थयेदत्तादो ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २१३ ॥

सुगममेदं ।

अवगदवेदएसु अणियट्ठिउवसम-सुहुमउवसमाणमंतरं केवचिरं
कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २१४ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ २१५ ॥

कुदो ? उवसामगत्तादो ।

नपुसकरोदी अपूर्णकरणसयत्त और अनिवृत्तिकरणसयत्त, इन दोनों क्षपकोंका अन्तर
कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ २११ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त दोनों नपुसकरोदी क्षपकोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ २१२ ॥

फ्योंकि, यह अप्रशस्त वेद है (ओग अप्रशस्त वेदमे क्षपकश्रेणी चढ़नेवाले जीव
बहुत नहीं होते) ।

उक्त दोनों नपुसकरोदी क्षपकोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर
है ॥ २१३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अपगतवेदियोंमें अनिवृत्तिकरण उपशामक और सूक्ष्मसाम्पराय उपशामकोंका
अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर
है ॥ २१४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त दोनों अपगतवेदी उपशामकोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ २१५ ॥

फ्योंकि, ये दोनों उपशामक गुणस्थान हैं (और ओघमें उपशामकोंका इतना
ही उत्कृष्ट अन्तर घटलाया गया है) ।

१ द्रव्यो क्षपस्यो खिवेदवत् । स ति १, ८

२ अपगतवेदेषु अनिवृत्तिवदतोपशामसूक्ष्मसाम्परायोपशामकयोर्नानाजीवोपेक्षया सामान्योक्तम् । स ति १, ८

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ २१६ ॥

कुदो ? उतरि चडिय हेडा ओदिण्णस्स अतोमुहुत्ततरुलंभा ।

उक्कस्सेण अतोमुहुत्तं ॥ २१७ ॥

सुगममेद ।

उवसंतकसायवीदरागळदुमत्थाणमंतरं केवचिर कालादो होदि,
णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ॥ २१८ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण वासपुधत्त ॥ २१९ ॥

कुदो ? एगसारसुसममेदिं चडिय ओदरिदूण हेडा पडिय अतरिदे उक्कस्सेण
उससमेदीए वामपुधत्ततरुलंभा ।

उक्त दोनों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त
है ॥ २१६ ॥

फर्सेकि, ऊपर चढ़कर नाचे उतरनेवाले जीवके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया
जाता है ।

उक्त दोनों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त
है ॥ २१७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उपशान्तरूपायनीतरागळदुमत्थाका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ २१८ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उपशान्तरूपायनीतरागळदुमत्थाका नाना जीवोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व
है ॥ २१९ ॥

फर्सेकि, एकवार उपशामधेणीपर चढ़कर तथा उतर नीचे गिरकर उत्तरसे
उपशामधेणीका वर्षपृथक्त्वप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

१ एगजीव प्रति जघन्यमुहूर्तं चातमुहूर्त । स मि १, ८

२ उपशान्तरूपायनी नाना जीवोंकी अपेक्षा सामान्यवत् । स मि १, ८

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २२० ॥

उपरि उपमतरुसायस्स चडणाभावा । हेट्ठा पडिदे णि अगगद्वेदत्तणेण चैय
उपसंतगुणट्ठाणपडिउज्जणे मभवाभावा ।

अणियट्ठिखवा सुहुमखवा खीणकसायवीदरागछदुमत्था अजोगि-
केवली ओघं ॥ २२१ ॥

कुटो ? अगगद्वेदत्त पडि उहयत्थ अत्थत्रिसेसाभावा ।

सजोगिकेवली ओघं ॥ २२२ ॥

सुगममेदं ।

एव वेदमगणा समात्ता ।

कसायाणुवादेण कोधकसाइ-माणकसाइ-मायकसाइ-लोहकसाइसु
मिच्छादिट्ठिपहुडि जाव सुहुमसांपराइयउवसमा खवा ति मणजोगि-
भंगो ॥ २२३ ॥

उपशान्तरूपायका एव जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २२० ॥

क्याकि, उपशान्तरूपायवीतरागके ऊपर चढनेका अभाव हे । तथा नीचे गिरने
पर भी अपगतवेदरूपसे ही उपशान्तरूपाय गुणस्थानको प्राप्त होना सम्भव नहीं है ।

अपगतवेदियोंमें अनिवृत्तिकरणक्षपक, सूक्ष्मसाम्परायक्षपक, क्षीणरूपायवीतराग-
छन्नस्थ और अयोगिकेवली जीवोंका अन्तर ओघके समान है ॥ २२१ ॥

क्योंकि, अपगतवेदत्वके प्रति ओघप्ररूपणा ओर वेदमार्गणाकी प्ररूपणा, इन
दोनोंमें कोई अर्थकी विशेषता नहीं हे ।

सयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ २२२ ॥

यह खून सुगम है ।

इस प्रकार वेदमार्गणा समाप्त हुई ।

रूपायमार्गणाके अनुवादसे क्रोधरूपायी, मानरूपायी, मायारूपायी और लोभ-
कपायियोंमें मिथ्यादृष्टिमें लेकर सूक्ष्मसाम्पराय उपशामक और क्षपक तक प्रत्येक
गुणस्थानवर्ती जीवोंका अन्तर मनोयोगियोंके समान है ॥ २२३ ॥

१ एकजीव प्रति नास्त्यतस् । स मि १, ८

२ क्षेपाणां सामाययन् । स सि १, ८

३ कसायाणुवादेन क्रोधमानमायालोभरूपायाणां मिथ्यादृष्ट्यापनिवृत्त्युपशमरान्ताना मनोयोगिवत् । द्वयो
क्षपकयोर्नानाजीवपक्षया च यथेनेन समय । उरूपण मवन्तर सातिरेव । केवललोभस्य सूक्ष्मसाम्परायोपशमनस्य
नानाजीवपक्षया मामाययन् । एकजीव प्रति नास्त्यतस् । क्षपकस्य तस्य मामान्यवत् । स मि १, ८

मिच्छादिद्वि—अमजदमम्मादिद्वि—सजदासजद—पमत्त—अप्पमत्तसत्ताणं मण-
जोगिभगो होदु, गाणेगनीर पडि अंतराभावेण साधम्मादो । सामणमम्मादिद्वि मम्मा
मिच्छादिद्वीण मणनोगिभगो होदु णाम, णाणाजीवजहण्णुक्कस्मेण एगसमय पलित्तेवमम
अर्मरेज्जनिभार्गतेरेहि, एगजीर पडि अतराभावेण च साधम्मादो । तिण्हमुत्तमभाणं
पि मणनोगिभगो होदु णाम, णाणाजीवजहण्णुक्कस्मेण एगसमयत्तमपुधत्ततेरेहि, एग
जीवम्मताराभावेण च साधम्मादो । ित्तु तिण्ह खयाण मणजोगिभगो ण घडेटे । इत्ता !
मणनोगस्सेव कमायाण उम्मासातराभावा । त हि कध णव्वदे ? अप्पिदरुमायवदित्तिवदि
तिदि कमाएहि एग दू ति-सजोगरुमेण खयाणमेहि चढमाणायं बहु-उत्तस्वलभा ? ण एम
दोसां, ओघेण महप्पिदमणजोगिभगण्णहाणुपत्तीदो । चदुण्ह कमायाणमुक्कस्मतरस्स
उम्मासमेत्तस्सेव मिद्वीदो । ण पाहुडसुत्तेण वियहिचारो, तस्स भिण्णोउदेसत्तादो ।

शुश्रा—मिध्यादृष्टि, असत्यतन्म्यगृह्ये, सयतासयत, प्रमत्तसयत और अथ
मत्तसयतोंका अन्तर भेदे ही मनोयोगियोंके समान रहा आवे, क्योंकि, नाना जाव और
एक जायकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे समानता पाई जाती है । सासादनसम्यगृह्ये
और सम्यग्मिध्यादृष्टियोंका भी अन्तर मनोयोगियोंके समान रहा आवे, क्योंकि, नाना
जायोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय और उत्तृष्ट अन्तर पल्योपमके असत्थातव
भागकी अपेक्षा, तथा एक जायकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे समानता पाई जाती है ।
तीनों उपनामकोंका भी अन्तर मनोयोगियोंके समान रहा आवे, क्योंकि, नाना जीवोंके
जघन्य और उत्तृष्ट अन्तर प्रमत्त एक समय और चर्यपृथक्त्वकालमे, तथा एक जायकी
अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे समानता पाई जाती है । ित्तु तीनों शयकोंका अन्तर
मनोयोगियोंके समान घटित नहीं होता है, क्योंकि, मनोयोगियोंके समान कथायोंका
अन्तर छह मास नहीं पाया जाता है ?

प्रतिशुश्रा—यह कैसे जाना जाता है ?

प्रथिममाधान—विशिक्षित कथायसे व्यतिरिक्त दोष तीन कथायोंके द्वारा एक,
दो और तीन शयोंके प्रमत्त शयधर्णापर चढ़नवाले जीवोंका बहुत अन्तर पाया
जाता है ?

गमाधान—यह कोर दोष नहीं, क्योंकि, ओघके साथ विशिक्षित मनोयोगियोंके
समान कथन अन्यथा बन नहीं सकता है, तथा चारों कथायोंका उत्तृष्ट अन्तर छह
मासमात्र ही गिना जाता है । ऐसा माननेपर पाहुडसत्तये साथ व्यभिचार भा नहीं
जाता है, क्योंकि, उसका उपदेश भिन्न है ।

अरुसाईसु उवसंतकसायवीदरागछटुमत्थाणमंतरं केवचिरं
कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २२४ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्त ॥ २२५ ॥

उमममेदिमिसयत्तादो ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं ॥ २२६ ॥

हेट्ठा ओदरिय अरुमायत्तामिणामेण पुणो उममत्तपज्जाएण परिणमणाभावा ।

सीणकसायवीदरागछटुमत्था अजोगिकेवली ओघं ॥ २२७ ॥

सजोगिकेवली ओघं ॥ २२८ ॥

दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एव ममायमग्गणा समत्ता ।

अरुपायियोंमें उपशान्तरूपायनीतरागछटुमत्थाका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है ॥ २२४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ २२५ ॥

क्योंकि, यह गुणस्थान उपशमश्रेणीका विषयभूत है (और उपशामकोंका उत्कृष्ट
अन्तर इतना ही घटलाया गया है) ।

उपशान्तरूपायनीतरागछटुमत्थाका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर
है ॥ २२६ ॥

क्योंकि, नीचे उतरकर अरुपायताका विनाश हुए बिना पुन उपशातपर्यायके
परिणमनका अभाव है ।

अरुपायी जीवोंमें क्षीणरूपायनीतरागछटुमत्था और अयोगिकेवली जिनोंका अन्तर
ओघके समान है ॥ २२७ ॥

सयोगिकेवली जिनोंका अन्तर ओघके समान है ॥ २२८ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

इस प्रकार कपायमार्गणा समाप्त हुई ।

१ अरुपाययु उपशातपर्यायस्य नानाजीवापेक्षया मामा यत् । स मि १, ८

२ एकजीव प्रति नास्त्यतस्त् । स मि, १, ८

३ शेषाणां त्रयाणां सामा यवन् । स मि १, ८

पाणाणुवादेण मदिअण्णाणि सुदअण्णाणि विभंगणाणीसु
मिच्छादिट्टीणमतर केवचिर कालादो होदि, पाणेगजीवं पडुच्च णत्थि
अंतर, णिरतरं ॥ २२९ ॥

अच्छिण्णपमाहत्तादो गुणमकृतीए अभावादो ।

सासणसम्मादिट्टीणमतर केवचिर कालादो होदि, पाणाजीवं
पडुच्च ओघं ॥ २३० ॥

हुदो ? जहण्णुक्कस्सेण एगसमय पलिटोपमामरेज्जदिभागेहि साधम्मादो ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं ॥ २३१ ॥

हुदो ? पाणतरगमणे मग्गणणिणामादो ।

आभिणिवोहिय-सुद-ओहिणाणीसु असजदसम्मादिट्टीणमतर
केवचिर कालादो होदि, पाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतर, णिरतरं
॥ २३२ ॥

ज्ञानमार्गणाके अनुवादसे मत्स्यज्ञानी, श्रुताचानी और विभंगजानी जीवोंमें
मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी और एक जीवकी अपेक्षा
अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २२९ ॥

क्योंकि, इन तीनों अज्ञानवाले मिथ्यादृष्टियोंका अविच्छिन्न प्रवाह हानसे कुछ
स्थानके परिपुर्तनका अभाव है ।

तीनों अज्ञानवाले सासादनसम्यग्दृष्टियोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर औघके समान है ॥ २३० ॥

क्योंकि, जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पत्योपमके असम्मान
भागकी अपेक्षा समानता है ।

तीनों अज्ञानवाले सासादनसम्यग्दृष्टियोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है
निरन्तर है ॥ २३१ ॥

क्योंकि, प्ररूपणा क्रिय जानेवाले ज्ञानोंसे भिन्न ज्ञानोंको प्राप्त होने पर विभंग
मार्गणाका विनाश हो जाता है ।

आभिनिवोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और अधिज्ञानवालोंमें असयतसम्यग्दृष्टियोंका
अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २३२ ॥

१ ज्ञानानुवादेण मत्स्यज्ञानश्रुताज्ञानविभंगज्ञानिणु मिथ्यादृष्टेनानाजीवापेक्षया एक जीवापेक्षया वस्तु-
त्स । स ति १, ८ २ सासादनसम्यग्दृष्टेनानाजीवापेक्षया सामायकत् । स ति १, ८

३ पुरुर्जीव प्रति नास्त्यन्तरम् । स ति १, ८

४ आभिनिवोधिकज्ञानानुवादाधिज्ञानिणु अययतसम्यग्दृष्टेनानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । स ति १, ८

कुदो ? सच्चकालमविच्छिण्णपमाहत्तादो ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २३३ ॥

तं जहा- एको असजदसम्मादिट्ठी सजमासजम पडिण्णो । तत्थ सच्चलहुमतो-
मुहुत्तमच्छिय पुणो वि असजदसम्मादिट्ठी जादो । लद्धमतोमुहुत्तमतरं ।

उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूणं ॥ २३४ ॥

तं जहा- जो कोई जीवो अट्टाणीमसंतकम्मिओ पुव्वकोडाउट्टिदिसण्णिसम्मच्छिम-
पज्जत्तएसु उअण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) निसुद्धो (३)
वेदगसम्मत्त पडिण्णो (४) अतोमुहुत्तेण निसुद्धो संजमासजम गत्तंतरीदो । पुव्व-
कोडिकाल सजमासजमणुपालिदूण मदो देवो जादो । लद्ध चदुहि अतोमुहुत्तेहि ऊणिया
पुव्वकोडी अतर ।

ओधिणाणिसजदसम्मादिट्ठिस्स उच्चदे- एको अट्टाणीमसंतकम्मिओ सण्णि-
सम्मच्छिमपज्जत्तएसु उअण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२)
निसुद्धो (३) वेदगसम्मत्त पडिण्णो (४) । तदो अतोमुहुत्तेण ओधिणाणी जादो ।

पर्याकि, तीनों ज्ञानवाले असयतसम्यग्दृष्टियोंका सर्वकाल अविच्छिन्न प्रवाह
रहता है ।

तीनों ज्ञानवाले असयतसम्यग्दृष्टियोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर
अन्तर्मुहूर्त है ॥ २३३ ॥

जैसे- एक असयतसम्यग्दृष्टि जीव समयमासयमको प्राप्त हुआ । वहां पर सर्व
लघु अन्तर्मुहूर्त काल रह करके फिर भी असयतसम्यग्दृष्टि होगया । इस प्रकार अन्त
र्मुहूर्तप्रमाण अन्तर लघु हुआ ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटी है ॥ २३४ ॥

मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई जीव पूर्वकोटीकी आयुस्थिति-
वाले सभी सम्मूच्छिम पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ । छहाँ पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१)
विध्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४) ओर अन्तर्मुहूर्तसे
विशुद्ध हो समयमासयमको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ । पूर्वकोटीकालप्रमाण
सयमासयमको परिपालन कर मरा ओर देव हुआ । इस प्रकार चार अन्तर्मुहूर्तोंसे कम
पूर्वकोटीप्रमाण मति श्रुतज्ञानी असयतसम्यग्दृष्टिका अन्तर लघु हुआ ।

अवधिज्ञानी असयतसम्यग्दृष्टिका अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृति-
योंकी सत्तावाला कोई एक जीव सभी सम्मूच्छिम पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ । छहाँ
पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विध्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त
हुआ (४) । पश्चात् अन्तर्मुहूर्तसे अवधिज्ञानी होगया । अन्तर्मुहूर्त अवधिज्ञानके साथ रह

१ एकजीव प्रति जघयेनान्तर्मुहूर्त । स सि १, ८

२ उत्तर्येण पूर्वकोटी देशीना । स सि १, ८

अतोमुहुत्तमच्छिप (५) संजमामजम पट्टिण्णो । पुच्चकोटि मंजमामनममणुपालिपू
मदो देवो जादो । पचहि अतोमुहुत्तेहि उणिया पुच्चकोटी लद्धमत्तर ।

सजदासजदाणमंतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च
णत्थि अत्तर, णिरत्तर' ॥ २३५ ॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्त' ॥ २३६ ॥

एद पि सुगम, ओघादो णदस्म भेदाभावा ।

उक्कस्सेण छावट्टिसागरोवमाणि सादिरेयाणि' ॥ २३७ ॥

त जहा- एको अट्टाणीममतकम्मिओ मणुसेसु उतरण्णो । अट्टवस्मिओ मनमा
संजमं वेदगमम्मत्त च जुगम पट्टिण्णो (१) । अतोमुहुत्तेण सजम गतूणत्तिय सजम
पुच्चकोटिं गमिय अणुत्तरदेवेसु तेत्तीनाउट्टिदिण्णसु उतरण्णा (३३) । तणे चुदो पुच्च
कोडाउगंसु मणुसेसु उतरण्णो । सद्य पट्टमिय सजममणुपालिप पुणो ममऊणत्तेत्तीस
कर (५) सयमासयमसो प्राप्त हुआ । पूर्वकोटीप्रमाण सयमासयमको परिपालनकर म
और देव होगया । इस प्रकार पाच अंतमुहुत्तमे कम पूर्वकोटीकालप्रमाण अन्त
लब्ध हुआ ।

मतिज्ञानादि तीनों ज्ञानशाले सयतामयताका अन्तर कितने काल होता है
नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २३५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २३६ ॥

यह सूत्र भी सुगम है, क्योंकि, ओघप्ररूपणसे इसका कोई भेद नहीं है ।

तीनों ज्ञानशाले सयतामयताका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर सा
व्यामठ सागरोपम है ॥ २३७ ॥

जैसे- मोहकमकी अट्टाहस प्रकृतियोंकी सत्तावाला एक जीव मनुष्योंमें उ
हुआ । आठ वर्षका होकर सयमासयम और वेदरसम्यक्तयो एक साथ प्राप्त हुआ
पुन अन्तमुहुत्तमे सयमसो प्राप्त करके अन्तरको प्राप्त हो, सयमके साथ पूर्वकोटीका
काल प्रिता कर तेतीस सागरोपमकी आयुस्थितिवाले अनुत्तरविमानवासी देवोंमें
हुआ (३३) । वहासे च्युत हो पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । तत्र श
सम्यक्त्वसो धारणकर और सयमसो परिपालनकर पुन एक समय कम

१ सपदासपत्तस्य नानानिवापेक्षया नात्यन्तरम् । स सि १, ८

२ एकजीव प्रति जघननात्मुहूर्त । स सि १, ८

३ उन्तरेण पट्टिसागरोवमाणि सादिरेयाणि । स सि १, ८

सागरोपमाउडिदिएसु देसेसु उवण्णो । तदो चुदो पुव्वकोडाउगेसु मणुसेसु उवण्णो । दीहकालमच्छिदूण मजमामजम पडिण्णो (२) । लद्धमतर । तदो सजम पडिण्णो (३) पमत्तापमत्तपगत्तमहस्म कादूण (४) खगसेठीपाओग्गअप्पमत्तो जादो (५) । उवरि उ अतोमुहुत्ता । एमद्वउस्सेहि एवारमअतोमुहुत्तेहि य ऊणियाहि तीहि पुव्वकोडीहि मादिरेयाणि छात्रडिमागरोपमाणि उक्कस्सतरं । एवमोहिणाणिसजदासजदस्स रि । णवरि आभिणिरोहियणाणस्म आदीदो अतोमुहुत्तेण आदिं कादूण अतराणिय गारसअतोमुहुत्तेहि समाहियअद्वउस्सण-तीहि पुव्वकोडीहि सादिरेयाणि छात्रडिसागरोपमाणि चि वत्तवर्ण ।

एद उक्खाण ण भदयं, अप्पतरपरुण्णादो । तदो दीहतरद्वमग्गा परुण्णा कीरदे । एकको अट्टापीसंतकम्मिओ मणिणसम्मुच्छिमपज्जत्तएसु उवण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयो (१) विस्सतो (२) विसुद्धो (३) वेदगमम्मत्त सजमासंजम च समगं पडिण्णो । अतोमुहुत्तमच्छिय (४) असजदमम्मादिट्ठी जादो । पुव्वकोडिं गमिय

सागरोपमनी आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ। वहासे च्युत हो पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। वहा दीर्घकाल तक रहकर सयमासयमको प्राप्त हुआ (२) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ। पश्चात् सयमको प्राप्त हुआ (३) और प्रमत्त अप्रमत्त-गुणस्थानसम्यन्धी सहस्रों परावर्तनोंको करके (४) क्षपकश्रेणीके योग्य अप्रमत्तसयत हुआ (५) । इनमें ऊपरके क्षपकश्रेणीसम्यन्धी छह अन्तर्मुहूर्त मिलाये। इस प्रकार आठ वर्ष और ग्यारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम तीन पूर्वकोटियोंसे अधिक दयासठ सागरोपम तीनों धानवाले सयतासयतोंना उत्कृष्ट अन्तर होता है।

इसी प्रकारसे अवधिधानी सयतासयतका भी उत्कृष्ट अन्तर जानना चाहिए। विशेष बात यह है कि आभिनिबोधिकधानीके आदिके अन्तर्मुहूर्तसे प्रारम्भ करने अन्तरको प्राप्त कराने गारह अन्तर्मुहूर्तोंसे अधिक आठ वर्षसे कम तीन पूर्वकोटियोंसे साधिक दयासठ सागरोपमकाल अन्तर होता है, ऐसा रहना चाहिए।

शंका—उपर्युक्त व्याख्यान ठीक नहीं है, क्योंकि, इस प्रकार अल्प अन्तरकी प्ररूपणा होती है। अत दीर्घ अन्तरके लिए अन्य प्ररूपणा की जाती है— मोहनर्मकी अट्टारिण प्ररुतियोंकी सत्तावाला कोई एक जीव, सभी सम्मूर्च्छिम पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ। छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदक-सम्पत्त्यको और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ। सयमासयमके साथ अन्तर्मुहूर्त रहकर (४) असयतसम्यग्दृष्टि होगया। पुन पूर्वकोटीकाल वितारण तेरह सागरो

लतप-काविद्वेदेसु तेरससागरोपमाउद्विदिएसु उग्रण्णो (१३) । तदो चुदो पुञ्ज
 कोडाउएसु मणुसेसु उग्रण्णो । तत्थ सजममणुपालिय वानीममागरोपमाउद्विदिएसु देवेसु
 उग्रण्णो । (२२) । तदो चुदो पुञ्जकोडाउएसु मणुसेसु उग्रण्णो । तत्थ मजममणु
 पालिय खइय पट्टनिय एक्कत्तीससागरोपमाउद्विदिएसु देवेसु उग्रण्णो (३१) । तदो चुदो
 पुञ्जकोडाउएसु मणमेसु उग्रण्णो अंतोमुहुत्ताग्गमे संसारे सजमामजम गदो । लद्धमंतर (५) ।
 विसुद्धो अप्पमत्तो जादो (६) । पमत्तापमत्तपरात्तसहस्स कादूण (७) रत्तगसेठीपाओग्ग
 अप्पमत्तो जादो (८) । उग्रि छ अतोमुहुत्ता । एवं चोदमेहि अंतोमुहुत्तेहि उग्गचदुपुञ्ज
 कोडीहि सादिरेयाणि छात्तद्विसागरोपमाणि उक्कस्मतर । एवमोधिगाणिसजदामजदस्स नि
 अतर वत्तव । णग्रि आभिणियोहियणाणस्म आदिदो अतोमुहुत्तेण आदिं कादूण अंतरा
 वेद्वो । पुणो पण्णारमहि अतोमुहुत्तेहि उग्गाणि चदुहि पुञ्जकोडीहि सादिरेयाणि छात्तद्वि
 सागरोपमाणि उप्पादेद्व्वाणि ? णेद घडदे, साणिमम्मच्छिमपज्जत्तएसु सजमासजमस्सेव
 ओहिणाणुत्तसमम्मत्ताण समभाभादो । त कथ णग्गदे ? ' पंचिदिएसु उग्रसामंतो

पमकी आयुवाले एतव कापिष्ठ देवोंमें उत्पन्न हुआ । पश्चात् वहासे च्युत हो पूर्व
 कोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । वहा पर सयमको परिपालन कर धार्मिक
 सागरोपमकी आयुस्वितियाले देवोंमें उत्पन्न हुआ (२२) । वहासे च्युत होकर पूर्वकोटीकी
 आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । वहा पर सयमको परिपालन कर और शायिक
 सम्यक्त्वको धारणकर इकतीस सागरोपमकी आयुस्वितियाले देवोंमें उत्पन्न हुआ (३१) ।
 तत्पश्चात् वहासे च्युत होकर पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और ससारके
 अन्तर्मुहूर्त अवशेष रह जानेपर सयमासयमको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तर उभय
 हुआ (५) । पश्चात् विशुद्ध हो अप्रमत्तसयत हुआ (६) । पुन प्रमत्त अप्रमत्तगुणस्थान
 सम्यग्धी सहस्रों परावर्तनोंको करके (७) क्षपकधेणीके योग्य अप्रमत्तसयत हुआ (८) ।
 इनमें ऊपरके क्षपकधेणीसम्यग्धी छह अन्तर्मुहूर्त और मिलाय । इस प्रकार चौदह अन्त
 र्मुहूर्तोंसे कम चार पूर्वकोटियोंसे साधिक उग्रामठ सागरोपम उत्पन्न अन्तर होता है ।
 इसी प्रकारसे अवधिज्ञानी सयतासयतना भी उत्पन्न अन्तर कहना चाहिए । विशेष
 बात यह है कि आभिणियोधिकज्ञानके आदिके अन्तर्मुहूर्तसे आदि करके अन्तरको प्राप्त
 कराना चाहिए । पुन पद्दह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम चार पूर्वकोटियोंसे साधिक उग्रामठ
 सागरोपम उत्पन्न करना चाहिए ?

समाधान—उपर्युक्त शकामें बतलाया गया यह अन्तरकाल घटित नहीं होता
 है, क्योंकि, सभी सम्मूर्च्छिम पर्याप्तकोंमें सयमामयमके समान अवधिज्ञान और उपशम
 सम्यक्त्वकी सम्यक्ताका अभाव है ।

शंका—यह कैसे जाना जाता है कि संघी सम्मूर्च्छिम पर्याप्तक जीवोंमें अवधि
 ज्ञान और उपशमसम्यक्त्वका अभाव है ?

गम्भोत्रकृतिएसु उवसामेदि, णो सम्मुच्छिमेसु ' ति चूलियासुत्तादो । ओहिणाणाभावो कुदो णव्वदे ? सम्मुच्छिमेसु ओहिणाणमुप्पाइय अतरपरूणयआइरियाणमणुवलंभा । भग्दु णाम सण्णिसम्मुच्छिमेसु ओहिणाणाभावो, कहमोघम्मि उत्ताणमाभिणिवोहिय-सुदणाणाण तेसु संभजताणमेजेदमतर ण उच्चदे ? ण, तत्थुप्पणाणमेवनिहंतरासभजादो । त कुदो णव्वदे ? तथा अवक्खाणादो । अहवा जाणिय वचच्चं । गम्भोत्रकृतिएसु गमिद-अट्टेतालीम (-पुव्वकोडि-) वस्सेसु ओहिणाणमुप्पादिय किण्ण अंतराग्गिदो ? ण, तत्थ नि ओहिणाणमभयं परूणयंतवक्खाणाइरियाणमभावादो ।

पमत्त-अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २३८ ॥

समाधान—'पचेन्द्रियोंमें दर्शनमोहका उपशमन करता हुआ गभोत्पन्न जीवोंमें ही उपशमन करता है, सम्मूर्च्छिमोंमें नहीं,' इस प्रकारके चूलिकासूत्रसे जाना जाता है ।

शंका—सही सम्मूर्च्छिम जीवोंमें अधिज्ञानका अभाव कैसे जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि, अधिज्ञानको उत्पन्न कराके अन्तरके प्ररूपण करनेवाले आचार्योंका अभाव है । अर्थात् किसी भी आचार्यने इस प्रकार अन्तरकी प्ररूपणा नहीं की ।

शंका—सही सम्मूर्च्छिम जीवोंमें अधिज्ञानका अभाव भले ही रहा आवे, कि तु ओघप्ररूपणमें कहे गये, और सही सम्मूर्च्छिम जीवोंमें सम्भव आभिनिवोधिक-ज्ञान और श्रुतज्ञानका ही यह अन्तर है, ऐसा क्यों नहीं कहते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उनमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंके इस प्रकार अन्तर सम्भव नहीं है ।

शंका—यह भी कैसे जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि, इस प्रकारका व्याख्यान नहीं पाया जाता है । अथवा, जान करके इसका व्याख्यान करना चाहिए ।

शंका—गभोत्पन्न जीवोंमें व्यतीत की गई अहतालास पूर्वकोटी वयोंमें अधि-ज्ञान उत्पन्न करके अन्तरको प्राप्त क्यों नहीं कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उनमें भी अधिज्ञानकी सम्भवताको प्ररूपण करने-वाले व्याख्यानाचार्योंका अभाव है ।

तीनों ज्ञानवाले प्रमत्त और अप्रमत्तसयतोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २३८ ॥

सुगममेद ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ २३९ ॥

त जहा- पमत्तापमत्तसज्जदा अप्पिदणाणेण सह अण्णगुण गत्तूण पुणो पल्लड्डिय सच्चजहण्णेण कालेण त चेत्त गुणमागदा । लद्धमतोमुहुत्त जहण्णतर ।

उक्कस्सेण तेत्तीस सागरोवमाणि सादिरैयाणि ॥ २४० ॥

त जहा- एक्यो पमत्तो अप्पमत्तो (१) अपुच्चो (२) अणियट्ठी (३) सुहुमो (४) उमत्तो (५) होदूण पुणो पि सुहुमो (६) अणियट्ठी (७) अपुच्चो (८) अप्पमत्तो जादो (९) । पद्दारण काल गदो समउणतेत्तीससागरोवमाउट्ठिएसु देसेसु उमत्तणो । तत्तो चुदो पुव्वकोडाउएसु मणुस्सेसु उमत्तणो । अतोमुहुत्तामसेसु जीविए पमत्तो जादो (१) । लद्धमत्तर । तदो अप्पमत्तो (२) । उमरि छ अतोमुहुत्ता । अंतरस्स अन्नभग्गिसेसु नमसु अतोमुहुत्तेसु बाहिरिह्वअट्ठअतोमुहुत्तेसु सोहिदेसु एगो अतोमुहुत्तो अप्पचिट्ठे । तेत्तीस सागरोवमाणि एगेणतोमुहुत्तेण अन्नभहियपुव्वकोडीए

यत्त सूत्र सुगम हे ।

तीनों नानाले प्रमत्त और अप्रमत्तसयतोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २३९ ॥

जैसे- प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत जीव विवक्षित भ्रानके साथ अय गुण स्थानको जाकर और पुन पलटकर सर्वजघन्य कालसे उसी ही गुणस्थानको आये । इस प्रकार अतर्मुहूर्तप्रमाण जघन्य अन्तर लब्ध हुआ ।

उक्त जीवका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर मायिक तेत्तीस सागरोपम है ॥ २४० ॥

जैसे- कोई एक प्रमत्तसयत जीव, अप्रमत्तसयत (१) अपुव्वकरण (२) अनिवृत्त करण (३) मूदमसाम्पराय (४) ओर उपशान्तनपाय हो करके (५) फिर भी सूदमसाम्प राय (६) अनिवृत्तकरण (७) अपुव्वकरण (८) और अप्रमत्तसयत हुआ (९) । तथा गुणस्थानका बालक्षय हो जानेसे भरणको प्राप्ति हो एक समय कम तेत्तीस सागरोपमकी आयुस्थिति वाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । पश्चात् वहासे न्युत हो पूव्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और जीवनके अतर्मुहूर्तप्रमाण अशिश्ट रहने पर प्रमत्तसयत हुआ (१) । इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया । पश्चात् अप्रमत्तसयत हुआ (२) । इनमें ऊपरके छह अतर् मुहूर्त और मिलाये । अतरे में भीतरी नौ अतर्मुहूर्तोंमेंसे बाहरी आठ अन्तर्मुहूर्तोंके घटा देने पर एक अतर्मुहूर्त अशिश्ट रहता है । पन्ने एक अतर्मुहूर्तसे अधिक पूर्वकोटीसे साधिक

१ एगजीव प्रति तवयेनान्तमुहूर्त । म सि १, ८

२ उत्तर्या तवयिश्चन्नागरोवमाणि सादिरैयाणि । म सि १ ८

मादिरेयाणि उक्कस्मतरं । एउ विमेमजोएदूण उच्च । विमेमे जोडज्जमाणे अंतरम्भतरादो अप्पमत्तद्वाओ तामि अतरवाहिरिया एकका खण्णमेटीपाओग्गअप्पमत्तद्वा तत्थेगद्वादो दुग्गुणा सरिमा चि अण्णेदव्वा । पुणो अतरम्भतराओ छ उअमामगद्वाओ अत्थि, तामि वाहिरिग्लिएसु अअभिद्धमत्तसु अतोसुहुत्तेसु तिण्णि खण्णद्वाओ अण्णेदव्वा । एअक्कस्से उअमत्तद्वाए एअखण्णद्वाअ विमोहिदे अअसिद्धेहि अद्धुत्तोसुहुत्तेहि ऊणियाए पुअक्कोडीए सादिरेयाणि तेत्तीम सागरोपमाणि अतर होदि । ओधिणाणिपमत्तमंजदमप्पमत्तादिग्गुण णेदूण अंतराणिय पुअ व उक्कस्मतर वत्तव्व, णत्थि एत्थ विमेमो ।

अप्पमत्तस्म उच्चदे— एकको अप्पमत्तो अणुव्वो (१) अणियट्ठी (२) सुहुमो (३) उअमत्तो (४) होदूण पुणो वि सुहुमो (५) अणियट्ठी (६) अणुव्वो होदूण (७) काल गदो ममउणत्तेत्तीमसागरोपमाउट्ठिएसु टेनेसु उअण्णो । तत्तो चुदो पुअक्कोडाउएसु मणुमेसु उअण्णो । अतोसुहुत्ताअमेमे सगोरे अप्पमत्तो जादो । लद्धमतर (१) । तदो पमत्तो (२) अप्पमत्तो (३) । उअरि छ अतोसुहुत्ता । अतरस्म अम्भंतरिमाओ छ उअसामगद्वाओ अत्थि, तामि अतरवाहिरिग्लिआओ तिण्णि खण्णद्वाओ अण्णेदव्वा । अतर-

तेतीस सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर होता है । इस प्रकारसे यह अन्तर विशेषको नहीं जोड़ करके कहा है । विशेषके जोड़े जाने पर अन्तरके आभ्यन्तरसे अप्रमत्तसयतना काल और उनसे अन्तरका वाहिरि एक अक्षयश्रेणीके योग्य अप्रमत्तसयतना काल होता है । उनमेंसे एक गुणस्थानके कालसे दुग्गुणा सट्ठकाल निकाल देना चाहिए । पुन अन्तरके आभ्यन्तर छह उपशामककाल होते ह । उनसे वाहिरि अत्रिण्ट सात अन्तर्मुहूर्तोंसे तीन क्षपक गुणस्थानोंवाले अक्षककाल निकाल देना चाहिए । एक उपशान्तकालमेंसे एक क्षपककालका आधा भाग घटा देनेपर अत्रिण्ट सात तीन अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पूर्वकोटीसे सात्रिक तेतीस सागरोपमकालप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर होता है । अत्रिण्टानी प्रमत्तसयतको अप्रमत्त वादि गुणस्थानमें ले जानर आर अन्तरको प्राप्त करानर पूर्वके समान ही उत्कृष्ट अन्तर कहना चाहिए, इनमें ओर कोई विशेषता नहीं है ।

तीनों क्षान्तकाले अप्रमत्तसयतना उत्कृष्ट अन्तर कहते ह— एक अप्रमत्तसयत, अपूर्वकरण (१) अनित्यत्तिरण (२) सूक्ष्मसाम्पराय (३) उपशान्तकपाय (४) हो करके फिर भी सूक्ष्मसाम्पराय (५) अनित्यत्तिरण (६) ओर अपूर्वकरण हो कर (७) मरणको प्राप्त हुआ और एक समय कम तेतीस सागरोपमकी आनुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । ग्रहाने च्युत होकर पूर्वकोटिनी आयुकाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । ससारके अन्तर्मुहूर्त अत्रिण्ट रह जाने पर अप्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ (१) । पश्चात् प्रमत्तसयत (२) अप्रमत्तसयत हुआ (३) । इनमें क्षपकश्रेणीसम्बन्धी ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त मिलाये । अन्तरके आभ्यन्तर उपशामकसम्बन्धी छह काल होते ह । उनके अन्तरसे वाहिरि तीन क्षपककाल कम कर देना चाहिए । अन्तरके आभ्यन्तरवाले उपशान्त

चत्तरिमाए उपसतद्वाए अतर-बाहिरस्वगद्वाए अद्रमणोद्वय । अनसिद्धेहि अद्रउद्धृतो
मुहुत्तेहि ऊणपुच्चकोडीए सादिरेयाणि तेत्तीम सागरोपमाणि उक्कस्मत्तर् होदि । मग्गि
पग्गे अनरस्स'भारमत्त'अतोमुहुत्तेमु अतर-बाहिरणअतोमुहुत्तेमु मोहिटेसु अग्गमा व
अतोमुहुत्ता । एदेहि ऊणाए पुच्चकोडीए सादिरेयाणि तेत्तीम सागरोपमाणि उक्कस्संतर्
होदि । एवमोहिणाणिणो पि वचन्व, निसेमाभाया ।

चदुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, गाणाजीवं
पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २४१ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्त ॥ २४२ ॥

एद पि सुगम ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २४३ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण छावट्टि सागरोपमाणि सादिरेयाणि ॥ २४४ ॥

कालमेंसे अतरसे बाहिरी क्षपन्नालना आधा काल निकालना चाहिए । अयसिद्धे वचे
हूए साडे पाच अतर्मुहूर्तोंमें कम पूर्वकोटीमें साधिक तेतीस सागरोपम उत्कृष्ट अंतर
होता है । सदश पक्षमें अन्तरके भीतरी सात अन्तर्मुहूर्तोंमें अतरके बाहिरी भी अन्त
मुहूर्तोंमेंसे घटा देने पर अवशेष दो अतर्मुहूर्त रहते हैं । इनसे कम पूर्वकोटीसे साधिक
तेतीस सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर होता है । इसी प्रकारसे अधधिगानीका भी अतर
बहना चाहिए, नयानि, उसमें कोई विनोपता नहा है ।

तीनों ज्ञानशाले चारा उपशामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ २४१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥२४२॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥२४३॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर साधिक द्यासठ सागरोपम
है ॥ २४४ ॥

१ चतुष्पाण्यप्यसकानां नानाजावपक्षया मामा यवत् । स ति १, ८

२ एकजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्त । स ति १, ८

३ उक्कस्सेण पडुच्चिण्णोपमाणि सादिरेयाणि । स ति १, ८

त जहा- एकओ अट्टाणीससंतकम्मिओ पुच्चसोडाउअमणुसेसु उअण्णो । अट्ट-
वस्सिओ वेदगमम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगअ पडिअण्णो (१) । तदो पमत्तापमत्तपरअत्त-
सहस्स कादूण (२) उअसममेटीपाओग्गणिसोहीए विसुद्वो (३) अपुच्चो (४) अणि-
यट्ठी (५) सुहुमो (६) उअसतो (७) पुणो वि सुहुमो (८) अणियट्ठी (९)
अपुच्चो (१०) होदूण हेट्ठा पडिय अतरिदो । देमूणपुच्चसोडिं मजममणुपालेदूण मदो
तेचीमसागरोअमाउट्टिदिएसु देसेसु उअण्णो । तदो चुदो पुच्चसोडाउएसु मणुसेसु उअ-
ण्णो । सइय पट्टणिय संजम कादूण काल गदो तेचीसमागरोअमाउट्टिदिएसु देसेसु उअ-
ण्णो । तदो चुदो पुच्चसोटाउओ मणुसो जादो सजम पडिअण्णो । अतोसुहुत्ताअसेसे
संसारे अपुच्चो जादो । लद्धमतर (११) । अणियट्ठी (१२) सुहुमो (१३) उअसंतो
(१४) भूओ सुहुमो (१५) अणियट्ठी (१६) अपुच्चो (१७) अप्पमत्तो (१८)
पमत्तो (१९) अप्पमत्तो (२०) । उअरि छ अतोसुहुत्ता । अट्टहि वस्मेहि छव्वीसतो-
सुहुत्तेहि य उग्गा तीहि पुच्चसोडीहि सादिरेयाणि छानट्टिमागरोअमाणि उअकस्सतर होदि ।
अथअ चत्तारि पुच्चसोडीओ तेरस-अनीअ-एअकचीससागरोअमाउट्टिदिदेसेसु उप्पाइय

जैसे- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक जीव पूर्वकोटीकी
आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । आठ वर्षका होकर वेदकसम्यक्त्व और अप्रमत्त-
गुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । तत्पश्चात् प्रमत्त जोर अप्रमत्तगुणस्थान-
सम्यग्धी सहस्रों परिवर्तनोंको करके (२) उपशान्तश्रेणीके प्रायोग्य विदुद्धिसे विदुद्ध
होता हुआ (३) अपूर्वकरण (४) अनिवृत्तिकरण (५) सूक्ष्मसाम्पराय (६) उपशान्त-
कषाय (७) होकर फिर भी सूक्ष्मसाम्पराय (८) अनिवृत्तिकरण (९) अपूर्वकरण (१०)
होकर तथा नीचे गिरकर अन्तरको प्राप्त हुआ । कुछ कम पूर्वकोटीकालप्रमाण
सयमको परिपालन कर मरा और तेतीस सागरोपम आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ ।
पश्चात् च्युत होकर पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और धार्मिकसम्यक्त्वका
धारण कर और सयम वारण करके मरणको प्राप्त हो तेतीस सागरोपमकी आयुस्थिति-
वाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहासे च्युत होकर पूर्वकोटी आयुवाला मनुष्य हुआ और
यथासमय सयमको प्राप्त हुआ । पुन ससारके अन्तर्मुहूर्त अशेष रह जाने पर अत्र-
करणगुणज्ञानवर्ती हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ (११) । पश्चात् अनिवृत्ति-
करण (१२) सूक्ष्मसाम्पराय (१३) उपशान्तकषाय (१४) होकर पुन सूक्ष्मसाम्पराय (१५)
अनिवृत्तिकरण (१६) अपूर्वकरण (१७) अप्रमत्तसयत (१८) प्रमत्तसयत हुआ (१९) ।
पुन अप्रमत्तसयत हुआ (२०) । इनमें ऊपरके क्षपकश्रेणीसम्यग्धी और भी उद्-
मुहूर्त मिलाये । इस प्रकार आठ वर्ष और छत्र्यीअ अन्तर्मुहूर्तोंसे कम तीन पूर्वकोटीके
साधिक दयासठ सागरोपम उत्कृष्ट अन्तर होता है । अथवा, तेरह, चाईस और अठारह

वचन्याजो । एव चेत त्रिण्हुमुत्तमामगाण । णवरि चदुत्तीम वारीम वीम जतोमुहुत्ता
ऊणा वादच्चा । एवमोहिणाणीण पि वचच्च, विमेमाभाया ।

चदुण्ह सवगाणमोघं । णवरि विसेसो ओधिणाणीमु समाण
वासपुधत्तं ॥ २४५ ॥

कृदो ? ओधिणाणीण पाण्णं मभयाभाया ।

मणपज्जवणाणीसु पमत्त-अप्पमत्तसजदाणमतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतरं, णिरतरं ॥ २४६ ॥
सुगममेद ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ २४७ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण अतोमुहुत्तं ॥ २४८ ॥

सागरोपम आयुकी स्थितिजाले देवोंमें उपज करकर मनुष्यभवसम्बन्धी चार पूर्वकीटिया
कहना चाहिए । इसी प्रकारसे शेष तीन उपशामकोंका भी अन्तर कहना चाहिए । विशेष
वात यह है कि अनिर्मुक्तकरणके चौबीस अन्तमुहूर्त, सूक्ष्मसाम्परायने पाईस अन्तमुहूर्त
और उपशान्तकथायन वीम अन्तमुहूर्त कम कहना चाहिए । इसी प्रकारसे उपशामक
अग्निज्ञानियोंका भा अन्तर कहना चाहिए, क्योंकि, उसमें भी कोई विशेषता नहा है ।

तीनों ज्ञानजाले चारों उपशामकोंका अन्तर जोघके समान है । विशेष वात यह है
कि अग्निज्ञानियोंमें क्षपकाका अन्तर वर्षद्वयम्बन्ध है ॥ २४५ ॥

क्योंकि, अग्निज्ञानियोंके प्राय होनेका अभाव है ।

मन पर्ययनानियामें प्रमत्त और अप्रमत्त मयतोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाता जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहा है, निरन्तर है ॥ २४६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त है ॥ २४७ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुहूर्त है ॥ २४८ ॥

१ चतुष्पा क्षपका सामायवर् । किन्तु अग्निज्ञानियु नानाजीवापेक्षया जघन्यतम् । समय, उत्कृष्ट
क्षपकात्तम् । एवजीव प्रति नाल्लयत्तम् । स मि १, ८

२ मन पर्ययनानियु प्रमत्ताप्रमत्तसपत्तयोनानाजीवापेक्षया नाल्लयत्तम् । स मि १, ८

३ एवजीव प्रति जघन्यत्तु चान्तमुहूर्त । स मि १, ८

तं जहा— एको पमत्तो मणपञ्जराणी अप्पमत्तो होदूण उरि चडिय हेद्दा ओदरिदूण पमत्तो जादो । लद्धमतर । अप्पमत्तस्स उच्चदे— एको अप्पमत्तो मणपञ्जराणी पमत्तो होदूणतरिय सव्वचिरेण कालेण अप्पमत्तो जादो । लद्धमतर । उरसमसेट्ठिं चढाभिय किण्णंतराविदो ? ण, उरसमसेट्ठिमव्वद्वाहितो पमत्तद्धा एक्का चेत्त मरुत्तगुणात्ति गुरूदेमादो ।

चदुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २४९ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ २५० ॥

एद पि सुगमं ।

—

जैसे— एक मन पर्ययज्ञानी प्रमत्तसयत जीव अप्रमत्तसयत हो ऊपर चढकर ओर नीचे उतर कर प्रमत्तसयत हो गया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । मन पर्ययज्ञानी अप्रमत्तसयतका अन्तर रहते ह— एक मन पर्ययज्ञानी अप्रमत्तसयत जीव प्रमत्तसयत होकर अन्तरको प्राप्त हो अति दीर्घकालसे अप्रमत्तसयत होगया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ ।

शंका—मन पर्ययज्ञानी अप्रमत्तसयतको उपशमश्रेणी पर चढाकर पुन अन्तरको प्राप्त क्यों नहीं कराया ?

ममाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमश्रेणीसम्बन्धी सभी अर्थात् चार चढनेके ओर तीन उतरनेके, इन सब गुणस्थानोंसम्बन्धी कालोंसे अकेले प्रमत्तसयतका काल ही सप्त्यातगुणा होता है, ऐसा गुरुका उपदेश है ।

मन पर्ययज्ञानी चारों उपशमकोका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है ॥ २४९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्तर है ॥ २५० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

—

१ चतुष्पादुपशमशानां नानाजीवापेक्षया सामान्यवत् । स नि १, ६,

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २५१ ॥
सुगममेदं ।

उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूणं ॥ २५२ ॥

त जहा- एकको पुव्वकोडाउएमु मणुमेसु उअण्णो अतोमुहुत्तंमहियअट्टमस्मेहि
मजम पडिअण्णो (१) । पमत्तापमत्तसजदद्वण्णे मात्तामादनधपरानत्तमहस्म काट्ठण (२)
विसुद्धो मणपज्जअण्णणी जाटो (३) । उअमममेटीपाओग्गाअप्पमत्तो होट्ठण सेटीमुअगदो
(४) । अपुअो (५) अणियट्ठी (६) सुट्ठमो (७) उअमतो (८) पुणो वि सुट्ठमो
(९) अणियट्ठी (१०) जपुअो (११) पमत्तापमत्तमनदद्वण्णे (१२) पुव्वकोडि
मच्छिअट्ठण अणुत्तिसादिमु आउअ मधिअट्ठण अतोमुहुत्ताअमेमे जीविअ विसुद्धो अपु उअसामगो
जाटो । णिदा पयलाण मधोअण्णिण्णे काल गदो देवो जाटो । अट्टमस्मेहि वारमअतो
सुट्ठोहि य ऊणिया पुव्वकोडी उक्कस्मतरं । एअ तिण्णमुअमामगाणं । णअरि जहाअमेण
दस णअ अट्ट अतोमुहुत्ता समओ य पुव्वकोडीदो ऊणा ति वत्तअव ।

मन पर्ययज्ञानी चागें उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर जघन्यसे
अन्तर्मुहूर्त है ॥ २५१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवकोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वजोटी है ॥ २५२ ॥

जैने- कोई एक जीव पूर्वजोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और अत
मुहूर्तसे अधिक आठ वषके द्वारा समयको प्राप्त हुआ (१) । पुन प्रमत्त अप्रमत्तसयत
गुणस्थानमें साता और अमाताप्रतियोंके सहस्रों मध परिवतनोंको करके (२) विजुअ
हो मन पययज्ञानी हुआ (३) । पश्चात् उपशमश्रेणाके योग्य अप्रमत्तसयत होकर श्रेणाको
प्राप्त हुआ (४) । तय अपूर्वअरण (५) अनिजृत्तिअरण (६) सूक्ष्ममाअपराय (७)
उपशा तरुपाय (८) पुनरपि सूक्ष्मसाअपराय (९) अनिजृत्तिअरण (१०) अपूर्वअरण (११)
होकर प्रमत्त और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें (१२) पूर्वजोटीकाल तक रहकर अनुदिश
आदि विमानवासी दयोंमें आयुको प्राधनर जीवनेके अतर्मुहूर्त अधशय रहने पर विजुअ हो
अपूर्वअरण उपशामर हुआ । पुन निद्रा तथा प्रचला, इन दो प्रतियोंके मध विच्छेद हा
जाने पर मरणको प्राप्त हो दव हुआ । इस प्रकार आठ वष और वारह अतर्मुहूर्तोंसे कम
पूर्वजोटी कालप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर होता है । इसी प्रकार शेष तीन मन पर्ययज्ञानी उप
शामकोंका भी अन्तर होता है । विशेषता यह है कि उनके मधानमसे दश नौ और आठ
अन्तर्मुहूर्त तथा एक समय पूर्वजोटीसे कम कहना चाहिए ।

१ एगजीवं प्रति जघनेनान्तर्मुहूर्त । स ति १, ८

२ उत्कर्षण पूर्वजोटी देशेना । स ति १, ८

चटुण्हं खवगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च
जहण्णेण एगसमयं ॥ २५३ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ २५४ ॥

कुदो ? मणपज्जणणाणेण खगसेदिं चढमाणण पउर संभवाभावा ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २५५ ॥

एद पि सुगम ।

केवलणाणीसु सजोगिकेवली ओघं ॥ २५६ ॥

णाणेगजीवअतराभावेण सावम्मादो ।

अजोगिकेवली ओघं ॥ २५७ ॥

सुगममेद सुत्त ।

एव णाणमग्गणा समत्ता ।

मनःपर्ययज्ञानी चारो क्षपकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा जगन्मयसे एक समय अन्तर है ॥ २५३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्तर है ॥ २५४ ॥

क्योंकि, मन पर्ययज्ञानके साथ क्षपकश्रेणीपर चढनेवाले जीवोंका प्रचुरतासे
होना सम्भव नहीं है ।

मनःपर्ययज्ञानी चारों क्षपकोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर
है ॥ २५५ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

केवलज्ञानी जीवोंमें सयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ २५६ ॥

क्योंकि, नाना और एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे समानता है ।

अयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ २५७ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

इस प्रकार ज्ञानमार्गणा समाप्त हुई ।

१ चटुणां क्षपराणामवधिज्ञानिवत् । स सि १, ८

२ द्वयो केवलज्ञानिनो सामान्यवत् । म सि १, ८

संजमाणुवादेण संजदेसु पमत्तसजदप्पहुडि जाव उवसंतकसाय
वीदरागछुदुमत्था त्ति मणपज्जवणाणिभगो ॥ २५८ ॥

पमत्तापमत्तमजदाण णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर, एगजीव पडुच्च
जहणुत्तस्सेण अतोमुहुत्त । चटुप्पहुमुत्तममगाण णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमओ,
उत्तस्सेण वासपुत्त, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उत्तस्सेण देवणपुत्तमोढी
अतरमिट्ठि ततो विसेमाभावा ।

चटुप्पहुं सवा अजोगिकेवली ओघ ॥ २५९ ॥

सुगम ।

सजोगिकेवली ओघ ॥ २६० ॥

एद पि सुगम ।

सामाड्य छेदोवट्ठावणसुद्धिसजदेसु पमत्तापमत्तसजदाणमतर केव-
चिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतरं, णिरतर' ॥ २६१ ॥
गयत्थ ।

सयममार्गणाके अनुमादसे सयतोमिं प्रमत्तसयतको आदि लेकर उपशान्तकपाय-
वीतरागउच्चत्थ तत्त सयतोका अन्तर मन पर्ययवानिनियोके समान है ॥ २५८ ॥

प्रमत्त और अप्रमत्तसयतोका नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है,
एक जीवकी अपेक्षा जघय ओर उत्तष्ट अतर अतमुहुत्त है । चारों उपशामकोंका नाना
जीवोंकी अपेक्षा जघय अतर एक समय और उत्तष्ट अतर चपपृथक्त्व है । एक जीवकी
अपेक्षा जघयसे अतमुहुत्त और उत्तष्ट कुछ कम पूर्वकोटीप्रमाण अन्तर है, इसलिए
उससे यहापर कोई विशेषता नहीं है ।

चारों अपक और अयोगिकेवली सयतोका अन्तर ओघके समान है ॥ २५९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सजोगिकेवली सयतोका अन्तर ओघके समान है ॥ २६० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

सामायिक और छेदोवट्ठावणसुद्धिसयतोमिं प्रमत्त तथा अप्रमत्त सयतोका अन्तर
कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २६१ ॥

इस सूत्रका अर्थ पहले कहा जा चुका है ।

१ सयमाडुवादेन सामायिकेदोपरवापनसुद्धिसयतेषु प्रमत्ताप्रमत्तयोर्नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् ।
स सि १, ८

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २६२ ॥

त जहा- पमत्तो अप्पमत्तगुणं गतूण सव्वजहण्णेण कालेण पुणो पमत्तो जादो । लद्धमतर । एगमप्पमत्तस्म मि वत्तव्य ।

उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ २६३ ॥

तं जहा- एक्को पमत्तो अप्पमत्तो होदूण चिरकालमच्छिय पमत्तो जादो । लद्धमतरं । अप्पमत्तस्म उच्चदे- एक्को अप्पमत्तो पमत्तो होदूण सव्वचिरमंतोमुहुत्तमच्छिय अप्पमत्तो जादो । लद्धमंतर ।

दोण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २६४ ॥

अगयत्थ ।

उक्कस्सेण वासपुधत्त ॥ २६५ ॥

सुगममेद ।

उक्त समयतोंका एग जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २६२ ॥

जैसे- एक प्रमत्तसयत जीव अप्रमत्तगुणस्थानको जाकर सर्वजघन्य कालसे पुन प्रमत्तसयत होगया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । इसी प्रकार अप्रमत्तसयतका भी अतर कहना चाहिए ।

उक्त समयतोंका एग जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २६३ ॥

जैसे- एक प्रमत्तसयत जीव अप्रमत्तसयत होकर और दीर्घ अन्तर्मुहूर्तकाल तक रह करके प्रमत्तसयत होगया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । अप्रमत्तसयतका अन्तर कहते हैं- एक अप्रमत्तसयत जीव प्रमत्तसयत हो करके सजसे बड़े अन्तर्मुहूर्तकाल तक रहकर अप्रमत्तसयत होगया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ ।

सामायिक और छेदोपस्थापनासयमी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों उपशामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ २६४ ॥

इस सूत्रका अर्थ ज्ञात है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ २६५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

१ एगजीव प्रति जघयसुच्छट चान्तमुहूर्त । स ति १, ८

२ द्वयोस्वमकयोर्नानाजीवापेक्षया सामायवत् । स मि १, ८

णरि समयाहियणअतोमुहुत्ता ऊणा कादव्या ।

दोण्हं खवाणमोधं ॥ २६८ ॥

सुगममेदं ।

परिहारसुद्धिसंजदेसु पमत्तापमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो

होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २६९ ॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २७० ॥

त जहा- एकको पमत्तो परिहारसुद्धिसंजदो अपमत्तो होदूण सव्वलहु पमत्तो जादो । लद्धमतरं । एवमपमत्तस्म पि पमत्तगुणेण अतराणिय वत्तव्य ।

उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ २७१ ॥

एदस्मत्थो जघा जहण्णस्स उत्तो, तथा वत्तव्वो । णरि सव्वचिरेण कालेण पल्लड्ढावेदव्वो ।

इनका अन्तर एक समय अधिक नो अन्तर्मुहूर्त कम करना चाहिए ।

सामायिक और छेदोपस्थापनासयमी अपूर्वकरण और अनिष्टतिकरण, इन दोनों क्षपणोंका नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर ओघके समान है ॥ २६८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

परिहारसुद्धिसंयतोमं प्रमत्त और अप्रमत्त सयतोका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २६९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २७० ॥

जैसे- परिहारसुद्धिसयमवाला कोई एक प्रमत्तसयत जीव अप्रमत्तसयत होकर सर्वलघु कालसे प्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हो गया । इसी प्रकार परिहारसुद्धिसयमी अप्रमत्तसयतको भी प्रमत्तगुणस्थानके द्वारा अन्तरको प्राप्त कराकर अन्तर कहना चाहिए ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २७१ ॥

इस सूत्रका अर्थ जैसा जघन्य अन्तर बतलाने हुए कहा है, उसी प्रकारसे कहना चाहिए । विशेषता यह है कि इसे यहां पर सर्व दीर्घकालसे पलटाना चाहिए ।

१ द्वयो क्षपणयो सामायवत् । स वि १, ८

२ परिहारसुद्धिसयतेयु प्रमत्ताप्रमत्तयोर्नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । स वि १, ८.

३ एकजीव प्रति जघन्यमुत्कृष्ट चान्तर्मुहूर्त । स वि १, ८

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २६६ ॥

त जहा- एक्को ओदरमाणो अपुच्चो अप्पमत्तो पमत्तो पुणो अप्पमत्तो होदूण
अपुच्चो जादो। लद्धमत्तर। एमणियट्ठिस्म पि। णरि पच अंतोमुहुत्ता जहण्णत्तर होदि।

उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूणं ॥ २६७ ॥

त जहा- एक्को पुव्वकोडाउएसु मणुसेसु उमण्णो। अट्ठक्कस्साणमुवरि संनम
पडिवण्णो (१)। पमत्तापमत्तसजदट्ठाने सादामादनधपरात्तिसहस्स कादूण (२)
उमसममेडीपाओगअप्पमत्तो (३) अपुच्चो (४) अणियट्ठी (५) सुहुमो (६) उमसंतो
(७) पुणो पि सुहुमो (८) अणियट्ठी (९) अपुच्चो (१०) हेट्ठा पडिय अत्तिदो।
पमत्तापमत्तसजदट्ठाने पुव्वकोडिमच्छिदूण अणुदिसादिमु आउअ वधिय अंतोमुहुत्तावसेमे
जीविए अपुच्चुवसामगो जादो। णिहा पयलाण वधे चोच्छिण्णे काल गदो देवो जादो।
अट्ठहि वसेहि एक्कारसअंतोमुहुत्तेहि य ऊणिया पुव्वकोडी अत्तर। एवमणियट्ठिस्म पि।

सामायिक और छेदोपस्थापनासयमी दोनों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा
जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २६६ ॥

जैसे- उपशामध्रेणीसे उतरनेवाला एक अपूर्वकरणसयत, अप्रमत्तसयत व प्रमत्त
सयत होकर पुन अप्रमत्तसयत हो अपूर्वकरणसयत होगया। इस प्रकार अत्तर लब्ध
हुआ। इसी प्रकार अनिवृत्तिकरणसयतका भी अन्तर कहना चाहिए। विशेषता यह है
कि इनके पाच अन्तर्मुहूर्तप्रमाण जघन्य अन्तर होना है।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुल कम पूर्वकोटी है ॥ २६७ ॥

जैसे- कोई एक जीव पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और आठ
पर्यंके पश्चात् सयमको प्राप्त हुआ (१)। पुन प्रमत्त और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें सात्ता
और असातापेदनीयके सहस्रों वध परावर्तनोंके करके (२) उपशामध्रेणीके योग्य
अप्रमत्तसयत हुआ (३)। पश्चात् अपूर्वकरण (४) अनिवृत्तिकरण (५) सूक्ष्मसाम्पराय (६)
उपशातकाय (७) होकर फिर भी सूक्ष्मसाम्पराय (८) अनिवृत्तिकरण (९) अपूर्व
करण (१०) हो नीचे गिरकर अन्तरको प्राप्त हुआ। प्रमत्त और अप्रमत्तसयत गुण
स्थानमें पूर्वकोटी काल तक रहकर अनुदिश आदि विमानोंमें आयुको बाधकर जीवनके
अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अरिष्ट रहनेपर अपूर्वकरण उपशामक हुआ और निद्रा तथा प्रचल
प्रवृत्तियोंके वधमे व्युत्थित होनेपर मरणको प्राप्त हो देव हुआ। इस प्रकार आठ व
और ग्यारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पूर्वकोटीप्रमाण सामायिक और छेदोपस्थापनासयम
अपूर्णकरण उपशामकका उत्कृष्ट अन्तर होता है। इसी प्रकार सामायिक और छेदो
स्थापनासयमी अनिवृत्तिकरण उपशामकका भी उत्कृष्ट अन्तर है। विशेषता यह है कि

१ पूर्वजीव प्रति जघन्यतन्तर्मुहूर्त। स वि १, ८ २ उत्तरेण पूर्वकोटी देहोना। स वि १,

कुदो ? अरुमायाण जहान्खादसजमेण विणा अण्णमजमाभावा ।

संजदासंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणेगजीवं पडुच्च
णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २७७ ॥

कुदो ? गुणतरग्गहणे मग्गणाविणामा, गुणतरग्गहणेण विणा अतररुणे उपायाभावा ।

असंजदेसु मिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणा-
जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २७८ ॥

कुदो ? मिच्छादिट्ठिप्पयाहरोच्चेदाभावा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २७९ ॥

कुदो ? गुणतर गतूणतरिय अविणट्ठअसजमेण जहण्णकालेण पल्लट्ठिय मिच्छत्तं
पडिउण्णस्म अतोमुहुत्ततरुणभा ।

फ्योंकि, अरुपायी जीवोंके यथाव्याप्तसयमके विना अन्य सयमका अभाव हे ।

सयतासयतोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना और एक जीवकी अपेक्षा
अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २७७ ॥

फ्योंकि, अपने गुणस्थानको छोड़कर अन्य गुणस्थानके ग्रहण करने पर मार्ग-
णाका विनाश होता है आर अन्य गुणस्थानको ग्रहण किये विना अन्तर करनेका कोई
उपाय नहीं है ।

असयतोंमें मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २७८ ॥

फ्योंकि, मिथ्यादृष्टि जीवोंके प्रवाहका कभी विच्छेद नहीं होता ।

असयमी मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त
है ॥ २७९ ॥

फ्योंकि, अन्य गुणस्थानको जाकर ओर अन्तरको प्राप्त होकर असयमभावके
नहीं नष्ट होनेके साथ ही जघन्य कालसे पलटकर मिथ्यात्मको प्राप्त हुए जीवके अन्त-
र्मुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

१ संयतासयतस्य नानाजावापेक्षया एकजीवापेक्षया च नास्त्यतरम् । स मि १, ८

२ अणयतेषु मिथ्यादृष्टेनानाजीवापेक्षया नास्त्यतरम् । स मि १, ८

३ एकजीव प्रति जघयेनान्तर्मुहूर्त । स मि १, ८

सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदेसु सुहुमसांपराइयउवसमाणमंतर केन-
चिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥२७२॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ २७३ ॥

एद पि सुगम ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरत्तरं ॥ २७४ ॥

कुदो ? अधिगदमजमाणिणामेण अतरावणे उवायाभावा ।

खवाणमोघं ॥ २७५ ॥

कुदो ? णाणाजीवगदजहण्णुक्कस्सेगममय छम्मामेहि एगजीवमंतराभावेण य
साधम्मादो ।

जहाक्खादविहारसुद्धिसंजदेसु अकसाइभगो ॥ २७६ ॥

सूक्ष्ममाम्परायशुद्धिसंयत्तोंमें सूक्ष्ममाम्पराय उपशामकोंका अन्तर कितने काल
होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है ॥ २७२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ २७३ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २७४ ॥

क्योंकि, प्राप्त किये गये समयके मिनाश हुए बिना अन्तरको प्राप्त होनेके
उपायका अभाव है ।

सूक्ष्ममाम्परायसयमी क्षपकोंका अन्तर ओघके समान है ॥ २७५ ॥

क्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह
मासके साथ, तथा एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे ओघके भाव समानता
पारं जाती है ।

यथाख्यातविहारशुद्धिसंयत्तोंमें चारों गुणस्थानोंके सयमी जीवोंका अन्तर
अरुपायी जीवोंके समान है ॥ २७६ ॥

१ सूक्ष्ममाम्परायशुद्धिसंयत्तस्य नानाजीवोपेक्षया सामान्यत्वं । स सि १, ८

२ एकजीवं प्रति नाम्यतराप । स सि, १, ८

३ अ मती ' अतरावणो उवाया ' आ चपयो ' अतरावणो उवाया ' इति पाठ ।

४ तस्यैव क्षपस्य सामान्यत्वं । स सि १, ८

५ यथाख्याते अनवायवत् । स सि १, ८

असजदसम्मादिद्विस्स उक्कस्संतर णादमरि^१ मदमेहापिजणाणुग्गहट्ट परूमेमो-
एक्को अणादियमिच्छादिद्वी तिण्णि वि करणाणि कादूण अद्रूपोग्गलपरियट्ठादिसमए
पढमसम्मत्त पडिवण्णो (१) । उरसमसम्मत्तद्वाए छात्रलियाओ अत्थि त्ति सासण गदो ।
अतरिदो अद्रूपोग्गलपरियट्ठ परियट्ठिदूण अपच्छिमे भग्गहणे असंजदसम्मादिद्वी जादो ।
लद्धमत्तर (२) । तदो अणंताणुपर्धी विमजोडय (३) विस्सतो (४) दसणमोह खणिय
(५) विस्सतो (६) अप्पमत्तो^२ जादो (७) । पमत्तापमत्तपरानत्तमहस्स कादूण (८)
खणगसेदीपाओग्गअप्पमत्तो जादो (९) । उररि छ अंतोमुहुत्ता । एवं पण्णारसेहि अंतो-
मुहुत्तेहि उणमद्रूपोग्गलपरियट्ठमसजदसम्मादिद्विस्स उक्कस्सतर ।

एउ सजममग्गणा समत्ता ।

दंसणाणुवादेण चक्रबुदसणीसु मिच्छादिद्वीणमोघं ॥ २८२ ॥

कुदो ? णाणाजीवे^३ पडुच्च अतराभाणेण, एगजीनगयअंतोमुहुत्तमेत्तजहण्णंतरेण

असयतसम्यग्दष्टिका उत्कृष्ट अन्तर यद्यपि ज्ञात हे, तथापि मद्बुद्धि जनोके अनु-
ग्रहार्थं प्ररूपण करते हे- एक अनादि मिथ्यादष्टि जीव तीनों करणोंको करके अर्धपुद्गल
परिवर्तनके आदि समयमें प्रथमोपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (१) । उपशमसम्यक्त्वके
कालमें छह आचलिया अचशिष्ट रहने पर सासादनगुणस्थानको प्राप्त हुआ । पश्चात्
अन्तरको प्राप्त हो अर्धपुद्गलपरिवर्तन तक परिवर्तन करके अन्तिम भयमें असयतसम्य-
ग्दष्टि हुआ । इस प्रकार अन्तर प्राप्त होगया (२) । तत्पश्चात् अन्तानुबन्धीकी विसयोजना
करके (३) विश्राम ले (४) दर्शनमोहनीयका क्षय करके (५) विश्राम ले (६) अप्रमत्त
सयत हुआ (७) । पुन प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानसम्बन्धी सहस्रों परिवर्तनोंको
करके (८) क्षपकश्रेणीके प्रायोग्य अप्रमत्तसयत हुआ (९) । इनमें ऊपरके छह अन्त
मुहूर्त और मिलाये । इस प्रकार पन्द्रह अन्तमुहूर्तोंसे कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल असयत-
सम्यग्दष्टिका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

इस प्रकार सयममार्गणा समाप्त हुई ।

दर्शनमार्गणाके अनुवादसे चक्षुदर्शनी जीवोंमें मिथ्यादष्टियोंका अन्तर ओघके
समान है ॥ २८२ ॥

पर्योकि, नाना जीवोंको अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे, तथा एक जीवगत

१ प्रतिपु 'णादमदि' इति पाठ ।

२ प्रतिपु 'पमत्तो' इति पाठ ।

३ दर्शनानुवादेन चक्षुदर्शनिषु मिथ्यादष्टे सामायवत् । स सि १, ८

४ अ प्रतो 'जीवेसु' इति पाठ ।

उक्कस्सेण तेत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि' ॥ २८० ॥

त जहा- एकसो अट्टारीममोहसतकम्मिओ मिच्छादिट्ठी सत्तमाए पुढणीए उव
वण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मंतो (२) निमुट्ठो (३) सम्मत्त
पट्टिपज्जय जतरिदो अतोमुहुत्तापसेसे जीविण मिच्छत्त गदो (४) । लद्धमत्तरं ।
तिरिक्खाउअ वविय (५) विस्ममिय (६) मदो तिरिक्खो जादो । छहि अतोमुहुत्तोहि
ऊणाणि तेत्तीम सागरोवमाणि मिच्छत्तुक्कस्समत्तरं ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठि-असजदसम्मादिट्ठीणमोघं

॥ २८१ ॥

कुदो ? सामणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छादिट्ठीण णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एग
समजो, पल्लिदोउमस्स अमरोज्जदिभागो, एगजीव पडुच्च जहण्णेण पल्लिदोउमस्स असखे-
ज्जदिभागो, अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अट्टपोगलपरियट्ठ देसूण । असजदसम्मादिट्ठीसु
णाणाजीव पडुच्च णत्थि जतर, णिरत्तर, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण
अट्टपोगलपरियट्ठ देसूणमिच्छदेहि तदो भेदामाया ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागरोपम
है ॥ २८० ॥

जैसे- मोहकर्मनी अट्टारिस प्रवृत्तियोंकी सत्तावाला एक मिथ्यादृष्टि जीव सातवीं
पृथिवीमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध
हो (३) सम्यग्त्वको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ और जीवनके अन्तर्मुहूर्त काल
प्रमाण अत्रोप रहने पर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (४) । इस प्रकार अन्तर लघु होगया ।
पाँडे तिर्यच्च आयुको बाधकर (५) विश्राम से (६) मर और तिर्यच्च हुआ । इस प्रकार
छह अतर्मुहूर्तमें कम तेतीस सागरोपमकाल मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

असयमी सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि और अमयत्तसम्यग्दृष्टि जीवोंका
अन्तर ओघके समान है ॥ २८१ ॥

क्योंकि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा
जघपसे एक समय और पल्योपमका असत्यातया भाग अन्तर है। एक जीवकी अपेक्षा
जघपसे पल्योपमका असत्यातया भाग और अतर्मुहूर्त अन्तर है । तथा उत्कृष्ट अन्तर
कुछ कम बाधपुद्गलपरिवर्तनकाल है । असयत्तसम्यग्दृष्टियोंमें नाना जीवोंकी अपेक्षा
अन्तर नहीं है, निरन्तर है। एक जीवकी अपेक्षा जघप अतर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर
कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन है। इस प्रकार ओघसे कोई भेद नहीं है ।

१ उत्तरवर्ण त्रयविंशसागरोवमाणि दशोनाति । म वि १, ८

२ छेपणां त्रयाणां सामायवत् । स वि १, ८

आउअ षधिय (४) विस्मंतो (५) देसेसु उअण्णो। छहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (६) विस्संतो (७) विसुद्धो (८) उअममसम्मत्त पडिअण्णो (९) मामणं गदो। मिच्छत्त गत्तणतरिय चक्खुदसणिट्ठिदिं परिभमिय अअमाणे सासग गदो। लद्धमतर। अचक्खु-दंसणिपाओग्गमाअलियाए अमखेज्जदिभागमच्छिदूण मदो अचक्खुदसणी जादो। एवं णअहि अतोमुहुत्तेहि आअलियाए अमखेज्जदिभागेण य ऊणिया चक्खुदंसणिट्ठिदी सामणुक्कस्संतर।

सम्मामिच्छादिट्ठिस्म उच्चदे- एको अचक्खुदसणिट्ठिदिमच्छिदो अमणिपंचि-दिएसु उअण्णो। पअहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (१) विस्संतो (२) विसुद्धो (३) अअणअसिय-आणवंतरदेसेसु आउअं षधिय (४) विस्मंतो (५) देसेसु उअण्णो। छहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (६) विस्मंतो (७) विसुद्धो (८) उअममसम्मत्त पडिअण्णो (९) सम्मामिच्छत्त गदो (१०)। मिच्छत्त गत्तुगतारिदो चक्खुदसणिट्ठिदिं परिभमिय अअमाणे सम्मामिच्छत्त गदो (११)। लद्धमतर। मिच्छत्त गत्तुण (१२) अचक्खु-दंसणीसु उअण्णो। एअ वारमअतोमुहुत्तेहि ऊणिया चक्खुदसणिट्ठिदी उक्कस्संतर।

देवोंमें उत्पन्न हुआ। उहाँ पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (६) विधाम ले (७) विशुद्ध हो (८) उपशमसम्यन्त्वको प्राप्त हुआ (९)। पश्चात् सासादनगुणस्थानको गया। पुन मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हो चक्षुदर्शनीकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण करके अन्तमें सासादनगुणस्थानको प्राप्त हुआ। इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया। पुन अचक्षु-दर्शनीके अथ प्रायोग्य आवलीके असप्यातवें भागप्रमाण काल रह कर मरा और अचक्षु-दर्शनी होगया। इस प्रकार नौ अन्तर्मुहूर्तोंसे और आवलीके असप्यातवें भागसे दस चक्षुदर्शनीकी स्थिति चक्षुदर्शनी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवका उत्कृष्ट अन्तर है।

चक्षुदर्शनी सम्यग्मिथ्यादृष्टिका अन्तर रहते ह- अचक्षुदर्शनीकी स्थितिके प्राप्त हुआ एअ जीअ असन्नो पचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ। पाचों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विधाम ले (२) विशुद्ध हो (३) भवनवासी या वानअन्तर देवोंमें आयुको बाधकर (४) विधाम ले (५) मरा और देवोंमें उत्पन्न हुआ। उहाँ पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (६) विधाम ले (७) विशुद्ध हो (८) उपशमसम्यन्त्वको प्राप्त हुआ (९)। पश्चात् सम्य-ग्मिथ्यात्वको गया (१०) और मिथ्यात्वको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ। चक्षु-दर्शनीकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (११)। इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया। पुन मिथ्यात्वको जाकर (१२) अचक्षुदर्शनीयोंमें उत्पन्न हुआ। इस प्रकार बारह अन्तर्मुहूर्तोंसे दस चक्षुदर्शनीकी स्थिति चक्षुदर्शनी सम्य-ग्मिथ्यादृष्टि जीवका उत्कृष्ट अन्तर है।

देवण-वे आरुद्धिसागरोपममेतत्तदुक्तस्मन्तरेण य तदो भेदाभावात् ।

सासणसम्मादिद्वि-सम्मादिच्छादिद्विणमतरं केवचिर कालदो
होदि, णाणाजीव पडुच्च ओघं ॥ २८३ ॥

कुदा ? णाणाजीवगयणममय-पलिदोपमामरोज्जदिभागजहणुक्कस्मतरहि
माधम्मुपलभा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्म असखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्तं ॥ २८४ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वे सागरोवमसहस्साणि देसूणाणि ॥ २८५ ॥

त जहा- एको भमिदअचम्मपुदमणद्विदिओ अमण्णिपचिदिएसु उपरण्णो । पचदि
पज्जचीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२) विसुद्धो (३) मरणयामिय णाणोत्तरदेसेसु

अतमुहूर्तमात्र जघन्य अन्तर होनेसे जोर कुछ कम दो छयासठ सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट
अतर होनेकी अपेक्षा ओघसे मोह भेद नहीं है ।

चतुदर्शनी सासादनम्यग्द्विष्टि और सम्यग्मिवाट्टियोंका अन्तर कितने काल
होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥ २८३ ॥

क्योंकि, नाना जीवगत जघन्य अतर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमना
असख्यातवा भाग है, इस प्रकार इन दोनोंकी अपेक्षा ओघके साथ समानता पाई
जाती है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर कमज पल्योपमना
अमरयातवा भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ २८४ ॥

यह छत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो हजार सागरोपम
है ॥ २८५ ॥

जैसे- अचतुदर्शनीकी स्थितिप्रमाण परिध्रमण किया हुआ कोई एक जीव असशी
पचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ । पाचों पयासियोंसे पयास हो (१) विधाम दे (२) विपुद्ध
हो (३) मयनवासी या घातज्यन्तर देवोंमें आयुको बाधकर (४) विधाम दे (५)

१ सामादासम्यग्द्विष्टिपुण्यमिध्याह्निकेनानाजीवोपेनया सामाययन् । स ति १, ८

२ एतज्जीव प्रति पचयेन पयापमामन्ययमागोत्तर्मुहूर्तथ । स ति १, ८

३ उत्तर्यां द्व सागरोपमसहस्र देशानि । स ति १, ८

चक्रबुदसणिद्विदिं भमिय अत्रमाणे उत्रमसम्मत्तं पडिण्णो (१०) । लद्धमंतरं । पुणो सासण गदो अचक्रबुदसणीसु उवण्णो । दसहि अतोमुहूत्तेहि ऊणिया सगड्ढिदी असंजद-सम्मादिद्वीणमुक्कस्संतरं ।

मजदासजदस्म उच्चदे । तं जहा— एक्को अचक्रबुदसणिद्विदिमच्छिदो गम्भो-वक्कतियपंचिदियपज्जत्तएसु उवण्णो । मण्णिपंचिदियसम्मूच्छिमपज्जत्तएसु किण्ण उप्पा-दिदो ? ण, सम्मुच्छिमेसु पढमसम्मत्तुप्पत्तीए असभवादो । ण च अमसेज्जलोगमणंतं वा कालमचक्रबुदमणीसु परिभमियाण वेदगसम्मत्तग्गहण सभरदि, विरोहा । ण च थोर-कालमच्छिदो चक्रबुदसणिद्विदीए समाणणक्खमा । तिण्णि पक्ख तिण्णि दिवस अंतो-मुहूत्तेण य पढमसम्मत्तं सजमासंजम च जुगय पडिण्णो (२) । पढमसम्मत्तद्वाए छागलियाओ अत्थि ति सामण गदो । अतरिदो मिच्छत्त गंतूण सगड्ढिदिं परिभमिय अपच्छिमे भये कदरुणिज्जो होदूण सजमासजम पडिवण्णो (३) । लद्धमंतरं । अप्पमचो

हुआ । पुन मिथ्यात्वको जाकर चशुदर्शनकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण कर अन्तमें उपशम-सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पुन सासादनको गया और अचशुदर्शनी जीवोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार दश अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी स्थिति चशुदर्शनी असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

चशुदर्शनी सयतासयतरा उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं । जैसे—अचशुदर्शनकी स्थितिमें विद्यमान एक जीव गर्भोपक्रान्तिक पचेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ ।

शंका—उक्त जीवको सशरी पचेन्द्रिय सम्मूच्छिम पर्याप्तकोंमें क्यों नहीं उत्पन्न कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सम्मूच्छिम जीवोंमें प्रथमोपशमसम्यक्त्वकी उत्पत्ति असम्भव है । तथा असख्यात लोकप्रमाण या जनन्तकाल तक अचशुदर्शनियोंमें परिभ्रमण किये हुए जीवोंके वेदकसम्यक्त्वका ग्रहण करना सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसे जीवोंके सम्यक्त्वोत्पत्तिका विरोध है । ओर न अल्पकाल तक रहा हुआ जीव चशुदर्शनकी स्थितिके समाप्त करनेमें समर्थ है ।

पुन वह जीव तीन पक्ष, तीन दिवस ओर अन्तर्मुहूर्तसे प्रथमोपशमसम्यक्त्व और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ (२) । प्रथमोपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलिया अवशिष्ट रह जाने पर सासादनको प्राप्त हुआ । पुन अन्तरको प्राप्त हो मिथ्यात्वको जाकर अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तिम भवमें कृतवृत्त्यवेदक होकर सयमासयमको प्राप्त हुआ (३) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पुन अप्रमत्तसयत (४)

असंजदसम्मोदिद्विप्पहुडि जाव अप्पमत्तसंजदाणमतरं केवचिरं
कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतरं ॥ २८६ ॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २८७ ॥

कुते ? एदेसिं सन्नेमिं पि अण्णगुण गंतूण जहण्णकालेण अप्पिदगुण गदाणमंतो-
मुहुत्तत्तरुणलभा ।

उक्कस्सेण वे सागरोवमसहस्साणि देसूणाणि ॥ २८८ ॥

त जघा— एको अचक्षुदमणिद्विदिमच्छिदो अमणिपंचादियमम्मच्छिमपज्जत्तण्णु
उत्तरण्णो । पचहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२) विसुद्धो (३) भयण
यामिय-वाणपंतरेदेसे आउअं वधिय (४) विस्मतो (५) काल गदो देसेसु उत्तरण्णो ।
छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (६) विस्मतो (७) विसुद्धो (८) उत्तरसममत्तं पडिउण्णो
(९) । उत्तरसममत्तद्वाए छ आउलियाओ अत्थि ति सामण गंतूणतरिदो । मिच्छत्त गंतूण

असंपत्तसम्पद्यष्टिमे लक्ष्म अग्रमत्तमयन गुणस्थान तक चक्षुदर्शनियोंका अन्तर
कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २८६ ॥
यह मूल सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २८७ ॥

पर्योकि, इन सभी गुणस्थानवर्ती जीवोंके अन्य गुणस्थानको जाकर पुन जघय
कालसे त्रिरक्षित गुणस्थानको प्राप्त होनेपर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो हजार सागरोपम
है ॥ २८८ ॥

जैसे— अचक्षुदमानी जावोंकी स्थितिमें विद्यमान एक जीव अस्सत्तां पचेन्द्रिय
सम्मच्छिम पर्याप्तन जीवोंमें उत्पन्न हुआ । पाचों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विधाम
ले (२) विसुद्ध हो (३) भयनघासी या वानव्यन्तरोंमें आयुको वाध कर (४) विधाम
ले (५) मरणको प्राप्त हुआ और देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहा छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त
हो (६) विधाम ले (७) विसुद्ध हो (८) उपशमसम्यक्करको प्राप्त हुआ (९) । उपशम
सम्यक्त्वके कालमें छह आउलिया अचक्षेप रहने पर सासात्तनको जाकर अन्तरको प्राप्त

१ अग्रमत्तसम्पद्यष्टिमाद्यप्रमत्तानां नानाजीवोपेक्षया नास्त्यन्तरं । स ति १, ८

२ एकजीव प्रति जघयनान्तर्मुहूर्त । स ति १, ८

३ उत्कृष्टं द्वे सागरापरमवद्द्वे देशाने । स ति १, ८

(३) अप्पमत्तो (४) । उत्रि छ अतोमुहुत्ता । एमड्डरस्सेहि दसअंतोमुहुत्तेहि उणिया चन्नुदमणिद्धिदी अप्पमत्तुक्कस्संतर हेदि ।

चदुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिर कालादो हेदि, गाणाजीवं पडुच्च ओघं ॥ २८९ ॥

सुगममेदं ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेग अतोमुहुत्तं ॥ २९० ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण वे सागरोवमसहस्ताणि देसूणाणि ॥ २९१ ॥

त जहा- एकको अचक्रबुदमणिद्धिमच्छिदो मणुसेसु उत्रण्णो । गच्चादिअड्ड-
वस्सेण उत्रसममम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगत्र पडिउण्णो (१) । अतोमुहुत्तेण वेदगसम्मत्त
गदो (२) । तदो अतोमुहुत्तेण अणंताणुत्तं विसंजोत्तं (३) । दसणमोहणीयमुव-
सामिय (४) पमत्तापमत्तपरात्तमहस्म कादूण (५) उत्रममसेडीपाओग्गअप्पमत्तो
जादो (६) । अपुत्तो (७) जणियद्धी (८) मुहुमो (९) उत्रसंतो (१०) मुहुमो
हुआ । पुन प्रमत्तसयत्त हो (३) अप्रमत्तसयत्त हुआ (४) । इनमें ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त
आर मिलाये । इस प्रकार आठ वर्ष आर दस अन्तर्मुहूर्तोंसे कम चक्षुदर्शनीकी स्थिति ही
चक्षुदर्शनी अप्रमत्तसयत्तमा उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

चक्षुदर्शनी चारों उपशमकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥ २८९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २९० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो हजार सागरोपम
है ॥ २९१ ॥

जैसे- अचक्षुदर्शनी जीवोंकी स्थितिमें विद्यमान एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ ।
गर्भको आदि लेकर आठ वर्षके द्वारा उपशमसम्यक्त्व आर अप्रमत्तसयत्त गुणस्थानको
एक साथ प्राप्त हुआ (१) । अन्तर्मुहूर्तके पश्चात् वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (२) । पुनः
अन्तर्मुहूर्तसे अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन किया (३) । पुन दर्शनमोहनीयको उपशमा
कर (४) प्रमत्त आर अप्रमत्त गुणस्थानसम्यन्धी सहस्रों परिवर्तनोंको करके (५) उप-
शमश्रेणीके योग्य अप्रमत्तसयत्त हुआ (६) । पुन अपूर्वकरण (७) अनिवृत्तिकरण (८)

१ शतुणीउपशमराना नानाजीवापेक्षया सामायवत् । स सि १, ८.

२ एकजीव प्रति जघयेनान्तर्मुहूर्त । स सि १, ८

३ उत्कृष्टेण द्वे सागतोपमसद्वे दशेले । स सि १, ८.

(४) पमत्तो (५) अप्पमत्तो (६) । उवरि छ अतोमुहुत्ता । एमटदालीमदिवेसहि वारमअतोमुहुत्तेहि य ऊणा सगड्ढिदी मजदासजदुक्कस्सतर ।

पमत्तस्म उच्चदे- एको अचक्खुदंसणिट्ठिदिमन्डो मणुमेसु उवण्णो गन्भादि- अट्टवस्सेण उवसमसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगण पडियण्णो । (१) । पुणो पमत्तो जादो (२) । हेट्ठा पडिदूणअरिदो । चक्खुदंसणिट्ठिदिं परिभमिय अपच्छिमे भेरे मणुमो जादो । कदकुरणिज्जो होदूण अतोमुहुत्तावसेसे जीमिए अप्पमत्तो होदूण पमत्तो जादो (३) । लद्धमतर । भूओ अप्पमत्तो (४) । उवरि छ अतोमुहुत्ता । एमट्टवस्सेहि दमअतो- मुहुत्तेहि ऊणिया सगड्ढिदी पमत्तस्सुक्कस्सतर ।

(अप्पमत्तस्म उच्चदे-) एको अचक्खुदंसणिट्ठिदिमन्डो मणुमेसु उवण्णो । गन्भादिअट्टवस्सेण उवसमसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगण पडियण्णो (१) । हेट्ठा पडिदूण अंतरिदो चक्खुदंसणिट्ठिदिं परिभमिय अपच्छिमे भेरे मणुमेसु उवण्णो । कदकुरणिज्जो होदूण अतोमुहुत्तावसेसे ससार निमुट्ठो अप्पमत्तो जादो (२) । लद्धमतर । तदो पमत्तो

प्रमत्तसयत (५) और अप्रमत्तसयत हुआ (६) । इनमें ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त और मिलाये । इस प्रकार अड़तालीस दिवस जोर वारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी स्थिति चक्षुदर्शनी सयतासयतोंका उत्त्पन्न अन्तर है ।

चक्षुदर्शनी प्रमत्तसयतका उत्त्पन्न अन्तर कहते हैं- अचक्षुदर्शनी जीवोंकी स्थितिमें विद्यमान एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ धार गर्भको जादि लेकर आठ वर्षसे उपशम सम्यक्त्व और अप्रमत्तगुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पुन प्रमत्तसयत हुआ (२) । पश्चात् नीचेके गुणस्थानोंमें गिरकर अंतरको प्राप्त हुआ । चक्षुदर्शनीकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण करके अंतिम भवमें मनुष्य हुआ । पश्चात् वृत्तव्यवेदक होकर जीवनके अन्तर्मुहूर्तकाल अनशेष रह जाने पर अप्रमत्तसयत होकर प्रमत्तसयत हुआ (३) । इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया । पुन अप्रमत्तसयत हुआ (४) । इनमें ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त और मिलाये । इस प्रकार आठ वर्ष और दश अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी स्थिति चक्षुदर्शनी प्रमत्तसयतका उत्त्पन्न अन्तर है ।

चक्षुदर्शनी अप्रमत्तसयतका उत्त्पन्न अन्तर कहते हैं- अचक्षुदर्शनी जीवोंकी स्थितिमें विद्यमान एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । गर्भकी आदि लेकर आठ वर्षके द्वारा उपशमसम्यक्त्व और अप्रमत्तगुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । फिर नीचे गिरकर अंतरको प्राप्त हो अचक्षुदर्शनीकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अंतिम भवमें मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । पुन वृत्तव्यवेदकसम्पन्नी होकर ससारके अन्तर्मुहूर्त प्रमाण अवशिष्ट रहने पर विपुक्त हो अप्रमत्तसयत हुआ (२) । इस प्रकार अन्तर प्राप्त

(३) अप्पमत्तो (४) । उरि छ अतोमुहुत्ता । एमहुत्तस्सेहि दसअतोमुहुत्तेहि उणिया चम्बुदमणिद्धिदी अप्पमत्तुक्कस्मतर हेदि ।

चदुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो हेदि, णाणाजीवं पडुच्च ओधं ॥ २८९ ॥

सुगममेदं ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २९० ॥

एद पि सुगम ।

उत्कस्सेण वे सागरोवममहस्साणि देसूणाणि ॥ २९१ ॥

त जहा- एमको अचक्रबुदमणिद्धिदिमच्छिदो मणुमेसु उररण्णो । गवभादिअद्द-वस्सेण उरसमसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगउ पडिरण्णो (१) । अतोमुहुत्तेण वेदगसम्मत्त गदो (२) । तदो जतोमुहुत्तेण अणताणुअधि तिसंजोजिदो (३) । दसणमोहणीयमुउ-सामिय (४) पमत्तापमत्तपगउत्तसहम्म कादूण (५) उरमममेडीपाओग्गअप्पमत्तो जादो (६) । अपुवो (७) जणियट्टी (८) सुहुमो (९) उरसंतो (१०) सुहुमो हुआ । पुन प्रमत्तसयत हो (३) अप्रमत्तसयत हुआ (२) । इनमें ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त और मिलाये । इस प्रकार आठ वर्ष और दश अन्तर्मुहूर्तोंसे कम चक्षुदर्शनीकी स्थिति ही चक्षुदर्शनी अप्रमत्तसयतना उत्कृष्ट अंतर होता है ।

चक्षुदर्शनी चारों उपशामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥ २८९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २९० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो हजार सागरोपम है ॥ २९१ ॥

जैसे- अत्र बुद्धदर्शनी जीवोंकी स्थितिमें विद्यमान एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । गर्भको आदि लेकर आठ वर्षके द्वारा उपशमसम्यक्त्व और अप्रमत्तसयत गुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । अन्तर्मुहूर्तके पश्चात् वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (२) । पुनः अन्तर्मुहूर्तसे अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन किया (३) । पुन दर्शनमोहनीयको उपशम कर (४) प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानसम्यन्धी सहस्रों परिवर्तनोंको करके (५) उपशमधेणीके योग्य अप्रमत्तसयत हुआ (६) । पुन अपूर्णकरण (७) अनिवृत्तिकरण (८)

१ पशुपापुपसमदानां नानाजीवापेक्षया सामान्यवत् । स सि १, ८

२ एगजीव प्रति जघयेनात्तर्मुहूर्त । स सि १, ८

३ उत्कर्षेण द्वे सागरीपमसहस्रे दक्षीने । स सि १, ८

(११) अणियट्टी (१२) अपुच्चो (१३) हेट्टा ओदरिय अतरिदो चक्खुत्तसणिट्ठिदि परिभमिय अतिमे भये मणुमेमु उपण्णो । कट्ठण्णिज्जो होदूण अतोमुहुत्तात्तसे समारे विसुद्धो अप्पमत्तो जादो । मा.गसाद्वधपरात्तसहस्म कादूण उत्तमसेटीपा.जोग्गअप्पमत्तो होदूण अपुच्चुत्तमामगो जादो (१४) । लट्ठमत्तर । तदो अणियट्टी (१५) सुहुमो (१६) उत्ततो (१७) पुणो वि सुहुमो (१८) अणियट्टी (१९) अपुच्चो (२०) अप्पमत्तो (२१) पमत्तो (२२) अप्पमत्तो (२३) होदूण उत्तमसेटीमारुदो । उत्तरि छ अतो मुहुत्ता । एत्तद्वत्तस्मेहि एग्गुणत्तीमअंतोमुहुत्तेहि य ऊणिया सगट्ठिदी अपुच्चत्तणुक्कम्मत्तर । एत्त चेत्त तिण्हमुत्तमामगाण । उत्तरि सत्तात्तीस पच्चीस तेत्तीस अतोमुहुत्ता ऊणा कापव्वा ।

चट्टण्ह ख्वाणमोघ' ॥ २९२ ॥

सुगममेद ।

सूक्ष्मसाम्पराय (९) उपशान्तमोह (१०) सूक्ष्मसाम्पराय (११) अनिवृत्तिकरण (१२) और अपूर्वकरणसयत होकर (१३) तथा नीचे उतरकर अन्तरको प्राप्त हो चक्षुदर्शनीकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अतिम मयमें मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । वहापर वृत्तव्यवेदक सम्यक्की होकर समारने अतर्मुह्यत अवशिष्ट रह जाने पर विशुद्ध हो अप्रमत्तसयत हुआ । वहापर साता और असाता वेदनीयके वध परावर्तन सहस्राधो करके उपशम श्रेणीके योग्य अप्रमत्तसयत होकर अपूर्वकरण उपशामक हुआ (१४) । इस प्रकार अन्तर प्राप्त होगया । तत्पश्चात् अनिवृत्तिकरण (१५) सूक्ष्मसाम्पराय (१६) उपशान्तरूपाय (१७) पुनरपि सूक्ष्मसाम्पराय (१८) अनिवृत्तिकरण (१९) अपूर्वकरण (२०) अप्रमत्त सयत (२१) प्रमत्तसयत (२२) और अप्रमत्तसयत होकर (२३) क्षपकश्रेणीपर चढ़ा । इनमें ऊपरके छह अतर्मुह्यत और मिलाये । इस प्रकार आठ वर्ष और जननीस अतर्मुह्यतसे कम अपनी स्थिति चक्षुदर्शनी अपूर्वकरण उपशामकका उत्पष्ट अन्तर है ।

इसी प्रकार चक्षुदर्शनी शेष तीन उपशामकोंका भी अन्तर जानना चाहिए । विशेषता यह है कि अनिवृत्तिकरण उपशामकके सत्ताइस अतर्मुह्यत, सूक्ष्मसाम्पराय उपशामकके पच्चीस अतर्मुह्यत और उपशान्तकपायके तेत्तीस अतर्मुह्यत कम करना चाहिए ।

चक्षुदर्शनी चारों क्षपकोंका अन्तर औघके समान है ॥ २९२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अचक्खुदंसणीसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव खीणकसायवीद-
रागउट्टुमत्था ओघ' ॥ २९३ ॥

कुदो ? ओघादो भेदाभावा ।

ओधिदंसणी ओधिणाणिभगो ॥ २९४ ॥

केवलदंसणी केवलणाणिभगो' ॥ २९५ ॥

एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एत्र दसणमग्गणा समत्ता ।

लेस्साणुवादेण किण्वलेस्सिय णीललेस्सिय-काउलेस्सिएसु
मिच्छादिट्ठि-असंजदसम्मादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणा-
जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २९६ ॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २९७ ॥

अचभुदर्शनियोंमें मिथ्यादृष्टिमें लेकर क्षीणरूपाययीतरागउत्तस्य गुणस्थान तक
प्रत्येक गुणस्थानमती जीवोंका अन्तर ओघके समान है ॥ २९३ ॥

क्योंकि, ओघसे इनके अन्तरमें कोई भेद नहीं है ।

अविद्विजानी जीवोंका अन्तर अविज्ञानियोंके समान है ॥ २९४ ॥

केवलदर्शनी जीवोंका अन्तर केवलज्ञानियोंके समान है ॥ २९५ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम ह ।

इस प्रकार दर्शनमार्गणा समाप्त हुई ।

लेश्यामार्गणाके अनुवादसे कृष्णलेश्या, नीललेश्या और कापोत लेश्यामालोंमें
मिथ्यादृष्टि और अमयतमभ्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २९६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २९७ ॥

१ अचक्खुदंसणियु मिथ्यादृष्ट्यादिर्षणरूपाया तानां सामा योवम तरम् । स वि १, ८

२ अविद्विजानीओ-अविज्ञानिवत् । स वि १, ८ ३ केवलदर्शनिन केवलज्ञानिवत् । स वि १, ८

४ लेश्यामालादन कृष्णनीलकापोतलेश्येषु मिथ्यादृष्टयतमभ्यग्दृष्टयोर्नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् ।

तं जहा- सत्तम पचम पढमपुढमिच्छादिद्वि-असजदसम्मादिद्विणो किण्ह णील काउलेस्मिया अण्णगुण गतूण योपकालेण पडिणियत्तिय त चेय गुणमागदा । लद्ध दोण्ह जहण्णतरं ।

उक्कस्सेण तेत्तीस सत्तारस सत्त सागरोवमाणि देसूणाणि'
॥ २९८ ॥

त जहा- तिण्णि मिच्छादिद्विणो किण्ह णील काउलेस्मिया सत्तम-पचम तदिय-पुढमीसु कमेण उअण्णा । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदा (१) विम्मता (२) त्रिसुद्धा (३) सम्मत्त पडिण्णा अतरिदा अण्माणे मिच्छत्त गदा । लद्धमतर (४) । मदा मणुसेसु उअण्णा । णरि सत्तमपुढमीणेरुज्जे तिरिक्खाउअ वविय (५) विस्ममिय (६) तिरिक्खेसु उअज्जदि त्ति धेत्तव्व । एअ छ चदु चदुअतोमुहुत्तेहि ऊणाणि तेत्तीम सत्तारम सत्त सागरोवमाणि किण्ह-णील काउलेस्मियमिच्छादिद्विउक्कस्समत्त होदि । एअ सजदसम्मादिद्विस्स वि वत्तव्व । णरि अद्ध पच पचअतोमुहुत्तेहि ऊणाणि तेत्तीस सत्तारम-

जैसे- सातवीं पृथिवीके वृष्णलेइयावाले, पाचवीं पृथिवीके नीललेइयावाले और प्रथम पृथिवीके कापोतलेइयावाल मिव्यादष्टि ओर असयतसम्यग्दष्टि नारकी जीव अन्य गुणस्थानको जानर अल्प कालसे ही लौटकर उसी गुणस्थानको प्राप्त हुए । इस प्रकार दोनों गुणस्थानोंका जन्म अंतर लघु हुआ ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर क्रमशः कुछ कम तेतीस, सत्तरह और सात सागरोपम है ॥ २९८ ॥

जैसे- वृष्ण, नील और कापोत लेइयावाले तीन मिव्यादष्टि जीव प्रमत्ते सातवीं, पाचवीं और तीसरी पृथिवीमें उत्पन्न हुए । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विगुद्ध हो (३) सम्यक्त्वको प्राप्त कर अन्तरको प्राप्त हो आयुके अन्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुए । इस प्रकार अंतर लघु हुआ (४) । पश्चात् मरण कर मनुष्योंमें उत्पन्न हुए । विशेषता यह है कि सातवा पृथिवीका नारकी तिर्यंच आयुको राध कर (५) विश्राम ले (६) तिर्यंचमें उत्पन्न होता है, ऐसा अथ ग्रहण करना चाहिए । इस प्रकार छह अन्तमुहूर्तोंसे कम तेतीस सागरोपम वृष्णलेइयावा उत्कृष्ट अन्तर है । चार अन्त मुहूर्तोंसे कम सत्तरह सागरोपम नीललेइयावा उत्कृष्ट अन्तर है । तथा चार अन्तमुहूर्तोंसे कम सात सागरोपम कापोतलेइयावा उत्कृष्ट अन्तर होता है । इसी प्रकार असयत सम्यग्दष्टिना भी अन्तर कहना चाहिए । विशेषता यह है कि वृष्णलेइयावाले असयतसम्यग्दष्टिना उत्कृष्ट अन्तर आठ अन्तमुहूर्तोंसे कम तेतीस सागरोपम, नीललेइयावाले असयतसम्यग्दष्टिना उत्कृष्ट अन्तर पाच अन्तमुहूर्तोंसे कम सत्तरह

सत्त-सागरोपमाणि उक्कस्मंतरं ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च ओघं ॥ २९९ ॥

सुगममेदं ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्तं ॥ ३०० ॥

एदं पि सुगम ।

उक्कस्सेण तेत्तीसं सत्तारस सत्त सागरोवमाणि देसूणाणि
॥ ३०१ ॥

त जहा— तिणिण मिच्छादिट्ठी जीरा सत्तम-पचम-तट्टियपुट्ठीसु क्रिण्ह-णील-काउ-
लेस्मिया उग्रण्णा । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदा (१) निस्सता (२) निमुद्धा (३)
उग्रमसम्मत्त पडिघण्णा (४) मासण गदा । मिच्छत्त गंतूणतरिदा । अतोमुहुत्तावसेसे

सागरोपम और कापोतलेश्यावाले असयतसम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर पाच अन्त-
मुहूर्तोंसे कम सात सागरोपम होता है ।

उक्त तीनों अशुभलेश्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका
अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥२९९॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्रमशः पल्योपमका असं-
ख्यातया भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३०० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागरोपम,
सत्तरह सागरोपम और सात सागरोपम है ॥ ३०१ ॥

जैसे— कृष्ण, नील और कापोतलेश्यावाले तीन मिथ्यादृष्टि जीव क्रमशः सातवीं,
पाचवीं और तीसरी पृथिवीमें उत्पन्न हुए । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम
ले (२) विशुद्ध हो (३) उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुए (४) । पुन सासादनगुण-
स्थानको गये । पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हुए । पुन जीवनके अन्तर्मुहूर्त

१ सासादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टयोर्नानाजीवापेक्षया सामान्यम् । स सि १, ८

२ एगजीव प्रति जघन्यन पल्योपमासत्येयमागोऽन्तर्मुहूर्तम् । स सि १, ८.

३ उक्कस्सेण त्रयस्त्रिंशत्सत्तदशमत्तमागरोपमाणि देशोनानि । स सि १, ८

गातूण सव्वजहण्णकालेण पडिणियत्तिय त चेव गुणमागदा । लद्धमतरं ।

उक्कस्सेण वे अट्टारस सागरोवमाणि सादिरेयाणि ॥ ३०४ ॥

त जहा- ने मिच्छादिट्ठिणो तेज-पम्मलेस्मिया सादिरेय-वे-अट्टारससागरोवमाउ-
ट्ठिदिण्णु देवेसु उपगणा । छहि पज्जचीहि पज्जत्तयदा (१) निस्मता (२) निमुद्धा
(३) सम्मत्त धेत्तगतरीदा । मगट्ठिदिं जीणिय अपसाणे मिच्छत्त गदा (४) । लद्ध
सादिरेय-वे-अट्टारससागरोवममेत्ततर । एयं सम्मादिट्ठिस्स पि । णवरि पचहि अतोमुहुत्तेहि
ऊणियाओ सगट्ठिदीओ जंतर ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठिणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च ओघं ॥ ३०५ ॥
सुगममेद ।

अन्य गुणस्थानको जाकर सर्वजघन्य कालसे लोटकर उसी ही गुणस्थानको आगये ।
इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो सागरोपम और
साधिक अट्टारह सागरोपम है ॥ ३०४ ॥

जैसे- तेज और पद्म लेख्यावाले दो मिथ्यादृष्टि जीव साधिक दो सागरोपम और
साधिक अट्टारह सागरोपमकी आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुए । छहों पर्याप्तियोंसे
पर्याप्त हो (१) त्रिश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) और सम्यक्त्वको ग्रहण कर अन्तरको
प्राप्त हुये । पुन अपनी स्थितिप्रमाण जीवित रहकर आयुके अन्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त
हुए (४) । इस प्रकार साधिक दो सागरोपमकाल तेजोलेख्यावाले मिथ्यादृष्टिका ओर
साधिक अट्टारह सागरोपमकाल पद्मलेख्यावाले मिथ्यादृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त
होगया । इसी प्रकार तेज और पद्म लेख्यावाले असयतसम्यग्दृष्टि जीवका भी अन्तर कहना
चाहिए । विशेषता यह है कि पाच अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण अन्तर
होता है ।

तेजोलेख्या और पद्मलेख्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि
जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर ओघके समान
है ॥ ३०५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

१ उत्तरवेण दं सागरोपमे अट्टारस च सागरोवमाणि सादिरेयाणि । स ति १, ८

२ सासादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टीनानाजीवापेक्षया सामा यवत् । स ति १, ८

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्तं ॥ ३०६ ॥

एद पि सुगम ।

उत्कस्सेण वे अट्टारस सागरोवमाणि सादिरेयाणि ॥ ३०७ ॥

त जहा- वे सासणा तेउ पम्मलेस्सिया सादिरेय-वे-अट्टारममागरोवमाउट्टिणिएसु
देवेसु उववणा । एगसमयमण्ठिय त्रिदियममए भिच्छत्त गतूणतग्गिदा । अणमाणे ते पि
उणममसम्मत्त पडिवणा । पुणो मासण गतूण त्रिदियममए मदा । एण सादिरेय-वे-अट्टारम
मागरोवमाणि दुसमऊणाणि मासणुक्कस्मत्तर होदि । एण सम्मामिन्हादिट्टिस्स पि ।
णपरि छहि अतोमुहुत्तेहि ऊणियाओ उत्तट्टिदीओ अत्तर ।

सजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसजदाणमत्तर केवचिर कालादो होदि,
णाणेगजीव पडुच्च णत्थि अतरं, णिरत्तरं ॥ ३०८ ॥

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्रमशः पल्योपमके
असख्यातमें भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३०६ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर क्रमशः साधिक दो सागरोपम
और अट्टारह सागरोपम है ॥ ३०७ ॥

जैसे- तेज और पद्म लक्ष्यावाले दो सासादनसम्यग्दष्टि जीव साधिक दो सागरो
पम और साधिक अट्टारह सागरोपमकी आयुस्थितियाले देवोंमें उत्पन्न हुए । वहा एक
समय रहकर दूसरे समयमें मिथ्यात्वको जानर अन्तरको प्राप्त हुए । आयुके अन्तमें दोनों
ही उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुए । पश्चात् सासादनगुणस्थानको जाकर दूसरे समयमें
मरे । इस प्रकार दो समय कम साधिन दो सागरोपम और साधिक अट्टारह सागरोपम
उक्त दोनों लक्ष्यावाले सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर होता है । इसी प्रकार
उक्त दोनों लक्ष्यावाले सम्यग्मिथ्यादष्टि जीवोंका भी अन्तर जानना चाहिए । विशेषतः
यह है कि इनके छह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी उक्त स्थितियोंप्रमाण अन्तर होता है ।

तेन और पद्म लक्ष्यावाले सयत्तासयत्त, प्रमत्तसयत्त और अप्रमत्तमयत्त जीवोंका
अन्तर मिलने काल होता है ? नाना और एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर
है ॥ ३०८ ॥

१ एगजीवं प्रति जघ-येन पल्योपमासल्येयमागोऽन्तर्मुहूर्तं । स मि १, ८

२ उत्कर्षण द्वे सागरोपमे अष्टादश च सागरोपमाणि सादिरेयाणि । स सि १, ८

३ सयत्तासयत्तपमत्ताप्रमत्तसयत्तानां नानाजीवापेक्षया प्रक्रीनापेक्षया च नास्त्यन्तरम् । स मि १, ८

कुदो ? णाणाजीवपराहोच्छेदाभावा । एगजीवस्म मि, लेस्सदादो गुणद्वाए बहुत्तुपदेसा ।

सुककलेस्सिएसु मिच्छादिट्ठि-असंजदसम्मादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ३०९ ॥
सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ३१० ॥

त जहा- वे देवा मिच्छादिट्ठि-सम्मादिट्ठिणो सुककलेस्सिया गुणंतरं गत्तुण जहण्णेण कालेण अप्पिदगुण पडिउण्णा । लद्धमतोमुहुत्तमंतरं ।

उक्कस्सेण एकक्कीसं सागरोवमाणि देसूणाणि ॥ ३११ ॥

त जहा- वे जीवा सुककलेस्सिया मिच्छादिट्ठि दब्बलिंणिणो एकक्कीससागरो-वमिएसु देसेसु उउण्णा । उहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदा (१) विस्सता (२) विमुद्धा (३) सम्मत्त पडिउण्णा । तत्थेगो मिच्छत्त गंतूर्णतरिदो (४) अगरो सम्मत्तेणेव । अवसाणे

फ्योंकि, उक्त गुणस्थानवाले नाना जीवोंके प्रवाहका कभी विच्छेद नहीं होता है । तथा एग जीवकी अपेक्षा भी अन्तर नहीं है, फ्योंकि, लेख्याके कालसे गुणस्थानका काल बहुत होता है, ऐसा उपदेश पाया जाता है ।

शुक्लेश्यानालौमें मिथ्यादृष्टि और अमयतमम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३०९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३१० ॥

जैसे- शुक्लेश्यावाले मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि दो देव अन्य गुणस्थानको जाकर जघन्य कालसे विप्रक्षित गुणस्थानको प्राप्त हुए । इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त काल प्रमाण अन्तर लब्ध होगया ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागरोपम है ॥ ३११ ॥

जैसे- शुक्लेश्यावाले दो मिथ्यादृष्टि द्रव्यलिंगी जीव इकतीस सागरोपमकी स्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुए । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विध्याम ले (२) विशुद्ध हो (३) सम्यग्त्वको प्राप्त हुए । उनमेंसे एक मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको

१ शुक्लेश्येषु मिथ्यादृष्टयसयतसम्यग्दृष्टयोर्नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । स सि १, ८

२ एकजीव प्रति जघयेनात्तर्मुहूर्तः । स सि १, ८

३ उत्कर्षेणैव त्रिंशत्सागरोपमाणि देशानानि । स सि १, ८

जहाक्रमेण वे त्रि मिच्छत्त-मम्मत्ताणि पडिक्खणा (५) । चट्ठ-पच्चअतोमुहुत्तेहि उणाणि
एक्कत्तीस सागरोपमाणि मिच्छादिट्ठि-असजदसम्मादिट्ठीणमुक्कस्सतरं ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्माभिच्छादिट्ठीणमतर केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च ओघं ॥ ३१२ ॥

सुगममेद ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्त ॥ ३१३ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण एक्कत्तीस सागरोपमाणि देसूणाणि ॥ ३१४ ॥

एद पि सुगम ।

प्राप्त हुआ (४) । दूसरा जीव सम्यक्त्वके साथ ही रहा । आयुके अन्तमें यथाश्रमसे
दोनों ही जीव मिथ्यात्व और सम्यक्त्वको प्राप्त हुए (५) । इस प्रकार चार अन्त
मुहूर्तोंसे कम इक्कीस सागरोपमनाल शुक्लेश्यावाले मिथ्यादृष्टिमा उत्कृष्ट अन्तर है
और पांच अन्तर्मुहूर्तोंसे कम इक्कीस सागरोपमनाल असयतसम्यग्दृष्टिमा उत्कृष्ट
अन्तर है ।

शुक्लेश्यावाले सामादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर
कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥ ३१२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्रमशः पल्लोपमका अस
रयातमा भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३१३ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इक्कीस सागरोपम
है ॥ ३१४ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

१ सामादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टयोर्नानाजीवपेक्षया सामान्यत्वं । स ति १, ८

२ एकजीव प्रति जघन्य पल्लोपमासख्येयमागोन्तमुहूर्तश्च । स ति १, ८

३ उत्कृष्टेणैकविंशसागरोपमाणि देशोनानि । स ति १, ८

संजदासंजद-पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणेग-
जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं' ॥ ३१५ ॥

कुदो ? णाणाजीवपमाहस्स वोत्तेदाभावा, एगजीवस्स लेस्सद्वादो गुणद्वाए
बहुत्तुग्देसादो ।

अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च
णत्थि अंतरं, णिरंतरं' ॥ ३१६ ॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं' ॥ ३१७ ॥

त जहा- एक्को अप्पमत्तो सुकलेस्साए अच्छिदो उरसमसेट्ठि पडिद्दणतरिय
सव्वजहण्णकालेण पडिणियत्तिय अप्पमत्तो जादो । लद्धमतर ।

उक्कस्समंतोमुहुत्तं' ॥ ३१८ ॥

शुक्लेश्यागले सयतामयत और प्रमत्तसयतोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना और एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३१५ ॥

क्योंकि, उक्त गुणस्थानवर्ता नाना जीवोंने प्रयाहका कभी व्युत्तेद नहीं होता
है । तथा एक जीवकी अपेक्षा भी अन्तर नहीं है, क्योंकि, ऐश्याके कालसे गुणस्थानका
पाल बहुत होता है, ऐसा उपदेश पाया जाता है ।

शुक्लेश्यागले अप्रमत्तसयतोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३१६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३१७ ॥

जैसे-शुक्लेश्यामें विद्यमान कोइ एउ अप्रमत्तसयत उपशमथ्रेणीपर चढकर
अन्तरको प्राप्त हो सर्वजघन्य कालसे लौटकर अप्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर
प्राप्त होगया ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३१८ ॥

१ सपतामयउप्रमत्तसयतयोलेजोडश्यागद् । स सि १, ८

२ अप्रमत्तसयतस्य नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । स सि १, ८

३ एगजीव प्रति जघन्यमुत्कृष्ट अन्तरमुहूर्त । स सि १, ८

एदस्म जहण्णभगो । णपरि सच्चिरेण कालेण उरसमसेढीदो ओदिण्णस्म
वच्चय ।

तिण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ३१९ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्त ॥ ३२० ॥

एद पि सुगम ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ३२१ ॥

उक्कस्सेण अतोमुहुत्तं ॥ ३२२ ॥

एदेसिं दोण्ह सुत्ताणमत्थे भण्णमाणे सिप्प-चिरकालेहि उरसमसेढिं चट्ठिय ओटि
ण्णाणं' जहण्णुक्कस्मकाला वच्चवा ।

इसका अन्तर भी जघन्य अन्तरप्ररूपणाके समान है । विशेषता यह है कि
सप्तदीर्घकालात्मक अन्तर्मुहूर्त द्वारा उपशमश्रेणीसे उतरे हुए जीवके उत्कृष्ट अन्तर
कहना चाहिए ।

शुक्लेश्यागाले अपूर्वकरण, अनिष्टचिह्नकरण और सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानवर्ती
तीनों उपशमक जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे
एक समय अन्तर है ॥ ३१९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

शुक्लेश्यागाले तीनों उपशमकोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ ३२० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३२१ ॥

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३२२ ॥

इन दोनों सूत्रोंका अर्थ कहने पर क्षिप्र (लघु) कालसे उपशमश्रेणी पर चढ़कर
उतरे हुए जीवोंके जघन्य अन्तर कहना चाहिए, तथा चिर (दीर्घ) कालसे उपशमश्रेणी
पर चढ़कर उतरे हुए जीवोंके उत्कृष्ट अन्तर कहना चाहिए ।

१ त्रयाणामुपशमरानां नानाजीवापेक्षया सामान्यत्वं । स सि १, ८

२ एकजीव प्रति जघन्यमुहूर्त चान्तमुहूर्त । स मि, १, ८

३ प्रविशु ' जीविणान् ' इति पाठ ।

उवसंतकसायवीदरागछटुमत्थाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि,
पाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ३२३ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ ३२४ ॥

एद पि सुगम ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ३२५ ॥

उग्रमतादो उग्रि उग्रसत्तक्रमाएण पडिउज्जमाणगुणट्ठाणाभाया, हेट्ठा ओटिण्णस्स
पि लेस्सतरंमकृतिमत्तरेण पुणो उग्रसत्तगुणग्गहणाभाया ।

चटुण्हं खवगा ओघं ॥ ३२६ ॥

शुक्लेश्यामाले उपशान्तरूपायत्रीतरागछटुस्थोका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ ३२३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ ३२४ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३२५ ॥

क्योंकि, उपशान्तरूपाय गुणस्थानसे ऊपर उपशान्तरूपायी जीवके द्वारा प्रतिपद्य
मान गुणस्थानका अभाव है, तथा नीचे उतरे हुए जीवके भी अन्य लेश्याके सक्रमणके
बिना पुन उपशान्तरूपाय गुणस्थानका ग्रहण हो नहीं सकता है ।

विशेषार्थ—उपशान्तरूपायगुणस्थानके अन्तरका अभाव बतानेका कारण यह है
कि ग्यारहवें गुणस्थानसे ऊपर तो वह चढ़ नहीं सकता है, क्योंकि, वहापर क्षपकोंका
ही गमन होता है । और यदि नीचे उतरकर पुन उपशान्तरेणीपर चढ़े, तो नीचेके गुण-
स्थानोंमें शुक्लेश्यासे पीत पद्मादि लेश्याका परिवर्तन हो जायगा, क्योंकि, वहापर एक
लेश्याके कालसे गुणस्थानका काल बहुत बताया गया है ।

शुक्लेश्यामाले चागे क्षपकोंका अन्तर ओघके समान है ॥ ३२६ ॥

१ उपशान्तरूपायस्य नानाजीवापेक्षया सामायत्तम् । स वि १, ८

२ एकजीव इति नास्त्यन्तरम् । स वि १, ८ ३ प्रतिपु 'लेस्सतर' इति पाठ ।

४ चतुर्णां क्षपकानां संयोगवैकल्यिनामलेश्यानां च सामायत्तम् । स वि १, ८

सजोगिकेवली ओघं ॥ ३२७ ॥

दो मि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एउ हेस्सामग्गणा' समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धिएसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव अजोगि
केवलि ति ओघ ॥ ३२८ ॥

बुद्धो ? सच्चपयारेण ओघपरूपाणादो भेदाभावा ।

अभवसिद्धियाणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च

णत्थि अतर, णिरतर' ॥ ३२९ ॥

बुद्धो ? अभव्यपराहणोच्छेदाभावा ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरतर ॥ ३३० ॥

बुद्धो ? गुणतरसकृतीए तत्थाभावा ।

एउ भवियमग्गणा समत्ता ।

शुद्धलेश्यानाले सयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ ३२७ ॥

ये दोनों सूत्र सुगम हैं ।

इस प्रकार लेश्यामार्गणा समाप्त हुई ।

भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्यसिद्धिकोमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर जयोगिकेवली
तक प्रत्येक गुणस्थानतर्फी भव्य जीवोंका अन्तर ओघके समान है ॥ ३२८ ॥

फ्योंकि, सब प्रकार ओघप्ररूपणासे भव्यमार्गणाकी अन्तरप्ररूपणामें कोई
भेद नहीं है ।

अभव्यमिद्धिक जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा
अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३२९ ॥

फ्योंकि, अभव्य जीवोंके प्रराहका कभी विच्छेद नहीं होता है ।

अभव्य जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३३० ॥

फ्योंकि, अभव्योंमें अन्य गुणस्थानके परिवर्तनका अभाव है ।

इस प्रकार भव्यमार्गणा समाप्त हुई ।

१ प्रथिउ ' हेस्सामग्गणा ' इति पाठ ।

२ मव्यावुवादन मव्यु मिथ्यादृष्ट्याययोगिकव्यतानां सामायवत्त । स मि १, ८

३ अभव्यानी नानातीकापेक्षया एउ जीवपेक्षया च नास्त्यन्तरम् । स मि १, ८

सम्मात्ताणुवादेण सम्मादिष्टीसु असंजदसम्मादिष्टीणमंतरं केवचिरं
कालादो हेदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥३३१॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहणणेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३३२ ॥

त जहा- एगो असजदसम्मादिष्टी सजमासजमगुणं गंतूणं सब्वजहणणेण कालेण
पुणो अमजदसम्मादिष्टी जादो । लद्धमतर ।

उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूण ॥ ३३३ ॥

त जहा- एगो मिन्हादिष्टी अट्टाणीममतरम्मिओ पचिदियतिगिक्खसण्णिणसम्मू-
च्छिमपज्जत्तएसु उतरण्णो । छहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) विमुद्धो
(३) वेदगसम्मत्त पडिण्णो (४) । मजमामजमगुण गतूणतरिदो पुव्वकोडि जीणिय
मदो देपो जादो । एवं चदुहि अतोमुहुत्तेहि ऊणिया पुव्वकोडी उक्कस्मतरं ।

सजदासंजदप्पहुडि जाव उवसंतकसायवीदरागछुदुमत्था ओधि-
णाणिभगो ॥ ३३४ ॥

सम्यक्त्वमार्गणाके अनुवादसे सम्यग्दृष्टियोंमें असयतमस्यग्दृष्टियोंका अन्तर
कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३३१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३३२ ॥

जैसे- एक असयतसम्यग्दृष्टि जीव सयमासयम गुणस्थानको प्राप्त होकर सर्व-
जघन्य कालमें पुन असयतसम्यग्दृष्टि होगया । इस प्रकार अन्तर प्राप्त हुआ ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटी है ॥३३३॥

जैसे- मोहकर्मकी अट्टाईम प्रवृत्तियोंकी मत्तावाता एव मिथ्यादृष्टि जीव पवेन्द्रिय
सर्वा सम्मूर्च्छिम पर्याप्तक तिर्यचोंमें उत्पन्न हुआ । उहाँ पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१)
विश्राम ले (२) विमुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४) । पुन सयमासयम
गुणस्थानको जाकर अन्तरको प्राप्त हो पूर्वकोटी चर्पतरु जीवित रह कर मरा और देव
हुया । इस प्रकार चार अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पूर्वकोटी वर्ष असयतसम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट
अन्तर होता है ।

संयतामयत गुणस्थानसे लेकर उपशान्तरूपायत्रीतरागच्छस्य गुणस्थान तक
प्रत्येक गुणस्थानत्रती सम्यग्दृष्टियोंका अन्तर अत्रिज्ञानियोंके समान है ॥ ३३४ ॥

१ प्रतिपु 'सजदप्पहुडि' इति पाठ ।

सजोगिकेवली ओघं ॥ ३२७ ॥

दो नि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एन लेस्सामगणा^१ समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धिणसु मिच्छादिट्टिप्पहुडि जाव अजोगि
केवलि ति ओघं ॥ ३२८ ॥

कुदो ? सच्चपयारेण जोघपरुणणादो भेदाभावा ।

अभवसिद्धियाणमत्तर केवचिर कालादो हेदि, णाणाजीवं पडुच्च
णत्थि अंतरं, णिरत्तरं^२ ॥ ३२९ ॥

कुदो ? अभव्यपराहरोच्छेदाभावा ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अत्तरं, णिरत्तरं ॥ ३३० ॥

कुदो ? गुणतरसरुतीए तत्थामावा ।

एन भनियमगणा समत्ता ।

शुद्धलेश्यामाले सयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ ३२७ ॥

ये दोनों सून सुगम हैं ।

इस प्रकार लेश्यामार्गणा समाप्त हुई ।

भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्यसिद्धिकोमि मिव्यादष्टिमे लेकर अयोगिकेवली
तक प्रत्येक गुणस्थानवर्ती भव्य जीवोंका अन्तर ओघके समान है ॥ ३२८ ॥

क्योंकि, सर्व प्रकार ओघपरुपणासे भव्यमार्गणाकी अन्तरपरुपणामें कोई
भेद नहीं है ।

अभव्यसिद्धिक जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा
अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३२९ ॥

क्योंकि, अभव्य जीवोंका प्रवाहना कभी विच्छेद नहीं होता है ।

जभव्य जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३३० ॥

क्योंकि, अभव्योंमें अन्य गुणस्थानके परिपतनका अभाव है ।

इस प्रकार भव्यमार्गणा समाप्त हुई ।

१ प्रतिपु 'लम्ममगणा' इति पाठ ।

२ मत्तावुवादन मत्तेयु मिव्यादष्ट्याययोगवेवक्यन्तानां सामायवन् । स ति १, ८

३ अभव्यानी नानाजीवापेत्थ्या एवजीवापेत्थया च नास्सुत्तम् । स ति १, ८

त जहा- एस्को पुव्वकोडाउएसु मणुमेसुपज्जिय गव्भादिअट्टमस्मिओ जाढो ।
 दमणमोहणीय सपिय सडयसम्मादिद्वी जाढो (१) । अतोमुहुत्तमच्छिड्ढूण (२) सजमासजम
 सजम वा पडिपज्जिय पुव्वकोडिं गमिय काल गढो देवो जाढो । अट्टमस्सेहि नि-
 अतोमुहुत्तेहि य ऊणिया पुव्वकोडी अतर ।

संजदासंजद-पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिर कालादो होदि णाणा-
 जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ३४० ॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३४१ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण तेत्तीस सागरोवमाणि सादिरेयाणि ॥ ३४२ ॥

तं जहा- एकको पुव्वकोडाउगेसु मणुमेसु उवण्णो । गव्भादिअट्टमस्माणमुपरि
 अतोमुहुत्तेण (१) सडय पट्टमिय (२) निम्ममिय (३) मजमामजम पडिपज्जिय (४)

जैसे- एक जीव पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर गर्भसे लेकर आठ
 वर्षका हुआ और दर्शनमोहनीयका क्षय करके क्षायिकसम्यग्दृष्टि होगया (१) । वहा
 अंतर्मुहूर्त रह करके (२) सयमासयम या सयमको प्राप्त होकर और पूर्वकोटी वर्ष
 मितकर मरणको प्राप्त हो देव हुआ । इस प्रकार आठ वर्ष और दो अन्तर्मुहूर्तमें कम
 पूर्वकोटी वर्ष जसयन श्रायिकसम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर हे ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टि मयतामयत और प्रमत्तमयत जीवोंका अन्तर कितने काल
 होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निगन्तर है ॥ ३४० ॥

यह सूत्र सुगम हे ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३४१ ॥

यह सूत्र भी सुगम हे ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेत्तीस सागरोपम
 है ॥ ३४२ ॥

जैसे- एक जीव पूर्वकोटी वर्षकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । गर्भको आदि
 लेकर आठ वर्षोंके पश्चात् अंतर्मुहूर्तमें (१) क्षायिकसम्यक्त्वका प्रस्थापनकर (२)
 विधाम ले (३) सयमामयमको प्राप्त कर (४) सयमको प्राप्त हुआ । सयमसहित

१ सयतामयतप्रमत्ताप्रमत्तमयतानां तानाजागपेक्षया नास्त्यन्तरम् । स मि १, ८

२ एकजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्त । स मि १, ८

३ उत्कर्षय यपक्षिसागरोपमाणि सातिरेकाणि । स मि १, ८ ४ प्रविशु 'पट्टमिय' इति पाठ ।

जघा ओधिणाणमग्गणाए सजदासजदादीणमतरपरुणणा कदा, तथा कदा रा,
णत्थि एत्थ कोड निमेषो ।

चदुण्ह खवगा अजोगिकेवली ओघं ॥ ३३५ ॥

सजोगिकेवली ओघ ॥ ३३६ ॥

दो वि मुत्ताणि सुगमाणि ।

खइयसम्मादिट्ठीसु असजदसम्मादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतर' ॥ ३३७ ॥

सुगममेद ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ३३८ ॥

त जहा— एक्को अमज्जम्ममादिट्ठी अण्णगुण गत्तूण सच्चजहण्णकालेण असजद
सम्मादिट्ठी जादो । लद्धमतर ।

उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूण' ॥ ३३९ ॥

जिस प्रकारसे अवधिदानमागणामें सयतासयत आदिमेंके अन्तरकी प्ररूपणा
की है, उसी प्रकार यहा पर भी करना चाहिए, क्योंकि, उससे यहा पर कोई विशेषता
नहीं है ।

सम्यग्दष्टि चारों क्षपक और अयोगिकेनलियोंका अन्तर ओघके समान
है ॥ ३३५ ॥

सम्यग्दष्टि सयोगिकेनलीका अन्तर ओघके समान है ॥ ३३६ ॥

ये दोनों हा सून सुगम ह ।

धापिम्मम्यग्दष्टियाम असयतसम्यग्दष्टियोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवानी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३३७ ॥

यह सून सुगम है ।

उक्त जीवानी एक जीवनी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३३८ ॥

जैसे— एर असयतसम्यग्दष्टि जीव अय (सयतासयतादि) गुणस्थानको जानर
समयजघन्य कालमें पुन असयतसम्यग्दष्टि होगया । इस प्रकार अन्तर लघ हुआ ।

उक्त जीवानी एक जीवनी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटी वर्ष
है ॥ ३३९ ॥

१ सम्यक्चातुर्वानेन धापिम्मम्यग्दष्टिसमयतसम्यग्दष्टेनानाजापेक्षया नास्त्यतरम् स मि १, ८

२ पूर्वकी प्रति जघनेनान्मुहूर्त । स मि १, ८ ३ उत्तरपण पूर्वकोटी देसाना । स मि १, ८

अथवा अंतरस्मभतराओ दो अप्पमत्तद्वाओ, तासिं माहिरिया एक्का पमत्तद्वा मुद्धा । अतरम्भतराओ छ उमसामगद्वाओ, तासिं माहिरियाओ तिणिण खवगद्वाओ मुद्धाओ । अतरम्भतरिमाए उममत्तद्वाए एक्किक्किस्से खवगद्वाए अट्टं मुद्धं । अनसेसा अट्टुद्धा अंतोमुहुत्ता । तेहि ऊणियाए पुव्वकोडीए मादिनेयाणि तेत्तीम सागरोवमाणि पमत्तस्सुक्कस्मतरं ।

अप्पमत्तस्स उच्चदे- एकको अप्पमत्तो खइयसम्मादिट्टी अपुच्चो (१) अणियट्टी (२) सुद्धो (३) उमसतो (४) पुणो पि सुद्धो (५) अणियट्टी (६) अपुच्चो होदूण (७) काल गदो समऊणतेत्तीससागरोममाउट्टिदिएसु देसेसुअण्णो । तदो चुदो पुव्वकोडाउएसु मणुसेसु उमअण्णो, अतोमुहुत्ताअसेसे ससारे अप्पमत्तो जादो । लद्धमतरं (१) । तदो पमत्तो (२) पुणो अप्पमत्तो (३) । उअरि छ अंतोमुहुत्ता । अंतरस्स अम्भतरिमाओ छ उमसामगद्वाओ माहिरिल्लियासु तिसु खवगद्वासु मुद्धाओ । अम्भ-

अथवा, अन्तरके आभ्यन्तरी दो अप्पमत्तकाल ह ओर उनके बाहरी एक अप्पमत्तकाल शुद्ध है । (अतएव घटाने पर शून्य शेष रहा, क्योंकि, अप्पमत्तसयतके कालसे अप्पमत्तसयतका काल दूना होता है) तथा अन्तरके भीतरी छह उपशामककाल ह, और उनके बाहरी तीन क्षपककाल शुद्ध ह । (अतएव घटा देने पर शेष कुछ नहीं रहा, क्योंकि उपशामककालके कालसे क्षपककालका काल दुगुना होता है) अन्तरके भीतरी उपशामककालमेंसे एक अप्पमत्तकालके जाधा घटाने पर क्षपककालका आधा शेष रहता है । इस प्रकार सब मिलाकर साढे तीन अन्तर्मुहूर्त अवशेष रहे । उन साढे तीन अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पूर्वकोटसे माधिक तेतीस सागरोपमकाल श्रायिकसम्यग्दष्टि अप्पमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

श्रायिकसम्यग्दष्टि अप्पमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- एक अप्पमत्तसयत श्रायिकसम्यग्दष्टि जीअ अपूर्वकरण (१) अनिवृत्तिकरण (२) सूद्धमसाम्पराय (२) उपशातकपाय (४) होअर पुअरपि सूद्धमसाम्पराय (५) अनिवृत्तिकरण (६) अपूर्वकरण (७) होअर मरणको प्राप्त हुआ और एअ समय कम तेतीस सागरोपमकी आयुस्थितियाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहासे च्युत हो पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और ससारके अन्तर्मुहूर्त अवशिष्ट रह जाने पर अप्पमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर लख होगया (१) । पश्चात् अप्पमत्तसयत (२) पुअ अप्पमत्तसयत (३) हुआ । इनमें ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त ओर मिलाये । अन्तरके आभ्यन्तरी छह उपशामककाल ह और बाहरी तीन क्षपककाल हैं, अतएव घटा देने पर शेष कुछ नहीं रहा ।

संजम पडिण्णो । पुच्चकोडिं गमिय मदो समऊणतेत्तीससागरोपमाउड्ढिदिएसु उअ
वण्णो । तदो चुदो पुच्चकोडाउएसु मणुसेसुअवण्णो । थोअअसेसे जीणिए सअमामअम
गदो (५) । तदो अप्पमत्तादिणअहि अतोमुहुत्तेहि मिद्धो जादो । अट्टअस्सोहि चोअम
अतोमुहुत्तोहि य ऊणदोपुच्चकोडोहिं मादिग्गैयाणि तेत्तीम सागरोपमाणि उक्कस्सअत
सअजअसअजअस्स ।

पमत्तस्स उच्चदे- एकओ पमत्तो अप्पमत्तो (१) अपुच्चो (२) अणियट्ठी
(३) सुहुमो (४) उअमत्तो (५) पुणो अि सुहुमो (६) अणियट्ठी (७) अपुच्चो
(८) अप्पमत्तो (९) अट्टअएण काल गदो । समऊणतेत्तीमसागरोपमाउड्ढिदिएसु
देवसे उअवण्णो । तदो चुदो पुच्चकोडाउएसु मणुसेसु उअवण्णो । अतोमुहुत्ताअसेमे जीणिए
पमत्तो जानो । लद्धअतर (१) । तदो अप्पमत्तो (२) । उअरि छ अतोमुहुत्ता । अतरस्स
आहिरा अट्ट अतोमुहुत्ता, अतरस्स अअभतरिमा अि णअ, तेणेगतोमुहुत्तअअहियपुच्चकोडोए
सादिग्गैयाणि तेत्तीम सागरोपमाणि उक्कस्सअतरं ।

पुनोटीकाल धिताअर अरअ आर एअ समय कम तेतीस सागरोपमकी आयुस्थितिआले
देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहांसे च्युत हो पूर्वोटीकी आयुआले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । जीव
नके अल्प अवशेष रह जाने पर सयमात्मयमओ प्राप्त हुआ (५) । इसके पश्चात्
अप्रमत्तादि गुणस्थानसम्बन्धी नो अतमुहुत्तोसे (द्रेण्यागेहण करता हुआ) सिद्ध
होगया । इस प्रकार आठ वर्ष और चौदह अन्नमुहुत्तोसे कम दो पूर्वोटीयोंसे साधिक
तेतीस सागरोपमका क्षायिकसम्यग्दृष्टि सयतात्मयतना उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसयतना उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- एक क्षायिकसम्यग्दृष्टि
प्रमत्तसयत जीव अप्रमत्तसयत (१) अपुअरण (२) अनिवृत्तिकरण (३) सूअमसाअ
राय (४) उपशाअतअयाय (५) पुअ सूअमसाअपराय (६) अनिवृत्तिकरण (७) अपूर्व
करण (८) अप्रमत्तसयत (९) होअर (गुणस्थान और आयुके) कालक्षयसे मरणको
प्राप्त हो एक समय कम तेतीस सागरोपमकी आयुस्थितिआले देवोंमें उत्पन्न हुआ । पुन
यहांसे च्युत होअर पूर्वोटीकी आयुआले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । वहां जीवनके अतमुहुत्त
अवशिष्ट रह जाने पर प्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया (१) । पश्चात्
अप्रमत्तसयत हुआ (२) । इनमें ऊपरके छह अतमुहुत्त और मिलाए । अतरके वाहरी
आठ अतमुहुत्त हैं और अन्तरके भीतरी नौ अतमुहुत्त हैं, इसलिये नौमसे आठके घटा
देने पर शेष बचे हुए एक अतमुहुत्तसे अधिक पुनोटीसे साधिक तेतीस सागरोपम
क्षायिकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसयतना उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

त जहा— एकको मिच्छादिद्वी वेदगसम्मत्तं संजमामजमं च जुगं पडिवण्णो । अंतोमुहुत्तमच्छिय सजमं पडिवण्णो अतरिदो । जत्तिय काल सजमासजमेण संजमेण च अच्छिदो तेत्तियमेत्तेणूणतेत्तीससागरोपमाउद्विद्विदेसेसु उपण्णो । तदो चुदो मणुसेसु उपण्णो । तत्थ जत्तियं काल असजमेण सजमेण वा अच्छिदि, पुणो सग्गादो मणुसगदि-मांगंतूण जं नामपुधत्तादिकालमच्छिदस्सदि तेहि दोहि पि कालेहि ऊणतेत्तीससागरोपमआउ-द्विद्विदेसेसु उपण्णो । तदो चुदो मणुसो जादो । वे अतोमुहुत्तापसेसे वेदगसम्मत्तं-काले परिणामपच्चएण संजमामजमं पडिवण्णो । लद्धमतर । तदो अतोमुहुत्तेण दसण-मोहणीय खणिय खड्यसम्मादिद्वी जादो । आदिल्लमेक्क अंतिल्ला दुपे' अतोमुहुत्ता, एदेहि तीहि अंतोमुहुत्तेहि ऊणाणि छात्रद्विसागरोपमाणि सजदासजदुक्कस्मतर ।

पमत्त-अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ३५३ ॥

सुगममेदं ।

जैसे— एक मिथ्यादृष्टि जीव वेदकसम्यक्त्व और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ । अन्तर्मुहूर्त रह कर पुन सयमको प्राप्त हो अन्तरको प्राप्त हुआ । पुन मरणकर जितने काल सयमासयम आर सयमके साथ रहा था उतने ही कालसे कम तेतीस सागरोपमकी आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहासे च्युत हो मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । वहा पर जितने काल असयमके अथवा सयमके साथ रहा है और स्वर्गसे मनुष्य-गतिमें आकर जितने वर्षपृथक्त्वादि काल असयम अथवा सयमके साथ रहेगा उन्हें दोनों ही कालोंसे कम तेतीस सागरोपमकी आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहाँसे च्युत हो मनुष्य हुआ । इस प्रकार वेदकसम्यक्त्वके कालमें दो अन्तर्मुहूर्त अचदिष्ट रह जाने पर परिणामोंके निमित्तसे सयमासयमको प्राप्त हुआ । तत्र अन्तर लब्ध हुआ । पुन अन्तर्मुहूर्तसे दर्शनमोहनीयका क्षणकर क्षायिकसम्यग्दृष्टि होगया । इस प्रकार आदिको एक और अन्तके दो अन्तर्मुहूर्त, इन तीन अन्तर्मुहूर्तोंसे कम छयासठ सागरोपमकाल वेदकसम्यग्दृष्टि सयतासयतका उत्कृष्ट अन्तर है ।

वेदकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसंयतोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३५३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

यदाणि दो पि सुचाणि सुगमाणि ।

वेदगसम्मादिद्वीसु असंजदसम्मादिद्वीणं सम्मादिद्विभंगो ॥३४९॥

सम्मत्तमग्गणाए ओघमिह जघा अमजदमम्मादिद्वीणमत्तर परमिद तया ण्य
वि परुमिदव्व ।

संजदासजदाणमंतर केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च
णत्थि अंतर, णिरंतरं ॥ ३५० ॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३५१ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण छावट्टि सागरोवमाणि देसूणाणि ॥ ३५२ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें अमयतसम्यग्दृष्टियोंका अन्तर सम्यग्दृष्टिमामान्यके समान
है ॥ ३४९ ॥

ज्ञिस प्रकारसे सम्यक्त्वमागणाके ओघमें असयतसम्यग्दृष्टियोंका अन्तर कहा है,
उसी प्रकारसे यहा पर भी कहना चाहिये ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें सयतासयतोंका अन्तर कितने काल होता है? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३५० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३५१ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ क्रम छायासठ सागरोपमा
है ॥ ३५२ ॥

१ क्षायापश्चिमिदमस्यग्दृष्टिन्वयतसम्यग्दृष्टेर्नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । एकजीव प्रति जघयेनात्त
है । उत्तरें पुरैकादी देजोना । स वि १, ८

२ सयतासयतस्य नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । स वि १२, ८

३ एकजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्त । स वि १, ८

४ उत्कृष्टेण वदस्यद्विषागरोपमाणि देशोनानि । स वि १, ८

वण्णो । अतोमुहुत्ताग्नेसे आउए अप्पमत्तो जादो । लद्धमत्तर (१) । पमत्तापमत्तसजद-
द्वुणे सइय पट्टयिय (२) सग्गमेडीपाओग्गअप्पमत्तो होदूण (३) सग्गमेडीमारूढो
अपुच्चादिउहि अतोमुहुत्तेहि णिबुदो । अतरस्मादिल्लमेक्क गहिरेसु णसु अतोमुहुत्तेसु
मोहिदे अग्नेसा अट्ट । एदेहि ऊणपुच्चकोटीए मादिग्ग्याणि तेत्तीस सागरोपमाणि
अप्पमत्तुक्कस्मत्तर ।

उवसमसम्मादिद्वीसु असंजदसम्मादिद्वीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ३५६ ॥

णितरमुपसममत्त पडिउज्जमाणजीवाभावा ।

उक्कस्सेण सत्त रादिंदियाणि ॥ ३५७ ॥

किमत्थो सत्तरादिंदियिरिहणियमो ? सभाउदो ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३५८ ॥

त जहा— एकको उपसममेदीदो ओदरिय असंजदो जादो । अतोमुहुत्तमच्छिउदूण

आयुके अन्तर्मुहूर्त अवशिष्ट रह जाने पर अप्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध
होगया (१) । तत्पश्चात् प्रमत्त या अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यक्त्वको प्रस्था-
पितकर (२) क्षपकश्रेणीके प्रायोग्य अप्रमत्तसयत होकर (३) क्षपकश्रेणीपर चढ़ा ओर
अपूर्वकरणादि छह अन्तर्मुहूर्तोंसे निर्वाणको प्राप्त हुआ । अन्तरके आदिका एक अन्तर्मुहूर्त
बाहरी नौ अन्तर्मुहूर्तोंमेंसे घटा देने पर अवशिष्ट आठ अन्तर्मुहूर्त रहे । इनसे कम
पूर्वकोटीसे साधिक तेत्तीस सागरोपमनाल वेदकसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसयतका उत्कृष्ट
अंतर होता है ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता
है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय है ॥ ३५६ ॥

क्योंकि, निरन्तर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंका अभाव है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर सात रात दिन (अहोरात्र) है ॥ ३५७ ॥

शुद्धा—सात रात दिनोंके अन्तरका नियम किसलिपि है ?

समाधान—स्वभावसे ही है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३५८ ॥

जैसे— एक सयत उपशमश्रेणीसे उत्तरकर असंयतसम्यग्दृष्टि हुआ और अन्तर्मुहूर्त

१ औपशमिसम्यग्दृष्टिपक्षयतसम्यग्दृष्टिनानाजावापेक्षया जघन्येनैक समय । स ति १, ८.

२ उत्कर्षेण सत्त रात्रिदिनानि । स ति १, ८

३ पुञ्जीव प्रति जघन्यमुत्कृष्ट चान्तर्मुहूर्त । स ति १, ८

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३५४ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि ॥ ३५५ ॥

त जहा- एकको पमत्तो अप्पमत्तो होदूण अतोमुहुत्तमच्छिय तेत्तीससागरोवमाउ
ट्टिदिएसु देरेसुगण्णो । तदो चुदो पुव्वकोडाउएसु मणुमेसुगण्णो । अतोमुहुत्तावमेम
संसारे पमत्तो जादो । लद्धमतर । सडय पट्टरिय सगमेडीपाओग्गअप्पमत्तो होदूण (२)
सगमेडिमास्तो अपुव्वादि छअतोमुहुत्तेहि णिवुदो । अतरस्म आदिल्लमेग्गमत्तो
मुहुत्त अतरवाहिरेसु अट्टअतोमुहुत्तेसु सोहिदे जससेसा मत्त अतोमुहुत्ता । एदेहि उण
पुव्वकोडीए सादिरेयाणि तेत्तीस सागरोवमाणि पमत्तमजदुक्कस्मतर ।

अप्पमत्तस्स उच्चदे- एकको अप्पमत्तो पमत्तो होदूण अतोमुहुत्तमच्छिय (१)
समउणतेत्तीससागरोवमाउट्टिदिदेसु उगण्णो । तदो चुदो पुव्वकोडाएसु मणुमेसु उव

उक्त जीवशास्त्रे एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३५४ ॥

यह सूत्र भा सुगम है ।

उक्त जीवशास्त्रे एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेत्तीस सागरोपम
है ॥ ३५५ ॥

जैसे- एक प्रमत्तसयत, अप्रमत्तसयत हो अतमुहूर्त रहकर तेत्तीस सागरोपमकी
आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहाँसे न्युत हो पूव्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें
उत्पन्न हुआ । संसारके अतमुहूर्तप्रमाण अवशिष्ट रह जाने पर प्रमत्तसयत हुआ । इस
प्रकार अंतर लब्ध हुआ । पुन श्रायिन्सम्यक्त्वको प्रस्थापितकर क्षपकश्रेणीके योग्य
अप्रमत्तसयत हो (२) क्षपक श्रेणीपर चढा और अपूव्वकरणदि छह अन्तर्मुहूर्तोंसे निर्वाणका
प्राप्त हुआ । अंतरके आदिके एक अन्तर्मुहूर्तको अंतरके गहिरी भाठ अन्तर्मुहूर्तोंमेंसे
कम कर देने पर अवशिष्ट सात अतमुहूर्त रहते हैं, इनसे कम पूव्वकोटीसे साधिक
तेत्तीस सागरोपमजाल प्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अंतर है ।

येदकसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसयतका अन्तर कहते हैं- एक अप्रमत्तसयत जीव,
प्रमत्तसयत हो अतमुहूर्त रहकर (१) एक समय कम तेत्तीस सागरोपमकी आयुस्थिति
वाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहाँसे न्युत हो पूव्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ ।

१ एकीति प्रति जययनात्तमुहूर्त । स नि १, ८

२ उत्कृष्टेण अपेक्षितमापरोपमाणि सातिरेयाणि । स नि १, ८

मच्छिय असजदो जादो। पुणो वि अंतोमुहुत्तेण मजमासजम पडियण्णो। लद्ध जहण्णंतर।

उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३६३ ॥

त जहा- एक्को सेडीदो ओदरिय सजदासजदो जादो। अंतोमुहुत्तमच्छिय अप्पमत्तो पमत्तो असजदो च होदूण सजदासजदो जादो। लद्धमुक्कस्मतर।

पमत्त-अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ३६४ ॥

सुगममेद।

उक्कस्सेण पण्णारस रादिदियाणि ॥ ३६५ ॥

एद पि सुगम।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३६६ ॥

त जहा- एक्को उन्नतससेडीदो ओदरिय पमत्तो होदूण अंतोमुहुत्तमच्छिय अप्प-

मुहूर्त रहकर असयतसम्यग्दृष्टि होगया। फिर भी अन्तर्मुहूर्तसे सयमासयमको प्राप्त हुआ। इस प्रकार जघन्य अन्तर लब्ध हुआ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३६३ ॥

जैसे- एक सयत उपशमश्रेणीसे उतरकर सयतासयत हुआ। अन्तर्मुहूर्त रहकर अप्रमत्तसयत, प्रमत्तसयत और असयतसम्यग्दृष्टि होकर सयतासयत होगया। इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर लब्ध हुआ।

उपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्त और अप्रमत्तसयतोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय है ॥ ३६४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पन्द्रह रात दिन है ॥ ३६५ ॥

यह सूत्र भी सुगम है।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३६६ ॥

जैसे- एक सयत उपशमश्रेणीसे उतरकर प्रमत्तसयत हो अन्तर्मुहूर्त रह कर

१ प्रमत्तप्रमत्तसयतयोर्नानाजीवोपेक्षया जघन्येनेन समय । स सि १, ८

२ उत्कृष्टेण प्रमत्तसयत रात्रिदिनानि । स सि १, ८

३ एकजीव प्रति जघन्यमुत्कृष्ट चान्तर्मुहूर्त । स सि १, ८

सजमामजम पडिगणो । अतोमुहुत्तेण पुणो असजदो जादो । लद्ध जहण्णतरं ।

उक्कस्सेण अतोमुहुत्त ॥ ३५९ ॥

त जहा- एको सेडीदो ओदरिय अमजदो जादो । तत्थ अतोमुहुत्तमच्छिय सजमामजम पडिवणो । तदे अप्पमत्तो पमत्तो होदूण असजदो जादो । लद्धमुक्कस्मतर ।

संजदासंजदाणमतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ३६० ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण चौदस रादिदियाणि ॥ ३६१ ॥

एद पि सुगम ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ३६२ ॥

त जहा- एक्को उगममेदीदो ओदरिय सजमामजम पडिगणो । अतोमुहुत्त

रहकर सयमासयमको प्राप्त हुआ । अन्तर्मुहूर्तसे पुन असयत होगया । इस प्रकार जघन्य अन्तर लब्ध हुआ ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३५९ ॥

जैसे- एक सयत उपशमश्रेणीसे उतरकर असयतसम्यग्दृष्टि हुआ । वहा अन्तर्मुहूर्त रहकर सयमासयमको प्राप्त हुआ । पश्चात् अप्रमत्त और प्रमत्तसयत होकर असयतसम्यग्दृष्टि होगया । इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर लब्ध हुआ ।

उपशमसम्यग्दृष्टि सयतामयतोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय है ॥ ३६० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर चौदह रात दिन है ॥ ३६१ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३६२ ॥

जैसे- एक सयत उपशमश्रेणीसे उतरकर सयमासयमको प्राप्त हुआ और अन्त

१ सयतसम्यग्दृष्टि नानाजीवोंके जघन्य अन्तर समय । स सि १, ८

२ उत्कृष्ट अन्तर चतुदश रात्रिदिनाणि । स सि १, ८

३ एकजीव प्रति जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त । स सि, १, ८

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३७० ॥

त जहा- उपसममेदिं चट्टिय आदिं करिय पुणो उरिं गतूण ओदरिय अप्पिद-
गुण पडिण्णस्स अतोमुहुत्तमतरं होदि ।

उक्कस्सेण अतोमुहुत्तं ॥ ३७१ ॥

एदस्स जहण्णभगो । णरि तिसेसा विदियार चढमाणस्स जहण्णंतर, पढमवारं
चट्टिय ओट्टिण्णस्स उक्कस्सतर वत्तव्व ।

उवसंतकसायवीदरागल्लट्टुमत्थाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि,

णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ३७२ ॥

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ ३७३ ॥

एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ३७४ ॥

उक्त तीनों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त
है ॥ ३७० ॥

जैसे- उपशामश्रेणीपर चढकर आदि करके फिर भी ऊपर जाकर और उतरकर
निवक्षित गुणस्थानको प्राप्त होनेवाले जीवमें अन्तर्मुहूर्तप्रमाण जघन्य अन्तर होता है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३७१ ॥

इस उत्कृष्ट अन्तरकी प्ररूपणा भी जघन्य अन्तरकी प्ररूपणाके समान जानना
चाहिए । किन्तु विशेषता यह है कि उपशामश्रेणीपर द्वितीय वार चढनेवाले जीवके जघन्य
अन्तर होता है और प्रथम वार चढकर उतरे हुए जीवके उत्कृष्ट अन्तर होता है, ऐसा
फहना चाहिए ।

उपशान्तरूपायत्रीतरागल्लत्थोका जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय है ॥ ३७२ ॥

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर र्पपृथक्त्व है ॥ ३७३ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

उपशान्तरूपायत्रीतरागल्लत्थोका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर
है ॥ ३७४ ॥

१ एकजीव प्रति जघ यमुत्कृष्ट चात्तर्मुहूर्त । स सि १, ८

२ उपशा त्ररूपायस्य नानाजीवापेक्षया सामायव्व् । स सि १, ८

३ एकजीव प्रति नास्सन्तरम् । स सि १, ८

मत्तो जादो । पुणो वि पमत्तं गदो । लद्धमतर । एव चैव अप्पमत्तस्म वि जहणत्तर
वत्तव्व ।

उक्कस्सेण अतोसुहुत्त ॥ ३६७ ॥

त जहा- एम्हो उअसममेटीदो ओदरिय पमत्तो होदूण पुणो सजदामजजा अम
जदो अप्पमत्तो च होदूण पमत्तो जादो । लद्धमंतर । अप्पमत्तस्म उच्चदे- एक्को
सेडीदो ओदरिय अप्पमत्तो जादो । पुणो पमत्तो अमजदो सजदासजदो च होदूण भूआ
अप्पमत्तो जादो । लद्धमुक्कस्मतर ।

**तिण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च जहण्णेण एगसमय' ॥ ३६८ ॥**

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ ३६९ ॥

एदाणि दो वि सुत्ताणि सुग्गमाणि ।

अप्रमत्तसयत हुआ । फिर भी प्रमत्त गुणरूपांको प्राप्त हुआ । इन प्रकार अन्तर लब्ध
हुआ । इसी प्रकारसे उपशमसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसयतका भी जघन्य अन्तर कहना चाहिए ।

उपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्त और अप्रमत्तमयतोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट
अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३६७ ॥

जैसे- एक सयत उपशमश्रेणीसे उतरकर प्रमत्तसयत होकर पुन सयतासयत,
असयत और अप्रमत्तसयत होकर प्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ ।
उपशमसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- एक सयत उपशमश्रेणीसे
उतरकर अप्रमत्तसयत हुआ । पुन प्रमत्तसयत, असयत और सयतासयत होकर फिर
भी अप्रमत्तसयत होगया । इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर लब्ध हुआ ।

उपशमसम्यग्दृष्टि अर्पण, अनिश्चितिकरण और सूक्ष्मसाम्पराय, इन तीनों
उपशमश्रेणीका अन्तर मिलने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक
समय अन्तर है ॥ ३६८ ॥

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर अर्पणवत् है ॥ ३६९ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

१ शशाङ्कउपशमश्रेणी नानाजीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय । स ति १, ८
२ उच्चदेण वपुष्पवत् ॥ स ति १, ८

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरतरं' ॥ ३७७ ॥

गुणमकृतीए असंभवादो ।

मिच्छादिद्वीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणेगजीवं पडुच्च
णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ३७८ ॥

कुदो ? णाणाजीवपमाहम्म वोच्छेदाभावा, गुणंतरसंकंतीए अभावादो ।

एव सम्मतमगणा समत्ता ।

सण्णियाणुवादेण सण्णीसु मिच्छादिद्वीणमोघं' ॥ ३७९ ॥

कुदो ? णाणाजीव पडुच्च अतराभावेण, एगजीव पडुच्च अंतोमुहुच देवणणे-

छावट्टिमागरोपममेत्तजहणुक्कस्मत्तरोहि य साधम्मणलभा ।

सासणसम्मादिद्विप्पह्णुडि जाव उवसत्तकसायवीदरागच्छदुमत्था

त्ति पुरिसवेदभंगो' ॥ ३८० ॥

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३७७ ॥

क्योंकि, इन दोनोंके गुणस्थानका परिवर्तन असम्भव है ।

मिव्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना और एक जीवकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३७८ ॥

क्योंकि, नाना जीवोंके प्रवाहका कभी बिच्छेद नहीं होता है । तथा एक जीवका
अन्य गुणस्थानोंमें सक्रमण भी नहीं होता है ।

इस प्रकार सम्यन्त्वमार्गणा समाप्त हुई ।

सजीमार्गणाके अनुवादसे सजी जीवोंमें मिव्यादृष्टियोंका अन्तर ओघके समान
है ॥ ३७९ ॥

क्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे, एक जीवकी अपेक्षा
जबन्य अतर्मुहूर्त और उत्कृष्ट कुछ कम दो दयासठ सागरोमममात्र अन्तरोंकी अपेक्षा
ओघसे समानता पाई जाती है ।

सासादनसम्यग्दृष्टिमें लेकर उपशान्तरूपायरीतरागच्छवस्थ तरु सजी जीवोंका
अन्तर पुरुषोदियोंके अन्तरके समान है ॥ ३८० ॥

१ एवजीव मति नान्यतरम् । २० ८

हेट्टिमगुणद्वानेषु अतराप्रिय सव्यजहण्णेण कालेण पुणो उरसतरुमायभाय गयस्स जहण्णतर किण्ण उच्चदे ? ण, हेट्टा ओडण्णस्स वेदगसम्मत्तमपडिवज्जिय पुच्चुवमम सम्मत्तेणुसमसेढीसमारुहणे सभयाभायादो । त पि बुदो ? उरममसेढीममारुहणाओग्गकालादो सेसुउरसममच्चडाए त्थोउत्तुलभादो । तं पि बुदो णज्जदे ? उरसंत्तकमायएगजीवस्सतराभायण्णहाणुउरचीदो ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्माभिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एयसमय' ॥ ३७५ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण पालिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो' ॥ ३७६ ॥

एद पि सुगम ।

शंका—नीचेके गुणस्थानमें अंतरको प्राप्त कराकर सबजघय कालसे पुन उपशान्तरूपायतानो प्राप्त हुए जीवके अग्रन्य अंतर क्यों नहीं कहते ह ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमश्रेणीसे नीचे उतरे हुए जीवके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुए बिना पहलेवाले उपशमसम्यक्त्वके द्वारा पुन उपशमश्रेणीपर समारोहणही सम्भावनाका अभाव है ।

शंका—यह कैसे जाना ?

समाधान—क्योंकि, उपशमश्रेणीसे समारोहणयोग्य कालसे शेष उपशमसम्यक्त्वका काल अल्प पाया जाता है ।

शंका—यह भी कैसे जाना ?

समाधान—उपशातकपायवीतरागलस्यस्थके एक जीवसे अंतरका अभाव अन्यथा बन नहीं सकता, इससे जाना जाता है कि उपशान्तरूपाय गुणस्थान एक जीवकी अपेक्षा अन्तर रहित है ।

सामादानसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ ३७५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्लोपमका असरयातना भाग है ॥ ३७६ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

१ सामादानसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टयानानाजीवापेक्षया जघन्येनक समय । स ति १, ८

२ उत्कृष्टं पल्लोपमापल्लोपभाग । स ति १, ८

आहाराणुवादेण आहारएसु मिच्छादिट्टीणमोघं ॥ ३८४ ॥

सुगममेद ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्टीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च ओघं ॥ ३८५ ॥

एद पि सुगम ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्तं ॥ ३८६ ॥

एद पि अगयत्थं ।

उक्कस्सेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो असंखेज्जासंखेज्जाओ
ओसपिणि-उस्सपिणीओ ॥ ३८७ ॥

तं जहा- एकको सामणद्वाए दो समया अतिव ति काल गदो । एगविग्गहं

आहारमार्गणाके अनुवादसे आहारक जीवोंमें मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर ओघके
समान है ॥ ३८४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

आहारक सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर कितने काल
होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥ ३८५ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्रमशः पल्योपमका असं-
ख्यातभाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३८६ ॥

इस सूत्रका जयं ज्ञात है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर अगुलके असंख्यातत्रयं भागप्रमाण असंख्याता-
सख्यात उत्सर्पिणी और अनसर्पिणी काल है ॥ ३८७ ॥

जैसे- एक सासादनसम्यग्दृष्टि जीव सासादनगुणस्थानके कालमें दो समय

१ आहारानादेन आहारणेषु मिथ्यादृष्टे सामायत्त । स पि १, ८

२ सासादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टयोरानाजीवापेक्षया सामायत्त । स सि १, ८

३ एवञ्जीव प्रति जघनेन पल्योपमासत्येयमागोऽन्तर्मुहूर्तश्च । स सि १, ८

४ अत्रैवैणाशुलासत्येयमागा असत्येया उत्सर्पिण्यवसर्पिण्य । स सि १, ८

कुदो ? सागरोपममदपुधत्तद्विदिं पडि दोण्ड माधम्मुजलमा । णरणि अमण्णिद्विदिं
मच्छिय सण्णीसुप्पण्णस्त उक्कस्मद्विदि वत्तच्चा ।

चदुण्हं ख्वाणमोधं ॥ ३८१ ॥

सुगममेद ।

असण्णीणमंतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च
णत्थि अतरं, णिरतरं ॥ ३८२ ॥

कुदो ? अमण्णिपराहस्स वेन्हेदाभाया ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ॥ ३८३ ॥

कुदो ? गुणसक्तीण अभायादो ।

एव सण्णिगमग्गणा समता ।

क्योंकि, सागरोपममदपुधत्तद्विदिं अपेक्षा दोनोंके अंतरमें समानता पार
जाती है । विशेषता यह है कि असही जीवोंकी स्थितिमें रहकर सभी जीवोंमें उत्पन्न हुए
जीवके जन्म स्थिति कहना चाहिए ।

सभी चारों क्षपणोंका अन्तर ओघके समान है ॥ ३८१ ॥

यह सून सुगम है ।

असही जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर
नहीं है, निरन्तर है ॥ ३८२ ॥

क्योंकि, असही जीवोंके प्रवाहका कभी विच्छेद नहीं होता है ।

असही जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३८३ ॥

क्योंकि, असक्षिप्योमें गुणस्थानके परिवर्तनका अभाव है ।

इस प्रकार सहीमार्गणा न्मात्त हुं ।

सत्येपभागा अन्तर्गृह्यते । उत्तरेण सागरापममदपुधत्तवम् । अमयतमम्यदृष्टयापप्रमत्ता जानां नानाजीवापसरा
नास्त्यतरम् । एकजीव प्रति जघ यनातपहृत । उत्तरेण सागरापममदपुधत्तवम् । चतुष्पापुपशमरानां नानाजीवा
पशया सामायवत् । एकजीव प्रति जघ यनातपहृत । उत्तरेण सागरापममदपुधत्तवम् । स ति १, ८

१ चतुर्णां क्षपणाणां सामायवत् । स ति १, ८

२ अक्षिप्यो नानाजीवापेक्षयैकजावापेक्षया च नास्त्यतरम् । स ति १, ८

एगजीवं पडुञ्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ३८९ ॥

कुदो ? गुणतर गतूण सञ्जहण्णकालेण पुणो अप्पिदगुणपडिण्णस्स जहण्णं-
तरुवलंभा ।

उक्कस्सेण अगुलस्स असंखेज्जदिभागो असंखेज्जाओ औस-
प्पिणि उस्सप्पिणीओ ॥ ३९० ॥

अमज्जदसम्मादिट्ठिस्म उच्चदे- एक्को अट्ठावीमसतकम्मिजो निग्गह कादूण
देनेमुपण्णो । उहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) निस्मतो (२) निमुट्ठो (३) वेदगसम्मत्त
पडिण्णो (४) मिच्छत्त गतूणतरिदो अगुलस्म असखेज्जदिभाग परिभमिय अंते उअसम-
सम्मत्त पडिण्णो (५) । लद्धमंतर । उअसमसम्मत्तद्वाए छाअलियाअमेसाए मासण
गतूण निग्गहं गदो । पंचहि अतोमुहुत्तेहि ऊणओ आहारकालो उक्कस्समतर ।

उक्त जीर्णोक्ता एक जीर्णकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३८९ ॥

फ्योंकि, विप्रक्षित गुणस्थानसे अन्य गुणस्थानको जाकर और सर्वजघन्य
कालसे लौटकर पुन अपने विप्रक्षित गुणस्थानको प्राप्त होनेवाले जीवके जघन्य अन्तर
पाया जाता है ।

उक्त अमयतादि चार गुणस्थानवर्ती आहारक जीर्णोक्ता एक जीर्णकी अपेक्षा
उत्कृष्ट अन्तर अगुलके अमरयातव भागप्रमाण अमरयातामरयात अमसर्पिणी और
उत्सर्पिणी काल है ॥ ३९० ॥

आहारक असयतसम्यग्दृष्टि जीवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्ठाईस
प्रश्रितियोंकी सत्तावाला एक मिथ्यादृष्टि जीव निग्रह करके देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों
पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त
हुआ (४) पीछे मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हुआ और अगुलके असख्यातयें
भागप्रमाण कालतक परिभ्रमण करके अंतमें उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (५) ।
इस प्रकार अन्तर लघ्न होगया । पुन उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आचलिया अशिश्ट
रह जाने पर सासादनमें जाकर विग्रहको प्राप्त हुआ । इस प्रकार पाच अन्तर्मुहूर्तोंसे कम
आहारककाल ही आहारक अमयतसम्यग्दृष्टि जीवका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

१ एकजीव प्रति जघयेनान्तर्मुहूर्त । स सि १, ८

२ उत्सर्पिणागुलासम्ययभागा अमरुयया उत्सर्पिण्यववर्षिण्य । स सि १, ८

कादूण त्रिदियममए आहारी होदूण त्रिदियममए मिच्छत्त गतूणतरिदो । अमखेज्जा मखेज्जाओ ओमपिणि-उम्मपिणीओ परिभमिय अतोमुहुत्तापसेसे आहारकाले उवमम सम्मत्त पडिउण्णो । एगसमयापसेसे आहारकाले मामण गतूण निग्गह गदो । दोहि समएहि उणो आहारकाले सासणुक्कस्सतर ।

एवो अट्टापीममतम्मिओ निग्गह कादूण देसेसुउण्णो । छहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (१) विम्मतो (२) विसुद्धो (३) मम्मामिच्छत्त पडिउण्णो (४) मिच्छत्त गतूणतरिदो । अगुलस्स अमखेज्जादिभाग परिभमिय मम्मामिच्छत्त पडिउण्णो (५) । लद्धमतर । तदो सम्मत्तेण वा मिच्छत्तेण वा अतोमुहुत्तमच्छिदूण (६) निग्गह गदो । छहि अतोमुहुत्तोहि उणओ आहारकालो मम्मामिच्छादिट्ठिस्स उक्कस्सतर ।

असंजदसम्मादिट्ठिपहुडि जाव अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर' ॥ ३८८ ॥
सुगममेद ।

अवशिष्ट रहने पर भरणको प्राप्त हुआ । एक विग्रह (मोटा) करके द्वितीय समयमें आहारक होकर और तीसरे समयमें मिथ्यात्वको जानर अंतरको प्राप्त हुआ । असत्यातासत्यात असपिणियों और उत्सपिणियों तक परिभ्रमणकर आहारकालमें अतमुद्धत अवशिष्ट रह जाने पर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पुन आहारककालके एक समयमात्र अवशिष्ट रहने पर सासादनको जानर विग्रहको प्राप्त हुआ । इस प्रकार दो समयोंसे कम आहारक का उत्कृष्ट काल ही आहारक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवका उत्कृष्ट अंतर होता है ।

मोहकमयी अट्टाईस प्रवृत्तियोंकी सत्ताजाला एक मिथ्यादृष्टि जीव विग्रह करके वेधोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पयाप्त हो (१) विध्राम ले (२) विगुद्ध हो (३) सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (४) और मिथ्यात्वको जानर अंतरको प्राप्त हुआ । अगुलके असत्यातके भाग का प्रमाण परिभ्रमण कर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (५) । इस प्रकार अंतर लब्ध होगया । पीछे समयफल अथवा मिथ्यात्वके साथ अतमुद्धत रह कर (६) विग्रहगतिको प्राप्त हुआ । इस प्रकार छह अन्तमुद्धतोंसे कम आहारककाल ही आहारक सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवका उत्कृष्ट अंतर होता है ।

असत्तसम्यग्दृष्टिसे लेनर अप्रमत्तसत्त गुणग्यान तक आहारक जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३८८ ॥
यह सब सुगम है ।

गदो । तिहि अंतोमुहुत्तेहि ऊणओ आहारकालो उक्कस्मतर ।

चदुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च ओघभंगो ॥ ३९१ ॥

सुगममेदं, बहुसो उच्चदादो ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३९२ ॥

एदं पि सुगमं ।

उक्कस्सेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो असंखेज्जासंखेज्जाओ
ओसपिणि-उस्सपिणीओ ॥ ३९३ ॥

त जहा— एकसो अट्टाणीससतरुम्मिओ निग्गहं कादूण मणुसेसुवण्णो । अट्ट-
वस्सिओ सम्मत्त अप्पमत्तभावेण संजम च समग पडिवण्णो (१) । अणंताणुवधी निसंजोए-
दूण (२) दसणमोहणीयमुज्जामिय (३) पमत्तापमत्तपरावत्तमहस्स कादूण (४) तदो
अपुव्वो (५) अणियट्ठी (६) सुहुमो (७) उवसंतो (८) पुणो नि परिवडमाणो ।

हुआ । इस प्रकार तीन अन्तर्मुहूर्तोंसे कम आहारककाल ही आहारक अप्रमत्तसपत्का
उत्कृष्ट अन्तर है ।

आहारक चारों उपशामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर औषके समान है ॥ ३९१ ॥

यह सूत्र सुगम है, क्योंकि, इसका अर्थ पहले बहुत बार कहा जा चुका है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३९२ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

आहारक चारों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके
असंख्यातवै भागप्रमाण असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी और अजसर्पिणी है ॥ ३९३ ॥

मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला एक मिथ्यादृष्टि जीव विग्रह करके
मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । आठ वर्षका होकर सम्यक्त्वको और अप्रमत्तभावके साथ समयको
एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पुन अनन्तानुबन्धीका विसयोजन करके (२) दर्शनमोह
नीयका उपशामनकर (३) प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानसम्बन्धी सहस्रों परिवर्तनोंको
करके (४) पश्चात् अपूर्वकरण (५) अनिवृत्तिकरण (६) सूक्ष्मसाम्पराय (७) और उप-

१ चतुर्णांशुपशमकानां नानाजीवापेक्षया सामान्यत् । स ति १, ८

२ एकजीव प्रति जघयेनान्तर्मुहूर्त । स ति १, ८

३ उत्सर्पेणांगुलामरयेयमाणा अनख्येयामख्येया उत्सर्पिण्यवतर्पिण्य । स ति १, ८.

मज्झिमासज्जदस्म उच्चदे- एक्को अट्टापीससतकम्मिओ विग्गह कादूण सम्मुच्छिमेसु उन्नरण्णो । छहि पज्जचीहि पज्जत्तयदो (१) पिम्मतो (२) निमुद्धो (३) वेदगसम्मत्त सजमासजम च समग पडिण्णो (४) । मिच्छत्त गतूणतरिदो अंगुलस्म अमरेज्जदिभाग परिभमिय अते पढमसम्मत्त सजमासजम च समग पडिण्णो (५) । लद्धमतर । उन्नसमसम्मत्तद्वाए छागलियाग्गमेमाए सासण गतूण विग्गह गदो । पचहि अंतोमुहुत्तेहि ऊणओ आहारकालो उन्नस्मतर ।

पमत्तस्म उच्चदे- एक्को अट्टापीममत्तकम्मिओ विग्गह कादूण मणुसेसुण्णो । गन्मादिअट्टरस्मेहि अप्पमत्तो (१) पमत्तो होदूण (२) मिच्छत्त गतूणतरिदो । अंगुलस्म असरेज्जदिभाग परिभमिय अते पमत्तो जादो । लद्धमतर (३) । कालं कादूण विग्गह गदो । तिहि अंतोमुहुत्तेहि अट्टवस्सेहि य ऊणओ आहारकालो उन्नस्मतर ।

अप्पमत्तस्स एउ चेउ । णवरि अप्पमत्तो (१) पमत्तो होदूण जंतरिदो सगट्ठिदि परिभमिय अप्पमत्तो होदूण (२) पुणो पमत्तो जादो (३) । काल करिय विग्गह

आहारक सयतासयतका उत्तृष्ट अंतर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रवृत्तियोंकी सत्तागला एक मिथ्यादृष्टि जीव विग्रह करके पचेन्द्रिय सम्मुच्छिमांमें उत्पन्न हुआ । छहों वर्षाप्तियोंसे वर्षाप्त हो (१) विधाम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्व और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ (४) । पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हो अंगुलके असव्यातवें भागप्रमाण फालतन परिभ्रमणकर अतमें प्रथमोपशम सम्यक्त्व और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ (५) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पश्चात् उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलिया अवशेष रहने पर सात्त्वादनको जाकर विग्रहको प्राप्त हुआ । इस प्रकार पांच अंतमुहुर्तोंसे कम आहारककाल ही आहारक सयतासयतका उत्तृष्ट अंतर है ।

आहारक प्रमत्तसयतका उत्तृष्ट अन्तर कहने हैं- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रवृत्तियोंकी सत्तागला एक जाव विग्रह करके मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । गर्भको आदि ले आठ वर्षोंसे अप्रमत्तसयत (१) और प्रमत्तसयत हो (२) मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हुआ । अंगुलके असव्यातवें भागप्रमाण फालतन परिभ्रमण करके अतमें प्रमत्तसयत हो गया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ (३) । पश्चात् मरण करके विग्रहगतिको प्राप्त हुआ । इस प्रकार तीन अंतमुहुर्त और आठ वर्षोंसे कम आहारककाल ही आहारक प्रमत्तसयतका उत्तृष्ट अंतर है ।

आहारक अप्रमत्तसयतका भी अन्तर इसी प्रकार है । विशेषता यह है कि अप्रमत्त सयत जीव (१) प्रमत्तसयत होकर अन्तरको प्राप्त हो अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण कर अप्रमत्तसयत हो (२) पुन प्रमत्तसयत हुआ (३) । पश्चात् मरण करके विग्रहको प्राप्त

मिच्छादिद्वीणं णाणेगजीवं पडुच्च अंतराभावेण, सासणसम्मादिद्वीणं णाणाजीवं पडुच्च एगसमयपल्लिदोमसस असंसेज्जदिभागजहणुक्कस्संतरेहि य, एगजीवं पडुच्च अतराभावेण य, असंजदसम्मादिद्वीण णाणाजीवं पडुच्च एगसमय-मासपुघत्तरेहि य, एगजीव पडुच्च अतराभावेण य, सजोगिक्केवलीणं णाणाजीव पडुच्च एगसमय-वासपुघत्त-जहणुक्कस्संतरेहि य, एगजीव पडुच्च अंतराभावेण य दोण्हं साधम्मवुवलंभादे ।

त्रिसेसपटुप्पायणद्धमुत्तरसुत्तं भणादि-

णवरि विसेसा, अजोगिकेवली ओघं ॥ ३९७ ॥

सुगममेद ।

(एव आहारमगणा समत्ता ।)

एवमंतराणुगमो त्ति समत्तमणिओगहारं ।

पर्यंकि, मिथ्यादृष्टियोंका नाना और एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे सासादनसम्यग्दृष्टियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट पल्यो-पमका असख्यातया भाग अन्तरसे, तथा एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे, असयतसम्यग्दृष्टियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट मास पृथक्त्व अन्तरोंके द्वारा, और एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे, सयोगिके-वलियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट चर्पपृथक्त्व अन्तरसे, तथा एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे दोनोंमें समानता पाई जाती है ।

अनाहारक जीवोंमें विशेषता प्रतिपादन करनेके लिए उत्तर सूत्र कहते हैं-

किन्तु विशेषता यह है कि अनाहारक अयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ ३९७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इस प्रकार आहारमार्गणा समाप्त हुई ।

इस प्रकार अन्तरानुगम अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

१ अयोगिकेवलिनं नानाजीवापेक्षया जघन्येनैकः समय । उत्कर्षेण वण्मासाः । एकजीवं प्रति नास्त्य-
त्तरम् । स. सि १, ८

२ अन्तरमवगतम् । स. सि १, ८

सुहुमो (९) अणियट्टी (१०) अपुच्चो जादो (११) । हेट्टा ओदरिदूर्णतरिदो अगुलस्त असंखेज्जदिभाग परिभमिय अते अपुच्चो जादो । लद्धमतर । तदो णिदा पयलाण बंधे वोच्छिण्णे भरिय णिग्गहं गदो । अट्टवस्सेहि नारसअतोमुट्टुचेहि य ऊणओ आहारकालो उक्कस्सतर । एव चेन तिण्हमुनसामगाण । णरि दस णन अट्ट अंतोमुहुत्ता समयाहिया ऊणा कादच्चा ।

चटुण्ह खवाणमोघं ॥ ३९४ ॥

सुगममेद ।

सजोगिकेवली ओघं ॥ ३९५ ॥

एद पि सुगम ।

अणाहारां कम्मइयकायजोगिभंगो ॥ ३९६ ॥

शान्तकपाय होकर (८) फिर भी गिरता हुआ सूक्ष्मसाम्पराय (९) अनिवृत्तिकरण (१०) और अपूर्वकरण हुआ (११) । पुन नीचे उतरकर अन्तरको प्राप्त हो अगुलके असख्यातवें भाग कालप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तमें अपूर्वकरण उपशामक हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । तत्पश्चात् निद्रा और प्रचला, इन दोनों प्रवृत्तियोंके बंधसे व्युत्थित होनेपर मरकर विग्रहको प्राप्त हुआ । इस प्रकार आठ वर्ष और बारह अन्तर्मुहूर्तोंमें कम आहारक काल ही अपूर्वकरण उपशामकका उत्कृष्ट अन्तर है । इसी प्रकार शेष तीनों उपशामकोंका भी अन्तर कहना चाहिए । चिन्नेता यह है कि आहारककालमें अनिवृत्तिकरण उपशामकके दश, सूक्ष्मसाम्पराय उपशामकके नौ और उपशान्तकपाय उपशामकके आठ अन्तर्मुहूर्त और एक समय कम करना चाहिए ।

आहारक चारों क्षपकोंका अन्तर ओघके समान है ॥ ३९४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

आहारक सयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ ३९५ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

अनाहारक जीवोंका अन्तर कर्मणकाययोगियोंके समान है ॥ ३९६ ॥

१ चतुष्पा क्षपकाणां सयोगिकेवलिनो च सामायवत् । स सि १, ८

२ प्रतिपु 'अणाहार' इति पाठ ।

३ अनाहारकेषु भिष्याण्हेर्नानाजीवापक्षया एकजीवापेक्षया च नास्त्यन्तरम् । सासादनसम्यग्दहेर्नानाजीवापेक्षया जघन्यनेक समय । उत्कर्षेण पल्यापमामल्येयभाग । एकजीव प्रति नास्त्यन्तरम् । असप्तसम्यग्दहेर्नानाजीवापेक्षया जघन्यनेक समय । उत्कर्षेण मानपृथक्त्वम् । एकजीव प्रति नास्त्यन्तरम् । सयोगिकेवलिनो नानाजीवापेक्षया जघन्यनेक समय । उत्कर्षेण वधपृथक्त्वम् । एकजीव प्रति नास्त्यन्तरम् । स सि १, ८

भावाणुगमो



सिरि-भगवंत-पुष्पदंत-भृदवलि-पणीदो

छक्खंडागमो

सिरि वीरसेणाहरिय विरइय-ववला टीका समण्णिदो

तस्स

पढमखडे जीवट्टाणे

भावाणुगमो

अणुगयअसुद्धभाणे उणुगयकम्ममसउच्चउवभाणे ।
पणमिय सच्चरहते भावणिओग परूमेमो ॥

भावाणुगमेण दुविहो णिहेसो, ओघेण आदेसेण यं ॥ १ ॥

णाम-ट्टण-दव्व-भाणे त्ति चउव्विहो भाणे । भासहे बज्जत्थणिरवेक्खो
अप्पाणमिह चेअ पयट्ठो णामभाणे होटि । तत्थ ट्टणभाणे सब्भानासव्भावभेएण दुविहो ।
विराग-सरागादिभाणे अणुहरंती ट्टणा सब्भानट्टवणभाणे । तच्चिअरीदो असव्भानट्टण-

अशुद्ध भावोंसे रहित, कर्मक्षयसे प्राप्त हुए हैं चार अनन्तभाव जिनको, ऐसे
सर्च अरहतोंको प्रणाम करके भावानुयोगद्वारका प्ररूपण करते हैं ।

भावानुगमद्वारकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है, ओघनिर्देश और आदेश-
निर्देश ॥ १ ॥

नाम, स्थापना, द्रव्य और भावकी अपेक्षा भाव चार प्रकारका है । बाह्य अर्थसे
निरपेक्ष अपने आपमें प्रवृत्त 'भाव' यह शब्द नामभावनिक्षेप है । उन चार निक्षेपोंमेंसे
स्थापनाभावनिक्षेप, सद्भाव और असद्भावके भेदसे दो प्रकारका है । उनमेंसे विरागी
और सरागी आदि भावोंका अनुकरण करनेवाली स्थापना सद्भावस्थापना भावनिक्षेप
है । उससे विपरीत असद्भावस्थापना भावनिक्षेप है । द्रव्यभावनिक्षेप आगम और

जणिओ भाओ ओदडओ णाम । कम्मउत्तमेण समुच्चूदो ओउत्तमिओ णाम । कम्मणं
खवेण पयडीभूदजीउत्तमो खडओ णाम । कम्मोदए सते वि ज जीउत्तमणकसंउदंमुवलभदि
सो खओउत्तमिओ भाओ णाम । जो चउहि भाओहि पुत्तुत्तेहि वदिरित्तो जीउत्तमिओ
सो पारिणामिओ णाम (५) ।

एत्थेसु चदुसु भाओसु केण भाओण अहियारो ? णोआगमभावभावेण । त कथ
णव्वदे ? णामादिमेमभाओहि चोदसजीउत्तमामाणमणप्पभूदेहि इह पओजणाभाओ ।
तिण्णि चेउ इह णिउत्तमेण होतु, णाम वृवणाण त्रिसेसाभाओदो ? ण, णामे णामउत्त-
दव्वज्जारोउत्तमिओभाओदो, णामस्य वृवणाणियमाभाओ, वृवणाए इउ आयरोणुग्गहाणम-

पाच प्रसारका हे । उनमेंसे कर्मोद्भवजनित भावका नाम आदयिक हे । कर्मोंके उपशमसे
उत्पन्न हुए भावका नाम ओपशमिक हे । कर्मोंके क्षयसे प्रकृत होनेवाला जीवका भाव
क्षायिक हे । कर्मोंके उदय होते हुए भी जो जीवगुणका खट (अश) उपलब्ध रहता है,
वह क्षयापशमिकभाओ हे । जो पूर्वोक्त चारों भावोंसे व्यतिरिक्त जीव और अजीवगत
भाओ है, वह पारिणामिक भाओ है ।

शुक्रा—उक्त चार निक्षेपरूप भावोंमेंसे यहा पर किस भावसे अधिकार या
प्रयोजन हे ?

समाधान—यहा नोआगमभावभावसे अधिकार है ।

शुक्रा—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—चौदह जीवसमासोंके लिए अनात्मभूत नामादि शेष भावनिक्षेपोंसे
यहा पर कोई प्रयोजन नहीं हे, इसीसे जाना जाता हे कि यहा नोआगमभाओ भाओ
निक्षेपसे ही प्रयोजन हे ।

शुक्रा—यहा पर तीन ही निक्षेप होना चाहिए, क्योंकि, नाम और स्थापनामें
कोइ विशेषता नहीं हे ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, नामनिक्षेपमें नामउत्त वृव्यके अध्यारोपका कोई
नियम नहीं है इसलिए, तथा नामवाली वस्तुकी स्थापना होनी ही चाहिए, ऐसा कोई
नियम नहीं है इसलिए, एउ स्थापनाके समान नामनिक्षेपमें आदर और अनुग्रहका भी

१ प्रतिपु ' जावणुण खड ' इति पाठ ।

२ कम्मउत्तममि उवत्तमभाओ खीणमि खदयभाओ दु । उदयो जीवस्य गुणो खओउत्तमिओ हवे
भाओ ॥ कम्मउत्तमवन्धिणुणो ओदयियो तथ होदि भाओ दु । कारणणिवेक्कउत्तमवो समावियो होदि परिणामो ॥
को क ८१४ ८१५

३ प्रतिपु ' आयारा ' इति पाठ ।

भापो । तत्त्व द्रव्यभापो द्विविहो आगम णोआगमभेएण । भावपाहुडजाणओ उजुत्तो आगमद्रव्यभापो होदि । जो णोआगमद्रव्यभापो सो तिविहो जाणुगमरीर भविय-तत्त्वदिरिचभेएण । तन्थ णोआगमजाणुगमरीरद्रव्यभापो तिविहो भविय-वट्टमाण-ममुद्दाद भेएण । भावपाहुडपज्जायपरिणदजीवस्स आहारो ज होसदि सररीर त भविय णाम । भावपाहुडपज्जायपरिणदजीवण जमेगीभूद सररीर त वट्टमाणं णाम । भावपाहुडपज्जायपरिणदजीवण एगत्तमुणमिय ज पुघभूद सररीरं त समुज्झाद णाम । भावपाहुडपज्जायपरिणदजीवण जो जीवो परिणमिस्सदि सो णोआगमभवियद्रव्यभापो णाम । तत्त्वदिरिच णोआगमद्रव्यभापो तिविहो सच्चिच्चित्त मिस्सभेएण । तन्थ सच्चित्तो जीवद्रव्य । अविद्या पोग्गल धम्माधम्म णालागामदव्वाणि । पोग्गल-जीवद्रव्याण सज्जोगो कधचि जच्चतरत्तमा वण्णो णोआगममिस्सद्रव्यभापो णाम । कध द्रव्यस्म भावव्वनएसो ? ण, भवन भाव, भूतिर्या भाव इति भावसदस्स निउत्पत्तिअवर्लणणादो । जो भावभापो सो द्विविहो आगम णोआगमभेएण । भावपाहुडजाणओ उजुत्तो आगमभावभापो णाम । णोआगमभावभापो पचविह ओदहओ ओउसमिओ रउओ रओउसमिओ पारिणामिओ चेदि । तत्त्व कम्मोदप

नोआगमके भेदसे दो प्रकारका है । भावप्राभृतज्ञायक किन्तु वर्तमानमें अनुपयुक्त जीव आगमद्रव्यभाव कहलाता है । जो नोआगमद्रव्य भावनिक्षेप है वह ज्ञायकशरीर, भव्य और तद्रव्यतिरिक्तके भेदसे तीन प्रकार होता है । उनमें नोआगमज्ञायकशरीर द्रव्यभाव निक्षेप भव्य, वर्तमान और समुज्झितके भेदसे तीन प्रकारका है । भावप्राभृतपर्यायस परिणत जीवका जा शरीर भाधार होगा, यह भव्यशरीर है । भावप्राभृतपर्यायस परिणत जीवके साथ जो एकीभूत शरीर है, यह वर्तमानशरीर है । भावप्राभृतपर्यायस परिणत जीवके साथ एकत्वको प्राप्त होकर जो पृथक् हुआ शरीर है वह समुज्झितशरीर है । भावप्राभृतपर्यायसरूपसे जो जीव परिणत होगा, वह नोआगमभयद्रव्य भावनिक्षेप है । तद्रव्यतिरिक्त नोआगमद्रव्य भावनिक्षेप, सच्चित्त, अचित्त और मिथ्यके भेदसे तीन प्रकारका है । उनमें जीवद्रव्य सच्चित्तभाव है । पुद्गल, धर्मास्तिकाय, अधमास्तिकाय, काल और आकाश द्रव्य अचित्तभाव हैं । कथंचित् जात्यन्तर भावको प्राप्त पुद्गल और जीव द्रव्योंका संयोग नोआगममिथ्यद्रव्य भावनिक्षेप है ।

शंका—द्रव्यके 'भाव' ऐसा व्यपदेश कैसे हो सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, 'भवन भाव' अथवा 'भूतिर्या भाव' इस प्रकार भावशब्दकी व्युत्पत्तिके अवयवसे द्रव्यके भी 'भाव' ऐसा व्यपदेश बन जाता है । जो भावनामक भावनिक्षेप है, वह आगम और नोआगमके भेदसे दो प्रकारका है । भाव प्राभृतका ज्ञायक और उपयुक्त जीव आगमभावनामक भावनिक्षेप है । नोआगम भाव भावनिक्षेप औद्भयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिकके भेदसे

एदेहिं सुतुद्विद्वपरिणामाण पगरिमापगरिसत्तं तिच्च-मंदभाओ णाम । एदेहिं चैव परिणामेहि असंखेज्जगुणाए सेडीए कम्मसडणं कम्मसडणजगिदजीपपरिणामो वा णिज्जरा-भाओ णाम । तम्हा पचेन जीपभाओ इदि णियमो ण जुज्जेदे ? ण एस दोसो, जदि जीपादिदव्यादो तिच्च-मदादिभाओ अभिण्णा हँति, तो ण तेसिं पंचभाओसु अंतवभाओ, दव्वत्तादो । अह भेदो अवलमेज्ज, पचण्हमण्णदरो होज्ज, एदेहिंतो पुधभूदछट्टभावाण-वलंभा । भणिद च-

ओदइओ उअसमिओ खइओ तह पि य खओवसमिओ य ।

परिणामिओ दु भाओ उदएण दु पोग्गलण तु ॥ ५ ॥

भाओ णाम किं ? दव्वपरिणामो पुव्वाअरकोडिअदिरिअत्तमणपरिणामुअलक्खिय-दव्व वा । कस्स भाओ ? छण्ह दव्वाण । अधवा ण कस्सइ, परिणामि-परिणामाणं

इन सूत्रोद्दिष्ट परिणामोंकी प्रकृताका नाम तीव्रभाव और अप्रकृताका नाम मद्भाव है । इन्हीं परिणामोंके द्वारा असत्प्रायत गुणश्रेणीरूपसे कर्मोंका झरना, अधवा कर्म-झरनेसे उत्पन्न हुए जीवके परिणामोंको निर्जराभाव कहते हैं । इसलिये पाच ही जीवके भाव हैं, यह नियम युक्तिसगत नहीं है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, यदि जीवादि द्रव्यसे तीव्र, मद् आदि भाव अभिा होते हैं, तो उनका पाच भावोंमें अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, वे स्वयं द्रव्य ही होते हैं । अथवा, यदि भेद माना जाय, तो पाचों भावोंमेंसे कोई एक होगा, क्योंकि, इन पाच भावोंसे पृथग्भूत छठा भाव नहीं पाया जाता है । कहा भी है—

औद्यिकभाव, औपशमिकभाव, क्षायिकभाव, क्षायोपशमिकभाव और पारि-णामिकभाव, ये पाच भाव होते हैं । इनमें पुद्गलोंके उदयसे (औद्यिकभाव) होता है ॥५॥

(अत्र निर्वंश, स्वामित्व आदि प्रसिद्ध छह अनुयोगद्वारोंसे भावनामक पदार्थका निर्णय किया जाता है—)

शंका—भाव नाम किस वस्तुका है ?

समाधान—द्रव्यके परिणामको अथवा पूर्वापर कोटिसे व्यतिरिक्त चर्तमान पर्यायसे उपलक्षित द्रव्यको भाव कहते हैं ।

शंका—भाव किसके होता है, अर्थात् भावका स्वामी कौन है ?

समाधान—छहों द्रव्योंके भाव होता है, अर्थात् भावोंके स्वामी छहों द्रव्य हैं । अथवा, किसी भी द्रव्यके भाव नहीं होता है, क्योंकि, पारिणामी और पारिणामके समग्र-

भावादो च । भणिद च—

अपिदआदरभावो अणुगहभावो य धम्मभावो ।

ठण्णाए कीरते ण होंति णाममि एए दु ॥ १ ॥

णामिणि धम्मुरयारो णाम ठण्णा य जस्स त ठण्णिद ।

तद्धमे ण रि जादो सुणाम ठण्णाणमविसेस ॥ २ ॥

तम्हा चउच्चिहो चेर णिम्खेणो चि सिद्ध । तत्थ पचसु भाणेषु केण भावण
इह पओजण ? पचहिं मि । कुदो ? जीणेषु पचभाणणसुवलभा । ण च सेसद्वेषु पच
भावा अत्थि, पोगालदन्नेसु ओदइय पाणिगामियाण दोण्ह चेर भाणणसुवलभा, धम्मा
धम्म-कालागासद्वेषु एककस्स पारिणामियभानस्सेसुवलभा । भाणो णाम जीवपरिणामो
तिञ्ज-मदणिज्जराभाणादिरूणेण अणेषपयारो । तत्थ तिञ्ज-मदभावो णाम—

सम्मत्तुप्पचीय रि सान्यत्रिदे अणतकम्मसे ।

दसणमोहकएण कसायउवसानए य उरसते ॥ ३ ॥

एएण य खण्णमोहे जिणे य णियमा भणे असखेग्जा ।

तविनरीदो कालो सखेज्जगुणाए सेडीए ॥ ४ ॥

अभाव है, इसलिए दोनों निक्षेपोंमें भेद है ही । कहा भी है—

विवक्षित वस्तुके प्रति आदरभाव, अनुग्रहभाव और धर्मभाव स्थापनामें किया जाता है । किन्तु ये बातें नामनिक्षेपमें नहीं होती हैं ॥ १ ॥

नाममें धमना उपचार करना नामनिक्षेप है, और जहा उस धर्मकी स्थापना की जाती है, वह स्थापनानिक्षेप है । इस प्रकार धमके विषयमें भी नाम और स्थापनाकी अविशेषता अर्थात् एकता सिद्ध नहीं होती ॥ २ ॥

इसलिए निक्षेप चार प्रकारका ही है, यह बात सिद्ध हुई ।

शंका—पूर्वोक्त पाच भावोंमेंसे यहा किस भावसे प्रयोजन ह ?

समाधान—पाचों ही भावोंसे प्रयोजन है, क्योंकि, जीवोंमें पाचों भाव पाये जाते ह । किन्तु शेष द्रव्योंमें तो पाच भाव नहीं हैं, क्योंकि, पुद्गल द्रव्योंमें औदधिक और परिणामिक, इन दोनों ही भावोंकी उपलब्धि होती है, और धर्मास्तिकाय अघर्मास्तिकाय, आकाश और काल द्रव्योंमें केवल एक पारिणामिक भाव ही पाया जाता है ।

शुभा—भावनाम जीवके परिणामका है, जो कि तीव्र, मद निर्जराभाव आदिके रूपसे अनेक प्रकारका है । उनमें तीव्र मदभाव नाम है—

सम्यक्चरणी उत्पत्तिमें, धावकमें, विरतमें, अन तालुवन्धी कपायके विसयोजनमें, दर्शनमोहके क्षणमें, कपायोंके उपशामकोंमें, उपशातरुपायमें, क्षणोंमें, क्षीणमोहमें, और जिन भगवान्में नियमसे अमन्य्यातगुणीनिजरा होती है । किन्तु कालका प्रमाण उक्त गुणधेणी निर्जरामें सख्यात गुणधेणी प्रमसे विपरीत अर्थान् उत्तरोत्तर हीन है ॥३-४॥

१ नामस्थापनयोः स्व, धक्काभावविशेषादिति चेत्, आदरतनुग्रहात्तद्विवात्स्थापनायाम् । त त वा १, ५
२ यो जी ११-१७

मो ठाणदो जट्टप्रिहो, त्रियप्पदो एक्कणीमप्रिहो । किं ठाण ? उप्पत्तिहेऊ द्वाणं । उत्तं च-
गदि-लिंग-कमाया त्रि य मिच्छादसणमसिद्धदण्णाण ।
लेस्सा असजमो चिय हेति उदयस्स द्वाणाइ ॥ ६ ॥

मपहि एदेमिं त्रियप्पो उच्चदे- गई चउच्चिहो णिरय तिरिय णर-देउगई चेदि ।
लिंगमिदि तिनिह त्थी-पुरिस णनुमयं चेदि । कमाओ चउच्चिहो कोहो माणो माया लोहो
चेदि । मिच्छादमणमेयप्रिह । असिद्धत्तमेयप्रिह । किममिद्धत्त ? जट्टकम्मोदयसामणं ।
अण्णाणमेअप्रिह । लेस्सा छच्चिहा । असजमो एयप्रिहो । एदे सव्वे त्रि एक्कणीस त्रियप्पा
होति (२१) । पचजादि-छमठाण-छमउडणादिजोदडया भाजा कथ णिउदति ? गदीए,
एदेमिमुदयस्स गदिउडयाप्रिणाभाप्रिचादो । ण लिंगादीहि त्रियहिचारे, तत्थ त्हाणिह-
त्रिवक्साभाजादो ।

है, वह स्थानकी अपेक्षा आठ प्रकारका और विरुल्यकी अपेक्षा इकीस प्रकारका है ।

शुक्रा—स्थान क्या वस्तु है ?

समाधान—भाजकी उत्पत्तिके कारणको स्थान कहते हैं । कहा भी है—

गति, लिंग, कपाय, मिथ्यादर्शन, अस्तिद्वत्त्व, अज्ञान, लेख्या और असयम, ये
ओदयिक भाजके आठ स्थान होते हैं ॥ ६ ॥

अथ इन आठ स्थानोंके विकल्प कहते हैं । गति चार प्रकारकी है— नरकगति,
तिर्य्यचगति, मनुष्यगति और देवगति । लिंग तीन प्रकारका है— स्त्रीलिंग, पुंमयलिंग
और नपुंसकलिंग । कपाय चार प्रकारका है— क्रोध, मान, माया और लोभ । मिथ्यादर्शन
एक प्रकारका है । अस्तिद्वत्त्व एक प्रकारका है ।

शुक्रा—अस्तिद्वत्त्व क्या वस्तु है ?

समाधान—अष्ट कर्मोंके सामान्य उदयको अस्तिद्वत्त्व कहते हैं ।

भदान एक प्रकारका है । लेख्या छह प्रकारका है । असयम एक प्रकारका है ।
इस प्रकार ये सप्त मित्रकर ओदयिकभावके इकीस विरुल्य होते हैं (२१) ।

शुक्रा—पाच जातिया, छह सस्थान, छह सहनन आदि ओदयिकभाव कहा,
अर्थात् किस भाजमें अन्तर्गत होते हैं ?

समाधान—उक्त जातियों आदिका गतिनामक ओदयिकभावमें अन्तर्भाव होता
है, क्योंकि, इन जाति, सस्थान आदिका उदय गतिनामकके उदयका अविनाभावी है ।
इस व्यवस्थामें लिंग, कपाय आदि ओदयिकभावोंसे भी व्यभिचार नहीं आता है, क्योंकि,
उन भाजोंमें उस प्रकारकी विरुल्यका अभाव है ।

संग्रहणयादो भेदाभावात् । केण भावो ? क्रमाणासुदण सएण सओपसमेण कम्माणसुवममेण सभापदो वा । तत्थ जीपदव्यस्म भावा उत्तपचकारणेहिंतो हँति । योगलद्वयभावा पुण कम्मोदएण निस्समादो वा उप्पज्जति । मेसाण चदुण्ह दव्वाण भावा सहापदो उप्पज्जति । कत्थ भावो ? दव्वमिह चए, गुणिव्वदिरेगेण गुणाणमसभवा । केवचिरो भावो ? अणात्तिआ अपज्जरसिदो जहा—अभव्याणमसिद्धदा, वम्मत्थिअस्स गमणहेदुत्त, अधम्मत्थिअस्स ठिदिहेउत्त, आगामस्स ओगाहणलसएणत्त, कालदव्वस्स परिणामहेदुत्तमिच्चादि । अणात्तिओ सपज्जरसिदो जहा—भव्यस्स असिद्धदा भव्यत्तं मिच्छत्तमसज्जो इच्चादि । सादिओ अपज्जरसिदो जहा—केवलणण केवलदसणमिच्चादि । मादिओ मपज्जरसिदो जहा—मम्मत्तमजमपच्छायदाण मिच्छत्तमज्जमा इच्चादि । कदिविओ भावो ? ओदइओ उव्वमिअ सुइओ सओपसमिओ पारिणामिओ त्ति पचविहो । तथ जो सो ओदइओ जीवद्वारा

नयसे कोई भेद नहीं है ।

शंका—भाव किसमे होता है, अर्थात् भावका साधन क्या है ?

समाधान—भाव, कर्मोंके उदयसे, क्षयसे, क्षयोपशमसे, कर्मोंके उपशमसे, अथवा स्वभावसे होता है । उनमेंसे जीवद्रव्यके भाव उक्त पाचों ही कारणोंसे होते हैं, किन्तु पुद्गलद्रव्यके भाव कर्मोंके उदयसे, अथवा स्वभावसे उत्पन्न होते हैं । तथा शेष चार द्रव्योंके भाव स्वभावसे ही उत्पन्न होते हैं ।

शंका—भाव कहाँ पर होता है, अर्थात् भावका अधिष्ठाण क्या है ?

समाधान—भाव द्रव्यमें ही होता है, न्यायिक गुणोंके बिना गुणोंका रहना असम्भव है ।

शंका—भाव कितने काल तक होता है ?

समाधान—भाव अनादि निघन है । जैसे—अभयजीवोंके असिद्धता, धर्मात्ति कायके गमनहेतुता, अधर्मात्तिनायके स्थितिहेतुता, आकाशद्रव्यके अवगाहनस्वरूपता, और कालद्रव्यके परिणमनहेतुता, इत्यादि । अनादि सान्तभाव, जैसे—भव्यजीवोंके अमिद्धता, भव्यत्व, मिथ्यात्व, असयम, इत्यादि । सादि अनन्तभाव जैसे—वेचलक्षण, वेचलदर्शन, इत्यादि । सादि सात्त भाव, जैसे—सम्यक्त्व और सयम धारणकर शब्दे भाव ह्रुप जीवोंके मिथ्यात्व, असयम इत्यादि ।

शंका—भाव कितने प्रकारका होता है ?

समाधान—औद्यमिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिकके भेदसे भाव पात्र प्रकारका है । उनमेंसे जो औद्यमिकभाव नामक जीवद्रव्यका भाव

लद्धीओ सम्मत्त चारित्त दसण तहा णाण ।

ठाणाइ पच खइए भाणे जिणभासियाइ तु ॥ ८ ॥

लद्धी सम्मत्तं चारित्तं णाण दसणमिदि पच ठाणाणि । तत्थ लद्धी पंच नियप्पा दाण-लाह-भोगुभोग-त्रीरियमिदि । सम्मत्तमेयनियप्प । चारित्तमेयनियप्पं । केवलणाण-मेयनियप्प । केवलदसणमेयनियप्पं । एणं खइओ भाणे णनियप्पो' । खओवसमिओ भाणे ठाणदो सत्तविहो । नियप्पदो अट्टारसविहो । भणिठ च—

णाणणाण च तहा दसण-लद्धी तहैउ सम्मत्त ।

चारित्त देसजमो सत्तेउ य होति ठाणाइ ॥ ९ ॥

णाणमणाण दसण लद्धी सम्मत्त चारित्त संजमासंजमो चेदि सत्त ट्ठाणाणि । तत्थ णाणं चउच्चिह मदि-सुद-ओधि-मणपज्जणाणमिदि । केवलणाणं किण्ण गहिद ? ण, तस्स खाइयभावादो । अणाण तिविह मदि-सुद-निहगअणाणमिदि । दसण तिविहं चसु-अचक्खु-ओधिदंसणमिदि । केवलदसण ण गहिद । कुदो ? अप्पणो निरोहिक्कम्मस्स

दानादि लब्धिद्या, क्षायिक सम्यक्त्व, क्षायिक चारित्र, क्षायिक दर्शन, तथा क्षायिक ज्ञान, इस प्रकार क्षायिक भावम जिन भापित पाच स्थान होते हैं ॥ ८ ॥

लब्धि, सम्यक्त्व, चारित्र, ज्ञान, दर्शन, ये पाच स्थान क्षायिकभावमें होते हैं । उनमें लब्धि पाच प्रकारकी है— क्षायिक दान, क्षायिक लाभ, क्षायिक भोग, क्षायिक उप भोग, और क्षायिक धैर्य । क्षायिक सम्यक्त्व एक विकल्पात्मक है । क्षायिक चारित्र एक भेदरूप है । केवलज्ञान एक विकल्पात्मक है और केवलदर्शन एक विकल्परूप है । इस प्रकारसे क्षायिक भावके नौ भेद हैं । क्षायोपशमिकभाव स्थानकी अपेक्षा सात प्रकार और विकल्परकी अपेक्षा अठारह प्रकारका है । कहा भी है—

ज्ञान, अज्ञान, दर्शन, लब्धि, सम्यक्त्व, चारित्र और देशसयम, ये सात स्थान क्षायोपशमिक भावमें होते हैं ॥ ९ ॥

ज्ञान, अज्ञान, दर्शन, लब्धि, सम्यक्त्व, चारित्र और सयमासयम, ये सात स्थान क्षायोपशमिकभावके हैं । उनमें मति, श्रुत, अवधि और मन पर्ययके भेदसे ज्ञान चार प्रकारका है ।

शुका—यहापर ज्ञानोंमें केवलज्ञानका ग्रहण क्यों नहीं किया गया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, वह क्षायिक भाव है ।

शुमति, कुश्रुत और विभगके भेदसे अज्ञान तीन प्रकारका है । चक्षु, अचक्षु और अन्यधिके भेदसे दर्शन तीन प्रकारका है । यहापर दर्शनोंमें केवलदर्शनका ग्रहण नहीं

उत्समिओ भाओ ठाणदो दुनिहो । नियप्पदो अट्टनिहो । भणिदं च-

सम्मत्त चारित्त दो चेय द्वाणाइमुत्समे हानि ।

अट्टनियप्पा य तहा वोहाईया मुणेदव्वा ॥ ७ ॥

ओत्सममियस्त भाउस्म सम्मत्त चारित्त चेदि दोष्णि द्वाणाणि' । बुद्धो ? उवत्सम सम्मत्त उत्समचारित्तमिदि दोष्ण चे उलभा । उत्समसम्मत्तमेयनिह । ओव'मिय चारित्त सत्तनिह । त जहा- णउत्सयेदुत्सामणद्वाए एय चारित्त, इत्थियेदुत्सामणद्वाए निदिय, पुरिस छण्णोत्समायउत्सामणद्वाए तदिय, कोहुत्सामणद्वाए चउत्थ, माणुव सामणद्वाए पचम, माओत्सामणद्वाए छट्ठ, लोहुत्सामणद्वाए सत्तममोत्समिय चारित्त । भिण्णरुज्जलिगेण कारणभेदसिद्धीदो उत्समिय चारित्त सत्तनिह उत्त । अण्णहा पुण ओणयपयार, समय पडि उत्सममेडिम्हि पुध पुध अससेज्जगुणसेडिणिज्जराणिमित्त परिणामुत्तलभा । रइओ भाओ ठाणदो पचनिहो । नियप्पादो णत्तनिहो । भणिदं च-

औपशमिन्भावस्थानकी अपेक्षा दो प्रकार ओर विकल्पकी अपेक्षा आठ प्रकारका है । कहा भी है-

औपशमिन्भावमें सम्यक्त्त और चारित्र्य ये दो ही स्थान होते हैं । तथा औपशमिन्भावके विकल्प आठ होते हैं, जो कि श्रोधादि कथायोंके उपशमनरूप जानना चाहिए ॥ ७ ॥

औपशमिन्भावके सम्यक्त्त और चारित्र्य, ये दो ही स्थान होते हैं, क्योंकि, औपशमिन्सम्यक्त्त और औपशमिन्चारित्र्य ये दो ही भाव पाये जाते हैं । इनमेंसे औपशमिन्सम्यक्त्त एक प्रकारका है और औपशमिन्चारित्र्य सात प्रकारका है । जैसे- नपु सकवेदके उपशमनकालमें एक चारित्र्य, रत्तिवेदके उपशमनकालमें दूसरा चारित्र्य, पुरुष वेद और छह नोकपायोंके उपशमनकालमें तीसरा चारित्र्य, श्रोधसज्ज्वलनमें उपशमन कालमें चौथा चारित्र्य, मानसज्ज्वलनके उपशमनकालमें पाचवा चारित्र्य, मायासज्ज्वलनके उपशमनकालमें छठा चारित्र्य और लोभसज्ज्वलनके उपशमनकालमें सातवा औपशमिन् चारित्र्य होता है । भिन्न भिन्न कथायोंके लिंगसे कारणोंमें भी भेदकी सिद्धि होती है, इसलिए औपशमिन्चारित्र्य सात प्रकारका कहा है । अन्यथा, अर्थात् उक्त प्रकारकी विवक्षा न की जाय तो, यह अनेक प्रकारका है, क्योंकि, प्रति समय उपशमनश्रेणीमें पृथक् पृथक् असख्यात गुणश्रेणी निर्जराके निमित्तभूत परिणाम पाये जाते हैं ।

क्षयिकभाव स्थानकी अपेक्षा पाच प्रकारका है, और विकल्पकी अपेक्षा नौ प्रकारका है । कहा भी है-

अध्वना सण्णिनादिय पडुच्च छत्तीसभंगा' । सण्णिनादिएत्ति का सण्णा ? एकम्हि गुणद्वारेण जीवसमासे वा बहवो भावा जम्हि सण्णिप्रदत्ति तेसिं भावाणं सण्णिवादिएत्ति सण्णा । एग दु-ति-चदु-पचसजोगेण भगा परुरिज्जति । एगसजोगेण जघा- ओदइओ ओदइओ चि ' मिच्छादिद्वी असजदो य ' । दसणमोहणीयस्म उदएण मिच्छादिद्वि चि भावो, असजदो चि सजमघादीणं कम्माणमुदएण । एदएण कमेण सच्चे वियप्पा परुवेदच्चा । एत्थ सुत्तगाहा-

एकोत्तरपदवृद्धो रूपाधैर्भाजित च पदवृद्धे ।

गच्छ सपातफल समाहृत सन्निपातफलं ॥ १२ ॥

एदम्भ भावस्स अणुगमो भावाणुगमो । तेण दुनिहो णिद्दसो, ओघेण सगहिदो, आदेसेण अमंगहिदो चि णिद्दसो दुनिहो होदि, तदियस्स णिद्दसस्स संभवाभावा ।

अथवा, सानिपातिकनी अपेक्षा भावोंके छत्तीस भग होते हैं ।

शुका--सानिपातिक यह कौनसी सज्ञा है ?

समाधान--एक ही गुणस्थान या जीवसमासमें जो बहुतसे भाव आकर एकत्रित होते हैं, उन भावोंकी सानिपातिक ऐसी सज्ञा है ।

अब उक्त भावोंके एक, दो, तीन, चार और पाच भावोंके सयोगसे होनेवाले भग कहे जाते हैं । उनमेंसे एकसयोगी भग इस प्रकार है- औदयिक-औदयिकभाव, जैसे- यह जीव मिथ्यादृष्टि ओर असयत है । दर्शनमोहनीयकर्मके उदयसे मिथ्यादृष्टि यह भाव उत्पन्न होता है । समयघाती कर्मोंके उदयसे 'असयत' यह भाव उत्पन्न होता है । इसी क्रमसे सभी त्रिकल्पोंकी प्ररूपणा करना चाहिए । इस विषयमें सूत्र गाथा है-

एक एक उत्तर पदसे बढ़ते हुए गच्छको रूप (एक) आदि पदप्रमाण बदार्ह हुई राशिमे भाजित करे, और परस्पर गुणा करे, तब सम्पातफल अर्थात् एक-सयोगी, द्विसयोगी आदि भगोंका प्रमाण आता है । तथा इन एक, दो, तीन आदि भगोंको जोड़ देने पर सन्निपातफल अर्थात् सानिपातिकभग प्राप्त हो जाते हैं ॥ १२ ॥

(इस करणगाथाका विशेष अर्थ और भग निकालनेका प्रकार समझनेके लिए देखो भाग ४, पृष्ठ १३३ का विशेषार्थ ।)

इस उक्त प्रकारके भावोंके अनुगमको भावानुगम कहते हैं । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका होता है । ओघसे सगृहीत ओर आदेशसे असगृहीत, इस प्रकार निर्देश दो प्रकारका होता है, क्योंकि, तीसरे निर्देशका होना संभव नहीं है ।

१ अथापौत सानिपातिकभाव त्रिविध इत्यनोच्यते-वर्द्धिघातिविध पद्धिनिघातिविध एरुचत्वारिंशद्विध इत्येवमादिगमे उक्त । त रा वा २, ७

२ अथवादेयत रूचत्वारिंशदि कमेण ह्दे । लद्ध मिच्छच्चउक्के देसे सजोगणुणगारा ॥ गो, क ७९९

सृष्टि सङ्गमनादौ । लक्ष्मी पंचमिहा दाणादिभेदण । सम्मत्तमेयविह वेदगमम्मत्तसिद्धेण
अण्णसम्मत्तणमणुपलभा । चारिचमेयविह, मामाद्येडेडोपट्टाण परिहारसुद्धिमत्त
विनम्पणाभावा । सनमामज्जमो एयविहो । एयमेदे सत्ते वि त्रियप्पा अट्टारस हँति (१८) ।
पारिणामिओ त्रियहो भव्याभव्व जीवत्तमिदि । उक्त च-

एय टाण निग्गि त्रियप्पा तह पारिणामिण हँति ।

भन्नाभव्व जीवा अत्तणदो चैव वेद्वत्ता ॥ १० ॥

एदेसिं पुव्वुत्तभास्रियप्पाण सगहगाहा-

एगिंस अह तह ण अट्टारस निग्गि चैव वेद्वत्ता ।

ओदड्यादा मात्ता विन पदा थाणुपुत्तीए ॥ ११ ॥

किया गया है, क्योंकि, वह अपने विरोधी कर्मके क्षयसे उत्पन्न होता है। इनादिके
भेदसे लक्षि पाच प्रकारकी है। सम्यक्त्व एक प्रकारका है, क्योंकि, इस भावमें वेदक
सम्यक्त्वमें छोड़कर अन्य सम्यक्त्वोंका अभाव है। चारित्र एक विद्वत्स्वरूप ही है,
क्योंकि, यहापर मामाधिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धिमयमकी विननामा
अभाव है। सयमासयम एक भेदरूप है। इस प्रकार मिलकर ये सब त्रिकल्प अगच्छ
होते हैं (१८)। पारिणामिकभाव, भव्य, अभय और जीवत्वके भेदसे तीन प्रकारका है।
कहा भी है-

पारिणामिकभावमें स्थान एक तथा भय, अभय और जीवत्वके भेदसे त्रिकल्प
तीन प्रकारके होते हैं। ये त्रिकल्प आत्माके असाधारण भाव होनेसे ग्रहण निये गय
जानना चाहिए ॥ १० ॥

इन पूर्वोक्त भावोंके त्रिकल्पोंको धतलानेवाली यह सग्रह गाथा है-

त्रौदयिक आदि भाव त्रिकल्पोंकी अपेक्षा आनुपूर्वसे इक्कीस, आठ, नौ, अट्टारस
और तीन भेदवाले हैं, ऐसा जानना चाहिए ॥ ११ ॥

१ ज्ञानज्ञानदशमल धयश्रुतिविपचभेदा मन्यक्त्वचारित्रसयमानयमाध । त सू २, ५

२ जीवमत्तामयत्वानि च । त सू २ ७

३ अ कप्रयो 'अध्वण्ण' आपती 'अट्टणदो' समतो 'अध्वण्णदो' सप्रता 'अध्वण्णदो' इति पाठ ।

४ असाधारण जीवत्व भावा पारिणामिकाय एव । त नि २, ७ अन्यद्वयसाधारणाय
पारिणामिका । ××× अस्तित्वाद्या पि पारिणामिका सारा सन्ति ×× सूत्रे तेषां ग्रहण कस्मान इत् ।
अयद्वयसाधारणत्वादिश्रुति । त सू वा २ ७

५ दिनवाद्यदशमविधातत्रिमेदा यथाकमम् । त सू २, २

उपशमश्रेणीजाले चारों उपशमकामें पृथक् पृथक् पेंतीस भग भाजकी अपेक्षा होते ह ॥ १३-१४ ॥

निशेषार्थ—ऊपर बतलाये गये भगोंका स्पष्टीकरण इस प्रकार ह— ओदयिकादि पाचों मूल भाजोंसे मिथ्यात्वगुणस्थानमें औदयिक, धायोपशमिक और पारिणामिक, ये तीन भाव होते ह । अत असयोगी या प्रत्येकसयोगी अपेक्षा ये तीन भग हुए । इनके द्विसयोगी भग भी तीन ही होते ह— ओदयिक धायोपशमिक, ओदयिक पारिणामिक और धायोपशमिक पारिणामिक । तीनों भाजोंका सयोगरूप त्रिसयोगी भग एक ही होता है । इन सात भगोंके सिवाय न्यूनयोगी तीन भग और होते ह । जैसे— ओदयिक-ओदयिक, धायोपशमिक-धायोपशमिक और पारिणामिक-पारिणामिक । इस प्रकार ये सत्र मिलकर (३ + ३ + १ + ३ = १०) मिथ्यात्वगुणस्थानमें दश भग होते ह । ये ही दश भग आत्माइन और मिश्र गुणस्थानमें भी जानना चाहिए । अचिरनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें पाचों मूलभाव होते ह, इसलिए यहा प्रत्येकसयोगी पाच भग होते ह । पाचों भाजोंके द्विसयोगी भग दश होते ह । किन्तु उनमेंसे इस गुणस्थानमें ओपशमिक और धायिकभाजका सयोगी भग सम्भव नहीं, क्योंकि, यह उपशमश्रेणीमें ही सम्भव है । अत दशमेंसे एक घटा देने पर द्विसयोगी भग नौ ही पाये जाते ह । पाचों भाजोंके त्रिसयोगी भग दश होते ह । किन्तु उनमेंसे यहापर धायिक ओपशमिक ओदयिक, धायिक ओपशमिक-पारिणामिक और धायिक ओपशमिक-धायोपशमिक, ये तीन भग सम्भव नहीं हैं, अतएव शेष सात ही भग होते ह । पाचों भाजोंके चतु सयोगी पाच भग होते ह । उनमेंसे यहापर ओदयिक धायोपशमिक धायिक-पारिणामिक, तथा ओदयिक धायोपशमिक-ओपशमिक-पारिणामिक, ये दो ही भग सम्भव ह, शेष तीन नहीं । इसका कारण यह है कि यहापर धायिक और ओपशमिकभाज साथ साथ नहीं पाये जाते हैं । इसी कारण पंचसयोगी भगका भी यहा अभाव है । इनके अतिरिक्त स्वसयोगी भगोंमेंसे धायोपशमिक-धायोपशमिक, ओदयिक-ओदयिक और पारिणामिक-पारिणामिक, ये तीन भग वार भी होते ह । ओपशमिक और धायिकके स्वसयोगी भग यहा सम्भव नहीं हैं । इस प्रकार प्रत्येकसयोगी पाच, द्विसयोगी नौ, त्रिसयोगी सात, चतु सयोगी दो और स्वसयोगी तीन, ये सत्र मिलकर (५ + ९ + ७ + २ + ३ = २६) असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उन्नीस भग होते ह । ये ही उन्नीस भग देशविरत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें भी होते ह । क्षपकश्रेणीसम्यग्धी चारों गुणस्थानोंमें ओपशमिक भाजके बिना शेष चार भाज ही होते ह । अतएव उनके प्रत्येकसयोगी भग चार, द्विसयोगी भग छह, त्रिसयोगी भग चार और चतु सयोगी भग एक होता है । तथा चारों भाजोंके स्वसयोगी चार भग और भी होते ह । इस प्रकार सत्र मिलकर (४ + ६ + ४ + १ + ४ = १९) उन्नीस भग क्षपकश्रेणीके प्रत्येक गुणस्थानमें होते ह । उपशमश्रेणीसम्यग्धी चारों गुणस्थानोंमें पाचों ही मूल भाव सम्भव ह, क्योंकि, यहापर धायिकसम्यक्त्रके साथ ओपशमिकचारित्र भी पाया जाता ह । अतएव पाचों भाजोंके प्रत्येकसयोगी पाच भग, द्विसयोगी दश भग, त्रिसयोगी दश भग, चतु सयोगी पाच

ओघेण मिच्छादिद्वि त्ति को भावो, ओदइओ भावो' ॥ २ ॥

'जहा उदेसो तथा णिदेसो' त्ति जाणानणद्धमोघेणेत्ति भणिद । अत्याहिहाण पच्चया तुल्लणामघेया इदि णायादो इदि-करणपरो मिच्छादिद्विस्सहो मिच्छत्तभान भणिद । पच्चसु भापेसु एमो को भावो त्ति पुच्छिडे ओदइओ भावो त्ति तित्थयरयणादो दिव्व ज्जुणी णिणिग्गया । को भावो, पच्चसु भापेसु कदमो भावो त्ति भणिद होदि । उदये मयो ओदइओ, मिच्छत्तकम्मस्स उदएण उप्पण्णमिच्छत्तपरिणामो कम्मोदयज्जणिते त्ति ओदइओ । णणु मिच्छादिद्विस्स अण्णे पि भावा अत्थि, णाण दमण गदि लिगन्कमाय भव्वाभव्वादिभावाभावे जीवस्स मसारिणो अभावाप्पमगा । भणिद च-

मिच्छत्ते दम भगा आसादण मिस्सए वि ओदइया ।

तिगुणा ते चदुहीणा अनिरदसम्मत्स एमेन ॥ १३ ॥

देसे खओत्तममिए निदे खग्गाण ऊणीस तु ।

ओसामगसु पुध पुप पणतीस भावदो भगा ॥ १४ ॥

ओघनिर्देशकी जपेक्षा मिथ्यादृष्टि यह कौनसा भाव है ? औदयिक भाव है ॥ २ ॥

'जैसा उद्देश होता है उसी प्रकार निदर्श होता है' इस न्यायके शापनार्थ धूम 'ओघ' ऐसा पद कहा । अथ, अभिधान (शब्द) और प्रत्यय (ज्ञान) तुल्य नामवाले होते हैं, इस न्यायसे 'इति' करणपरक अर्थात् जिसके पश्चात् हेतुवाचक इति शब्द आया है, ऐसा 'मिथ्यादृष्टि' यह शब्द मिथ्यात्वके भावको कहता है । पाचों भावोंमें यह कौन भाव है ? ऐसा पूछनेपर यह आदयिक भाव है, इस प्रकार तीर्थकरके मुखसे दिव्यध्वनि निकली है । यह ज्ञान भाव है, अर्थात् पाचों भावोंमेंसे यह कौनसा भाव है, यह तापर्य होता है । उदयसे जो हो, उसे औदयिक कहते हैं । मिथ्यात्वकर्मके उदयसे उत्पन्न ज्ञानराला मिथ्यात्वपरिणाम कर्मोदयजनित है, अतएव औदयिक है ।

ज्ञान—मिथ्यादृष्टिके अथ भी भाव होते हैं, उन ज्ञान, दर्शन, गति, लिग, कपाय, भयत्व, अभव्यत्व आदि भावोंके अभाव माननेपर ससारी जीवके अभावा प्रसंग प्राप्त होता है । कहा भी है—

मिथ्यात्वगुणस्थानमें उक्त भावोंसम्बन्धी दर्श भग होते हैं । सासादन और मिथ्य गुणस्थानमें भी इसी प्रकार दर्श दर्श भग जानना चाहिये । अवरितसम्यग्दृष्टि गुण स्थानमें ये ही भग त्रिगुणित और चतुर्हान अर्थात् (१० × ३ - ४ = २६) छ्वास हात हैं । इसी प्रकार ये छ्वासीस भग क्षायोपशामिक देशावरित, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें भी होत हैं । क्षपकश्रेणीवाले चारों क्षपकोंके उन्नीस उन्नीस भग हाते हैं ।

१ सामायेन तान् मिथ्यादृष्टित्वौदयिका भाव । स ति १, ८ मिच्छे खलु ओदइओ । गो जी ११

२ प्रतियु 'इदिकरण' इति पाठ ।

भाषा णिक्कारणा उपलब्धंतीदि चे ण, विमेषसत्तादिसरूपेण अपरिणमतसत्तादिसामण्णाणु-
वलभा । सामणसम्मादिद्विचं पि मम्मत्त चारित्तुभयविरोहिअणताणुवधिचउक्कस्सुदय-
मंतरेण ण होदि त्ति ओदडयमिदि किण्णेच्छिज्जदि ? सच्चमेय, किंतु ण तथा अप्पणा
अत्थि, आदिमचदुगुणट्टाणभाषपरुणाए दमणमोहपदिरित्तसेसरुम्मेसु विपक्खाभावा' ।
तदो अप्पिदस्स दसणमोहणीयस्स कम्मस्स उदएण उरममेण सएण सओरसमेण वा ण
होदि त्ति णिक्कारणं सासणसम्मत्त, अदो चेत्त पारिणामियत्त पि । अणेण णाएण सच्च-
भाषाण पारिणामियत्त पमज्जदीदि चे होदु, ण कोड दोमो, विरोहाभावा । अण्णभावेसु
पारिणामियवपहारो किण्ण कीग्दे ? ण, मामणमम्मत्त मोत्तूण अप्पिदरुम्मादो णुप्पणस्स
अण्णस्स भावस्स अणुपलभा ।

कारणके विना उत्पन्न होनेवाले परिणामका अभाव हे ।

शका—सत्त्व, प्रमेयत्त्व आदिक भाव कारणके विना भी उत्पन्न होनेवाले पाये
जाते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, विशेष सत्त्व आदिके स्वरूपसे नहीं परिणत होने-
वाले सत्त्वादि सामान्य नहीं पाये जाते हैं ।

शका—सासादनसम्यग्दृष्टिपना भी सम्यक्त्व ओर चारित्र, इन दोनोंके विरोधी
अनतानुबन्धी चतुष्कके उदयके विना नहीं होता हे, इसलिए इसे ओदयिक क्यों नहीं
मानते हैं ?

समाधान—यह कहना सत्य है, किंतु उस प्रकारकी यहा विवक्षा नहीं है,
क्योंकि, आदिके चार गुणस्वानासम्यग्धी भावोंकी प्ररूपणामें दर्शनमोहनीय कर्मके
सिवाय शेष कर्मोंके उदयकी विपक्षाका जभाव हे । इसलिए विवक्षित दर्शनमोहनीयकर्मके
उदयसे, उपशमसे, क्षयसे अथवा क्षयोपशमसे नहीं हाता हे, अत यह सासादन
सम्यक्त्व निष्कारण हे ओर इसीलिए इसके पारिणामिकपना भी है ।

शका—इस न्यायके अनुसार तो सभी भावोंके पारिणामिकपनेका प्रसग प्राप्त
होता है ?

समाधान—यदि उक्त न्यायके अनुसार सभी भावोंके पारिणामिकपनेका प्रसग
आता है, तो आने दो, कोई दोष नहीं हे, क्योंकि, इसमें कोई विरोध नहीं आता ।

शका—यदि ऐसा हे, तो फिर अन्य भावोंमें पारिणामिकपनेका व्यवहार क्यों
नहीं किया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सासादनसम्यक्त्वको छोडकर विवक्षित कर्मसे नहीं
उत्पन्न होनेवाला अन्य कोई भाव नहीं पाया जाता ।

१ एदे भावा णियमा दसणमोह पडच्च मणिदा ह्नु । चाग्घि गत्थि जदो अविरदअतेसु ठाणेसु ॥ गो जी १२

तदो मिच्छादिद्विस्स ओद्दओ चेव भाओ जत्थि, अण्णे भाओ णत्थि चि णेद घड्ढे ? ण एस दोसो, मिच्छादिद्विस्स अण्णे भाओ णत्थि चि सुत्ते पडिसेहाभावा । किंतु मिच्छत्त मोत्तण जे अण्णे गदि-लिंगादओ मावारणभाओ ते मिच्छादिद्विस्स कारण ण होंति । मिच्छत्तोदओ एकको चेव मिच्छत्तस्स कारण, तेण मिच्छादिद्वि चि भाओ ओद्दओ चि परूनिदो ।

सासणसम्मादिद्वि चि को भावो, पारिणामिओ भावो ॥ ३ ॥

एत्थ चोदओ भणदि- भाओ पारिणामिओ चि णेद घड्ढे, अण्णेहिंतो अणु प्पण्णस्म परिणामस्म अत्थिचत्तिरोहा । अह अण्णेहिंतो उत्पत्ती इच्छिज्जदि, ण सो पारिणामिओ, णिककारणस्म सकारणत्तिरोहा इदि । परिहारो उच्चदे । त जहा- जा कम्माणमुदय-उत्तमम खइय खओत्तसमेहि णिणा अण्णेहिंतो उत्पण्णो परिणामो सो पारि णामिओ भण्णदि, ण णिककारणो कारणमत्तरेणुप्पण्णपरिणामाभाओ । सत्त पमेयत्तादअ

भग होते ह और पचसयोगी एउ भग होता है । तथा स्वसयोगी भग चार हा होते हैं, क्योंकि यहापर क्षायिन्सम्यक्त्वके साथ क्षायिकभावका अन्य भेद सम्भव नहीं है । इस प्रकार सब मिलाकर (५ + १० + १० + ५ + १ + ४ = ३५) पतास भग उपशमश्रेणीके प्रत्येक गुणस्थानमें होते ह ।

इसलिए मिथ्यादृष्टि जीवके केवल एक औदयिक भाव ही होता है, और अन्य भाव नहीं होते हैं, यह कथन घटित नहीं होता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, 'मिथ्यादृष्टिके औदयिक भावके अतिरिक्त अन्य भाव नहीं होते हैं, इस प्रकारका सूत्रमें प्रतिषेध नहीं किया गया है । किंतु मिथ्यात्वको छोड़कर जो अय गति, लिंग आदिक साधारण भाव ह, वे मिथ्या दृष्टिके कारण नहीं होते हैं । एक मिथ्यात्वका उदय ही मिथ्यादृष्टित्वा कारण है, इसलिए 'मिथ्यादृष्टि' यह भाव औदयिक कहा गया है ।

सासादनमम्यग्दृष्टि यह कौनसा भाव है ? पारिणामिक भाव है ॥ ३ ॥

शुक्रा—यहा पर शकाकार कहता है कि 'भाव पारिणामिक हे' यह बात घटित नहीं होती है, क्योंकि, दूसरोंसे नहीं उत्पन्न होनेवाले पारिणामिके अस्तित्वका विरोध है । यदि अन्यसे उत्पत्ति मानी जाये तो पारिणामिक नहीं रह सकता है, क्योंकि, निष्कारण वस्तुके सकारणत्वका विरोध है ?

समाधान—उक्त शकाका परिहार कहते हैं । यह इस प्रकार है— जो कर्मोंक उदय, उपशम, क्षय और क्षयोपमके बिना अय कारणोंसे उत्पन्न हुआ परिणाम है, वह पारिणामिक कहा जाता है । न कि निष्कारण भावको पारिणामिक कहते हैं, क्योंकि,

१ सासादनमम्यग्दृष्टिरिति पाणिनामिको भाव । उ ति १, ८ विदिये पुण पारिणामिओ भावो ।

सम्मामिच्छत्तस्म सम्मत्ताभावादो । किंतु मद्दहणभागो अमद्दहणभागो ण होदि, सद्दहणा-
मद्दहणाणमेयत्तविरोहा । ण च मद्दहणभागो ऋम्मोदयजणिओ, तत्थ विवरीयत्ताभावा ।
ण य तन्थ सम्मामिच्छत्तत्तएमाभावा, समुदाएसु पयट्टाणं तदेगदमे वि पउत्तिदंमणादो ।
तदो सिद्ध सम्मामिच्छत्त रओत्तममियमिदि । मिच्छत्तस्म मच्चघादिफहयाणमुदयक्खएण
तेमिं चेत्त मतोत्तममेण सम्मत्तस्स देमघादिफहयाणमुदयक्खएण तेमिं चेत्त सतोत्तममेण
जणुदओत्तममेण वा सम्मामिच्छत्तस्म मच्चघादिफहयाणमुदएण सम्मामिच्छत्तभावा होदि
त्ति मम्मामिच्छत्तस्म रओत्तममियत्त केदं परूपयत्ति, तण्णा घडदे, मिच्छत्तभावस्स वि
वओत्तममियत्तप्पमंगा । कुदो ? सम्मामिच्छत्तस्म मच्चघादिफहयाणमुदयक्खएण तेमिं
चेत्त मतोत्तममेण सम्मत्तदेसघादिफहयाणमुदयक्खएण तेमिं चेत्त सतोत्तममेण जणुदओत्त-
ममेण वा मिच्छत्तस्म मच्चघादिफहयाणमुदएण मिच्छत्तभावुत्तपीए उअलभा ।

असंजदसम्माद्विद्वि ति को भावो, उवसमिओ वा खइओ वा
रओवसमिओ वा भावो ॥ ५ ॥

जात्यन्तरभूत सम्यग्मिथ्यात्वकर्मके सम्यक्त्वताका अभाव हे । किन्तु अज्ञानभाग अथज्ञान
भाग नहीं हो जाता है, क्योंकि, अज्ञान और अथज्ञानके एकताका विरोध है । और
अज्ञानभाग कमादय जनित भी नहीं है, क्योंकि, इसमें विपरीतताका अभाव है । और
न उनमें सम्यग्मिथ्यात्व सज्ञान ही अभाव है, क्योंकि, समुदायोंमें प्रवृत्त हुए शब्दोंकी
उनके एक देशमें भी प्रयुक्ति देखी जाती है । इसलिए यह सिद्ध हुआ कि सम्यग्मिथ्यात्व
क्षायोपशमित भाव है ।

किन्तु ही आचार्य ऐसा कहते हैं कि मिथ्यात्वके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदय
क्षयसे, उन्हींके सत्त्वस्थारूप उपशमसे, सम्यक्प्रवृत्तिके देशघाती स्पर्धकोंके उदय
क्षयसे, उन्हींके सद्वस्थारूप उपशमसे, अथवा अनुदयरूप उपशमसे और सम्यग्मिथ्यात्व
कर्मके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयसे सम्यग्मिथ्यात्वभाव होता है, इसलिए सम्यग्मिथ्यात्वके
क्षायोपशमितता सिद्ध होती है । किन्तु उनका यह कथन घटित नहीं होता है, क्योंकि,
ऐसा मानने पर तो मिथ्यात्वभावके भी क्षायोपशमितताका प्रसंग प्राप्त होगा, क्योंकि,
सम्यग्मिथ्यात्वके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, उन्हींके सद्वस्थारूप उपशमसे और
सम्यक्त्वदेशघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, उन्हींके सत्त्वस्थारूप उपशमसे, अथवा अनु-
दयरूप उपशमसे, तथा मिथ्यात्वके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयसे मिथ्यात्वभावकी उत्पत्ति
पारं जाती है ।

अस्यतमम्यग्द्विदि यह कौनसा भाव है ? औपशमिक भाव भी है, क्षायिक
भाव भी है और क्षायोपशमिक भाव भी है ॥ ५ ॥

१ अस्यतमम्यग्द्विदिति आपशमिको वा क्षायिको वा क्षायोपशमिको वा भाव । स ति १, ८
व्यतिरेकसम्मादि तिण्णव ॥ गो जी ११

सम्मामिच्छादिदृष्टि ति को भावो, खओवसमिओ भावो ॥ ४ ॥

पडिबधिकम्मोदए मते वि जो उरल्लभइ जीवगुणाप्रयो सो खओवसमिओ उच्चट । कुदो ? मवघादणमचीए जभागे खओ उच्चटि । खओ चेव उरममो खओवसमो, तस्मिं जादो भावो खओवसमिओ । ण च मम्मामिच्छत्तुदए मते सम्मत्तस्व कणिया वि उच्चटि, सम्मामिच्छत्तस्म मवघादित्तण्णहाणुप्रत्तीदो । तदो मम्मामिच्छत्त खओवसमियमिदि ण घडटे ? एत्थ परिहारो उच्चदे— सम्मामिच्छत्तुदए मते सद्वहणामद्वहणप्पो ऋचिओ जीवपरिणामो उप्पज्जट । तत्थ जो मद्वहणसो सो सम्मत्ताप्रयो । त सम्मामिच्छत्तुओ ण रिणामेदि ति सम्मामिच्छत्त खओवसमिय । अमद्वहणभागेण रिणा मद्वहणभागस्सेव मम्मामिच्छत्तप्रएमो णत्थि ति ण सम्मामिच्छत्त खओवसमियमिदि च एपरिहविक्खाए सम्मामिच्छत्त खओवसमिय मा होदु, किंतु अण्यव्ययपरिणिराकरणानिराकरण पडुच्च खओवसमिय सम्मामिच्छत्तद्ववन्मम पि मवघादी चेव होदु, जचतरस्स

सम्यग्मिध्यादृष्टि यह कानसा भाव है ? आयोपशमिक भाव है ॥ ४ ॥

शुक्रा—प्रतिपधी र्मके उदय होनेपर भी जो जीवके गुणना अवयव (अश) पाया जाता है, यह गुणाश क्षायोपशमिक कहलाता है, क्योंकि, गुणोंके सम्पूर्णरूपसे घातनेकी शक्तिना अभाव क्षय कहलाता है । क्षयरूप ही जो उपशम होता है, वह क्षयोपशम कहलाता है । उस क्षयोपशममें उत्पन्न होनेवाला भाव क्षायोपशमिक कहलाता है । किंतु सम्यग्मिध्यात्वर्मके उदय रहते हुए सम्यक्त्पकी कणिका भी अवशिष्ट नहीं रहती है, अन्यथा, सम्यग्मिध्यात्वर्मके संघघातीपना उन नहीं सकता है । इसलिए सम्यग्मिध्यात्वभाव क्षायोपशमिक है, यह कहना घटित नहीं होता ?

समाधान—यहा उक्त शरणा परिहार करते हैं— सम्यग्मिध्यात्वर्मके उदय होने पर अज्ञानाश्रदानात्मक करचित अर्थात् शरलित या मिश्रित जीवपरिणाम उत्पन्न होता है, उसमें जो अज्ञानाश्र है, यह सम्यक्त्पका अवयव है । उसे सम्यग्मिध्यात्वर्मका उदय नहीं नष्ट करता है, इसलिये सम्यग्मिध्यात्वभाव क्षायोपशमिक है ।

शुक्रा—अश्रदान भागन विना केवळ अज्ञान भागके ही 'सम्यग्मिध्यात्व' यह संधा नहीं है, इसलिए सम्यग्मिध्यात्वभाव क्षायोपशमिक नहीं है ?

समाधान—उक्त प्रकारकी विवक्षा होने पर सम्यग्मिध्यात्वभाव क्षायोपशमिक भले ही न होवे, किंतु अवयवोंके निराकरण और अण्यवके अनिराकरणकी अपेक्षा यह क्षायोपशमिक है । अर्थात् सम्यग्मिध्यात्वके उदय रहते हुए अण्यवकीरूप शुद्ध आत्माका तो निराकरण रहता है, किंतु अण्यवरूप सम्यक्त्वगुणा जरा प्रगट रहता है । इस प्रकार क्षायोपशमिक भी यह सम्यग्मिध्यात्व द्रव्यकम संघघाती ही होने, क्योंकि,

सम्यग्मिध्यादृष्टिदृष्टि क्षायोपशमिको भाव । स ति १, ८ विस्से खओवसमिओ । गो जी ११
प्रतिपु 'त खओवसमि' इति पाठ ।

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो' ॥ ६ ॥

सम्मादिट्ठीए तिण्णि भावे भणिऊण असजदत्तस्स कदमो भावो होदि चि जाणा-
वणद्धमेद सुत्तमागद । सजमघाटीण कम्माणमुदएण जेणेसो असजदो तेण असंजदो चि
जोदइओ भावो । हेट्टिल्लाण गुणट्ठाणाणमोदइयमसंजदत्त किण्ण परुणिदं ? ण एस दोसो,
एदेणेए तेसिमोदइयमसंजदभावोएलद्धीदो । जेणेदमतदीपय सुत्त तेणते ठाइदूण अडकत्त-
सव्वसुत्ताणमपयवसरुं पडिउज्जदि, तत्थ अप्पणो अत्थित्तं वा पयासेदि, तेण अदीद-
गुणट्ठाणाणं सव्वेमिमोदइओ असजमभावो अत्थि चि सिद्धं । एदमाटीए अभणिय एत्थ
भणंतस्स को अभिप्पाओ ? उच्चदे—असजमभानस्स पज्जसाणपरुणणद्धमुपरिमाणम-
सजमभानपडिसेहद्धं चेत्येद उच्चदे ।

संजदासजद-पमत्त-अप्यमत्तसंजदा चि को भावो, खओवसमिओ भावो' ॥ ७ ॥

किन्तु असयतसम्यग्दृष्टिका असयतत्व औदायिकभाभमे है ॥ ६ ॥

सम्यग्दृष्टिके तीनों भाव कहकर असयतके उसके असयतत्वकी अपेक्षा
कौनसा भाव होता है, इस बातके घतलानेके लिए यह सूत्र आया है। चूँकि समयके
घात करनेवाले क्रमोंके उदयसे यह असयतरूप होता है, इसलिए 'असयत' यह
औदायिकभाव है।

शंका—अधस्तन गुणस्थानोंके असयतपनेको औदायिक क्यों नहीं कहा ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, इसी ही सूत्रसे उन अधस्तन गुण
स्थानोंके औदायिक असयतभावकी उपलब्धि होती है। चूँकि यह सूत्र अन्तदीपक है,
इसलिए असयतभावको अन्तमें रख देनेसे वह पूर्वोक्त सभी सूत्रोंका अंग बन जाता है।
अथवा, अतीत सर्व सूत्रोंमें अपने अस्तित्वको प्रकाशित करता है, इसलिए सभी अतीत
गुणस्थानोंका असयतभाव औदायिक होता है, यह बात सिद्ध हुई।

शंका—यह 'असयत' पद आदिमं न कहकर यहापर कहनेका क्या अभिप्राय है ?

समाधान—यहा तक्के गुणस्थानोंके असयतभावकी अन्तिम सीमा घतानेके
लिए और ऊपरके गुणस्थानोंके असयतभावके प्रतिषेध करनेके लिए यह असयत पद
यहापर कहा है।

सयतामयत, प्रमत्तमंयत और अप्रमत्तसयत, यह कौनसा भाव है ? क्षायोप-
शमिक भाव है ॥ ७ ॥

१ असयत पुनरादायिकेन भावेन । स सि १, ८

२ सयतामयत प्रमत्तमयतोऽप्रमत्तसयत इति च क्षायोपशमिको भाव । स सि १, ८ देसवित्ते
पमचे इदरे य एओवमभियमाओ इ । सो खलु चरित्तमोद पडच्च भणिय तहा उवरिं । गो जी १३

त जहा- मिच्छत्त सम्मामिच्छत्तमव्यधादिफद्याण मम्मत्तदेमधादिफद्याण च उरममेण उदयाभात्रलम्पणेण उरममसम्मत्तमुप्पज्जदि त्ति तमोरममिय । एदेमि चैव सएण उप्पण्णो खड्दो भाओ । मम्मत्तस्म देमधादिफद्याणमुदएण मह वड्डमाणो सम्मत्त परिणामो खओरममिओ । मिच्छत्तस्स मव्यधादिफद्याणमुदयवत्तएण तेसि चैव मत्तव ममेण मम्मामिच्छत्तस्स मव्यधादिफद्याणमुदयवत्तएण तेसि चैव सतोरसमेण अणु ओरममेण वा सम्मत्तस्स देसधादिफद्याणमुदएण खओरसमिओ भाओ त्ति वेई मणत्ति, तण्ण घड्दे, अड्दत्तिदोमप्पमगादो । क्व पुण घड्दे ? जहट्टियट्टमइहणघायणमवै सम्मत्तफद्दएसु खीणा त्ति तेमि खइयमण्णा । खयाणमुत्तमो पसण्णदा खओरममा । तन्धुप्पण्णत्तादो खओरसमिय त्रेदगमम्मत्तमिदि षड्दे । एउ सम्मत्ते तिण्णि भाओ, अणो णत्थि । गदिलिगादओ भाओ तन्धुत्तलभत्त इट्ठि चै होट्टु णाम तेसिमत्थित्त, त्तिनु ण तेहितो मम्मत्तमुप्पज्जदि । तदो मम्मदिट्ठो त्ति ओदइयादिवत्तएण ण लहट्ठि त्ति धेत्तव ।

जैसे- मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिने सवघाती स्पर्धकोंके तथा सम्यक्त्व प्रकृतिने देशघाती स्पर्धकोंके उदयाभात्ररूप लक्षणवाले उपशमसे उपशमसम्यक्त्व उत्पन्न होता है, इसलिए 'असयतसम्यग्दष्टि' यह भाव औपशमिन् है । इन्हीं तीनों प्रकृतियोंके क्षयसे उत्पन्न होनेवाले भावको क्षायिन् कहते हैं । सम्यक्त्वप्रकृतिने देशघाती स्पर्धकोंके उत्पन्ने साथ रहनेवाला सम्यक्त्वपरिणाम क्षायोपशमिक कहलाता है । मिथ्यात्वके सवघाती स्पर्धकोंके उदयाभावरूप क्षयसे, उन्हींके सदवस्वारूप उपशमसे और सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिके सवघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, तथा उन्हींके सदवस्वारूप उपशमसे अथवा अनुदयोपशमनसे, और सम्यक्त्वप्रकृतिने देशघाती स्पर्धकोंके उदयस क्षायोपशमिक भाव कितने ही आचार्य कहते हैं, किन्तु यह कथन घटित नहीं होता है, क्योंकि, वैसा मानने पर अति-यासि दोषका प्रमग जाता है ।

श्री- तो फिर क्षायोपशमिन् भाव कैसे घटित होता है ?

समाधान-- यथास्थित अत्रके श्रद्धानसे प्राप्त करनेवाली शक्ति जब सम्यक्त्व प्रकृतिने स्पर्धकोंमें क्षीण हो जाता है, तब उनकी क्षायिकत्ता है । क्षीण हुए स्पर्धकोंके उपशमको अर्थात् प्रसन्नताको क्षयोपशम कहते हैं । उन्में उत्पन्न होनेसे धेद्वसम्यक्त्व क्षायोपशमिक है, यह कथन घटित हो जाता है । इस प्रकार सम्यक्त्वमें तीन भाव होते हैं, अन्य भाव नहीं होते हैं ।

श्री- असयतसम्यग्दष्टिमें गति, लिङ्ग आदि भाव पाये जाते हैं, फिर उनका प्रदण यहा क्यों नहीं किया ?

समाधान-- असयतसम्यग्दष्टिमें भले हा गति, लिङ्ग आदि भावोंका अस्तित्व रहा भावे, किन्तु उनसे सम्यक्त्व उत्पन्न नहीं होता है, इसलिए सम्यग्दष्टि भी औदधिक आदि भावोंके व्ययदेशको नहीं प्राप्त होता है, ऐसा अर्थ ग्रहण करना चाहिए ।

उप्पज्जदि । वारमरुसायाण सच्चघादिफह्दयाणमुदयक्खएण तेसिं चेय संतोउसमेण च्हु-
संजुलण-णरणोरुमायाण सच्चघादिफह्दयाणमुदयक्खएण तेसिं चेय संतोउसमेण देसघादि-
फह्दयाणमुदएण पमत्तापमत्तसंजमा' उप्पज्जति, तेणेढे तिण्णि नि भाया खओउममिया
इदि के नि भणंति । ण च एद समजसं । कुदो ? उदयाभापो उउसमो त्ति कट्टु उदय-
निरहिदसच्चपयडीहि द्विट्ठि-अणुभागफह्दएहि अ उवसमसण्णा लद्धा । सपहि ण क्खओ
अत्थि, उदयस्स विज्जमाणस्स खयच्चएसपिरोहादो । तदो एदे तिण्णि भाया उदओव-
समियत्त पत्ता । ण च एव, एदेसिमुदओउसमियत्तपट्टुप्पायणसुत्ताभाया । ण च फल
दाऊण णिज्जरियगयक्कम्मकरड्डाण खयच्चवएस काऊण एदेसिं खओउसमियत्त वोत्तु
जुत्त, मिच्छादिद्विट्ठिआदि सच्चभाराण एउ सते खओउसमियत्तप्पसंगा । तम्हा पुव्विल्लो
चेय अत्थो धेत्तव्यो, णिरवज्जत्तादो । दसणमोहणीयक्कम्मस्स उउसम-खय-खओउममे
अस्मिदूण संजदासजदादीणमोउसमियादिभाया किण्ण परुविदा ? ण, तदो संजमासंजमादि-
भाराणमुप्पत्तीए अभायादो । ण च एत्थ सम्मत्तनिसया पुच्छा अत्थि, जेण दंसण-

है । अनन्तानुग्रन्धी आदि वारह कपायाँके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, उन्हींके सद्-
वस्थारूप उपशमसे चारों सच्चलन ओर नवों नोःरुपायाँके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदय-
क्षयसे, तथा उन्हींके सद्बवस्थारूप उदयसे और देशघाती स्पर्धकोंके उदयसे प्रमत्त
ओर अप्रमत्त गुणस्थानसम्बन्धी सयम उत्पन्न होता है, इसलिये उक्त तीनों ही भाव
क्षयोपशमिक हे, ऐसा नितने ही आचार्य कहते हैं । किन्तु उनका यह कथन युक्तिसंगत
नहीं है, क्योंकि, उदयके अभावको उपशम कहते हैं, ऐसा अर्थ करके उदयसे विरहित
सर्वप्रकृतियोंको तथा उन्हाके स्थिति और अनुभागके स्पर्धकोंको उपशमसक्षा प्राप्त हो
जाती है । अभी वर्तमानमें क्षय नहीं है, क्योंकि, जिस प्रकृतिका उदय विद्यमान है,
उसके क्षय सक्षा होनेका विरोध है । इसलिये ये तीनों ही भाव उदयोपशमिकपनेको
प्राप्त होते हैं । किन्तु ऐसा माना नहीं जा सकता है, क्योंकि, उक्त तीनों गुणस्थानोंके
उदयोपशमिकपना प्रतिपादन करनेवाले सूत्रका अभाव है । ओर, फलको देकर पद्य
निजराको प्राप्त होकर गये द्रष्टु फर्मस्वरुधोंके 'क्षय' सक्षा करके उक्त गुणस्थानोंको
क्षायोपशमिक कहना भी युक्त नहीं है, क्योंकि ऐसा होनेपर मिथ्यादृष्टि आदि सभी
भायोंके क्षायोपशमिकताका प्रसंग प्राप्त हो जायगा । इसलिये पूर्वोक्त ही अर्थ ग्रहण
करना चाहिए, क्योंकि, वही निरवद्य (निर्दोष) है ।

शक्षा—दर्शनमोहनीयकर्मके उपशम, क्षय ओर क्षयोपशमका आधय करके
सयतासयतादिकोंके औपशमिकादि भाव क्यों नहीं बताये गये ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, दर्शनमोहनीयकर्मके उपशमादिकसे सयमासयमादि
भायोंकी उत्पत्ति नहीं होती । दूसरे, यहा पर सम्यक्त्व विषयक पृच्छा (प्रश्न) भी नहीं है,

तं जहा— चारित्तमोहणीयकम्मोदए सओउममसण्णिदे सते जदो सजदामन
पमत्तसजद-अप्पमत्तसजदत्तं च उप्पज्जदि, तेणेदे तिण्णि नि भाया सओउममिया।
पच्चक्खाणावरण-चदुसजलण णरणोक्रमायाणमुदयस्स सच्चप्पणा चारित्तविणासणमत्तीए
अभारादो तस्म सयमण्णा । तेसिं चेव उप्पणचारित्त सेडिं वापारतस्स उअसमण्णा ।
तेहि दोहिंतो उप्पण्णा एदे तिण्णि नि भाया सओउममिया जादा । एअ सते पच्चक्खाणा
वरणस्म सच्चघादिच्च फिड्ढदि चि उत्ते ण फिड्ढदि, पच्चक्खाण सच्च घात्तदि
त्ति त सच्चघादी उच्चदि । सच्चमपच्चक्खाणं ण घादेदि, तस्स तत्थ वापार
भाया । तेण तप्परिणदस्म सच्चघादिसण्णा । जस्सोदए सते जमुप्पज्जमाणमु
वल्लमदि ण त पडि तं सच्चघाउअएस लहइ, अइप्पसगादो । अपच्चक्खाणा
वरणचउम्कस्स सच्चघादिफइयाणमुदयक्खएण तेसिं चेव सतोअसमेण चदुसन
लण-णरणोक्रमायाण सच्चघादिफइयाणमुदयक्खएण तेसिं चेव सतोअसमेण देस
घादिफइयाणमुदएण पच्चक्खाणावरणचदुक्कस्स सच्चघादिफइयाणमुदएण देससजमा

चूकि क्षयोपशमनामक चारित्रमोहनीयकर्मका उदय होने पर सयतासयत,
अप्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयतपना उत्पन्न होता है, इसलिये ये तीनों ही भाव क्षायोप
शमिक हैं। प्रत्याख्यानावरणचतुष्क, सज्वलनचतुष्क और नव नोकपायोंके उदयके सर्व
प्रकारसे चारित्र विनाश करनेकी शक्तिका अभाय है, इसलिये उनके उदयकी क्षय सज्ञा
है। उहाँ प्रकृतियोंकी उत्पन्न हुए चारित्रको अथवा श्रेणीको आवरण नहीं करनेके कारण
उपशम सज्ञा है। क्षय और उपशम, इन दोनोंके द्वारा उत्पन्न हुए ये उक्त तीनों भाव भी
क्षायोपशमिक हो जाते हैं।

शंका—यदि ऐसा माना जाय, तो प्रत्याख्यानावरण कपायका सर्वघातिपना
नष्ट हो जाता है ?

ममाधान—वैसा माननेपर भी प्रत्याख्यानावरण कपायका सर्वघातिपना नष्ट
नहीं होता है, क्योंकि, प्रत्याख्यानावरण कपाय अपने प्रतिपक्षी सर्व प्रत्याख्यान (सद्यम)
गुणको घातता है, इसलिये वह सर्वघाती कहा जाता है। किन्तु सर्व अप्रत्याख्यानको
नहीं घातता है, क्योंकि, उसका इस विषयमें व्यापार नहीं है। इसलिये इस प्रकारस
परिणत प्रत्याख्यानावरण कपायके सर्वघाती सज्ञा सिद्ध है। जिस प्रकृतिके उदय होने
पर जो गुण उत्पन्न होता हुआ देखा जाता है, उसकी अपेक्षा वह प्रकृति सर्वघाति
भसाको नहीं प्राप्त होती है। यदि ऐसा न माना जाय तो अतिप्रसंग दोष धाजायगा।

अप्रत्याख्यानावरणचतुष्कके सद्यघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे और उहाँके सद्य
घस्वरूप उपशमसे, तथा चारों सज्वलन और नवों नोकपायोंके सर्वघाती स्पर्धकोंके
उदयामाया क्षयसे और उहाँके सद्यस्वरूप उपशमसे तथा देशघाती स्पर्धकोंके उदयसे
और प्रत्याख्यानावरण कपायचतुष्कके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयसे देशसयम उत्पन्न होता

कम्माणमुजसमेण उव्यण्णो भाओ ओउसमिओ भण्णइ । अपुव्वकरणस्स तदभाजा गोव-
समिओ भाओ इदि चे ण, उउसमणसत्तिसमण्णिदअपुव्वकरणस्स तदत्थित्तानिरोहा ।
तथा च उउममे जादो उउसमिपकम्माणमुजसमण्डं जादो नि ओउसमिओ भाओ त्ति
सिद्ध । अथवा भविस्सभाणे भूदोउयारादो अपुव्वकरणस्स ओउममिओ भाओ, सयला-
सजमे पयइच्चकहरस्स तित्थयरउएमो व्व ।

चदुण्हं खवा सजोगिकेवली अजोगिकेवलि त्ति को भावो,
खइओ भावो ॥ ९ ॥

सजोगि-अजोगिकेवलीणं सविदघाइकम्माणं होदु णाम खइओ भाओ । खीण-
कमायस्स पि होदु, सविदभोहणीयत्तादो । ण सेसाण, तत्थ कम्मकसयाणुउलभा ? ण,
वादर-सुहुमसापराइयाण पि सविमोहैयदेसाणं कम्मकसयजणिदभावोउलभा । अपुव्व-

शक्या—कर्मोंके उपशमनसे उत्पन्न होनेवाला भाव औपशमिक कहलाता है ।
किन्तु अपूर्वकरणसयतके कर्मोंके उपशमका अभाव है, इसलिए उसके औपशमिक भाव
नहीं मानना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमनशक्तिसे समन्वित अपूर्वकरणसयतके औप-
शमिकभाजके अस्तित्वको माननेमें कोई विरोध नहीं है ।

इस प्रकार उपशम होनेपर उत्पन्न होनेवाला और उपशमन होने योग्य कर्मोंके
उपशमनार्थ उत्पन्न हुआ भी भाव औपशमिक कहलाता है, यह बात सिद्ध हुई । अथवा,
भविष्यमें होनेवाले उपशम भावमें भूतकालका उपचार करनेसे अपूर्वकरणके औपशमिक
भाज बन जाता है, जिस प्रकार कि सर्व प्रकारके असयममें प्रवृत्त हुए चरुवर्ती तीर्थकरके
'तीर्थकर' यह व्यपदेश बन जाता है ।

चारों क्षपक, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली, यह कौनसा भाव है ?
क्षायिक भाज है ॥ ९ ॥

शक्या—वातिकर्मोंके क्षय करनेवाले सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीके क्षायिक
भाव भले ही रहा आवे । क्षीणरूपाय वीतरागछद्मस्थके भी क्षायिक भाव रहा आवे,
क्योंकि, उसके भी मोहनीयकर्मका क्षय हो गया है । किन्तु सूक्ष्मसाम्पराय आदि शेष
क्षपकोंके क्षायिक भाज मानना युक्ति मगत नहीं है, क्योंकि, उनमें किसी भी कर्मका
क्षय नहीं पाया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, मोहनीयकर्मके एक देशके क्षपण करनेवाले वादर-
साम्पराय और सूक्ष्मसाम्पराय क्षपकोंके भी कर्मक्षय जनित भाव पाया जाता है ।

१ चतुर्थ क्षपके सयागायोगकेवलिनोथ क्षायिके भाव । स सि ३, ८ खगेष खइओ भावो णियमा
अजोगिकेवली त्ति सिद्धे य ॥ गा जी १४

मोहनिवर्धणओउममियादिभावेहि सजटासजटादीण वणएसो होज्ज । ण च एवं, तथाणुत्तलमा ।

चटुण्हमुवसमां ति को भावो, ओवसमिओ भावो ॥ ८ ॥

त जहा— एकक्रीमपयडीओ उममामेति ति चटुण्ह ओउममिओ भावो । हेतुणाम उवसतकसायस्म ओउसमिओ भावो उममिदासेसकमायत्तादो । ण सेमाण, तत्र असेसमोहस्सुउममाभावा ? ण, जणिवाट्टिनादग्मापराइय मुट्टुमसापराइयाण उममिदधोरुमायजणिदुवसमपरिणाभाण ओउसमियभाउस्म अत्थित्तापिरोहा । अपुव्वकरणमअणुवसतासेसकमायस्स कधमोउसमिओ भावो ? ण, तस्म पि अपुव्वकरणेहि पणिसमयममखेज्जगुणाए मेडीण कम्मकत्तडे णिज्जरतस्म ट्टिट्ठि-अणुभागसडयाणि घाण्डिदुवकमेण ठिट्ठि-अणुभागे सखेज्जाणतगुणहीणे करेत्तस्म पारदुवममणकिरियस्म तदसिहा ।

जिससे कि दानमोहनाय निमित्तक औपशमिकादि भावोंकी अपेक्षा मयतासयतादिकक औपशमिकादि भावोंका व्यवदेश हो सके। ऐसा है नहीं, क्योंकि, उस प्रकारकी व्यवस्था नहीं पाई जाती है।

अपूर्वकरण आदि चारों गुणस्थानवर्ती उपशामक यह कौनसा भाव है? औपशमिक भाव है ॥ ८ ॥

यह इस प्रकार है— चारित्रमोहनीयकर्मकी इचीस प्रवृत्तियोंका उपशामन करत है, इसलिए चारों गुणस्थानवर्ती जीवोंके औपशमिकभाव माना गया है।

शुक्रा—समस्त कषाय और नोत्रपायोंके उपशामन करनेसे उपशातकषायवात रागछद्मस्य जीवके औपशमिक भाव भले ही रहा आवे, किन्तु अपूर्वकरणदि शेष गुणस्थानवर्ती जीवोंके औपशमिक भाव नहीं माना जा सकता है, क्योंकि, उन गुणस्थानोंमें समस्त मोहनीयकर्मके उपशामन अभाव है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, कुछ कषायोंके उपशामन किए जानेसे उत्पन्न हुआ है उपशाम परिणाम जिनके, ऐसे अनिवृत्तिकरण यादरसाम्पराय और सूक्ष्मसाम्पराय सयतके उपशामभाषका अस्तित्व माननेमें कोई विरोध नहीं है।

शुक्रा—नहीं उपशामन किया है किसी भी कषायका जिसने, ऐसे अपूर्वकरण सयतके औपशमिक भाव कैसे माना जा सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अपूर्वकरण परिणामोंके द्वारा प्रतिसमय असख्यात गुणधेणीरूपसे कर्मस्वर्धोंकी निर्जरा करनेवाले, तथा स्थिति और अनुभागनाडकोंको घात करके क्रमसे कषायोंकी स्थिति और अनुभागको असख्यात और अनन्तगुणित हीन करनेवाले, तथा उपशामनक्रियाका प्रारंभ करनेवाले, ऐसे अपूर्वकरणसयतके उपशाम भाषके माननेमें कोई विरोध नहीं है।

१ मतिदु 'उवसमा' इति पाठ ।

२ चटुणापुपचमकलापौपशमिको भाव । स ति १, ८ उवसमभावा उवसामणेह । गो जी १४

उप्पज्जदि त्ति सओपसमिओ सो किण्ण होदि ? उच्चदे- ण ताव सम्मत्त-सम्माभिच्छत्त-
देसघादिफइयाणमुदयक्खओ सतोममो अणुदओपसमो वा मिच्छादिट्ठीए कारण, सब्वहि-
चारिचाटो । ज जदो णियमेण उप्पज्जदि तं तस्स कारण, अण्णहा अणत्थोप्पसंगादो ।
जदि मिच्छत्तुप्पज्जणकाले विज्जमाणा तक्कारणत्त पडिउज्जति तो णाण-दसण-असजमा-
दओ नि तक्कारण हेति । ण चैन, तहाविहवणहाराभावा । मिच्छादिट्ठीए पुण
मिच्छत्तुदओ कारणं, तेण णिणा तदणुप्पत्तीए ।

सासणसम्माइट्ठि त्ति को भावो, पारिणामिओ भावो ॥ ११ ॥

अणताणुअंधीणमुदएणैव सासणसम्मादिट्ठी होदि त्ति ओदडओ भावो किण्ण
उच्चदे ? ण, आइल्लेसु चदुसु वि गुणइणोसु चारित्तारणत्तिव्योदएण पत्तामजमेसु दंसण-
मोहणिअधणेसु चारित्तमोहनिअभावा । अप्पिट्ठस्म दसणमोहणीयस्म उदएण उअसमेण
सएण सओपसमेण वा सासणसम्मादिट्ठी ण होदि त्ति पारिणामिओ भावो ।

स्पर्धकोंके उदयसे मिथ्यादृष्टिभाव उत्पन्न होता है, इसलिए उसे क्षायोपशमिक फ्यों न
माना जाय ?

समाधान—न तो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व, इन दोनों प्रकृतियोंके देशघाती
स्पर्धकोंका उदयक्षय, अथवा सद्रवस्वरूप उपशम, अथवा अनुदयरूप उपशम मिथ्यादृष्टि-
भावका कारण है, क्योंकि, उसमें व्यभिचार दोष आता है। जो जिससे नियमत उत्पन्न
होता है, वह उसका कारण होता है। यदि ऐसा न माना जावे, तो अनवस्था दोषका
प्रसंग आता है। यदि यह कहा जाय कि मिथ्यात्वके उत्पन्न होनेके कालमें जो भाव
विद्यमान हैं, वे उसके कारणपनेसे प्राप्त होते हैं। तो फिर ज्ञान, दर्शन, असयम आदि भी
मिथ्यात्वके कारण हो जायेंगे। किन्तु ऐसा हे नहीं, क्योंकि, उस प्रकारका व्यवहार नहीं
पाया जाता है। इसलिए यही सिद्ध होता है कि मिथ्यादृष्टिका कारण मिथ्यात्वका उदय
ही है, क्योंकि, उसके बिना मिथ्यात्वभावकी उत्पत्ति नहीं होती है।

नारकी सासादनसम्यग्दृष्टि यह ज्ञानमा भाव है ? पारिणामिक भाव है ॥ ११ ॥

शुका—अनन्तानुबन्धी चारों कपायोंके उदयसे ही जीव सासादनसम्यग्दृष्टि
होता है, इसलिए उसे औद्यिकभाव फ्यों नहीं कहते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, दर्शनमोहनीयनिग्रन्धनक आदिके चारों ही शुणस्थानोंमें
चारित्रको आवरण करनेवाले मोहकर्मके तीव्र उदयसे असयमभावके प्राप्त होनेपर भी
चारित्रमोहनीयकी विवक्षा नहीं की गई है। अतएव निरक्षित दर्शनमोहनीय कर्मके
उदयसे, उपशमसे, क्षयसे, अथवा क्षयोपशमसे सासादनसम्यग्दृष्टि नहीं होता है, इसलिए
यह पारिणामिक भाव है।

करणस्त अणिङ्कम्मस्त कथ सइओ भायो ? ण, तस्स वि कम्मकउयणिमित्तपरिणासु
 वलभा । एत्थ वि कम्माण सए जादो सइओ, सयइ जाओ वा सइओ भायो इदि
 दुनिहा सइउप्पत्ती धेत्तव्वा । उअयारेण वा अपुअकरणस्म सइओ भायो । उअयो
 आसइज्जमाणे अइप्पसगो किण्ण होदीदि चे ण, पन्चासत्तीदो अइप्पसगपडिसेहादो ।

ओघाणुगमो समत्तो ।

आदेसेण गइयाणुवादेण णिरयगईए णेरइएसु मिच्छादिट्ठि ति
 को भावो, ओदइओ भावो ॥ १० ॥

कुदो ? मिच्छत्तुदयजणिदअसइहणपरिणामुअलभा । सम्मामिच्छत्तसव्वघादि
 फइयाणमुदयकरणेण तेसिं चेअ सतोअसमेण सम्मत्तदेमघादिफइयाणमुदयकसएण तेमिं
 चेअ सतोअसमेण अणुदओअसमेण वा मिच्छत्तमव्वघादिफइयाणमुदएण मिच्छाइड्डी

शुक्रा—किसी भी कर्मसे नष्ट नहीं करनेवाले अपूर्वकरणसयतके क्षायिकभाव
 कैसे माना जा सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उसके भी कर्मक्षयके निमित्तभूत परिणाम पाये
 जाते हैं ।

यहां पर भी कर्मोंके क्षय होने पर उत्पन्न होनेवाला भाव क्षायिक है, तथा
 कर्मोंके क्षयके लिए उत्पन्न हुआ भाव क्षायिक है, ऐसी दो प्रकारकी शब्दव्युत्पत्ति
 ग्रहण करना चाहिए। अथवा उपचारसे अपूर्वकरण सयतके क्षायिक भाव मानना चाहिए।

शुक्रा—इस प्रकार सब उपचारके आश्रय करने पर अतिप्रसंग दोष क्यों नहीं
 प्राप्त होगा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, प्रत्यासत्ति अर्थात् समीपवर्ती अर्थके प्रसंगसे अति
 प्रसंग दोषका प्रतिषेध हो जाता है ।

इस प्रकार ओघ भावानुगम समाप्त हुआ ।

आदेशनी अपेक्षा गतिमार्गणाके अनुवादसे नरकगतिमें नारकियोंमें मिथ्यादृष्टि
 यह कौनसा भाव है ? आदयिक भाव है ॥ १० ॥

क्योंकि, वहां पर मिथ्यात्वसे उदयसे उत्पन्न हुआ अश्रद्धानरूप परिणाम पाया
 जाता है ।

शुक्रा—सम्याग्निध्यात्वप्रकृतिके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, उर्हींसे सद्
 धर्यारूप उपशमसे, तथा सम्यक्स्थप्रकृतिसे देशघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, उर्हींके
 सद्बधर्यारूप उपशमसे अथवा अनुदयोपशमसे और मिथ्यात्वप्रकृतिके सर्वघाती

१ प्रतिपु 'सयइओ' इति पाठ ।

२ विधेवेण गययुवादन नररगतौ प्रथमायां पृथिव्यां नाररणां मिथ्यादृष्ट्यापसयतसम्यग्दृष्टयन्तानां
 सामान्यवत् । स वि १, ८

३ अत्रता 'सम्मत्तदेसघादि सतोअसमेण' इति पाठस्य द्विरादृष्टि ।

त जहा— तिणिणं वि करणाणि काडणं सम्मत्तं पडिवण्णजीयाणं ओवसमिओ भावो, दंसणमोहणीयस्स तत्थुटयाभावा । खविददसणमोहणीयाणं सम्मादिट्ठीणं सइयो, पडिवक्खकम्मक्खएणुप्पणत्तादो । इदरेसिं सम्मादिट्ठीणं सओवसमिओ, पडिवक्खकम्मोदएण सह लद्धप्पमरूत्तादो । मिच्छत्त-सम्माभिच्छत्ताणं सच्चघादिफइयाणमुदयक्खएण तेसिं चेत्त सतोवसमेण अणुदओवसमेण वा सम्मत्तदेसघादिफइयाणमुदएण सम्मादिट्ठी उप्वज्जदि त्ति तिस्से खओवसमियत्त केइ भणति, तण्ण घड्ढे, विउचारदसणादो, अहप्पमंगादो वा ।

ओदइएण भावेण पुणो असजदो ॥ १४ ॥

संजमघादीणं कम्माणमुदएण असजमो होदि, तदो असजदो त्ति ओदइओ भावो । एद्रेण अंतदीएण सुत्तेण अट्ठकंतसच्चगुणट्ठाणेषु ओदइयमसंजदत्तमत्थि त्ति भणिदं होदि ।

एव पढमाए पुढवीए णेरइयाणं ॥ १५ ॥

कुदो ? मिच्छादिट्ठिं त्ति ओदइओ, सासणसम्मादिट्ठिं त्ति पारिणामिओ, सम्मा-मिच्छादिट्ठिं त्ति सओवसमिओ, असजदसम्मादिट्ठिं त्ति उवसमिओ सइओ खओव-

जेसे— अद्य करण आदि तीनों ही करणोंको करके सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंके औपशमिक भाव होता है, क्योंकि, वहापर दर्शनमोहनीयकर्मके उदयका अभाव है । दर्शनमोहनीयकर्मके क्षयण करनेवाले सम्यग्दृष्टि जीवोंके क्षायिकभाव होता है, क्योंकि, वह अपने प्रतिपक्षी कर्मके क्षयसे उत्पन्न होता है । अन्य सम्यग्दृष्टि जीवोंके क्षायोपशमिकभाव होता है, क्योंकि, प्रतिपक्षी कर्मके उदयके साथ उसके आत्मस्वरूपकी प्राप्ति होती है । मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व, इन दोनों प्रकृतियोंके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, उन्हींके सदनस्धारूप उपशमसे, अथवा अनुदयरूप उपशमसे, तथा सम्यक्त्वप्रकृतिके देशघाती स्पर्धकोंके उदयसे सम्यग्दृष्टि उत्पन्न होती है, इसलिए उसके भी क्षायोपशमिकता कितने ही आचार्य कहते हैं । किन्तु वह घटित नहीं होती है, क्योंकि, वैसा माननेपर व्यभिचार देखा जाता है, अथवा अतिप्रसंग दोष आता है ।

किन्तु नारकी असयतसम्यग्दृष्टिक्का असयतत्व औदयिक भावसे है ॥ १४ ॥

चूकि, असयमभाव सयमको घात करनेवाले कर्मोंके उदयसे होता है, इसलिए 'असयत' यह औदयिकभाव है । इस अन्तदीपरु सूत्रसे अतिक्रान्त सर्व गुणस्थानोंमें असयतपना औदयिक है, यह सूचित किया गया है ।

इस प्रकार प्रथम पृथिवीमें नारकियोंके सर्व गुणस्थानोंसम्बन्धी भाव होते हैं ॥ १५ ॥

क्योंकि, मिथ्यादृष्टि यह औदयिक भाव है, सासादनसम्यग्दृष्टि यह पारिणामिकभाव है, सम्यग्मिथ्यादृष्टि यह क्षायोपशमिकभाव है और असयतसम्यग्दृष्टि यह

सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति को भावो, खओवसमिओ भावो ॥ १२ ॥

कुटो ? सम्मामिच्छुत्तए सते वि सम्मइसणेगडेसमुत्तभा । सम्मामिच्छत्तभा
पत्तजच्चतरे असमीभागो णत्थि त्ति ण तत्थ सम्मइसणस्स एगडेम इदि चे, होदु णाम
अभेत्तविक्खत्ताए जच्चतरत्त । भेदे पुण पिक्खत्तडे सम्मइसणभागो अत्थि चेव, अण्णाहा
जच्चतरत्तपिरोहा । ण च सम्मामिच्छत्तम्म सब्बघाट्ठत्तमेव सते विरुज्झइ, पत्तजच्चतर
सम्मइसणमाभावदो तस्स मव्वघाट्ठत्तापिरोहा । मिच्छत्तमव्वघाट्ठफइयाण उदयस्सएण
तेसिं चेव सतोपसमेण सम्मत्तम्म टेमघादिफइयाणमुदयक्खएण तेसिं चेव सतोवममेण
अणुदओपसमेण वा सम्मामिच्छत्तमव्वघादिफइयाणमुदएण सम्मामिच्छत्त होदि त्ति तस्स
खओवसमियत्त केइ भणत्ति, तप्पण घडदे । कुटो ? सब्बहिचारित्तादो । विउच्चारे पुव्व
परुपिदो त्ति णेह परुपिज्जडे ।

असजदसम्मादिट्ठि त्ति को भावो, उवसमिओ वा, खइओ वा,
सओवसमिओ वा भावो ॥ १३ ॥

नारकी सम्यग्मिथ्यादृष्टि यह कौनसा भाव है ? क्षायोपशमिक भाव है ॥ १२ ॥
क्योंकि, सम्यग्मिथ्यात्वकर्मके उदय होनेपर भी सम्यग्दर्शनका एक देश पाया
जाता है ।

शंका—जात्यन्तरत्व (भिन्नजातीयता) को प्राप्त सम्यग्मिथ्यात्वभावमें अणारी
(अययव अवयवी) भाव नहीं है, इसलिए उसमें सम्यग्दर्शनका एक देश नहीं है ?

समाधान—अभेदकी विचक्षामें सम्यग्मिथ्यात्वके भिन्नजातीयता भले ही रही
आवे, किन्तु भेदकी विचक्षा करनेपर उसमें सम्यग्दर्शनका एक भाग (अंश) ही है ।
यदि ऐसा न माना जाय, तो उसके जात्यन्तरत्वके माननेमें विरोध आता है । और, ऐसा
माननेपर सम्यग्मिथ्यात्वके सबघातिपना भी विरोधको प्राप्त नहीं होता है, क्योंकि,
सम्यग्मिथ्यात्वके भिन्नजातीयता प्राप्त होनेपर सम्यग्दर्शनके एक देशका अभाव है, इस
लिए उसके सबघातिपना माननेमें कोई विरोध नहीं आता ।

किनने ही आचार्य, मिथ्यात्वप्रवृत्तिके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयने, उन्हींके
सदयस्वरूप उपशमसे, तथा सम्यक्त्वप्रवृत्तिके देशघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे और
उन्हींके सदयस्वरूप उपशम, अथवा अनुदयरूप उपशमसे, ओर सम्यग्मिथ्यात्वके सर्व
घाती स्पर्धकोंके उदयसे सम्यग्मिथ्यात्वभाव होता है, इसलिए उसके क्षायोपशमिकता
कहते हैं । किन्तु उनका यह कथन घटित नहीं होता है, क्योंकि, उक्त लक्षण सब्यभिचारी
है । व्यभिचार पहल प्ररूपण किया जा चुका है, (देखो पृ १९९) इसलिए यहाँ नहीं कहते हैं ।

नारकी असयतमस्यग्दृष्टि यह कौनसा भाव है ? औपशमिक भाव भी है, क्षायिक
भाव भी है और क्षायोपशमिक भाव भी है ॥ १३ ॥

मोहणीयाययस्स देसघादिलम्पणस्स उदयादो उप्पण्णसम्मादिट्ठिभाओ सओरसमिओ । वेदगसम्मत्तफहयाण खयसण्णा, सम्मत्तपडिअघणसत्तीए तत्थाभाओ । मिच्छत्त-सम्मा-मिच्छत्ताणमुदयाभाओ उरसमो । तेहि दोहि उप्पण्णत्तादो सम्माडिट्ठिभाओ सइओव-समिओ । सइओ भाओ किण्णोअलम्भे ? ण, विट्ठियादिसु पुट्ठीसु सइयमम्मादिट्ठीण-मुप्पत्तीए अभाओ ।

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो ॥ १८ ॥

सम्मादिट्ठित्त दुभाअसण्णिट्ठ मोच्चा अमंजदभाओरगमत्थ पुच्छिउठसिस्ससदेह-

विशेषार्थ—गति, जाति जादि पिंड प्रकृतियोंमेंसे जिस किन्ही विवक्षित एक प्रकृतिके उदय आने पर अनुदय प्राप्त शेष प्रकृतियोंका जो उन्ही प्रकृतिमें सङ्गमण होकर उदय जाता है, उन्हे स्तिपुक्कसक्रमण कहते हैं। जैसे—एकेन्द्रिय जीवोंके उदय प्राप्त एकेन्द्रिय जातिनामकर्ममें अनुदय प्राप्त हीन्द्रिय जाति आदिका सक्रमण होकर उदयमें आता। गति नामकर्म भी पिंड प्रकृति है। उसके चारों भेदोंमेंसे किसी एकके उदय होने पर अनुदय प्राप्त शेष तीनों गतियोंका स्तिपुक्कसक्रमणके द्वारा सक्रमण होकर विपाक होता है। प्रकृतम यही गति देवगतिको लक्ष्यमें रखकर कही गई है कि देवगति नामकर्मके उदयकालमें शेष तीनों गतियोंका स्तिपुक्कसक्रमणके द्वारा उदय पाया जाता है।

दर्शनमोहनीयकर्मकी अवयवस्वरूप ओर देशघाती लक्षणवाली वेदकसम्यक्त्व प्रकृतिके उदयमें उत्पन्न होनेवाला सम्यग्दृष्टिभाव क्षायोपशमिक कहलाता है। वेदकसम्यक्त्वप्रकृतिके स्पर्धकोंकी क्षय सज्ञा है, क्योंकि, उसमें सम्यग्दर्शनके प्रतिघन्धनकी शक्तिका अभाव है। मिथ्यात्व ओर सम्यगिमथ्यात्व, इन दोनों प्रकृतियोंके उदयाभावको उपशम कहते हैं। इस प्रकार उपर्युक्त क्षय ओर उपशम, इन दोनोंके द्वारा उत्पन्न होनेसे सम्यग्दृष्टिभाव क्षायोपशमिक कहलाता है।

शका—यहा क्षायिक भाव क्यों नहीं पाया जाता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, द्वितीयादि पृथिवियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवाकी उत्पत्तिका अभाव है।

किन्तु उक्त नारकी असंयतसम्यग्दृष्टियोंका असयतत्व औदयिक भावसे है ॥ १८ ॥

द्वितीयादि पृथिवियोंके सम्यग्दृष्टिको आपशमिक और क्षायोपशमिक, इन दो भावोंसे सयुक्त सुन कर वहा असयतभावके परिशानार्थ अत्र करनेवाले शिष्यके

ममिओ वा भावो, सजमघादीण कम्मणमुदएण अमजदो त्ति इच्छेदेहि णिरयोत्ता
निसेत्ताभावा ।

विदियाए जाव सत्तमीए पुढवीए णेरइएसु मिच्छाडिट्ठि सासण
सग्गादिट्ठि सम्मामिच्छाडिट्ठिणमोघ' ॥ १६ ॥

सुगममे' ।

असजदसग्गादिट्ठि त्ति को भावो, उवसमिओ वा सओव
समिओ वा' भावो' ॥ १७ ॥

त जहा- दसणमोहणीयस्स उअममेण उदयाभाअलक्षणणेण जेषुप्पज्जइ उअमम
सग्गादिट्ठि तेण सा ओअममिया । अट्ठि उदयाभावो त्ति उअसमो उअच्छइ, तो देअच पि
ओअसमिय होअज्ज, तिण्ह गर्हणमुदयाभावेण उअप्पज्जमाणत्तादो? ण, तिण्ह गर्हण त्थियउअ-
सकमेण' उदयस्सुअलभा, देअगट्ठणामाए उदओअलभादो वा । वेदअमम्मत्तस्स दसण

ओपशमिअभाव भी है, क्षायिअभाव भी है वार क्षायोपशमिअभाव भी है, तथा सवम
घाती कर्मोंके उदयसे असयत है । इस प्रकार नारकसामान्यकी भावरूपणासे कोई
विशेषता नहीं है ।

द्वितीय पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक नारकोंमें मिथ्यादृष्टि, सामान्य
सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिव्यादृष्टियोंके भाव ओघके समान हैं ॥ १६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त नारकोंमें अमयत्तसम्यग्दृष्टि यह कौनसा भाव है ? औपशमिअ भाव भी
है और क्षायोपशमिअ भाव भी है ॥ १७ ॥

चूंकि, दर्शनमोहनीयके उदयाभावलक्षणवाले उपशमने द्वारा उपशमसम्यग्दृष्टि
उत्पन्न होती है, इसलिए वह औपशमिअ है ।

शुद्धा—यदि उदयाभावको भी उपशम कहते ह तो देवपना भी आपशमिअ
होगा, क्योंकि, वह शेष तीनों गतियोंके उदयाभावसे उत्पन्न होता है ?

समाधान—नहा, क्योंकि, वहापर तीनों गतियोंका स्तित्तुअसअमणके द्वारा उदय
पाया जाता है, अथवा देवगतिनामअमणका उदय पाया जाता है इसलिए देवपयायका
औपशमिअ नहीं कहा जा सअना ।

१ द्वितीयादिन्वा सत्त'या मिथ्यादृष्टिसासणसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिव्यादृष्टिनां सामायवत् । स सि १, ६

२ प्रतिपू वा' इति पाठो नास्ति ।

३ अमयत्तसम्यग्दृष्टिअपशमिअ वा क्षायोपशमिअ वा भाव । स सि १, ८

४ तिअपअण जा उदयमगवा तीए अश्रदयगयाओ । सकामिअण वयइ ज एओ विअुत्तकणे ।

मोहणीयाप्रयसम देमधादिलस्रणसम उदयादो उप्पणसम्माडिडिभाओ सओममिओ । वेदससम्मत्तफदयाणं सयसण्णा, सम्मत्तपडिअणसत्तीए तत्थाभाओ । मिच्छत्त-सम्मा-मिच्छत्ताणमुदयाभाओ उअसमो । तेहि दोहि उप्पणत्तादो सम्माडिडिभाओ सडओअ-समिओ । सडओ भाओ किण्णोअलभदे ? ण, मिदियादिसु पुढीसु सडयसम्मादिडिण-मुप्पत्तीए अभाओ ।

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो ॥ १८ ॥

सम्मादिडिच्च दुभाअसण्णिदं सोच्चा असजदभाओअगमत्थं पुच्छिदसिम्ससदेह-

त्रिओपार्थ—गति, जाति जादि पिंड प्रकृतियोंमेंसे जिस किसी विवक्षित एक प्रकृतिके उदय आने पर अनुदय प्राप्त शेष प्रकृतियोंका जो उसी प्रकृतिमें सक्रमण होकर उदय जाता है, उसे स्तिबुकसक्रमण कहते हैं। जैसे—एकेन्द्रिय जीवोंके उदय प्राप्त एकेन्द्रिय जातिनामक्रममें अनुदय प्राप्त द्वीन्द्रिय जाति आदिका सक्रमण होकर उदयमें आना। गति नामक्रम भी पिंड प्रकृति है। उसके चारो भेदोंमेंसे किसी एकके उदय होने-पर अनुदय प्राप्त शेष तीनों गतियोंका स्तिबुकसक्रमणके द्वारा सक्रमण होकर निपाक होता है। प्रकृतमें यही वात देवगतिको लक्ष्यमें रखकर कही गई है कि देवगति नाम क्रममें उदयकालमें शेष तीनों गतियोंका स्तिबुकसक्रमणके द्वारा उदय पाया जाता है।

दर्शनमोहनीयकर्मका अत्रयवस्वरूप ओर देशघाती लक्षणवाली वेदकसम्यक्त्व प्रकृतिसे उदयसे उत्पन्न होनेवाला सम्यग्दृष्टिभाओ क्षायोपशमिक कहलाता है। वेदक सम्यक्त्वप्रकृतिके स्पर्धकोंकी क्षय सन्ना है, क्योंकि, उसमें सम्यग्दर्शनके प्रतिबन्धनकी शक्तिका अभाव है। मिथ्यात्व ओर सम्यग्मिथ्यात्व, इन दोनों प्रकृतियोंके उदयाभावको उपशम कहते हैं। इस प्रकार उपयुक्त क्षय ओर उपशम, इन दोनोंके द्वारा उत्पन्न होनेसे सम्यग्दृष्टिभाव क्षायोपशमिक कहलाता है।

शंका—यहा क्षायिक भाओ क्या नहीं पाया जाता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, द्वितीयादि पृथिवियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंकी उत्पत्तिका अभाव है।

मिन्तु उक्त नारकी असंपत्तसम्यग्दृष्टियोंका अमपत्तत्व औदयिक भाओसे है ॥ १८ ॥

द्वितीयादि पृथिवियोंके सम्यग्दृष्टित्वको ओपशमिक और क्षायोपशमिक, इन दो भावोंसे सयुक्त सुन कर वहा असयत्तभावके परिश्रानार्थ प्रश्न करनेवाले शिष्यके

विणामणट्टमागदमिदं सुत्त । संजमघादिच रित्तमोहणीयकम्मोदयममुप्पणत्तादो अमंजद
भावो ओदइओ । अदीदगुणट्टाणेषु असजदभाउस्स जत्थिच एदेण सुत्तेण परविद ।

तिरिक्खगदीए तिरिक्ख-पचिदियतिरिक्ख पंचिंदियपज्जत्त पंचिं
दियतिरिक्खजोणिणीसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव सजदासंजदाण
मोघ' ॥ १९ ॥

हुदो ? मिच्छादिट्ठि त्ति ओदइओ, सासणसम्मादिट्ठि त्ति पारिणामिओ, सम्मा-
मिच्छादिट्ठि त्ति सजोउसमिओ, सम्मादिट्ठि त्ति ओउसमिओ खइओ खओउसमिओ
वा, ओदइएण भाउेण पुणो असजदो, सजदामजदो त्ति खओउसमिओ भाउो इच्छेदीहि
जोषादो चउत्तिहतिरिक्खाण भेदाभाउा । पचिदियतिरिक्खजोणिणीसु भेदपदुप्पायणइ
सुत्तासुत्त भणदि-

णवरि विसेसो, पंचिदियतिरिक्खजोणिणीसु असंजदसम्मादिट्ठि
त्ति को भावो, ओवसमिओ वा खओवसमिओ वा भावो ॥ २० ॥

सदेहको विनाश करनेके लिए यह सूत्र आया है । द्वितीयादि पृथिवीगत असयतसम्य
गृष्टि नारविर्षोका असयतभाव सयमघाती चारित्रमोहनीयकर्मके उदयसे उत्पन्न होनेके
कारण औदायिक हैं । तथा, इस सूत्रके द्वारा अर्थात् गुणस्थानोंमें असयतभावके
अस्तित्वका निरूपण किया गया है ।

तिर्यंचगतियेमें तिर्यंच, पचेन्द्रियतिर्यंच, पचेन्द्रियतिर्यंचपर्याप्त और पचेन्द्रिय
तिर्यंच योनिमतियोंमें मिथ्यादृष्टिमें लेकर सयतासयत गुणस्थान तक भाव औषत्त
समान है ॥ १९ ॥

पर्योकि, मिथ्यादृष्टि यह औदायिकभाव है, सासादनसम्यगृष्टि यह पारिणामिक
भाव है, सम्यग्मिथ्यादृष्टि यह क्षायोपशमिकभाउ है, सम्यगृष्टि यह ओपशमिक, भायिक
और क्षायोपशमिक भाउ है, तथा औदायिकभावकी ओपेक्षा यह असयत है, सयतासयत
यह क्षायोपशमिक भाउ है । इस प्रकार ओघसे चारों प्रकारके तिर्यंचोंकी भावभरूपणामें
कोई भेद नहीं है ।

अथ पचान्द्रपतिर्यंच योनिमतियोंमें भेद प्रतिपादन करनेके लिए उत्तर सूत्र
कहते हैं—

विशेष बात यह है कि पचेन्द्रियतिर्यंच योनिमतियोंमें असयतसम्यगृष्टि यह
फौनसा भाउ है ? ओपशमिक भाउ भी है और क्षायोपशमिक भाउ भी है ॥ २० ॥

१ तिर्यंगती तिरिक्खो मिथ्यादृष्टिपादिसयतासयतातानां सामायसत् । स सि १, ८

कुदो ? उरसम-वेदयसम्मादिद्वीणं चैय तत्थ संभरादो । रइओ भाओ क्किण
तत्थ संभरइ ? रइयमम्मादिद्वीणं बद्धाउआण त्थीरेदएसु उप्पत्तीए अभावा, मणुसगइ-
वदिरित्तसेसगईसु दसणमोहणीयक्खरणाए अभावादो च ।

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो ॥ २१ ॥

सुगममेदं ।

मणुसगदीए मणुस-मणुसपज्जत्त मणुसिणीसु मिच्छादिद्विप्पहुडि
जाव अजोगिकेवालि त्ति ओघं ॥ २२ ॥

तिरिहमणुससयलगुणद्वानाण ओघसयलगुणद्वानेहिंतो भेदाभावा । मणुसअपज्जत्त-
तिरिक्खअपज्जत्तमिच्छादिद्वीणं सुत्ते भाओ क्किण परुदिदो ? ण, ओघपरुवणादो चैय
तत्तभावाणमादो पुध ण परुदिदो ।

क्योंकि, पचेन्द्रियतियच योनिमतियोंमें उपशमसम्यग्दृष्टि और क्षायोपशमिक-
सम्यग्दृष्टि जीवोंका ही पाया जाना सम्भव है ।

शंका — उनमें क्षायिकभाव क्यों नहीं सम्भव है ?

समाधान — क्योंकि, उद्दायुष्क क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंकी स्त्रीवेदियोंमें उत्पत्ति
नहीं होती है, तथा मनुष्यगतिके अतिरिक्त शेष गतियोंमें दर्शनमोहनीयकर्मकी क्षपणाका
अभाव है, इसलिए पचेन्द्रियतियच योनिमतियोंमें क्षायिकभाव नहीं पाया जाता ।

किन्तु तिर्यच असयतसम्यग्दृष्टियोंका असयतत्व औदयिकभावासे है ॥ २१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

मनुष्यगतिमें मनुष्य, मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यनियोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर
अयोगिकेउली गुणस्थान तक मात्र ओघके समान है ॥ २२ ॥

क्योंकि, तीनों प्रकारके मनुष्योंसम्बन्धी समस्त गुणस्थानोंकी भावप्ररूपणामें
ओघके सकल गुणस्थानासे कोई भेद नहीं है ।

शंका — लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य और लब्ध्यपर्याप्तक तियच मिथ्यादृष्टि जीवोंके
भावोंका सूत्रमें प्ररूपण क्यों नहीं किया गया ?

समाधान — नहीं, क्योंकि, ओघसम्बन्धी भावप्ररूपणासे ही उनके भावोंका परि-
ज्ञान हो जाता है, इसलिए उनके भावोंका सूत्रमें पृथक् निरूपण नहीं किया गया ।

देवगदीए देवेसु मिच्छादिद्विष्यद्वि जाव असजदसम्मादिद्वि
ति ओघं ॥ २३ ॥

कुदो ? मिच्छादिद्विष्यद्विणमोदएण, सामणाण पारिणामिण, मम्मामिच्छादिद्विण
खओवसमिण, असजदसम्मादिद्विण ओवममिय सइय खओवसमिणहि भोवेहि जोघ
मिच्छादिद्वि सामणमम्मामिच्छादिद्वि-मम्मामिच्छादिद्वि असजदसम्मादिद्विहि साथमुअलमा ।

भवणवासिय वाणवेतर-जोदिसियदेवा देवीओ सोधम्मीसाणकएण
वासियदेवीओ च मिच्छादिद्वि सासणसम्मादिद्वि सम्मामिच्छादिद्वि
ओघं ॥ २४ ॥

कुदो ? एदमि सुत्तगुणद्वाराण सच्चपपारेण ओघादो भेदाभावा ।

असजदसम्मादिद्वि ति को भावो, उवसमिओ वा खओवसमिओ
वा भावो ॥ २५ ॥

कुदो ? तत्थ उपसम-पेदगमम्मत्ताण दोण्ह चैय सभवादो । सइओ भावो एत्थ

देवगतिम देवोमि मिच्छादिद्विसे लेकर असयतमम्यद्वि तक्र भाव ओघके
समान है ॥ २३ ॥

क्योंकि, देवमिच्छादिद्विष्यद्विओकी औदयिकभावसे, देवसासादनसम्यग्द्विष्यद्विओकी
पारिणामिणभावसे, देवसम्यग्मिच्छादिद्विष्यद्विओकी क्षायोपशमिणभावसे आर देव सम्यत
सम्यग्द्विष्यद्विओकी औपशमिक, क्षायिक तथा क्षायोपशमिण भावोंकी अपेक्षा जोघ मिच्छा
दिद्वि, सासादनसम्यग्द्वि, सम्यग्मिच्छादिद्वि ओर असयतसम्यग्द्वि जीवोंके भावोंके
साथ समानता पाई जाती है ।

भवनरामी, वानव्यन्तर और ज्योतिष्क देव एव देविया, तथा मौर्धर्म ईशान
कल्परामी देविया, इनके मिच्छादिद्वि, सामादनसम्यग्द्वि और सम्यग्मिच्छादिद्वि
ये भाव ओघके समान है ॥ २४ ॥

क्योंकि, इन सूत्रोक्त गुणस्थानोंका सर्व प्रकार ओघसे कोई भेद नहीं है ।

असयतसम्यग्द्वि उक्त देव और देवियोंके कौनसा भाव है ? औपशमिक भाव
भी है और क्षायोपशमिक भाव भी है ॥ २५ ॥

क्योंकि, उनमें उपशमसम्यक्त्व आर क्षायोपशमिणसम्यक्त्व, इन दोनोंका ही
पाया जाना सम्भव है ।

१ देवगती देवतां मिच्छादिद्विष्यद्विणमोदएण सामाणण पारिणामिण । स वि १, ८

क्रिष्ण परुषिदो ? ण, भणणासिय-णणंतेर-जोदिसिय-विदियादिछपुढिणेरइय सव्व-
विगल्लिदिय-लद्धिअपज्जत्तिथीरेदेसु सम्मादिट्ठीणमुण्णदाभाणा, मणुसगइवदिरित्तण्णगईसु
दसणमोहणीयस्म सत्तणाभाणा च ।

ओदइएण भावेण पुणो असजदो ॥ २६ ॥

सुगममेद ।

सोधम्मीसाणप्पहुडि जाव णवगेवज्जविमाणवासियदेवेसु मिच्छा-
दिट्ठिप्पहुडि जाव असजदसम्मादिट्ठि ति ओघ ॥ २७ ॥

कुदो ? एत्थतण्णगुणट्ठाणाण ओघचट्टुगुणट्ठाणेहिंते अप्पिदभावेहि भेदाभाणा ।

अणुदिसादि जाव सव्वट्ठिसिद्धिविमाणवासियदेवेसु असंजदसम्मा-
दिट्ठि ति को भावो, ओवसमिओ वा खइओ वा खओवसमिओ वा
भावो ॥ २८ ॥

शुक्रा—उक्त भवनत्रिक आदि देव और देवियोंमें क्षायिकभाव क्यों नहीं
घतलाया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, भवनत्रासी, चान-यन्तर, ज्योतिष्क देव, द्वितीयादि
छह पृथिवियोंके नास्ती, सर्व विकलेन्द्रिय, सर्व लघ्वपर्याप्तक और स्त्रीदेवियोंमें सम्य
गृष्टि जीवाकी उत्पत्ति नहीं होती है, तथा मनुष्यगतिके अतिरिक्त अन्य गतियोंमें दर्शन
मोहनीयमर्मकी क्षपणाका अभाव है, इसलिए उक्त भवनत्रिक आदि देव और देवियोंमें
क्षायिकभाव नहीं घतलाया गया ।

किन्तु उक्त असयतसम्यगृष्टि देव और देवियोंका असयतत्व औद्यिक भाषसे
है ॥ २६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

मौधर्म-ईशानकल्पसे लेकर नव त्रैयेयक पर्यंत विमानत्रासी देवोंमें मिथ्यादृष्टिसे
लेकर असयतसम्यगृष्टि गुणस्थान तक भाष ओघके ममान है ॥ २७ ॥

क्योंकि, सोधर्मादि विमानवासी चारों गुणस्थानवर्ती देवोंके ओघसम्यन्धी
चारों गुणस्थानोंकी अपेक्षा विवक्षित भाषोंके साथ कोई भेद नहीं है ।

अनुदिश आदिमे लेकर मर्यादासिद्धि तक विमानत्रासी देवोंमें असंयतसम्यगृष्टि
यह कौनमा भाष है ? औपगामिक भी है, क्षायिक भी है और क्षायोपशमिक भाष
भी है ॥ २८ ॥

लिम्हि जोगुवलभा । णो अघादिकम्मोदयजणिदो णि, सते णि अघादिकम्मोदए अजोगिम्हि
जोगाणुवलभा । ण सरीरणामकम्मोदयजणिदो णि, पोग्गलनिवाडयाण जीवपरिक्खणहउत्त
विरोहा । कम्मइयसरीर ण पोग्गलनिवाई, तदो पोग्गलाण णण रम गध फाम मठाणा
गमणादीणमणुवलभा । तदुप्पाडदो जोगो होदु चे ण, कम्मइयसरीर पि पोग्गलनिवाई
चेण, सब्बकम्माणमामयत्तादो । कम्मइओदयणिण्डुसमए चेण जोगणिणासदसणादो
कम्मइयसरीरजणिदो जोगो चे ण, अघादिकम्मोदयणिणासाणतर णिणस्सतभनियत्तस्स
पारिणामियस्स ओदइयत्तप्पसंगा । तदो मिद्ध जोगस्स पारिणामियत्त । अघरा ओदइओ
जोगो, सरीरणामकम्मोदयणिणासाणतर जोगणिणामुवलभा । ण च भनियत्तेण णिउत्तचरो,
कम्मसवधविरोहिणो तस्स कम्मजणिदत्तविरोहा । सेस सुगम ।

एव णाणमग्गणा समत्ता ।

क्योंकि, घातिकर्मोदयके नष्ट होने पर भी सयोगिकेचलीमें योगका सद्भाव पाया
जाता है । न योग अघातिकर्मोदय जनित भी है, क्योंकि, अघातिकर्मोदयके रहने पर भी
अयोगिकेचलीमें योग नहीं पाया जाता । योग शरीरनामकर्मोदय जनित भी नहीं है,
क्योंकि, पुद्गलविपाकी प्रकृतियोंके जीव परिस्पदनका कारण होनेमें विरोध है ।

शुका—कर्मणशरीर पुद्गलविपाकी नहीं है, क्योंकि, उससे पुद्गलके घण, रस,
गन्ध, स्पर्श और सस्थान आदिका आगमन आदि नहीं पाया जाता है । इसलिए योगका
कर्मणशरीरसे उत्पन्न होनेवाला मान लेना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सर्व कर्मोंका आश्रय होनेसे कर्मणशरीर भी पुद्गल
विपाकी ही है । इसका कारण यह है कि वह सर्व कर्मोंका आश्रय या आधार है ।

शुका—कर्मणशरीरके उदय विनष्ट होनेके समयमें ही योगका विनाश देखा
जाता है । इसलिए योग कर्मणशरीर जनित है, ऐसा मानना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, यदि ऐसा माना जाय तो अघातिकर्मादयके विनाश
होनेके अनन्तर ही विनष्ट होनेवाले पारिणामिक भव्यत्वभावके भी ओदयिकपनेका प्रसंग
प्राप्त होगा ।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचनसे योगके पारिणामिकपना सिद्ध हुआ । अथवा,
'योग' यह ओदयिकप्राय है, क्योंकि, शरीरनामकर्मके उदयका विनाश होनेके पश्चात्
ही योगका विनाश पाया जाता है । और, ऐसा माननेपर भव्यत्वभावके साथ व्यभिचार
भी नहीं आता है, क्योंकि, कर्मसम्बन्धके विरोधी पारिणामिकभावका कर्मसे उत्पन्न
माननेमें विरोध आता है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

इस प्रकार ध्यानमार्गणा समाप्त हुई ।

१ निष्पमोगमन्यम् । त ए २, ४४ । अन्ते मवमन्यम् । किं तत् ? कर्मणम् । इन्द्रियप्रणालिका
कम्पादीनामुपलक्ष्यपुसोप । तदभावात्प्रिणमोपेत् ।

संजमाणुवादेण संजदेसु पमत्तसंजदप्पहुडि जाव अजोगिकेवली ओघं ॥ ४९ ॥

सुगममेदं ।

सामाइयछेदोवट्ठावणसुद्धिसंजदेसु पमत्तसंजदप्पहुडि जाव अणियट्ठि ति ओघं ॥ ५० ॥

एदं पि सुगम ।

परिहारसुद्धिसंजदेसु पमत्त-अप्पमत्तसंजदा ओघं ॥ ५१ ॥

कुदो ? सओरसमियं भावं पडि निसेसाभावा । पमत्तापमत्तसंजदेसु अण्णे विभावा सति, एत्थ ते क्खिण्ण परूविदा ? ण, तेसिं पमत्तापमत्तसंजदत्ताभावा । पमत्तापमत्तमज्जदाणं भावेसु पुच्छिउदेसु ण हि सम्मत्तादिभावाण परूवणा णाओरवण्णेत्ति ।

सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदेसु सुहुमसांपराइया उवसमा खवा ओघं ॥ ५२ ॥

सयममार्गणाके अनुवादेसे संयतोंमें प्रमत्तसंयतसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक भाव ओघके समान है ॥ ४९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसंयतोंमें प्रमत्तसंयतसे लेकर अनियुक्तिकरण गुणस्थान तक भाव ओघके समान है ॥ ५० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

परिहारशुद्धिसंयतोंमें प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तमयत ये भाव ओघके समान हैं ॥ ५१ ॥

क्योंकि, क्षायोपशमिक भावके प्रति दोनोंमें कोई विशेषता नहीं है ।

शका—प्रमत्त और अप्रमत्त संयत जीवोंमें अन्य भाव भी होते हैं, यहांपर ये क्यों नहीं कहे ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ये भाव प्रमत्त और अप्रमत्त संयत होनेके कारण नहीं हैं । दूसरी बात यह है कि प्रमत्त और अप्रमत्तसंयतोंके भाव पूछनेपर सम्यक्त्व आदि भावोंकी पररूपणा करना न्याय संगत नहीं है ।

सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसंयतोंमें सूक्ष्मसाम्परायिक उपशमक और क्षपक भाव ओघके समान हैं ॥ ५२ ॥

१ सयममार्गवादेने सर्वथा संयतानां ××× सामान्यवत् । स सि १, ८

२ प्रतिपु ' णाओरवण्णेत्ति ' इति पाठ ।

उवसाममाणमुत्तमिओ भाओ, सवगाण सइओ भाओ ति उच्च होदि ।

जहाक्खादविहारसुद्धिसंजदेसु चट्टुट्टाणी ओघं ॥ ५३ ॥
सुगममेदं ।

सजदासजदा ओघं ॥ ५४ ॥

एद पि सुगम ।

असंजदेसु मिच्छादिट्टिप्पहुडि जाव असजदसम्मादिट्टि ति
ओघं ॥ ५५ ॥

सुगममेदं, पुच्चं परुदित्तादो ।

एउ सजममग्गणा समत्ता ।

दसणाणुवादेण चक्खुदसाणि-अचक्खुदसणीसु मिच्छादिट्टिप्पहुडि
जाव सीणकसायवीदरागच्छुदुमत्था ति ओघं ॥ ५६ ॥

उपशामकोंके ओपशमिक भाव और क्षपणोंके क्षायिक भाव होता है, यह ब्रह्म
सूत्रद्वारा कहा गया है ।

यथाऽयातनिहारशुद्धिसयतोमि उपशान्तरूपाय आदि चारों गुणस्थानतीं भाव
ओघके समान हैं ॥ ५३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सयतासंयत भाव ओघके समान है ॥ ५४ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

असयतोमि मिथ्यादृष्टिसे लेकर असयतमम्यग्दृष्टि गुणस्थान तरु भाव ओघके
समान है ॥ ५५ ॥

यह सूत्र सुगम है, क्योंकि, पहले प्ररूपण किया जा चुका है ।

इस प्रकार सयममार्गणा समाप्त हुई ।

दर्शनमार्गणाके अनुवादसे चक्षुदर्शनी और अचक्षुदर्शनियोंमें मिथ्यादृष्टिसे लक्ष्मी
धीणरूपायतीतरागच्छमस्य गुणस्थान तरु भाव ओघके समान हैं ॥ ५६ ॥

१ ×× सयतासयतानां ×× सामायवत् । स ति १, ८

२ ××× असयतानां च सामायवत् । स ति १, ८

३ दर्शनानुवादेन चक्षुदर्शनाचक्षुदर्शनावधिदधनकेअदधनिनां सामायवत् । स ति १, ८

कुदो ? मिच्छादिट्टिप्पहुडि रीणकमायपज्जंतसच्चगुणट्टाणाणं चक्खु-अचक्खु-
दसणनिरहियाणमणुअलभा ।

ओहिदंसणी ओहिणाणिभंगो ॥ ५७ ॥

केवलदंसणी केवलणाणिभंगो ॥ ५८ ॥

एदाणि दो रि 'सुत्ताणि सुगमाणि ।

एअ दसणमग्गणा समत्ता ।

लेस्साणुवादेण किण्हलेस्सिय-णीललेस्सिय काउलेस्सिएसु चदु-
ट्टाणी ओघं ॥ ५९ ॥

चदुण्ह ठाणाण समाहारो चदुट्टाणी। केण समाहारो? एगलेस्साए। सेस सुगम।

तेउलेस्सिय-पम्मलेस्सिएसु मिच्छादिट्टिप्पहुडि जाव अप्पमत्त-
संजदा त्ति ओघं ॥ ६० ॥

एदं सुगम ।

क्योंकि, मिध्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकपाय पर्यंत कोई गुणस्थान चक्षुदर्शन और
अचक्षुदर्शनवाले जीवोंसे रहित नहीं पाया जाता है ।

अधिदर्शनी जीवोंके भाव अधिज्ञानियोंके भावोंके समान हैं ॥ ५७ ॥

केवलदर्शनी जीवोंके भाव केवलज्ञानियोंके भावोंके समान हैं ॥ ५८ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

इस प्रकार दर्शनमार्गणा समाप्त हुई ।

लेश्यामार्गणाके अनुवादसे कृष्णलेश्या, नीललेश्या और कापोतलेश्या वालोंमें
आदिके चार गुणस्थानरतीं भाव ओघके समान हैं ॥ ५९ ॥

चार स्थानोंके समाहारको चतु स्थानी कहते हैं ।

शका—चारों गुणस्थानोंका समाहार किम् अपेक्षासे है ?

समाधान—एक लेश्याकी अपेक्षासे है, अर्थात् आदिके चारों गुणस्थानोंमें एकसी
लेश्या पाई जाती है ।

शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

तेजोलेश्या और पद्मलेश्या वालोंमें मिध्यादृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसंयत गुणस्थान
तक भाव ओघके समान हैं ॥ ६० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सुककलेसिएसु मिच्छादिट्टिप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि ति
ओघं ॥ ६१ ॥

सुगममेद ।

एव लेस्तामगणा समाप्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धिएसु मिच्छादिट्टिप्पहुडि जाव अजोगि
केवलि ति ओघं ॥ ६२ ॥

कुदो ? एत्थतणगुणट्ठाणाण ओघगुणट्ठाणेहिंतो भवियत्त पडि भेदाभावा ।

अभवसिद्धिय ति को भावो, पारिणामिओ भावो ॥ ६३ ॥

कुदो ? कम्माणमुदएण उरसमेण सएण सओरसमेण वा अभवियत्ताणुप्पत्तीदो ।
भवियत्तस्म वि पारिणामिओ चैय भावा, कम्माणमुदय उरमम सय सओरसमेहि भविय
त्ताणुप्पत्तीदो । गुणट्ठाणस्म भावमभणिय मग्गणट्ठाणभावा परूतस्स कोमिप्पाओ ?

शुद्धलेस्यावालाम मिथ्यादृष्टिसे लेकर सयोगिकेवली गुणस्थान तरु भाव ओघके
समान हे ॥ ६१ ॥

यह सत्र सुगम हे ।

इस प्रकार लेस्यामागणा समाप्त हुई ।

भन्यमार्गणाके अनुवादसे भव्यसिद्धिकोमि मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगिकेवली
गुणस्थान तरु भाव ओघके समान हैं ॥ ६२ ॥

क्योंकि, भव्यमागणामग्रधो गुणस्थानोंका ओघ गुणस्थानोंसे भव्यत्व नामक
पारिणामिकभावके प्रति कोई भेद नहीं है ।

अभव्यसिद्धिक यह कौनसा भाव है ? पारिणामिक भाव है ॥ ६३ ॥

क्योंकि, कर्मोंके उदयसे, उपशमसे, क्षयसे, अथवा क्षयोपशमसे अभव्यत्व भाव
उत्पन्न नहीं होता है । इसी प्रकार भयत्व भी पारिणामिक भाव ही है, क्योंकि, कर्मोंके
उदय, उपशम, क्षय और क्षयोपशमसे भयत्व भाव उत्पन्न नहीं होता ।

शुद्धी— यहापर गुणस्थानके भावको न कह कर मार्गणास्थानत्वमन्धी भावको
प्ररूपण करते हुए आचार्यका क्या अभिप्राय है ?

१ मय्याववादेण भयानां मिथ्यादृष्टिभावयोगनेवत्यन्तानां सामायकत् । स ति १, ८

२ अभयानां पारिणामिको भाव । स ति १, ८

गुणद्वाराणभारो अउत्तो वि णाणिज्जओ । अभनियत्त पुण उउदेममोउदे, पुव्वमपरु-
पिठमरुत्तादो । तेण मग्गणाभारो उत्तो त्ति ।

एउ भनियम्मग्गणा समत्ता ।

सम्मत्ताणुवादेण सम्मादिष्टीसु असजदसम्मादिष्टिप्पहुडि जाव
अजोगिकेवलि त्ति ओघं ॥ ६४ ॥

सुगममेद ।

खइयसम्मादिष्टीसु असंजदसम्मादिष्टि त्ति को भावो, खइओ
भावो ॥ ६५ ॥

कुदो ? दसणमोहणीयस्म णिम्मूलमएणुप्पणसम्मत्तादो ।

खइयं सम्मत्तं ॥ ६६ ॥

खइयसम्मादिष्टीसु सम्मत्त खइय चेउ होठि त्ति अणुत्तसिद्धीदो णेदं सुत्तमाढे-
दव्व ? ण एउ दोसो । कुदो ? ण ताउ खइयसम्मादिष्टी सण्णा खइयस्म सम्मत्तस्म

समाधान—गुणस्थानसम्बन्धी भाव तो बिना कहे भी जाना जाता है । किन्तु
अभिव्यक्त (फोनसा भाव हे यह) उपदेशनी अपेक्षा रखता है, क्योंकि, उसके स्वरूपका
पहले प्ररूपण नहीं किया गया है । इसलिए यहापर (गुणस्थानका भाव न कह कर)
मार्गणासम्बन्धी भाव कहा है ।

इस प्रकार भव्यमार्गणा समाप्त हुई ।

सम्यक्त्वमार्गणाके अनुवादमे सम्यग्दृष्टियोंमें अमयतमस्यग्दृष्टिसे लेकर अयोगि-
केरली गुणस्थान तरु भाउ ओघके समान है ॥ ६४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें असयतमस्यग्दृष्टि यह कौनमा भाउ है ? क्षायिक भाउ
है ॥ ६५ ॥

क्योंकि, दर्शनमोहनीयकर्मके निर्मूल क्षयसे क्षायिकसम्यक्त्व उत्पन्न होता है ।

उक्त जीवोंके क्षायिक सम्यक्त्व होता है ॥ ६६ ॥

शुद्धा—क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें सम्यग्दर्शन क्षायिक ही होता है, यह बात अनुक्त-
सिद्ध है, इसलिए इस सूत्रका आरम्भ नहीं करना चाहिए ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि यह सज्ञा क्षायिक

१ सम्यक्त्वाववादेन क्षायिकसम्यग्दृष्टिषु असयतसम्यग्दृष्टे क्षायिकी भाव । स ति १, ८

२ क्षायिक सम्यक्त्वम् । स ति १, ८

अतिथत्त गमयदि, तण भक्खरादिणामस्स अणणुअट्टस्स पि उअलभा । ण च अण्ण िंवि सइयसम्मत्तस्स अतिथत्तमिह चिण्हमत्थि । तदो सइयसम्मादिट्ठिस्स सइय चेअ सम्मत होदि त्ति जाणादिद । अअर च ण सव्वे सिस्सा उप्पण्णा चेअ, िंत्तु अउप्पण्णा पि अत्थि । तेहि सइयसम्मादिट्ठीण िंत्तुअसमसम्मत्त, िं सइयमम्मत्त, िं वेदगसम्मत्त होदि त्ति पुच्छेदे एदस्स मुत्तस्स अअरारो जादो, सइयसम्मादिट्ठीण सइय चेअ सम्मत होदि, ण सेसदोसम्मत्ताणि त्ति जाणाअणट्ठ अणुअअरणअसवयाण सइयभाअण सइय चरित्तस्सेअ दसणमोहसवयाण पि सइयभाअण तस्सअधेण वेदयसम्मत्तोदए सते पि सइयगम्मत्तस्स अतिथत्तप्पसगे तप्पडिसेहट्ट वा ।

ओदइएण भावेण पुणो असजदो' ॥ ६७ ॥

सुगममेद ।

सजदासजद पमत्त-अप्पमत्तसजदा त्ति को भावो, खओवसमिओ भावो' ॥ ६८ ॥

सम्यक्त्वके अस्तित्वका ज्ञान नहीं कराती है। इसका कारण यह है लोकमें तपन, भास्कर आदि अनवय (अर्थशून्य या रूढ) नाम भी पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य कोई चिह्न क्षायिकसम्यक्त्वके अस्तित्वका है नहीं। इसलिए क्षायिकसम्यग्दृष्टिके क्षायिक सम्यक्त्व ही होता है, यह बात इस सूत्रसे ज्ञापित की गई है। दूसरी बात यह भी है कि सभी शिष्य व्युत्पन्न नहीं होते, किंतु कुछ अयुत्पन्न भी होते हैं। उनके द्वारा क्षायिक सम्यग्दृष्टियोंके क्या उपशमसम्यक्त्व है, किंवा क्षायिकसम्यक्त्व है, किंवा वेदकसम्यक्त्व होता है, ऐसा पूछने पर क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके क्षायिक ही सम्यक्त्व होता है, शेष दो सम्यक्त्व नहीं होते हैं, इस बातके जतलानेके लिए, अथवा क्षायिकभाववाले अपूर्व करण गुणस्थानवर्ती क्षपकोंके क्षायिक चारित्रिके समान क्षायिकभाववाले भी जीवोंके दर्शनमोहनीयका क्षपण करते हुए उसके सम्यग्धसे वेदकसम्यक्त्वप्रकृतिके उदय रहने पर भी क्षायिकसम्यक्त्वके अस्तित्वका प्रसंग प्राप्त होनेपर उसका प्रतिषेध करनेके लिए इस सूत्रका अवतार हुआ है।

किन्तु क्षायिकसम्यग्दृष्टिका असयतत्व औदयिक भावसे है ॥ ६७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टि सयतासयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत यह कौनसा भाव है ? क्षायोपशमिक भाव है ॥ ६८ ॥

१ अर्धपत्रत्वमीदयिकेन भावेन । स सि १, ८

२ सयतासयतप्रमत्ताप्रमत्तसयतानां क्षायोपशमिको भाव । स सि १, ८

बुद्धो ? चारित्तापरणकर्मोदए संते वि जीपसहानचारित्तेगडेसस्त संजमासजम-
पमत-अप्पमत्तमंजमस्त आत्रिग्मानस्सुलभा ।

खइयं सम्मत्तं ॥ ६९ ॥

सुगममेदं ।

चटुण्हमुवसमा ति को भावो, ओवसमिओ भावो ॥ ७० ॥

मोहणीयस्सुममेणुप्पण्णचरित्तत्तादो, मोहोपसमणहेदुचारित्तममण्णिटत्तादो य ।

खइयं सम्मत्तं ॥ ७१ ॥

पारद्वदसणमोहणीयकसणो रुदरुणिज्जो वा उपसममेदि ण चहदि ति जाणा-
वण्हमेदं सुत्त भण्डं । सेम सुगम ।

चटुण्हं खवा सजोगिकेवली अजोगिकेवलि ति को भावो,
खइओ भावो ॥ ७२ ॥

क्योंकि, चारित्र्यापरणकर्मके उदय होने पर भी जीवके स्वभावभूत चारित्र्यके एक देशरूप मयमात्स्यम, प्रमत्तसयम और अप्रमत्तसयमका (उक्त जीवोंके क्रमशः) आविर्भाव पाया जाता है ।

उक्त जीवोंके सम्पग्दर्शन क्षायिक ही होता है ॥ ६९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अपूर्वकरण आदि चार गुणस्थानोंके क्षायिकसम्पग्दष्टि उपशामक यह कौनसा भाव है ? औपशमिक भाव है ॥ ७० ॥

क्योंकि, उपशान्तकपायके मोहनीयकर्मके उपशामसे उत्पन्न हुआ चारित्र्य पाया जानेसे और शेष तीन उपशामकोंके मोहोपशामके कारणभूत चारित्र्यमे समन्वित होनेसे औपशमिकभाव पाया जाता है ।

क्षायिकसम्पग्दष्टि चारों उपशामकोंके सम्पग्दर्शन क्षायिक ही होता है ॥ ७१ ॥

दर्शनमोहनीयकर्मके क्षपणका प्रारम्भ करनेवाला जीव, अथवा कृतकृत्यवेदक सम्पग्दष्टि जीव, उपशामक्षेत्रणीपर नहीं चढ़ता है, इन बातका ज्ञान करानेके लिए यह सूत्र कहा गया है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

क्षायिकसम्पग्दष्टि चारों गुणस्थानोंके क्षपक, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली यह कौनसा भाव है ? क्षायिक भाव है ॥ ७२ ॥

१ क्षायिक सम्पक्त्वम् । उ ति १, ८

२ चटुर्णावपण्णकानामौपशमिको भाव । उ ति १, ८

३ क्षायिक सम्पक्त्वम् । उ ति १, ८

४ क्षेत्रणी मानावक्त् । उ ति १, ८

कुदो ? मोहणीयस्स खवणेहेदुअपुव्वसण्णिदचारित्तसमण्णिदत्तादो मोहक्खएणु
प्पण्णचारित्तादो घादिक्खएणुप्पण्णणक्केरललद्धीहिंतो ।

खइयं सम्मत्तं ॥ ७३ ॥

सुगममेद ।

वेदयसम्मादिट्ठीसु असंजदसम्मादिट्ठि ति को भावो, खओव
समिओ भावो ॥ ७४ ॥

सुगममेदं ।

खओवसमियं सम्मत्तं ॥ ७५ ॥

ओघम्मि असजदसम्मादिट्ठिस्स तिण्णि भावा सामण्णेण परुविदा, एद सम्मत
मोवसमिय खइय खओवसमियं वेत्ति ण परुविद । सपहि सम्मतमग्गणाए एद सम्मत-
मोवसमिय खइय खओवसमिय वेत्ति एदेहि सुत्तेहि जाणाविद । सेस सुगम ।

क्योंकि, अपूर्वकरण आदि तीन क्षपकोंका मोहनीयकर्मके क्षपणके कारणभूत
अपूर्वसद्भावले चारित्रसे समचित होनेके कारण, क्षीणकषायवीतरागछद्मस्थके मोहक्षयसे
उत्पन्न हुआ चारित्र होनेके कारण, तथा सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीके घातिया
कर्मोंका क्षय हो जानेसे उत्पन्न नव केवललब्धियोंकी अपेक्षा क्षायिक भाव पाया जाता है।

चारों क्षपक, सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीके सम्यग्दर्शन क्षायिक ही होता
है ॥ ७३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वेदकसम्पग्दष्टियोंमें असयतसम्यग्दष्टि यह कौनमा भाव है ? क्षायोपशमिक
भाव है ॥ ७४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वेदकसम्पग्दष्टि जीवोंके सम्यग्दर्शन क्षायोपशमिक होता है ॥ ७५ ॥

ओघप्ररूपणामें असयतसम्यग्दष्टि जीवके सामान्यसे तीन भाव कहे हैं, किंतु
उनका यह सम्यग्दर्शन औपशमिक है, या क्षायिक है, किंवा क्षायोपशमिक है, यह प्ररूपण
नहीं किया है। अथ सम्यक्त्वमार्गणामें असयतसम्यग्दष्टि जीवोंका यह सम्यग्दर्शन
औपशमिकसम्यक्त्वियोंके औपशमिक होता है, क्षायिकसम्यग्दष्टियोंके क्षायिक होता है
और वेदकसम्यग्दष्टियोंके क्षायोपशमिक होता है, यह बात इन सूत्रोंसे सूचित की गई
है। शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

१ क्षायोपशमिकसम्यग्दष्टियु असयतसम्यग्दष्टे क्षायोपशमिको भाव । स सि १, ८

२ क्षायोपशमिकसम्यक्त्वम् । स सि १, ८

औदङ्गण भावेण पुणो असंजदो' ॥ ७६ ॥

अवगयत्यमेदं ।

संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदा त्ति को भावो, खओवसमिओ भावो' ॥ ७७ ॥

णादङ्गमेय ।

खओवसमियं सम्मत्तं' ॥ ७८ ॥

कुदो ? दसणमोहोदए सते त्ति जीउगुणीभूदसदहणस्स उप्पत्तीए उउलंभा ।

उवसमसम्मादिट्ठीसु असंजदसम्मादिट्ठि त्ति को भावो, उव-समिओ भावो' ॥ ७९ ॥

कुदो ? दसणमोहुउसमेणुप्पणसम्मत्तादो ।

उवसामियं सम्मत्तं' ॥ ८० ॥

किन्तु वेदकसम्यग्दृष्टिका असंयतत्व औदयिक भावसे है ॥ ७६ ॥

इस सूत्रका अर्थ जाना हुआ है ।

वेदकसम्यग्दृष्टि सयतासयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसंयत यह कौनसा भाव है ? क्षायोपशमिकमान है ॥ ७७ ॥

इस सूत्रका अर्थ ज्ञात है ।

उक्त जीवोंके सम्यग्दर्शन क्षायोपशमिक होता है ॥ ७८ ॥

क्योंकि, दर्शनमोहनीयके (अगभूत सम्यक्त्वप्रवृत्तिके) उदय रहने पर भी जीवके गुणस्वरूप श्रद्धानकी उत्पत्ति पाई जाती है ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि यह कौनसा भाव है ? औपशमिक भाव है ॥ ७९ ॥

क्योंकि, उपशमसम्यग्दृष्टियोंका सम्यक्त्व दर्शनमोहनीयकर्मके उपशमसे उत्पन्न हुआ है ।

उक्त जीवोंके सम्यग्दर्शन औपशमिक होता है ॥ ८० ॥

१ असयत पुनरीदधिकेन भावेन । स ति १, ८

२ सयतासयतप्रमत्ताप्रमत्तसयतानां क्षायोपशमिको भाव । स ति १, ८,

३ क्षायोपशमिक सम्यक्त्वम् । स ति १, ८

४ औपशमिकसम्यग्दृष्टिषु असयतसम्यग्दृष्टिषु औपशमिको भाव । स ति १, ८

५ औपशमिक सम्यक्त्वम् । स ति १, ८

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो' ॥ ८१ ॥

दो मि मुत्ताणि सुगमाणि ।

संजदासंजद पमत्त-अप्पमत्तसंजदा त्ति को भावो, सओवसमिओ भावो' ॥ ८२ ॥

सुगममेद ।

उवसमिय सम्मत्त ॥ ८३ ॥

एद पि सुगम ।

चदुण्हमुवसमा त्ति को भावो, उवसमिओ भावो' ॥ ८४ ॥

उवसमियं सम्मत्त ॥ ८५ ॥

दो मि मुत्ताणि सुगमाणि ।

सासणसम्मादिट्ठी ओघ ॥ ८६ ॥

किन्तु उपशमसम्यग्दर्शी असयतमम्यग्दर्शि जीवका असयतत्त औदयिक भावसे है ॥ ८१ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम ह ।

उपशमसम्यग्दर्शि सयतासयत, प्रमत्तसयत और अग्रमत्तमयत यह कौनसा भाव है ? धायोपशमिन् भाव है ॥ ८२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवके सम्यग्दर्शन औपशमिक होता है ॥ ८३ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

अपूर्णकरण जाति चार गुणस्थानोंके उपशमसम्यग्दर्शि उपशामक यह कौनसा भाव है ? औपशमिक भाव है ॥ ८४ ॥

उक्त जीवके सम्यग्दर्शन औपशमिक होता है ॥ ८५ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम ह ।

साप्तादनसम्यग्दर्शि भाव ओघके समान है ॥ ८६ ॥

१ असयत पुनरीदयिन्नेन भावेन । स मि १, ८

२ सयतामयतप्रमत्ताग्रमत्तमयताना धायोपशमिन्ने भाव । स मि १, ८

३ औपशमिक सम्यग्दर्शम् । स मि १, ८

४ चतुष्पादुपशमकानामापशमिन्ने भाव । स मि १, ८

औपशमिक सम्यक्-वत् । स मि १, ८ ६ साप्तादनसम्यग्दर्शे पारिणामिन्ने भाव । स मि १, ८

सम्मामिच्छादिट्ठी ओघं ॥ ८७ ॥

मिच्छादिट्ठी ओघं ॥ ८८ ॥

तिण्णि नि सुत्ताणि अउगयत्थाणि ।

एउ सम्मत्तमग्गणा समत्ता ।

सण्णियाणुवादेण सण्णीसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव खीणकसाय-
वीदरागछदुमत्था ति ओघ ॥ ८९ ॥

सुगममेद ।

असण्णि ति को भावो, ओदइओ भावो ॥ ९० ॥

कुदो ? गोईदियाउरणस्म सच्चघादिफदयाणमुदएण असण्णिलुप्पत्तीदो । असण्णि-
गुणट्ठाणभावो ऋण्ण परूविदो ? ण, उउदेसमतरेण तदउगमादो ।

एउ सण्णिमग्गणा समत्ता ।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि भाउ ओघके समान है ॥ ८७ ॥

मिथ्यादृष्टि भाउ ओघके समान है ॥ ८८ ॥

इन तीनों ही सूत्रोंका अर्थ ज्ञात हे ।

इस प्रकार सम्यक्त्वमार्गणा समाप्त हुई ।

सत्त्वमार्गणाके अनुवादसे संज्ञियोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकपायरीतराग-
छन्नस्थ तरु भाउ ओघके समान है ॥ ८९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

असत्त्वी यह कौनसा भाउ है ? औदयिक भाव है ॥ ९० ॥

क्योंकि, नोइन्द्रियावरणकर्मके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयसे असत्त्व भाव
उत्पन्न होता हे ।

शुक्रा—यहापर असत्त्वी जीवोंके गुणस्थानसम्बन्धी भावको क्यों नहीं बतलाया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपदेशके बिना ही उसका ज्ञान हो जाता है ।

इस प्रकार सत्त्वमार्गणा समाप्त हुई ।

१ सम्यग्मिथ्यादृष्टे क्षायोपशमितो भाव । स सि १, ८

२ मिथ्यादृष्टीदयिको भाव । स सि १, ८ ३ सत्त्वानुवादेन सत्त्वितो सामान्यवत् । स सि १, ८

४ अशक्तितानां औदयिको भाव । स सि १, ८ ५ तदुभयव्यपदेशरहितानां सामान्यवत् । स सि १, ८



सिरि-भगवत-पुष्पदत-भूदबलि-पणीदो

छक्खंडागमो

सिरि-वीरसेणाइरिय-विरइय घवला-टीका-समणिदो

तस्स

पढमखडे जीवट्टाणे

अप्पावहुगाणुगमो

केरलणाणुओइयलोयालोए जिणे णमसित्ता ।

अप्पवहुआणिओअ जहोअएस परूमेओ ॥

अप्पावहुआणुगमेणु दुविहो णिदेसो, ओघेण आदेसेण यं ॥१॥

तस्य णाम-ट्टण्णा-दब्ब-भाअभेएण अप्पावहुअ चउत्तिहं । अप्पावहुअसदो णामप्पा-
वहुअं । एदम्हादो एदस्स बहुत्तमप्पत्त वा एदमिट्ठि एयत्तज्झारोणेण इविद ठणप्पा-
वहुअं । दब्बप्पावहुअ दुमिहं आगम-णोआगमभेएण । अप्पावहुअपाहुडजाणओ अणुवजुत्तो

केवलज्ञानके द्वारा लोक और अलोकको प्रकाशित करनेवाले श्री जिनेन्द्र देवोंको
नमस्कार करके जिस प्रकारसे उपदेश प्राप्त हुआ है, उसके अनुसार अल्पबहुत्व अनुयोग
द्वाराका प्ररूपण करते ह ॥

अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है, ओघनिर्देश और आदेश-
निर्देश ॥ १ ॥

नाम, स्थापना द्रव्य और भावके भेदसे अल्पबहुत्व चार प्रकारका है । उनमेंसे
अल्पबहुत्व शब्द नामअल्पबहुत्व है । यह इससे गृह्यत है, अथवा यह इससे अल्प है,
इस प्रकार एकत्वके अध्यारोपसे स्थापना करना स्थापनाअल्पबहुत्व है । द्रव्यअल्प-
बहुत्व आगम और नो-आगमके भेदसे दो प्रकारका है । जो अल्पबहुत्व विषयके प्राभृतको
जाननेवाला है, परंतु वर्तमानमें उसके उपयोगसे रहित है उसे आगमद्रव्य अल्पबहुत्व

आगमद्रव्यरूपारुह । गोआगमद्रव्यरूपारुह तिप्रिह जाणुअसरीर भनिय-तच्चदिरिचमेण ।
 तत्थ जाणुअसरीर भनिय वट्टमाण समुज्झादमिदि तिप्रिहमनि अत्रगपत्थ । भनिय भविम्म
 काले अप्पारुहपाहुडजाणओ । तच्चदिरिचअप्पारुहअ तिप्रिह मच्चित्तमच्चित्त मिम्ममिदि ।
 जीवद्रव्यरूपारुहअ सच्चित्त । मेसटच्चप्पारुहअमच्चित्त । टोण्ह पि अप्पारुहअ मिसम ।
 भावप्पारुहअ दुप्रिह आगम-गोआगमभेएण । अप्पारुहअपाहुडजाणओ उत्रजुत्तो जगम
 भावप्पारुहअ । णाण ढमणाणुभाग-जोगादिप्रिमय गोआगमभावप्पारुहअ ।

एतेमु अप्पारुहएसु ऱेण पयद ? सच्चित्तद्रव्यरूपारुहएण पयद । ऱिमप्पारुहअ ।
 सखाधम्मो, एदम्हादो एद तिगुण चदुगुणमिदि तुद्धिगंज्झो । कम्मप्पारुहअं ? जीव
 दव्वस्स, धम्मिदिरिचसखाधम्माणुवलभा । ऱेणप्पारुहअ ? पारिणामिएण भांण ।

कहते हैं। नोआगमद्रव्यरूपारुहत्व प्रायकशरीर, भावी और तद्ध्यतिरिक्ते भेदसे तीन प्रकारका है। उनमेंसे भावी, वर्तमान और अतीत, इन तीनों ही प्रकारके प्रायकशरीरका अर्थ जाना जा चुका है। जो भविष्यकालमें अल्पवहुत्व प्राप्तका जाननेवाला होगा, उस भावी नोआगमद्रव्यरूपारुहत्वनिक्षेप कहते हैं। तद्ध्यतिरिक्त अल्पवहुत्व तीन प्रकारका है—सच्चित्त, अच्चित्त और मिथ्र। जीवद्रव्यरूपारुहत्व अल्पवहुत्व सच्चित्त है, शेष द्वय विषयक अल्पवहुत्व अच्चित्त है, और इन दोनोंका अल्पवहुत्व मिथ्र है। आगम और नोआगमके भेदसे भाव अल्पवहुत्व दो प्रकारका है। जो अल्पवहुत्व प्राप्तका जानने वाला है और वर्तमानमें उसके उपयोगसे युक्त है उसे आगमभाव अल्पवहुत्व कहते हैं। आत्माके ज्ञान और दर्शनको, तथा पुद्गलकर्मोंके अनुभाग और योगादिको विषय करने वाला नोआगमभाव अल्पवहुत्व है।

शुक्रा—इन अल्पवहुत्वोंमेंसे प्रकृतमें किससे प्रयोजन है ?

समाधान—प्रकृतमें सच्चित्त द्रव्यके अल्पवहुत्वसे प्रयोजन है।

(अथ निर्देश, स्वामित्वादि प्रसिद्ध छह अनुयोगद्वारोंसे अल्पवहुत्वका निर्णय किया जाता है।)

शुक्रा—अल्पवहुत्व क्या है ?

समाधान—यह उससे तिगुणा है, अथवा चतुर्गुणा है, इस प्रकार बुद्धिके द्वारा ग्रहण करने योग्य सत्त्वाके धर्मको अल्पवहुत्व कहते हैं।

शुक्रा—अल्पवहुत्व किसके होता है, अर्थात् अल्पवहुत्वका स्वामी कौन है ?

समाधान—जीवद्रव्यके अल्पवहुत्व होता है, अर्थात् जीवद्रव्य उसका स्वामी है, क्योंकि, धर्मको डोड़कर सत्त्वाधम पृथक् नहीं पाया जाता।

शुक्रा—अल्पवहुत्व किससे होता है, अर्थात् उसका साधन क्या है ?

समाधान—अल्पवहुत्व पारिणामिक भावसे होता है।

कृत्यप्पाबहुअं ? जीवदव्वे । केनचिरमप्पाबहुअं ? अणादि-अपज्जनसिद । कुदो ? सच्चैसि
गुणट्ठाणाणमेदेणेन पमाणेण सन्नकालमनट्ठाणादो । कडनिहमप्पाबहुअं ? मग्गणभेयभिण्ण-
गुणट्ठाणमेत्त ।

अप्प च ऋहुअ च अप्पाबहुआणि । तेसिमणुगमो अप्पाबहुआणुगमो । तेण
अप्पाबहुआणुगमेण णिदेसो दुनिहो होदि ओवो जांमो त्ति । सगहिदनयणकलापो
द्वन्द्वियणिनघणो ओवो णाम । असगहिदनयणकलापो पुच्चिहत्थानयणणिनघो पज्ज-
द्वियणिनघणो आदेसो णाम ।

ओधेण तिसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवां ॥ २ ॥

तिसु अद्वासु त्ति यण चत्तारि अद्वाओ पडिसेहट्ट । उवसमा त्ति वयण सनया-
दिपडिसेहफल । पवेसणेणत्ति यण सचयपडिसेहफल । तुल्ला त्ति वयणेण विसरिसत्त-
पडिमेहो ऋदो । आदिमेषु तिसु गुणट्ठाणेषु उवसामया पवेसणेण तुल्ला सरिमा । कुदो ?

शंका—अल्पपरुत्व किसमें होता है, अर्थात् उसका अधिकरण क्या है ?

समाधान—जीवद्रव्यमें, अर्थात् जीवद्रव्य अल्पपरुत्वका अधिकरण है ।

शंका—अल्पपरुत्व कितने समय तक होता है ?

समाधान—अल्पपरुत्व अनादि ओर अनन्त है, क्योंकि, सभी गुणस्थानोंका
इसी प्रमाणसे सर्वकाल अवस्थान रहता है ।

शंका—अल्पपरुत्व कितने प्रकारका है ?

समाधान—भार्गवाणोंके भेदसे गुणस्थानोंके जितने भेद होते हैं, उतने प्रकारका
अल्पपरुत्व होता है ।

अल्प और बहुत्वको अर्थात् हीनता ओर अधिकताको अल्पवहुत्व कहते हैं ।
उनका अनुगम अल्पपरुत्वानुगम है । उससे अर्थात् अल्पपरुत्वानुगमसे निर्देश दो
प्रकारका है, ओघनिर्देश ओर आदेशनिर्देश । जिसमें सम्पूर्ण वचन-कलाप सगृहीत है,
ओर जो द्रव्यार्थिकनय निमित्तक है, वह ओघनिर्देश है । जिसमें सम्पूर्ण वचन-कलाप
सगृहीत नहीं है, जो पूर्वोक्त अर्थावयव अर्थात् ओघानुगममें वतलाये गये भेदोंके आश्रित
है ओर जो पर्यायार्थिकनय निमित्तक है वह आदेशनिर्देश है ।

ओघनिर्देशसे अपूर्णरणादि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा
परस्पर तुल्य है, तथा अन्य सत्र गुणस्थानोंके प्रमाणसे अल्प है ॥ २ ॥

‘तीनों गुणस्थानोंमें’ यह वचन चार उपशामक गुणस्थानोंके प्रतिषेध करनेके
लिए दिया है । ‘उपशामक’ यह वचन क्षपकादिके प्रतिषेधके लिए दिया है । ‘प्रवेशकी
अपेक्षा’ इस वचनका फल सचयका प्रतिषेध है । ‘तुल्य’ इस वचनसे विसदृशताका
प्रतिषेध किया है । श्रेणीसम्यन्धी आदिके तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी

१ प्रतिपु ‘पुच्चिहत्ता’ इति पाठ । मप्रतो तु स्वीकृतपाठ ।

२ सामायेन तावत् त्रय उपशमका सर्वत्र स्तोका स्वगुणस्थानकालेषु प्रवेशेन तुल्यत्वस्या । तत्ति १, ८

एआदिचउण्णमेत्तजीनाण पपेस पडि पडिसेहाभाया । ण च' सव्वद्ध तिसु उयमामगेसु पपिसत्तजीपेहि सरिमत्तणियमो, सभय पडुच्च सरिमत्तउत्तीदो । एदेसिं सचओ सरिसो अमगिसो त्ति वा किण्ण परुत्तिदो ? ण एम दोसो, पपेसमारिच्छेण तेसिं सचयमारिच्छस्म पि अयगमादो । पपिस्समाणजीनाण पिसरिसत्ते मत्ते सचयस्म पिसरिसत्त, अण्णहा दिट्ठभिगेहादो । अपुव्वादिअद्धान थोय बहुत्तादो पिसरिसत्त सचयस्म किण्ण होदि त्ति पुच्छिदे ण होदि, तिण्हमुवसामगणमद्धान्हितो उक्कस्मपपेसतरस्स बहुत्तुवदेसादो । तण्हा तिण्ह सचओ पि सरिसो चेय । थोया उअरि उच्चमाणगुणद्धानाण सस पक्खिय थोया त्ति भणिदा ।

अपेक्षा तुल्य अर्थात् सदृश होते हैं, क्योंकि, एकसे लेकर चोपन मात्र जीवोंके प्रवेशके प्रति कोई प्रतिषेध नहीं है। किन्तु सर्वकाल तीनों उपशामकोंमें प्रवेश करनेवाले जीवोंकी अपेक्षा सदृशताका नियम नहीं है, क्योंकि, सभावनाकी अपेक्षा सदृशताका कथन किया गया है।

शंका—इन तीनों उपशामकोंका सचय सदृश होता है, या असदृश होता है, इस बातका प्ररूपण क्यों नहीं किया ?

समाधान—यह कोई दोष नहा, क्योंकि, प्रवेशकी सदृशतासे उनके सचयकी सदृशताका भी ज्ञान हो जाता है। प्रविश्यमान जीवोंकी विसदृशता होने पर ही सचयकी विसदृशता होती है, यदि ऐसा न माना जाय तो प्रत्यक्षसे विरोध आता है।

शंका—अपूर्वकरण आदिके कालोंमें परस्पर अल्पवहुत्व होनेसे सचयके विसदृशता क्यों नहीं हो जाती है ?

समाधान—ऐसी आशकापर आचार्य उत्तर देते हैं कि अपूर्वकरण आदिके कालके हीनाधिक होनेसे सचयके विसदृशता नहीं होती है, क्योंकि, तीनों उपशामकोंके कालोंसे उत्पन्न प्रवेशान्तरका काल बहुत है ऐसा उपदेश पाया जाता है। इसलिए तीनोंका सचय भी सदृश ही होता है।

निशेषार्थ—यहा पर शंकाकारने यह शंका उठाई है कि जय अपूर्वकरण आदि गुणस्थानोंका काल हीनाधिक है, अर्थात् अपूर्वकरणका जितना काल है, उससे सख्यात गुणा हान अनिवृत्तिरूपका काल है और उससे सख्यातगुणा हीन सूक्ष्मसाम्प्रायका काल है, तब इन गुणस्थानोंमें सचित होनेवाली जीवराशिका प्रमाण भी हीनाधिक ही होना चाहिए, सदृश नहीं होना चाहिए ? इसके समाधानमें यह कहा गया है कि तीनों उपशामकोंके कालोंसे उत्पन्न प्रवेशान्तरके बहुत होनेका उपदेश पाया जाता है। इसका अभिप्राय यह है कि यद्यपि अपूर्वकरण आदि गुणस्थानोंका काल हीनाधिक है, तथापि यह प्रत्येक अन्तर्मुह्यत वा असख्यात समयप्रमाण है। किन्तु इन गुणस्थानोंमें प्रवेश कर सचित होनेवाले जीव सख्यात अर्थात् उपशामधेनीके प्रत्येक गुणस्थानमें अधिकसे अधिक तीन

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चयं ॥ ३ ॥

पुधसुत्तारभो किमद्वो ? उवसंतकसायस्त कसाउवसामगाणं च पचासत्तीए अभाउस्म सदसणफलो । जेसिं पच्चासत्ती अत्थि तेसिमेगजोगो, इदरेसिं भिण्णजोगो होदि त्ति एदेण जाणादि ।

खवा सखेज्जगुणां ॥ ४ ॥

कुदो ? उवसामगगुणद्वान्णपुक्कस्सेण पविस्समाणचउवण्णजीविहितो उवगोगगुण-

सौ चार (३०४) ओर क्षपकश्रेणीके प्रत्येक गुणस्थानमें अधिकसे अधिक छह सौ आठ (६०८) ही होते हैं । यदि सर्वज्ञघन्य प्रमाणकी भी अपेक्षासे एक समयमें एक ही जीवका प्रवेश माना जाय, तो भी प्रत्येक गुणस्थानके प्रवेशकालके समय सख्यात अर्थात् उपशमश्रेणीके प्रत्येक गुणस्थानमें अधिकसे अधिक तीन सौ चार और क्षपकश्रेणीके प्रत्येक गुणस्थानमें अधिकसे अधिक छह सौ आठ ही होंगे । यहा यह स्मरण रखना चाहिए कि उपशम या क्षपकश्रेणीमें निरन्तर प्रवेश करनेका सर्वोत्कृष्ट काल आठ समय ही है । इससे ऊपर जितना भी प्रवेशकाल है, वह सब सान्तर ही है । इससे यह अर्थ निकलता है कि अपूर्वकरणदि गुणस्थानोंमें प्रवेशान्तर अर्थात् जीवोंके प्रवेश नहीं करनेका काल असख्यात समयप्रमाण है । चूंकि, सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानसे अनिवृत्ति-करणका काल सख्यातगुणा है इसलिए उसके प्रवेशान्तरका उत्कृष्ट काल भी सख्यात-गुणा ही होगा । इसी प्रकार चूंकि अनिवृत्तिकरणके कालसे अपूर्वकरणका काल सख्यात-गुणा है, अतः उसके प्रवेशान्तरका काल भी सख्यातगुणा ही होगा । इसका यही निष्कर्ष निकलता है कि तीनों उपशमकोंके कालोंसे तीनोंके उत्कृष्ट प्रवेशान्तरका काल बहुत है, अर्थात् प्रवेश करनेके समय सदृश है, अतएव उनका सचय भी सदृश ही होता है ।

उपर्युक्त जीव आगे वही जानेवाली गुणस्थानोंकी सख्याको 'देखकर अल्प है' ऐसा कहा है ।

उपशान्तरूपायनीतरागछन्नस्थ पूरोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ३ ॥

शंका—पृथक् सूत्रका प्रारम्भ किस लिये किया है ?

समाधान—उपशान्तरूपायका और कपायके उपशम करनेवाले उपशामकोंकी परस्पर प्रत्यासत्तिका अभाव दिखाना इसका फल है । जिनकी प्रत्यासत्ति पाई जाती है उनका ही एक योग अर्थात् एक समास हो सकता है और दूसरोंका भिन्न योग होता है, यह बात इन सूत्रसे सूचित की गई है ।

उपशान्तरूपायनीतरागछन्नस्थामे क्षपक सख्यातगुणित हैं ॥ ४ ॥

क्योंकि, उपशामकके गुणस्थानमें उत्कर्षसे प्रवेश करनेवाले जीव जीवोंकी

१ उपशान्तरूपायस्तावन्त एव । स ति १, ८

३ नय. क्षपका सख्येयगुणा । स ति १, ८

मुक्कस्तेण पविस्ममाणअट्टुत्तरमदजीरण दुगुणत्तुलभा, पचूण-चदुरुत्तरातिसदमेत्तेगुव
सामगगुणद्वाणुक्कस्ममचयादो वि सजोगगुणद्वाणुक्कस्ममचयस्स दुरूऊणउस्सद
मेत्तस्स दुगुणत्तदमणादो ।

खीणकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव' ॥ ५ ॥

पुधसुत्तारमस्स कारण पुव्व न वत्तव्व । सेस सुगम ।

सजोगकेवली अजोगकेवली पवेसणेण दो वि तुल्ला तत्तिया
चेव' ॥ ६ ॥

घाह्यधादिकम्माण छदुमत्थेहि पच्चासत्तीए अभायादो पुधमत्तारमो जादो ।
पवेसणेण तेत्तिया चेवेत्ति उत्ते पवेस सचएहि अट्टुत्तरमददुरूऊणउस्सदमेत्ता कमेण हौत्ति
त्ति धेत्तव्व । दो वि तुल्ला त्ति उत्ते दो वि अण्णोण्णेण सरिसा त्ति भणिद होदि ।
अजोगिकेवलिसंचओ पुब्बिल्लगुणद्वाणमचएहि सरिसो जधा, तथा सजोगिकेवलि
संचयस्स वि सरिसत्ती । तिसरिमत्तपदुप्पायणद्वमूत्तरसुत्त भणदि-

अपेक्षा क्षपकके एक गुणस्थानमें उत्कृष्टसे प्रवेश करनेवाले परसौ आठ जीवोंके दुगुणता
पाए जाती है। तथा सचयरी अपेक्षा उपशामकके एक गुणस्थानमें उत्कृष्टरूपसे पाच
कम तीनसौ चार अर्थात् दो सौ नित्यानवे (२९०) सचयसे भी क्षपकके एक गुणस्थानको
दो कम छह सौ (५९८) रूप सचयसे दुगुणता देखी जाती है।

धीणरूपायतीतरागउन्नस्य पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ५ ॥

पृथक् सूत्र जननेका कारण पहलेके समान कहना चाहिए। शेष सूत्रार्थ सुगम है।

सयोगिकेवली और अयोगिकेवली प्रवेशकी अपेक्षा दोनों ही तुल्य और पूर्वोक्त
प्रमाण हैं ॥ ६ ॥

घाति कर्मोंका घात करनेवाले सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीकी छद्मस्थ
जीवोंके साथ प्रत्यासत्तिका अभाव होनेसे पृथक् सूत्र बनाया गया है। प्रवेशकी अपेक्षा
पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं, ऐसा कहनेपर प्रवेशसे एक सौ आठ (१०८) ओर सचयसे दो कम
छह सौ अर्थात् पाच सौ अट्टानवे (५९८) क्रमसे होते हैं, ऐसा अर्थ ग्रहण करना
चाहिए। दोनों ही तुल्य हैं, ऐसा कहनेसे दोनों ही परस्पर समान हैं, ऐसा अर्थ सूचित
होता है। निम्न प्रकार अयोगिकेवलीका सचय पूर्व गुणस्थानोंके सचयके सदृश होता
है, उसी प्रकार सयोगिकेवलीके सचयसे भी सदृशताकी प्राप्ति होती है, अतएव उनके
क्षपकी विसदृशताके प्रतिपादन करनेके लिये उक्त सूत्र कहते हैं-

१ क्षीणरूपायतीतरागउन्नस्यास्तावन्त एव । ए ति १, ८

२ उभोपकेवलिनोऽयोगिकेवलिनश्च प्रवेशेन तुल्यसस्या । ए ति १, ८

सजोगिकेवली अद्धं पडुच्च संखेज्जगुणां ॥ ७ ॥

कुदो ? दुरूत्तणछस्सदमेत्तजीमेहितो अट्टलक्ख-अट्टाणउदिसहस्स-दुरहियपंचसद-
मेत्तजीणण सखेज्जगुणत्तुअलभा । हेट्ठिमरामिणा उपरिमरासिं छेत्तूण गुणयारो उप्पादेद्वो ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणां ॥ ८ ॥

सजगुणसामगअप्पमत्तसंजदपडिसेहो किमट्ठं कीरटे ? ण, अप्पमत्तसामण्णेण
तेसिं पि गहणप्पमगा । सजोगिरामिणा त्रेक्कोट्टि-छण्णउदिलक्ख-णणउडसहस्स-तित्त-
सदमेत्तअप्पमत्तरासिं हि भागे हिदे ज लद्ध सो गुणगारो होदि ।

प्रमत्तसंजदा संखेज्जगुणां ॥ ९ ॥

को गुणगारो ? दोण्णि रूपाणि । कुदो णव्वदे ? जाइरियपरपरागदुवदेमादो ।

सयोगिकेवली कालकी अपेक्षा सख्यातगुणित है ॥ ७ ॥

क्योंकि, दो कम छह सौ, अर्थात् पाच सौ अट्टानवे मात्र जीवोंकी अपेक्षा आठ
लाख, अट्टानवे हजार पाच सौ दो सख्याप्रमाण जीवोंके सख्यातगुणितता पाई जाती
है । यहा पर अधन्तनराशिसे उपरिम राशिको छेदकर (भाग देकर) गुणकार उत्पन्न
करना चाहिए ।

सयोगिकेवलियोंसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसयत जीव संख्यात-
गुणित है ॥ ८ ॥

शका—यहापर क्षपक और उपशामक अप्रमत्तसयताका निषेध किस लिए
किया गया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, 'अप्रमत्त' इस सामान्य पदसे उनके भी ग्रहणका
प्रसंग आता है, इसलिए क्षपक और उपशामक अप्रमत्तसयतोंका निषेध किया गया है ।
सयोगिकेवलीकी राशिसे दो करोड छयानवे लाख निन्यानवे हजार एक सौ तीन सख्या
प्रमाण अप्रमत्तसयतोंकी राशिमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे, वह यहा पर गुणकार
होता है ।

अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयत संख्यातगुणित है ॥ ९ ॥

गुणकार क्या है ? दो सख्या गुणकार है ।

शका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—आचार्य-परम्पराके द्वारा आये हुये उपदेशसे जाना जाता है ।

१ सयोगिकेवलिन स्वकालेन समुदिता सख्येयगुणा । (८९८५०२) । स सि १, ८

२ अप्रमत्तसयता सख्येयगुणा (२९६९९१०३) । स सि १, ८

३ प्रमत्तसयता. सख्येयगुणा (५९३९८२०६) । स सि १, ८

पुबुत्तअप्पमत्तरासिणा पचक्रोडि तिण्णउइलक्ख अट्टाणउइसहस्म-छम्भहियदोमदमत्ति
यमत्तरामिम्हि भागे हिदे ज भागलद्ध सो गुणगारो ।

सजदासंजदा असखेज्जगुणा' ॥ १० ॥

हुदो ? पलिदोवमस्म असखेज्जदिभागमेत्तादो । माणुसखेत्तम्भतरं केर
मज्जदासजदा हाति, पो वहिद्धा, भोगभूमिम्हि सजमामजमभारिरोहा । य च माणुस
खेत्तम्भतरं अमखेज्जाण सजदासजदाणमात्थि सभरो, तेत्थियमेत्ताणमेत्थानट्टाणाविरोहा ।
तदो सखेज्जगुणेहि सजदासजदेहि होदच्चमिदि ? ण, सयंपहपव्वदपरभागे अमत्तेज्ज
जोषणवित्थडे कम्मभूमिपडिभाए तिरिक्खराणमसखेज्जाण सजमासजमगुणसाहिण
सुवलमा । को गुणगारो ? पलिदोवमस्म असखेज्जदिभागो, अमखेज्जाणि पलिदोवमपम
वग्गमूलाणि । को पडिभागो ? अतोमुत्तगुणिदपमचमजदरासी पडिभागो ।

सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा' ॥ ११ ॥

पूरोक्त अप्रमत्तराशिसे पाच करोड तिरानवे लाख, अट्टानवे हजार, दो सौ छ
सख्याप्रमाण प्रमत्तसयतराशिमें भाग देनेपर जो भाग लख आवे, वह यहापर गुणकार है ।

प्रमत्तसयतोंसे सयतासयत अमरयातगुणित है ॥ १० ॥

क्योंकि, ये पत्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण है ।

शुक्रा—सयतासयत मनुष्यक्षेत्रके भीतर ही होते हैं, बाहर नहीं, क्योंकि, भोग
भूमिमें सयमासयमने उत्पन्न होनेका विरोध है । तथा मनुष्यक्षेत्रके भीतर असख्यात सयता
सयतोंका पाया जाना सम्भव नहीं है, क्योंकि, उतने सयतासयतोंका यहा मनुष्यक्षेत्रके
भीतर अवस्थान माननेमें विरोध आता है । इसलिए प्रमत्तसयतोंसे सयतासयत
सख्यातगुणित होना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, असख्यात योजन विन्वृत एव कर्मभूमिके प्रतिभाग
रूप स्वयमभ पर्यंतके परभारमें सयमासयम गुणसहित असख्यात तिर्यंच पाये जाते हैं ।
गुणकार क्या है ? पत्योपमका असख्यातया भाग गुणकार है, जो पत्योपमके
असख्यात प्रथम वगमूल प्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? अन्तर्मुहूर्तसे प्रमत्तसयतराशिको
गुणित करनेपर जो लख आवे, वह प्रतिभाग है ।

सयतासयतोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि जीव असरयातगुणित हैं ॥ ११ ॥

१ सयतासयता अतस्थेयशुणा । स ति १, ८

२ प्रति ' मत्ता ' इति पाठ ।

३ सासादनसम्यग्दृष्टो तस्थेयशुणा । स ति १, ८

कुदो ? तिप्रिहसम्मत्तद्धिदसंजदामजेदेहिंतो एगुसमसम्मत्तादो सासणगुण पडि-
वज्जिय छसु आत्रलियासु संचिदजीवाणमसखेज्जगुणचुअदेसादो । त पि कर्धं णञ्चदे ?
एगममयमिह संजमासजम पडिअज्जमाणजीवेहिंतो एक्कममयमिह चेअ सासणगुण पडि-
वज्जमाणजीवाणमसखेज्जगुणत्तदंसणादो । त पि कुदो ? अणतसंसारमिच्छेयहेउसजमा-
सजमलभस्म अहदुल्लभत्तादो । को गुणगारो ? आत्रलियाए अमखेज्जदिभागो । हेट्ठिम-
रासिणा उअरिमरासिमिह भागे हिदे गुणगारो आगच्छदि, उअरिमरासिअअहारकालेण
हेट्ठिमरासिअअहारकाले भागे हिदे गुणगारो हेदि, उअरिमरासिअअहारकालगुणिदहेट्ठिम-
रासिणा पलिदोअमे भागे हिदे गुणगारो हेदि । एअ तीहि पयारेहि गुणयारो समाण-
भज्जमाणरासीसु सच्चरथ साहेट्ठव्यो । णअरि हेट्ठिमरासिणा उअरिमरासिमिह भागे हिदे
गुणगारो आगच्छदि ति एअ समाणासमाणभज्जमाणरासीण साहारण, दोसु पि एअस्स
पउचीए वाहाणुअलभा ।

क्योंकि, तीन प्रकारके सम्यक्त्वके साथ स्थित सयतासयताँकी अपेक्षा एक
उपशमसम्यक्त्वसे सासादनगुणस्थानको प्राप्त होकर छह आवलियोंसे सचित जीव
असख्यातगुणित हैं, ऐसा उपदेश पाया जाता है ।

शंका—यह भी कैसे जाना जाता है ?

समाधान—एक समयमें सयमासयमको प्राप्त होनेवाले जीवोंसे एक समयमें
ही सासादनगुणस्थानको प्राप्त होनेवाले जीव असख्यातगुणित देखे जाते हैं ।

शंका—इसका भी कारण क्या है ?

समाधान—क्योंकि, अनन्त ससारके विच्छेदका कारणभूत सयमासयमका
पाना अतिदुर्लभ है ।

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । अधस्तनराशिसे
उपरिमराशिमें भाग देनेपर गुणकारका प्रमाण आता है । अथवा, उपरिमराशिके अवहार
कालसे अधस्तनराशिके अवहारकालमें भाग देनेपर गुणकार होता है । अथवा, उपरिम
राशिके अवहारकालसे अधस्तनराशिको गुणित करके जो लब्ध आवे उसका पल्योपममें
भाग देनेपर गुणकार आता है । ऐसे इन तीन प्रकारोंसे समान भज्यमान राशियोंमें सर्वत्र
गुणकार साधित कर लेना चाहिए । केवल विशेषता यह है कि अधस्तनराशिका उपरिम-
राशिमें भाग देनेपर गुणकार आता है, यह नियम समान ओर असमान, दोनों भज्यमान
राशियोंमें साधारण है, क्योंकि, उक्त दोनों राशियोंमें भी इस नियमकी प्रवृत्ति होनेमें
बाधा नहीं पाई जाती है ।

सम्मामिच्छादिद्वी सखेज्जगुणा' ॥ १२ ॥

एदस्मत्थो उच्चदे- सम्मामिच्छादिद्विअद्वा अतोमुहुत्तमेत्ता, मामणसम्मामिच्छादिद्विअद्वा नि छात्रलियमेत्ता । किंतु सासणसम्मामिच्छादिद्विअद्वादो सम्मामिच्छादिद्विअद्वा सखेज्जगुणा । सखेज्जगुणद्वाए उरक्कमणकालो वि सासणद्वाउरक्कमणकालादो सखेज्जगुणो उरक्कमणविरोहा विरहकालाणमुहयत्थ साधम्मादो । तेण दोगुणद्वाणाणि पडिउज्जमाण रासी जदि वि सरिसो, तो वि सासणसम्मामिच्छादिद्विअद्वादो सम्मामिच्छादिद्वी सखेज्जगुणा होंति । किंतु सासणगुणमुवसमसम्मामिच्छादिद्विअद्वादो चैय पडिउज्जति, सम्मामिच्छादिद्वी सखेज्जगुण पुण वेदगुवसमसम्मामिच्छादिद्विअद्वादो अद्वाणीसमतत्तम्मियमिच्छादिद्विअद्वादो य पडिउज्जति । तेण सासण पडिउज्जमाणरासीदो' सम्मामिच्छादिद्वी पडिउज्जमाणरासी सखेज्जगुणो । तदो सखेज्जगुणायादो सखेज्जगुणउवक्कमणकालादो च सामणेहिंतो सम्मामिच्छादिद्विअद्वादो सखेज्जगुणा, उवसमसम्मामिच्छादिद्विअद्वादो वेदगसम्मामिच्छादिद्विअद्वादो असखेज्जगुणा, 'कारणाणुसारिणा कजेण होद्वमिदि' णायादो । सासणेहिंतो सम्मामिच्छादिद्विअद्वादो असखेज्जगुणा विण्ण होंति चि उचे ण होंति, अणेयणिग्गमादो । जदि तेहि पडिउज्जमाणगुणद्वाणमेक्क' चेव होदि,

सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ १२ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं- सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानका काल अन्तर्मुहूर्तमात्र है और सासादनसम्यग्दृष्टि का काल भी छह आधलीप्रमाण है, किन्तु फिर भी सासादन सम्यग्दृष्टिके कालसे सम्यग्मिथ्यादृष्टिका काल सरयातगुणा है । सरयातगुणित कालका उपक्रमणकाल भी सासादनके कालके उपक्रमणकालसे सरयातगुणा है । अन्यथा उपक्रमण कालमें विरोध आजायगा, क्योंकि, विरहकाल दोनों जगह समान है । इसलिए इन दोनों गुणस्थानोंको प्राप्त होनेवाली राशि यद्यपि समान है तो भी सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि सरयातगुणित है । किन्तु सासादन गुणस्थानको उपशमसम्यग्दृष्टि ही प्राप्त होते हैं, परन्तु सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानको वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि और मोहकमकी अद्वाईस प्रवृत्तियोंकी सत्तावाले मिथ्यादृष्टि जीव भी प्राप्त होते हैं । इसलिए सासादनगुणस्थानको प्राप्त होनेवाली राशिसे सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाली राशि सरयातगुणी है । अतः सरयातगुणी आय होनेसे और सरयातगुणा उपक्रमणकाल होनेसे सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव सरयातगुणित होते हैं । उपशम सम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असरयातगुणित है, क्योंकि, 'कारणके अनुसार कार्य होता है' ऐसा याव है । सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि असरयातगुणित क्यों नहीं होते हैं, ऐसा पूछने पर आचार्य उत्तर देते हैं कि नहीं होते हैं, क्योंकि, निर्गमके अर्थात् जानेके मार्ग अनेक हैं । यदि वेदकसम्यग्दृष्टियोंके द्वारा प्राप्त किया

१ सम्यग्मिथ्यादृष्टय सरयेयगुणा । स ति १, ८

२ अतियु 'पडिमाणरासीदो' इति पाठ ।

३ अतियु 'मेच' इति पाठ ।

तो एस ण्णाओ त्रेतुं जुत्तो । किंतु वेदगसम्मादिट्ठिणो मिच्छत्त सम्मामिच्छत्तं च पडिउज्जति, सम्मामिच्छत्तं पडिउज्जमाणेहितो मिच्छत्त पडिउज्जमाणेदगसम्मादिट्ठिणो असरेज्जगुणा, तेण पुच्चुत्त ण घडटे इदि । ण चासखेज्जगुणरासिनओ अण्णरासिम-वेक्खियुय होदि, तस्म अप्पणो आयाणुसरणसहापत्तादो । एदमेरं चेय होदि त्ति कध णव्वदे ? सामणेहितो सम्मामिच्छादिट्ठिणो सखेज्जगुणा त्ति सुत्तण्णहाणुववत्तीदो णव्वदे ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १३ ॥

को गुणगारो ? आवलियाए अमखेज्जदिभागो । सम्मामिच्छादिट्ठिरासी अतो-मुट्ठत्तमचिदो, असंजदसम्मादिट्ठिरासी पुण वेसागरोपममचिदो । सम्मामिच्छादिट्ठिअद्दादो वेसागरोपमकालो पल्लिदोपमसखेज्जदिभागगुणो । सम्मामिच्छादिट्ठिउपक्रमणकालादो पि असंजदसम्मादिट्ठिउपक्रमणकालो पल्लिदोपमस्स मंखेज्जदिभागगुणो, उवक्कमण-कालस्म उद्दाणुसारिचदसणादो । तेण पल्लिदोपमस्स असखेज्जदिभागेण गुणगारेण होद्वमिदि ? ण, अमजदसम्मादिट्ठिरामिस्स असखेज्जपल्लिदोपमप्पमाणप्पसगा । तं

जानेवाला गुणस्थान एक ही हो, तो यह न्याय कहने योग्य है । किन्तु वेदकसम्यग्दष्टि, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व, इन दोनों गुणस्थानोंको प्राप्त होते हैं । तथा सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले वेदकसम्यग्दष्टियोंसे मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले वेदकसम्यग्दष्टि जीव असख्यातगुणित हैं, इसलिये पूर्वोक्त कथन घटित नहीं होता है । दूसरी बात यह है कि असख्यातगुणी राशिका व्यय अन्य राशिकी अपेक्षासे नहीं होता है, क्योंकि, वह अपने आयके अनुसार व्ययशील स्वभाववाला होता है ।

शंका—यह इसी प्रकार होता है, यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—सासादनसम्यग्दष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादष्टि जीव सख्यातगुणित होते हैं, यह सूत्र अन्यथा बन नहीं सकता है, इस अन्यथानुपपत्तिसे जाना जाता है कि सासादनसम्यग्दष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादष्टि जीव सख्यातगुणित होते हैं ।

सम्यग्मिथ्यादष्टियोंसे असंयतसम्यग्दष्टि जीव असंयतगुणित हैं ॥ १३ ॥

गुणकार क्या है ? आउलीजा असख्यातवा भाग गुणकार है ।

शंका—सम्यग्मिथ्यादष्टि राशि अन्तर्मुहूर्त सचित है और असंयतसम्यग्दष्टि राशि दो सागरोपम सचित है । सम्यग्मिथ्यादष्टिके कालसे दो सागरोपमकाल पल्योपमके असख्यातवें भाग गुणितप्रमाण है । सम्यग्मिथ्यादष्टिके उपक्रमणकालसे भी असंयतसम्यग्दष्टिना उपक्रमणकाल पल्योपमके सख्यातवें भागगुणित है, क्योंकि, उपक्रमणकाल गुणस्थानकालके अनुसार देखा जाता है । इसलिये पल्योपमके असख्यातवें भाग-प्रमाण गुणकार होना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, गुणकारको पल्योपमके असख्यातवें भाग मानने पर असंयतसम्यग्दष्टि राशिको असख्यात पल्योपमप्रमाण होनेका प्रसंग प्राप्त होगा ।

१ प्रतिउ ' जोतु ' इति पाठ ।

२ असंयतसम्यग्दष्टयोऽसखेयगुणा । स मि १, ८

३ म २ प्रती ' दो वि असंजदसम्मादिट्ठि उवक्कमणकालो ' इति ३ ।

जघा- 'एदेहि पलिदोमममहरिदि अतोमुहुत्तेण कालेणेत्ति' दव्वाणिओगहारसुत्तादो णव्वदि जघा पलिदोमममतोमुहुत्तेण सडिदेयसडमेत्ता सम्मामिच्छादिद्विणो हँति त्ति । पुणो एद रासिं पलिदोममस्म असखेज्जदिभागेण गुणिदे असखेज्जपलिदोममेत्तो अस जदसम्मादिद्विरासी होदि । ण चेद, एदेहि पलिदोमममहरिदि अतोमुहुत्तेण कालेणेत्ति एदेण सुत्तेण सह विरोहा । कध पुण आगलियाए असखेज्जदिभागगुणगारस्स सिद्धी ? उच्चदे- सम्मामिच्छादिद्विअद्दादो तप्पाओगअसखेज्जगुणद्वाए सच्चिदो अमजदमम्मा दिद्विरामी धेत्तवो, एदिस्मे अद्वाए सम्मामिच्छादिद्विउत्तकमणकालादो असखेज्जगुण उत्तकमणकालुत्तमा । एत्थ सच्चिद-असजदमम्मादिद्विरासीए वि आगलियाए असखे ज्जदिभागेण गुणिदमेत्तो होदि । अधवा दोण्ह उत्तकमणकाला जदि वि सरिसा हँति त्ति तो वि सम्मामिच्छादिद्वीहिँतो असजदसम्मादिद्वी आवलियाए सखेज्जभागगुणा । बुदो ? सम्मामिच्छत्त पडिउत्तमाणरासीदो सम्मत्त पडिउत्तमाणरासिस्म आगलियाए असखेज्जदिभागगुणत्तादो ।

मिच्छादिद्वी अणंतगुणा' ॥ १४ ॥

उसका स्पर्शकरण इस प्रकार है- इन सासादनसम्यग्दृष्टि आदि जीवोंकी अपेक्षा अतर्मुहूर्तकालसे पल्योपम अपहृत होता है, इस द्रव्यानुयोगद्वारके सूत्रसे जाना जाता है कि पल्योपमनो अन्तर्मुहूर्तसे सडित करने पर एक सडप्रमाण सम्यग्मिध्यादृष्टि होने हैं । पुन इस राशिको पल्योपमके असख्यातवें भागसे गुणित करने पर असख्यात पल्यो पमप्रमाण असयतसम्यग्दृष्टिराशि होती है । परंतु यह ठीक नहीं है, क्योंकि, 'इन गुण स्थानवर्ती जीवोंकी अपेक्षा अतर्मुहूर्तकालसे पल्योपम अपहृत होता है' इस सूत्रके साथ पूर्वोक्त कथनका विरोध आता है ।

शका- फिर आवलीके असख्यातवें भागरूप गुणकारकी सिद्धि कैसे होती है ?

समाधान-सम्यग्मिध्यादृष्टिके कालसे उसके योग्य असख्यातगुणित कालसे सचित असयतसम्यग्दृष्टि राशि ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, इस कालका सम्यग्मिध्या दृष्टिके उपप्रमाणकालसे असख्यातगुणा उपप्रमाणकाल पाया जाता है । यहा पर सचित असयतसम्यग्दृष्टि राशि भी आवलीके असख्यातवें भागसे गुणितमात्र है । अथवा, दोनोंके उपप्रमाणकाल यद्यपि सदृश होते हैं, तो भी सम्यग्मिध्यादृष्टियोंसे असयतसम्य दृष्टि जीव आवलीके सख्यात भागगुणित है, क्योंकि, सम्यग्मिध्यात्वको प्राप्त होनेवाली राशिसे सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाली राशि आवलीके असख्यातवें भागगुणित है ।

असयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिध्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित हैं ॥ १४ ॥

१ दव्वाय ६ (भा ३ पृ ६३)

२ अ-कथयो ' पलिदोममेत्तो ' इति पाठ ।

३ निम्भादधयो नन्तगुणा । स नि १, ८ प्रतिशु अणंतगुणो ' इति पाठ ।

कुदो ? मिच्छादिट्टीणमाणतियादो । को गुणगारो ? अभवसिद्धिएहि अणतगुणो, सिद्धेहि वि अणतगुणो, अणंताणि सच्चजीवरासिपढमग्गमूलाणि । को पडिभागो ? असजदसम्मादिट्टी पडिभागो ।

असंजदसम्मादिट्टीणाणं सच्चत्थोवा उवसमसम्मादिट्टी ॥ १५ ॥

सजदमंजदादिट्टाणपडिसेहट्ठं असजदसम्मादिट्टीणाणयण । उवरिसुचमाणारामि-
ओक्ख सच्चत्थोवयण । सेससम्मादिट्टीपडिसेहट्ठमुवसमसम्मादिट्टीयण ।

खइयसम्मादिट्टी असंखेज्जगुणा ॥ १६ ॥

उवसमसम्मत्तादो खइयसम्मत्तमइदुल्लह, दसणमोहणीयक्खएण उवस्सेण छम्मास-
मंतरिय उक्खस्सेण अट्टुत्तरसदमेत्ताणं चेव उप्पज्जमाणत्तादो । खइयसम्मत्तादो उवसम-
सम्मत्तमइसुल्लह, सत्तरादिंदियाणि अतरिय एगसमएण पलिदोवमस्स असखेज्जदिभाग-
मेत्तजीवेसु तदुप्पत्तिदंमणादो । तदो खइयसम्मादिट्टीहिंतो उवसमसम्मादिट्टीहिं असखेज्ज-
गुणेहि हौदव्वमिदि ? सच्चमेद, किंतु सच्चयकालमाहप्पेण उवसमसम्मादिट्टीहिंतो खइय-

फ्योकि, मिथ्यादृष्टि अनन्त होते हैं ।

शका—गुणकार क्या है ?

समाधान—अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंसे भी अनन्तगुणा गुणकार है, जो सम्पूर्ण जीवराशिके अनन्त प्रथम वर्गमूलप्रमाण हैं ।

शका—प्रतिभाग क्या है ?

समाधान—असयतसम्यग्दृष्टि राशिका प्रमाण प्रतिभाग है ।

असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव समे कम हैं ॥ १५ ॥

सयतासयत आदि गुणस्थानोंका निषेध करनेके लिये सूत्रमें 'असयतसम्यग्दृष्टि स्थान' यह वचन दिया है । आगे कही जानेवाली राशियोंकी अपेक्षा 'समसे कम' यह वचन दिया है । शेष सम्यग्दृष्टियोंका प्रतिषेध करनेके लिये 'उपशमसम्यग्दृष्टि' यह वचन दिया है ।

असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं ॥ १६ ॥

शका—उपशमसम्यक्त्वसे क्षायिकसम्यक्त्व अतिदुर्लभ है, फ्योकि, दर्शन मोहनीयके क्षयद्वारा उत्कृष्ट छह मासके अंतरालसे अधिकसे अधिक एकसौ आठ जीवोंकी ही उत्पात्ति होती है । परंतु क्षायिकसम्यक्त्वसे उपशमसम्यक्त्व अतिसुलभ है, फ्योकि, सात रात दिनोंके अंतरालसे एक समयमें पल्लोपमके असंख्यातवें भागप्रमित जीवोंमें उपशमसम्यक्त्वकी उत्पात्ति देखी जाती है । इसलिये क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि असंख्यातगुणित होना चाहिए ?

समाधान—यह कहना सत्य है, किंतु सच्चयकालके माहात्म्यसे उपशमसम्य-

सम्मादिद्विणो असंखेज्जगुणा जादा । त जहा- उपसमसम्मत्तद्धा उक्कस्सिया वि अतो-
मुहुत्तमेत्ता चेय । सइयसम्मत्तद्धा पुण जहणिया अतोमुहुत्त, उक्कस्सिया दोपुव्वकोडि-
अम्भहियतेत्तीससागरोपममेत्ता । तत्थ मज्झिमकालो दिवड्डुपलिदोपममेत्तो । एत्थ
अतोमुहुत्तमतारिय सखेज्जोपक्कमणममएसु धेप्पमाणेसु पलिदोपमस्म असखेज्जदिभाग
नेतोपक्कमणकालो लब्ध । एदेण कालेण सचिदजीवा नि पलिदोपमस्म असखेज्जदि-
भागमेत्ता होदूण आरलियाए असखेज्जदिभागमेत्तुपक्कमणकालेण समय पडि उवक्कत्त-
पलिदोपमस्म असखेज्जदिभागमेत्तर्जिणेण सचिदउपसमसम्मादिद्विणो अतोमुहुत्तमेत्तो असखेज्जगुणा
होति । ण सेसत्रियप्पा सभरति, ताणमसखेज्जगुणसुत्तेण सह विरोहा ।

एत्थ चोत्थो भणदि- आरलियाए असखेज्जदिभागमेत्तरेण सइयसम्मादिद्विण
सोहम्मे जइ सचओ कीरदि पेसाणुसारिणिग्गमादो मणुमेस्सु जमखेज्जा सइयसम्मा-
दिद्विणो पावति । अह सखेज्जात्रलियतरेण द्विइसचओ कीरदि, तो सखेज्जात्रलियाहि
पलिदोपमे सडिदे एयक्कपडमेत्ता सइयसम्मादिद्विणो पावति । ण च एव, आरलियाए
असखेज्जदिभागमेत्तभागहारब्धुपगमादो । तदो दोहि वि पयारेहि दोसो चेय हुक्कदि

गदष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दष्टि असख्यातगुणित हो जाते हैं । वह इस प्रकार है- उपशम
सम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल भी अतर्मुहूर्तमान ही है । परन्तु क्षायिकसम्यक्त्वका जघन्य
काल अतर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल दो पूर्वमोडिसे अधिक तेतीस सागरोपमप्रमाण है ।
उसमें प्रथम काल डेढ पल्योपमप्रमाण है । यहा पर अन्तमुहूर्तकालको अन्तरित करके
उपक्रमणके सख्यात समयोंके ग्रहण करने पर पल्योपमके असख्यातवें भागमात्र उप
क्रमणकाल प्राप्त होता है । इस उपक्रमणकालके द्वारा सचित हुए जीव पल्योपमके
असख्यातवें भागमात्र हा करके भी आवर्त्तके असख्यातवें भागमात्र उपक्रमणकालक
द्वारा प्रत्येक समयमें प्राप्त होनेवाले पल्योपमके असख्यातवें भागमात्र जीवोंसे सचित
हुए उपशमसम्यग्दष्टियोंकी अपेक्षा असख्यातगुणित होते हैं । यहा शेष विरुत्प समय
नहीं हैं, क्योंकि, उन विरुत्पोंका असयतसम्यग्दष्टि गुणस्थानमें ' उपशमसम्यग्दष्टियोंसे
क्षायिकसम्यग्दष्टि असख्यातगुणित है ' इस सूत्रके साथ विरोध आता है ।

शुक्रा—यहा पर शकाकार कहता है कि आवर्त्तके असख्यातवें भागमात्र
अन्तरसे क्षायिकसम्यग्दष्टियोंका सौधम स्वर्गमें यदि सचय किया जाता है तो प्रवेशके
अनुसार निर्गम होनेसे अर्थात् आयने अनुसार व्यय होनेसे मनुष्योंमें असख्यात क्षायिक
सम्यग्दष्टि जीव प्राप्त होते हैं । और यदि सख्यात आवर्त्तियोंने अन्तरालसे स्थितिका
सचय करते हैं तो सख्यात आवर्त्तियोंसे पल्योपमके सडित करने पर एव सडमात्र
क्षायिकसम्यग्दष्टि प्राप्त होते हैं । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, आवर्त्तके असख्यातवें
भागमात्र भागहार स्वीकार किया गया है । इसलिए दोनों प्रकारोंसे भी दोष ही प्राप्त
होता है ?

ति ? ण एस दोसो, सइयसम्मादिट्ठीण पमाणागमणद्ध पलिदोमस्स सरोज्जाणलियमेत्त-
भागहारस्स जुत्तीए उरलभादो । तं जहा— अट्टसमयवभहियच्छम्मासवभतरे जदि मंखेज्जुअ-
क्कमणममया लब्भति, तो दिअट्टुपलिदोमवभतरे किं लभामो ति पमाणेण फलगुणि-
दिच्छाए ओअट्टिदाए उअक्कमणकालो लब्भदि । तम्मि संखेज्जजीवेहि गुणित्ते सरोज्जाण-
लियाहि ओअट्टिदपलिदोममेत्ता सइयसम्मादिट्ठीणो लब्भति । तेण आअलियाए अमखे-
ज्जदिभागो भागहारो ति ण घेत्तव्वो । उअक्कमणतरे आअलियाए असंखेज्जदिभागे सत्ते
एदं ण घडदि ति णासकणिज्ज, मणुसेसु सइयसम्मादिट्ठीण असरोज्जाणमत्थित्तप्पसगादो ।
एअ संते मासणादीणमसरोज्जाणलियाहि भागहारेण होदव्व ? ण एस दोसो, इट्टत्तादो ।
ण अण्णेसिमाडरियाण वक्खण्णेण विरुद्ध ति एदस्स वक्खणस्स अभट्ठं, सुत्तेण सह
अविरुद्धस्स अभट्ठविरोहादो । एदेहि पलिदोममअहिरदि अतोअट्टुत्तेण कालेणेत्ति सुत्तेण
दि ण विरोहो, तस्स उअयारणिअधणत्तादो ।

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके प्रमाण
लानेके लिए पल्योपमका सत्यात आवलिमान भागहार युक्तिसे प्राप्त हो जाता है ।
जैसे— आठ समय अधिक छह मासके भीतर यदि सत्यात उपक्रमणके समय प्राप्त होते
हैं, तो डेढ़ पल्योपमके भीतर कितने समय प्राप्त होंगे ? इस प्रकार त्रैराशिक करने पर
प्रमाणराशिसे फलराशिको गुणित करके और इच्छाराशिसे भाजित कर देने पर उप-
क्रमणकाल प्राप्त होता है । उसे सत्यात जीवोंसे गुणित कर देने पर पल्योपममें सत्यात
आवलियोंका भाग देने पर जो लब्ध आवे उतने क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव प्राप्त होते हैं ।
इसलिए यहा आवलीका असत्यातवा भाग भागहार है, ऐसा नहीं ग्रहण करना चाहिए ।

उपक्रमणकालका अन्तर आवलीका असत्यातवा भाग होने पर उपर्युक्त व्याख्यान
घटित नहीं होता है, ऐसी आशका भी नहीं करना चाहिए, क्योंकि, ऐसा मानने पर
मनुष्योंमें असत्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके अस्तित्वका प्रसंग आता है ।

शुद्धा—यदि ऐसा है तो सासादनसम्यग्दृष्टि आदिके असत्यात आवलिया
भागहार होना चाहिए ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, वह इष्ट ही है ।

तथा, यह व्याख्यान अन्य आचार्योंके व्याख्यानसे विरुद्ध है, इसलिये इस
व्याख्यानके अभद्रता (अयुक्ति सगतता) भी नहीं है, क्योंकि, इस व्याख्यानका सूत्रके
साथ विरोध नहा है, इसलिये उसके अभद्रताके माननेमें विरोध आता है । ' इन राशि-
योंने प्रमाणकी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्तकालसे पल्योपम अपट्ट होता है ' इस द्रव्यानुयोग-
द्वारेके सूत्रके साथ भी उक्त व्याख्यानका विरोध नहीं आता है, क्योंकि, वह सूत्र उप-
चार निमित्तक है ।

वेदगसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ १७ ॥

कुदो ? दमणमोहणीयकरएणुप्पण्णरइयसम्मत्तादो रओउसमियवेदगसम्मत्तस्स सुहु सुलहत्तुनलभा । को गुणगारो ? आउलियाए असखेज्जदिभागो । कुदो ? ओघसोहम्म-असजदमम्मादिद्विभागहारस्स आउलियाए असखेज्जदिभागपमाणत्तादो ।

सजदासजदद्वाने सव्वत्थोवा खइयसम्मादिद्वी ॥ १८ ॥

कुट्ठो ? अणुवयसहिदरइयसम्मादिद्वीणमइदुल्लभत्तादो । ण च तिरिक्खेसु रइयसम्मत्तेण मह सजमामजमो लब्भदि, तत्थ दमणमोहणीयकरणाभावा । त पि कुदो णव्वदे ? ' णियमा मणुसगदीए ' इदि सुत्तादो । जे त्रि पुव्व वद्धतिरिक्खाउआ मणुमा तिरिक्खेसु रइयसम्मत्तेणुप्पज्जति, तेसिं ण सजमासजमो अत्थि, भोगभूमिं मोत्तूण अण्णात्थुप्पत्तीए अमभवादो । तेण रइयसम्मादिद्विणो सजदामजदा सखेज्जा चेय,

अमयतसम्यग्दष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दष्टियोंमें वेदक्रमस्यग्दष्टि जीव असरयातगुणित हैं ॥ १७ ॥

क्योंकि, दर्शनमोहनीय कर्मके क्षयसे उत्पन्न हुए क्षायिकसम्यक्त्वकी अपेक्षा क्षायोपशमिक चेदकसम्यक्त्वका पाना अति सुलभ है ।

शुक्रा—गुणकार क्या है ?

समाधान—आवलीना असख्यातत्रा भाग गुणकार है, क्योंकि, सामान्यसे सौधमस्वगके असयतसम्यग्दष्टि देवोंका भागहार आवलीके असरयातवें भागप्रमाण होता है ।

सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दष्टि जीव सयसे कम हैं ॥ १८ ॥

क्योंकि, अणुप्रतसहित क्षायिकसम्यग्दष्टियोंका होना अत्यन्त दुर्लभ है । तथा तिर्यचोंमें क्षायिकसम्यक्त्वके साथ सयमासयम पाया नहीं जाता है, क्योंकि, तिर्यचोंमें दर्शनमोहनीयकर्मकी क्षपणाका अभाव है ।

शुक्रा—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—' दर्शनमोहनीयका क्षपण करनेवाले जीव नियमसे मनुष्यगतिमें होते हैं ' इस स्थले जाना जाता है ।

तथा जिहोंने पहले तिर्यचायुका वध कर लिया है ऐसे जो भी मनुष्य क्षायिक सम्यक्त्वके साथ तिर्यचोंमें उत्पन्न होते हैं उनके सयमासयम नहीं होता है, क्योंकि, भोगभूमिको छोड़कर उनकी अयम उत्पत्ति असभव है । इसलिये क्षायिकसम्यग्दष्टि सयतासयत जीव सख्यात ही होते हैं, क्योंकि, सयमासयमके साथ क्षायिकसम्यक्त्व

१ दंगममाइरसवनापट्टवगो कम्मभूमिजादो इ । णियमा मणुसगदीए णिट्ठवगो चावि सव्वथ ॥ १॥

मणुमपज्जत्ते मोत्तूण अण्णत्थाभावा । अदो चैय भणिस्समाणात्मखेज्जरासीहितो थोवा ।

उवसमसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १९ ॥

को गुणगारो ? पलिदोत्रमस्स असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पलिदोत्रमपढम-
वगमूलाणि । को पडिभागो ? खइयसम्मादिट्ठिसजदासजदमेत्तसंखेज्जरूपपडिभागो । कुदो ?
असंखेज्जात्रलियाहि पलिदोत्रमे खंडिदे तत्थ एयसडमेत्ताणमुवसमसम्मत्तेण सह सजदा-
सजदानमुवलंभा ।

वेदगसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २० ॥

को गुणगारो ? आत्रलियाए असंखेज्जदिभागो । एसो उपसमसम्मादिट्ठिउक्कस्स-
सचयादो वेदगसम्मादिट्ठिउक्कस्ससंचयस्स सातरस्स^१ गुणगारो, अण्णहा पुण पलिदो-
वमस्स असंखेज्जदिभागो गुणगारो, उवसमसम्मादिट्ठिरासिस्स सातरस्स कयाइ एग-
जीरस्स मि उपलभा । वेदगसम्मादिट्ठिरासी पुण सव्वकालं पलिदोत्रमस्स असंखेज्जदि-
भागमेत्तो चैय, गिरंतरस्स समाणायच्चयस्म अण्णरूपात्तिविरोहा ।

पर्याप्त मनुष्योंको छोड़कर दूसरी गतिमें नहीं पाया जाता है । ओर इसीलिये सयता-
सयत क्षायिकसम्यग्दृष्टि आगे कहीं जानेवाली असख्यात राशियोंसे कम होते हैं ।

संयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि संयतासयत
असख्यातगुणित हैं ॥ १९ ॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्योपमके
असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? क्षायिकसम्यग्दृष्टि सयतासयतोंकी
जितनी सख्या है तत्प्रमाण सख्यातरूप प्रतिभाग है, क्योंकि, असख्यात आवलियोंसे
पल्योपमके खंडित करने पर उनमेंसे एक खंड मात्र उपशमसम्यक्त्वके साथ सयता
सयत जीव पाये जाते हैं ।

सयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि असंख्यातगुणित
हैं ॥ २० ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । उपशमसम्यग्दृष्टि
योंके उत्कृष्ट सचयसे वेदकसम्यग्दृष्टियोंके उत्कृष्ट सान्तर सचयका यह गुणकार है ।
अन्यथा पल्योपमका असख्यातवा भाग गुणकार होता है, क्योंकि, उपशमसम्यग्दृष्टिराशि
सातर है, इसलिये कदाचित् एक जीवकी भी उपलब्धि होती है । परन्तु वेदकसम्यग्दृष्टि
राशि सर्वकाल पल्योपमके असख्यातवै भागमात्र ही रहती है, क्योंकि, जिस राशिका
आय और व्यय समान है और जो अन्तर-रहित है, उसको अन्यरूप माननेमें विरोध
आता है ।

१ ' सातरस्स ' इति पाठ केवल म ' प्रती अस्ति, अयमप्रतिपु नास्ति ।

पमत्तापमत्तसंजदद्वाने सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ २१ ॥

कुदो ? अतोमुहुत्तद्वासचयादो, उवसमसम्मत्तेण सह पाएण सजम पडिवज्ज
ताणमभावादो च ।

खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ २२ ॥

अंतोमुहुत्तेण सचिदउवसमसम्मादिट्ठीहितो देवणपुच्चकोडीसचिदसइयसम्मा
दिट्ठीण सखेज्जगुणत्त पडि पिरोहाभावा । को गुणगारो ? सखेज्जा समया ।

वेदगसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ २३ ॥

कुदो ? सइयादो खओउसमियस्स सम्मत्तस्स पाएण सभवा । को गुणगारो ?
सखेज्जा समया ।

एव तिसु वि अद्वासु ॥ २४ ॥

जधा पमत्तापमत्तसजदाण सम्मत्तप्पाउहुअ परुनिद, तहा तिसु उवसामगद्वासु
परुवेदव्व । त जहा— सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी । सइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ।

प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम
हैं ॥ २१ ॥

फ्योंकि, एक तो उपशमसम्यग्दृष्टियोंके सचयका काल अन्तमुहूर्तमात्र है, और
दूसरे उपशमसम्यक्त्वके साथ बहुलतासे समयको प्राप्त होनेवाले जीवोंका अभाव है ।

प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिक
सम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ २२ ॥

अन्तमुहूर्तसे सचित होनेवाले उपशमसम्यग्दृष्टियोंकी अपेक्षा कुछ कम पूर्वकोटि
कालसे सचित होनेवाले क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके सरयातगुणित होनेमें कोई विरोध नहीं
है । गुणकार क्या है ? सरयात समय गुणकार है ।

प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें वेदकसम्यग्दृष्टि
जीव सरयातगुणित हैं ॥ २३ ॥

फ्योंकि, क्षायिकसम्यक्त्वकी अपेक्षा क्षायोपशमिकसम्यक्त्वका होना अधिक
तासे सम्भव है । गुणकार क्या है ? सरयात समय गुणकार है ।

इसी प्रकार अपूर्वकरण आदि तीन उपशामक गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी
अल्पगुणत्व है ॥ २४ ॥

जिस प्रकार प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत जीवोंके सम्यक्त्वका अल्पगुणत्व कहा
है, उसी प्रकार आदिके तीन उपशामक गुणस्थानोंमें भी प्ररूपण करना चाहिए । वह इस
प्रकार है— तीनों उपशामक गुणस्थानोंमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं । उनसे

कारण, द्रव्याहियत्तादो । वेदगसम्मादिट्टी णत्थि, तेण सह उअसमसेडीआरोहणाभावा । उअसतकसाएसु सम्मत्तप्पावहुग किण्ण परूनिदं ? ण एस दोसो, तिसु अद्दासु सम्मत्त-
प्पावहुगे अवगदे तत्थ णि तदनगमादो । सुहं गहणट्ठं चदुसु उअसमाएसु चि' किण्ण
परूनिदं ? ण, 'एगजोगणिद्धिट्ठाणमेगदेसो णाणुअट्टदि' चि णायादो उवरि चदुण्हमणुउत्ति-
प्पसंगा । होदु चे ण, पडिजोगीण चदुण्हमुवसामगाणमभावा ।

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ २५ ॥

कुदो ? थोवायुपदेसादो' सकल्लिदसचयस्स' णि थोवत्तस्स णायसिद्धत्तादो ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सख्यातगुणित हैं, क्योंकि, क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंका यहा द्रव्यप्रमाण अधिक पाया जाता है । उपशमश्रेणीमें वेदकसम्यग्दृष्टि जीव नहीं पाये जाते हैं, क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वके साथ उपशमश्रेणीके आरोहणका अभाव है ।

शंका—उपशान्तकपाय गुणस्थानवर्ती जीवोंमें सम्यक्त्वका अल्पबहुत्व क्यों नहीं कहा ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, तीनों उपशामक गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वका अल्पबहुत्व ज्ञात हो जाने पर उपशान्तकपाय गुणस्थानमें भी उसका ज्ञान हो जाता है ।

शंका—सुख अर्थात् सुगमतापूर्वक ज्ञान होनेके लिए 'चारों उपशामक गुणस्थानोंमें' ऐसा सूत्रमें क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, 'जिनका निर्देश एक समासके द्वारा किया जाता है उनके एक देशकी अनुवृत्ति नहीं होती है' इस न्यायके अनुसार आगे कहे जानेवाले सूत्रोंमें चारों गुणस्थानोंकी अनुवृत्तिका प्रसंग प्राप्त होगा ।

शंका—यदि आगे चारों उपशामकोंकी अनुवृत्तिका प्रसंग आता है, तो आने दो, क्या दोष है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, चारों उपशामकोंके प्रतियोगियोंका अभाव है । अर्थात् जिस प्रकार अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानोंके भीतर उपशामक और उनके प्रतियोगी क्षपक पाये जाते हैं, उसी प्रकार चोथे उपशामक अर्थात् ग्यारहवें गुणस्थानमें उपशामकोंके प्रतियोगी क्षपक नहीं पाये जाते हैं ।

अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव सबसे कम है ॥ २५ ॥

क्योंकि, अल्प आयका उपदेश होनेसे सचित होनेवाली राशिके स्तोत्रकपना अर्थात् कम होना न्यायसिद्ध है ।

१ प्रतिशु 'उवसामण ह्ये' इति पाठ ।

२ प्रतिशु 'अणउत्थिप्पसगा' इति पाठ ।

३ प्रतिशु 'थोवपु पदेसादो' इति पाठ ।

४ प्रतिशु 'सकल्लिदसचयस्स' इति पाठ ।

सवा संखेज्जगुणा ॥ २६ ॥

बुद्धो ? सखेज्जगुणायादो मचउत्तलभा । उरमम-उरगणमेटमप्पाचहुग पुच्च
 परुत्तिदिमिदि एत्थ ण परुत्तिदच्च ? ण, पुच्चमुत्तममग सखगपवेमगणमप्पाचहुगस्यणादो ।
 तदो चेत्त सचयप्पाचहुगमिद्धीण होदीदि चे सच्चं होदि, जुत्तीदो । जुत्तिगटे अणि
 उणमत्ताणुग्गहट्टमेटमप्पाचहुग पुणो णि परुत्तिद । उरगमेटीण मम्मत्ताणुग्ग
 परुत्तिद ? ण, त्तिं सखयसम्मत्त मोत्तूण अण्णमम्मत्ताभात्ता । त बूदो णच्चदे ? उरगेषु
 उरसम-वेदगसम्मादिट्ठिदन्नादिपरुत्तयसुत्ताणुत्तलभा । उरसमा गत्ता त्ति मद्दा उरमम
 सम्मत्त-सखयसम्मत्ताण चाचया ण होत्ति त्ति भणत्ताणमभिप्पाण्ण सखयसम्मत्तस्स

अपूर्वरण आदि तीन गुणस्थानरती उपशामरोगे तीनों गुणस्थानरती क्षप
 जीव सरयात्तगुणित है ॥ २६ ॥

क्योंकि, सख्यात्तगुणित आयसे क्षपकोंदा सख्य पाया जाता है ।

शका—उपशामक और क्षपकोंदा यह अल्पबहुत्व पहले कहा थाये हैं, इसलिये
 यहा नहीं कहना चाहिये ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, पहले उपशामक और क्षपक जीवोंके प्रवेशकी अपेक्षा
 अल्पबहुत्व कहा है ।

शका—उसीसे सचयके अल्पबहुत्वकी सिद्धि हो जायगी (फिर उसे पृथक्
 क्यों कहा) ?

समाधान—यह सत्य है कि युक्तिसे अल्पबहुत्वकी सिद्धि हो सकती है । किंतु
 जो शिष्य युक्तिवादमें निपुण नहीं हैं, उनके अनुग्रहके लिये यह अल्पबहुत्व पुन भी
 कहा है ।

शका—क्षपकधेणीमें सम्यक्त्वका अल्पबहुत्व क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, क्षपकधेणीवालोंके क्षायिकसम्यक्त्वको छाड़कर अथ
 सम्यक्त्व नहीं पाया जाता है ।

शका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि, क्षपकधेणीवाले जीवोंमें उपशामसम्यग्दृष्टि और वेदक
 सम्यग्दृष्टि जीवोंके द्रव्य अर्थात् सरया और धादि पदसे श्लेष, स्पर्शन आदिके प्ररूपक
 सख नहीं पाये जाते हैं । उपशामक और क्षपक, ये दोनों शब्द प्रमश उपशामसम्यक्त्व
 और क्षायिकसम्यक्त्वके वाचक नहीं हैं, ऐसा कथन करनेवाले आचार्योंके अभिप्रायसे

अप्पात्रहुगपररुवयाणि, पुञ्चमपररुनिदररुगुनसामगसंचयस्स अप्पात्रहुगपररुवयाणि वा दो वि सुत्ताणि चि धेत्तव्व ।

एव ओघपररुणा समत्ता ।

आदेसेण गदियाणुवादेण णिरयगदीए णेरइएसु सव्वत्थोवा सासणसम्मादिट्ठी' ॥ २७ ॥

आदेसवयण ओघपडिसेहफल । सेसमग्गणादिपडिसेहट्टु गदियाणुवादवयण । सेसगदिपडिसेहणट्टो णिरयगदिणिदेमो । सेसगुणट्टाणपडिसेहट्टो सासणणिहेसो । उवरि उच्चमाणगुणट्टाणदब्बेहिंतो सासणा दच्चपमाणेण थोरा अप्पा इदि उत्तं हादि ।

सम्मामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणां ॥ २८ ॥

हुदो ? सासणुनकरुमणकालादो सम्मामिच्छादिट्ठिउनकरुमणकालस्स सखेज्जगुणस्स उवलभा । को गुणगारो ? सखेज्जसमया । हेट्ठिमरासिणा उवरिमरासिम्हि भारो

ये दोनों सूत्र क्षायिकसम्यक्त्वके अल्पवहुत्वके प्ररूपक हैं, तथा पहले नहीं प्ररूपण किये गये क्षपण और उपशामकरुसम्बन्धी सचयके अल्पवहुत्वके प्ररूपक हैं, ऐसा अर्थ ग्रहण करना चाहिए ।

इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई ।

आदेशकी अपेक्षा गतिमार्गणाके अनुवादासे नरकगतियें नारकियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि जीव सनसे कम हैं ॥ २७ ॥

सूत्रमें 'आदेश' यह वचन ओघका प्रतिषेध करनेके लिए है । शेष मार्गणा आदिके प्रतिषेध करनेके लिए 'गतिमार्गणाके अनुवादासे' यह वचन कहा है । शेष गतिपोंके प्रतिषेधके लिए 'नरकगति' इस पदका निर्देश किया । शेष गुणस्थानोंके प्रतिषेधार्थ 'सासादन' इस पदका निर्देश किया । ऊपर कहे जानेवाले शेष गुणस्थानोंके द्रव्यप्रमाणोंकी अपेक्षा सासादनसम्यग्दृष्टि जीव द्रव्यप्रमाणसे स्तोक अर्थात् अल्प होते हैं, यह अर्थ कहा गया है ।

नारकियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव सख्यातगुणित हैं ॥ २८ ॥

क्योंकि, सासादनसम्यग्दृष्टियोंके उपनमणकालसे सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका उपनमणकाल सख्यातगुणा पाया जाता है । गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है । अधस्तनराशिका उपरिमराशियोंमें भाग देने पर गुणकारका प्रमाण आता है । अधस्तन

१ विशेषेण गत्यनुवादेन नरकगतौ सर्वासु पृथिवीसु सर्वत स्तोत्रा सासादनसम्यग्दृष्टि । स सि १, ८

२ सम्मामिथ्यादृष्टय सखेयगुणा । स सि १, ८

द्विचिअंगुलपिदियग्गमूले भागे हिदे लद्धम्मि जत्तियाणि रूपाणि तत्तियाणि अंगुलपढम-
वग्गमूलाणि । कुदो ? दच्चनिकरुभइची घणगुलपिदियग्गमूलमेत्ता, असंजदसम्मा-
दिट्ठीहि तम्मि घणगुलपिदियग्गमूले ओरट्टिदे असखेज्जाणि सूचिअंगुलपढमग्ग-
मूलाणि होंति त्ति तंत-जुत्तिसिद्धीदो । तत्थ जेत्तियाणि रूपाणि तेत्तियमेत्ता सेडीओ
गुणगारो होदि ।

असंजदसम्माइट्टिट्ठाणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ३१ ॥

कुदो ? अतोमुहुत्तमेत्तुउसमसम्मत्तद्वाए उउक्कमणकालेण आउलियाए असखेज्जदि-
भागेण संचिदत्तादो उच्चमाणसव्वसम्मादिट्ठिरामीहितो उउसमसम्मादिट्ठी थोवा होंति ।

खइयसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ३२ ॥

कुदो ? सहानदो चेउ उउसमसम्मादिट्ठीहितो असखेज्जगुणसरूपेण खइयसम्मा-
इट्ठीणमणाइणिहणमउट्ठाणादो, सखेज्जपलिदोउमउभतरे पलिदोउमसस असखेज्जदिभाग-
मेत्तुउक्कमणकालेण सचिदत्तादो असखेज्जगुणा त्ति वुत्त होदि । एत्थतणखइयसम्मा-
दिट्ठीण भागहारो असखेज्जाउलियाओ । कुदो ? ओघासजदसम्मादिट्ठीहितो असंखेज्ज-

माजित करने पर लब्धमें जितना प्रमाण आवे, उतने सूच्यगुलके प्रथम वर्गमूल गुणकार-
विष्कमसूचीमें होते हैं, क्योंकि, द्व्यविष्कमसूची घनागुलके द्वितीय वर्गमूलमात्र है ।
इसलिए असयतसम्यग्दृष्टियोंके प्रमाणसे उस घनागुलके द्वितीय वर्गमूलके अपवर्तित
कर देनेपर सूच्यगुलके असख्यात प्रथम वर्गमूल होते हैं, यह प्रकार आगम और युक्तिसे
सिद्ध है । अतएव वहापर जितनी सख्या हो तन्मात्र जगश्रेणिया यहापर गुणकार है ।

नारकियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि सत्रसे कम हैं ॥३१॥

क्योंकि, अन्तर्मुहूर्तमात्र उपशमसम्यक्त्वके कालमें आवलीके असख्यातवें भाग-
प्रमाण उपरुमणकाल द्वारा सचित होनेके कारण भागे कहे जानेवाले सर्व प्रकारके
सम्यग्दृष्टियोंकी राशियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव थोड़े होते हैं ।

नारकियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि
असख्यातगुणित है ॥ ३२ ॥

क्योंकि, स्वभावसे ही उपशमसम्यग्दृष्टियोंकी अपेक्षा क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंका
असख्यातगुणितरूपसे अनादिनिघन अवस्थान है, जिसका तात्पर्य यह है कि सख्यात
पत्योपमके भीतर पत्योपमके असख्यातवें भागमात्र उपरुमणकाल द्वारा सचित होनेसे
क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे असख्यातगुणित है । यहा नारकियोंमें जो
क्षायिकसम्यग्दृष्टि हैं उनके प्रमाणके लानेके लिए भागहारका प्रमाण असख्यात आवलिया
है, क्योंकि, ओघ असयतसम्यग्दृष्टियोंसे असख्यातगुणित हीन ओघ क्षायिकसम्यग्दृष्टि

हिदे गुणगारो आगच्छदि । को हेडिमरासी ? जो थोरो । जो पुण बहु सो उवरिमरासी
एदमत्थपद जहाउसर सब्बत्थ वत्तच्च ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणां ॥ २९ ॥

कुदो ? सम्मामिच्छादिट्ठिउपक्कमणकालादो अमजदसम्मादिट्ठिउपक्कमणकालस
असखेज्जगुणस्स भभउवलभा, सम्मामिच्छत्त पडिउज्जमाणजीवेहिंतो सम्मत्त पडिउज्ज
माणजीवाणमसखेज्जगुणत्तादो वा । को गुणगारो ? जाउलियाए असखेज्जदिभागो । हेडिम
रासिणा उपरिमराभिमोउट्ठिय गुणगारो साहेयच्चो ।

मिच्छादिट्ठी असखेज्जगुणां ॥ ३० ॥

को गुणगारो ? असखेज्जाओ सेडीओ पदरस्स असखेज्जदिभागो । तासिं सेटीण
विक्खभसूची अगुलस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि अगुलउग्गमूलाणि त्रिदियग्ग
मूलस्स असखेज्जभागमेत्ताणि । त जधा- असजदसम्मादिट्ठीहि सूचिअगुलत्रिदियवग्गमूल
गुणेदूण तेण सूचिअगुले भागे हिदे लद्धमगुलस्स असखेज्जदिभागो । असखेज्जाणि अगुल
वग्गमूलाणि गुणगारनिस्सभसूची होदि चि कध णव्वदे ? उच्चवे- अमजदसम्मादिट्ठीहि

राशि कौनसी है ? जो अल्प होती है, वह अधस्तनराशि है, और जो बहुत होती है, वह
उपरिमराशि है । यह अथपद यथावसर सर्वत्र कहना चाहिए ।

नारकियोंमें असयतसम्यग्दृष्टियोंसे असयतसम्यग्दृष्टि असख्यातगुणित हैं ॥२९॥

क्योंकि, सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके उपक्रमणकालसे असयतसम्यग्दृष्टियोंका उपक्रमण
काल असख्यातगुणा पाया जाता है । अथवा, सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंसे
सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीव असख्यातगुणित होते हैं । गुणकार क्या है ?
आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । अधस्तनराशिसे उपरिमराशिको अपवर्तित
करके गुणकार सिद्ध कर लेना चाहिए ।

नारकियोंमें असयतसम्यग्दृष्टियोंके मिथ्यादृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥३०॥

गुणकार क्या है ? असख्यात जगध्रेणिया गुणकार है, जो जगध्रेणिया जगप्रतके
असख्यातवें भागप्रमाण हैं । उन जगध्रेणियोंकी विष्कभसूची अगुलके असख्यातवें भाग
प्रमाण है । जिसका प्रमाण अगुलके द्वितीय वर्गमूलके असख्यातवें भागमात्र असख्यात
प्रथम वर्गमूल है, वह इस प्रकार है- असयतसम्यग्दृष्टियोंके प्रमाणसे सूच्यगुलके द्वितीय
वर्गमूलको गुणित करके जो लब्ध भावे, उससे सूच्यगुलमें भाग देने पर अगुलका
असख्यातवा भाग लब्ध जाता है ।

शुभा-अगुलके असख्यात वर्गमूल गुणकार विष्कभसूची है, यह कैसे जाना
जाता है ?

समाधान-असयतसम्यग्दृष्टियोंके प्रमाणसे सूच्यगुलके द्वितीय वर्गमूलके

असयतसम्यग्दृष्टियोंके प्रमाणसे सूच्यगुलके द्वितीय वर्गमूलके । स वि १, ८ २ मिथ्यादृष्टयोः सख्यायणा । स वि १, ६

सूचिअगुलनिदियग्गमूले भागे हिदे लद्धम्मि जत्तियाणि रूपाणि तत्तियाणि अंगुलपढम-
वग्गमूलाणि । कुदो ? दच्चनिकरभसूची घणगुलनिदियग्गमूलमेत्ता, असंजदसम्मा-
दिट्ठीहि तम्मि घणगुलनिदियग्गमूले ओणट्टिदे अससेज्जाणि सूचिअगुलपढमवग्ग-
मूलाणि होंति त्ति तंत जुत्तिसिद्धीदो । तत्थ जेत्तियाणि रूपाणि तेत्तियमेत्ता सेडीओ
गुणगारो होदि ।

असंजदसम्माइट्टिट्ठाणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ३१ ॥

कुदो ? अंतोमुहुत्तमेत्तुअसमसम्मत्तद्वाए उअक्कमणकालेण आअलियाए असंखेज्जदि-
भागेण संचिदत्तादो उच्चमाणसच्चसम्मादिट्ठिरासीहिंतो उअसमसम्मादिट्ठी थोवा होंति ।

खइयसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ३२ ॥

कुदो ? सहाअदो चैव उअसमसम्मादिट्ठीहिंतो अससेज्जगुणसरूपेण खइयसम्मा-
इट्ठीणमणाइणिहणमअट्ठाणादो, ससेज्जपलिटोवमच्चत्ते पलिटोअमस्स असंखेज्जदिभाग-
मेत्तुअक्कमणकालेण सचिदत्तादो असंखेज्जगुणा त्ति वुत्त होदि । एत्थतणखइयसम्मा-
दिट्ठीण भागहारो अससेज्जाअलियाओ । कुदो ? ओघासजदसम्मादिट्ठीहिंतो असंखेज्ज-

भाजित करने पर लब्धमें जितना प्रमाण थावे, उतने सूच्यगुलके प्रथम वर्गमूल गुणकार-
विष्कभसूचीमें होते ह, क्योंकि, द्रव्यविष्कभसूची घनागुलके द्वितीय वर्गमूलमात्र है ।
इसलिए असयतसम्यग्दृष्टियोंके प्रमाणसे उस घनागुलके द्वितीय वर्गमूलके अपवर्तित
कर देनेपर सूच्यगुलके असख्यात प्रथम वर्गमूल होते हैं, यह प्रकार आगम और युक्तिसे
सिद्ध है । अतएव वहापर जितनी सख्या हो तन्मात्र जगध्रेणिया यहापर गुणकार है ।

नारकियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि सत्रसे कम हैं ॥३१॥

क्योंकि, अन्तर्मुहूर्तमात्र उपशमसम्यग्दृष्टिके कालमें आवलीके असख्यातवें भाग-
प्रमाण उपशमणकाल द्वारा सचित होनेके कारण आगे कहे जानेवाले सर्व प्रकारके
सम्यग्दृष्टियोंकी राशियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव थोडे होते ह ।

**नारकियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि
अमरयातगुणित हैं ॥ ३२ ॥**

क्योंकि, स्वभावसे ही उपशमसम्यग्दृष्टियोंकी अपेक्षा क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंका
असख्यातगुणितरूपसे अनादिनिधन अवस्थान है, जिसका तात्पर्य यह है कि सख्यात
पल्योपमके भीतर पल्योपमके असख्यातवें भागमात्र उपशमणकाल द्वारा सचित होनेसे
क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे असख्यातगुणित हैं । यहा नारकियोंमें जो
क्षायिकसम्यग्दृष्टि हैं उनके प्रमाणके लानेके लिए भागहारका प्रमाण असख्यात आवलिया
है, क्योंकि, ओघ असयतसम्यग्दृष्टियोंसे असख्यातगुणित हीन ओघ क्षायिकसम्यग्दृष्टि

गुणहीणओघरुइयसम्मादिद्वीण असखेज्जदिभागमेत्तादो । ण वासपुधत्तरसुत्तेण म
निरोहो, सोहम्मीसाणरूप्य मोत्तूण अण्णत्थ द्विदरुइयसम्मादिद्वीण वासपुधत्तसमिउलत्त
चाडणो' गहणादो । त तथा वैप्पदि त्ति कुदो णव्वदे ? जोघुत्तसमसम्मादिद्वीहिं
ओघरुइयसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा त्ति अप्पात्तहुअसुत्तादो ।

वेदगसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ ३३ ॥

कुदो ? रुइयसम्मात्तादो रओत्तसमियस्स वेदगसम्मतस्स सुलहत्तुत्तलभा ।
गुणगारो ? आत्तलियाए असखेज्जदिभागो । कथमेद णव्वदे ? आइरियपरपराग
वदेसादो ।

एव पढमाए पुढवीए णेरइया ॥ ३४ ॥

जहा सामण्णणेरइयाणमप्पात्तहुअ परुत्तिद, तथा पढमपुढवीणेरइयाणमप्पात्तहुअ
वेदव्वं, ओघणेरइयअप्पात्तहुआलात्तादो पढमपुढवीणेरइयाणमप्पात्तहुआलात्तस्स भेदाभा

जीव असख्यातयें भाग ही होते हैं। इस कथनका चर्चपृथक्त्व अन्तर यतानेवाले स
साथ विरोध भी नहीं आता है, क्योंकि, सोधर्म और पेशानकल्पको छोडकर अ
स्वित क्षायिन्ससम्यग्दृष्टियोंने अन्तरमें कह गये चपपृथक्त्वके 'पृथक्त्व' शब्दको वैपु
वाची ग्रहण किया गया है।

शंका—यहा पर पृथक्त्वका अर्थ वैपुल्यवाची ग्रहण किया गया है, यह
जाना जाता है ?

समाधान—'ओघ उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे ओघ क्षायिन्ससम्यग्दृष्टि जीव
ख्यातगुणित हैं' इस अल्पबहुत्वके प्रतिपादक सूत्रसे जाना जाता है।

नारकियोंमें अमयत्तसम्यग्दृष्टि गुणम्यानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्
अमग्यातगुणित है ॥ ३३ ॥

क्योंकि, क्षायिन्ससम्यक्त्वकी अपेक्षा क्षायोपशमिक वेदकसम्यक्त्वकी प्र
सुलभ है। गुणकार क्या है ? आचलीका असख्यातवा भाग गुणकार है।

शंका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—आचार्य परम्पराने आये हुए उपदेशके द्वारा जाना जाता है।

इसी प्रकार प्रथम पृथिवीमें नारकियोंका अल्पबहुत्व है ॥ ३४ ॥

जिस प्रकार सामान्य नारकियोंका अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार पहली
धार्के नारकियोंका अल्पबहुत्व कहना चाहिए, क्योंकि, सामान्य नारकियोंके अल्पव
कथनसे पहली पृथिवीके नारकियोंने अल्पबहुत्वके कथनमें कोई भेद नहीं है।

पञ्चनद्वियणए अउलंनिज्जमाणे अत्थि त्रिसेसो, सो जाणिय वत्तवो ।

विदियाए जाव सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु सव्वत्थोवा सासण-
सम्मादिट्ठी ॥ ३५ ॥

विदियादिछण्हं पुढवीणं सासणसम्मादिट्ठिणो बुद्धीए पुध पुव द्विय सव्वत्थोवा
त्ति उत्तं । कुदो ? छण्हमप्पात्रहुआणमेयत्तनिरोहादो । सव्वेहिंतो योवा सव्वत्थोवा ।
आदि अतेसु णेरइएसु णिदिट्ठेसु सेसमज्झमणेरइया सव्वे णिदिट्ठा चये, जासइच्चार-
णणहाणुपत्तीदो । जासदेण सत्तमपुढवीणेरइयाणं मज्जादचाए ठपिदाए, विदियपुढवी-
णेरइयाणमादिचमानादिद । आदी अत्ता च मज्जेण णिणा ण होंति त्ति चदण्ह पुढवी-
णेरइयाण मज्झमत्त पि जासदेणेय परुविदं । तदो पुध पुव पुढवीणमुच्चारणा ण कदा ।

सम्मामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ३६ ॥

विदियपुढवीआदिसत्तमपुढवीपज्जतसाम्भणणमुवरि पुध पुध छपुढवीसम्मामिच्छा-
दिट्ठिणो संखेज्जगुणा, सासणसम्मादिट्ठिउपक्कमणकालादो सम्मामिच्छादिट्ठिउपक्कमण-
पर्यायाधिकनयका अवलम्बन करने पर कुछ विशेषता है, सो जानकर कहना चाहिए ।
(देखो भाग ३, पृ १६२ इत्यादि ।)

नारकियोंमें दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक सासादनसम्यग्दृष्टि जीव सबसे
क्रम है ॥ ३५ ॥

दूसरीको आदि लेकर छहों पृथिवियोंके सासादनसम्यग्दृष्टियोंको बुद्धिके द्वारा
पृथक् पृथक् स्थापित करने प्रत्येक सत्रसे क्रम है, ऐसा अर्थ कहा गया है, क्योंकि, छहों
अल्पगुत्वोंको एक माननेमें विरोध आता है । सबसे योर्षोंको सर्वस्तोक कहते हैं ।
आदिम और अन्तिम नारकियोंके निर्देश कर देने पर शेष मध्यम सभी नारकियोंका
निर्देश हो ही जाता है, अथवा यावत् शब्दका उच्चारण नहीं बन सकता है । यावत्
शब्दके द्वारा सातवीं पृथिवीके नारकियोंके मर्यादारूपसे स्थापित किये जानेपर
दूसरी पृथिवीके नारकियोंके आदिपना अपने आप आ जाता है । आदि और अन्त मध्यके
विना नहीं होते हैं, इसलिए चार पृथिवियोंके नारकियोंके मध्यमपना भी यावत् शब्दके
द्वारा ही प्ररूपित कर दिया गया । इसी कारण पृथक् पृथक् रूपसे पृथिवियोंका नाम-
निर्देशपूर्वक उच्चारण नहीं किया गया है ।

नारकियोंमें दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्य-
ग्मिध्यादृष्टि जीव सख्यातगुणित हैं ॥ ३६ ॥

दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक सासादनसम्यग्दृष्टियोंके ऊपर पृथक्
पृथक् छह पृथिवियोंके सम्यग्मिध्यादृष्टि नारकी सख्यातगुणित हैं, क्योंकि, सासादन-
सम्यग्दृष्टियोंके उपक्रमणकालसे सम्यग्मिध्यादृष्टियोंका उपक्रमणकाल युक्तिसे सख्यात-

तिरिक्खगदीए तिरिक्ख पंचिदियतिरिक्ख पंचिदियपज्जत्त

तिरिक्ख-पंचिदियजोणिणीसु सव्वत्थोवा सजदासंजदा' ॥ ४१ ॥

पयदचउग्घिहतिरिक्खेसु जे देमव्वइणो ते तेमिं चेष सेसगुणद्व्याणनीरेहितो धोमा
त्ति चदुण्हमप्पावहुआण मूलपदमेदेण परुविद । किमट्ट देसव्वइणो योमा ? सन्ना
सजमुवलभस्स सुदुल्लहत्तादो ।

सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा' ॥ ४२ ॥

चउन्विहतिरिक्खाण जे मामणमम्मादिट्ठिणो ते सग-मगमज्जदामज्जेहितो अस
खेज्जगुणा, सजमासजमुवलभादो मामणगुणलभस्स सुलहत्तुलभा । को गुणगारो ?
आवलियाए अमखेज्जदिभागो । त ऋणव्वदे ? अतोमुट्टत्तमुत्तादो, आइरियपरपरा
गदुव्वेसादो वा ।

सम्मामिच्छादिट्ठिणो सखेज्जगुणा ॥ ४३ ॥

तिर्यंचगतिमं तिर्यंच, पचेन्द्रियतिर्यंच, पचेन्द्रियपर्याप्त और पचेन्द्रिययोनिमती
तिर्यंच जीवोंमें सयतासयत सनसे कम है ॥ ४१ ॥

प्रकृत चारों प्रकारोंके तिर्यंचोंमें जो तिर्यंच वेशवती हैं, वे अपने ही शेष गुण
स्थानवर्ती जीवोंसे थोड़े हैं, इस प्रकार इससे चार प्रकारके तिर्यंचोंके अल्पबहुत्वका
मूलपद प्ररूपण किया गया है ।

शक्रा—वेशवती अल्प क्यों होते ह ?

समाधान—क्योंकि, सयमासयमनी प्राप्ति अतिदुर्लभ है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्यंचोंमें सयतामयतोंमें सामादनसम्यग्दृष्टि जीव असरयात
गुणित है ॥ ४२ ॥

चारों प्रकारके तिर्यंचोंमें जो सासादनसम्यग्दृष्टि जीव ह, वे अपने अपने सयता
तासे असख्यातगुणित हैं, क्योंकि, सयमासयम प्राप्तिनी अपेक्षा सासादन गुण
नी प्राप्ति सुलभ है । गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

- जाता है ?

प्रतिपादक सूत्रसे और आचार्य परम्परासे

चउच्चिहतिरिक्वसासणसम्मादिट्टीहिंतो सग सगसम्मामिच्छादिट्टिणो सखेज्ज-
गुणा । कुदो ? सामणुक्कमणकालादो सम्मामिच्छादिट्टीणमुक्कमणकालस्स तत-जुत्तीए
सखेज्जगुणुत्तुलभा । को गुणगारो ? सखेज्जममया ।

असंजदसम्मादिट्टी असखेज्जगुणा ॥ ४४ ॥

चउच्चिहतिरिक्वसम्मामिच्छादिट्टीहिंतो तेमिं चेव असंजदसम्मामिच्छादिट्टिणो असखेज्ज-
गुणा । कुदो ? सम्मामिच्छत्तमुक्कमणतजीणेहिंतो सम्मत्तमुक्कमणतजीणममसखेज्जगुण-
त्तादो । को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । त कुदो णव्वदे ? 'पल्लिदोममं-
वहिरदि जंतोमुहुत्तेणेत्ति' सुत्तादो, आइरियपरपरागदुत्तदेमादो वा ।

मिच्छादिट्टी अणतगुणा, मिच्छादिट्टी असखेज्जगुणा ॥ ४५ ॥

चदुण्ह तिरिक्वसाणमसंजदसम्मामिच्छादिट्टीहिंतो तेमिं चेव मिच्छादिट्टी अणतगुणा
असखेज्जगुणा य । तिप्पडिसिद्धमिद । जदि अणतगुणा, कधमसखेज्जगुणत्त ? अह

चारों प्रकारके सासादनसम्यग्दृष्टि तिर्यचोंसे अपने अपने सम्यग्मिथ्यादृष्टि
तिर्यच सख्यातगुणित हं, क्योंकि, सासादनसम्यग्दृष्टियोंके उपनमणकालसे सम्यग्मिथ्या
दृष्टियोंका उपनमणकाल आगम और बुक्तिके मन्व्यातगुणा पाया जाता है । गुणकार
क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्यचोंमें सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंसे असंयतसम्यग्दृष्टि जीव
असंरयातगुणित हैं ॥ ४४ ॥

चारों प्रकारके सम्यग्मिथ्यादृष्टि तिर्यचासे उनके ही असंयतसम्यग्दृष्टि जीव
असख्यातगुणित हं, क्योंकि, सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंसे सम्यक्त्वको प्राप्त
होनेवाले जीव असख्यातगुणित होते हैं । गुणकार क्या है ? आपलीमा असख्यातवा
भाग गुणकार है ।

शुद्धा—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—'इन जीवराशियोंके प्रमाणद्वारा अनन्तमुहूर्त कालसे पल्लोपम अपहृत
होता है' इस द्रव्यानुरयोगद्वारके सूत्रसे और आचार्य परम्परासे आये हुए उपदेशसे
जाना जाता है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्यचोंमें असंयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव अनन्त-
गुणित हैं, और मिथ्यादृष्टि जीव असंरयातगुणित हैं ॥ ४५ ॥

चारों प्रकारके असंयतसम्यग्दृष्टि तिर्यचोंसे उनके ही मिथ्यादृष्टि तिर्यच अनन्त-
गुणित हैं और असख्यातगुणित भी हैं ।

शुद्धा—यह बात तो विप्रतिषिद्ध अर्थात् परस्पर विरोधी है । यदि अनन्त
गुणित हैं, तो वहा असख्यातगुणत्व नहीं बन सकता है, और यदि असख्यातगुणित हैं, तो

तिरिक्खगदीए तिरिक्ख पंचिदियतिरिक्ख पंचिदियपज्जत्त
तिरिक्ख पचिदियजोणिणीसु सच्चत्थोवा सजदासजदा' ॥ ४१ ॥

पयदचउच्चिहतिरिक्खेसु जे देसच्चइणो ते तेमिं चेत्त मेसगुणद्वानजीवेहिंते धोवा
त्ति वदुण्हमप्पात्तुआण मूलपदमेदेण परुत्तिद । किमद्व देसच्चइणो थोत्ता ? मज्जा
सजमुत्तलभस्स सुदुल्लहत्तादो ।

सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा' ॥ ४२ ॥

चउच्चिहतिरिक्खाण जे मामणसम्मादिट्ठिणो ते सग-सगमज्जदामज्जेहिंते अत्त
खेज्जगुणा, सज्जमासज्जमुत्तलभादो सामणगुणलभस्स सुलहत्तुत्तलभा । को गुणगारो ?
आत्तलियाए अत्तखेज्जदिभागो । त कथं णत्तदे ? अत्तोत्तुत्तसुत्तादो, जाइत्तियपरपरा
गदुत्तदेत्तादो वा ।

सम्मामिच्छादिट्ठिणो संखेज्जगुणा ॥ ४३ ॥

तिर्यंचगतिमें तिर्यंच, पचेन्द्रियतिर्यंच, पचेन्द्रियपर्याप्त और पचेन्द्रिययोनिमती
तिर्यंच जीवोंमें सयतासयत्त सत्तसे कम हैं ॥ ४१ ॥

प्रवृत्त चारों प्रकारोंके तिर्यंचोंमें जो तिर्यंच देशवर्ती हैं, वे अपने ही शेष गुण
स्थानवर्ती जीवोंसे थोड़े हैं, इस प्रकार इससे चारों प्रकारके तिर्यंचोंके अल्पवहुत्वका
मूलपद प्ररूपण किया गया है ।

शुद्धा—देशवर्ती अल्प क्या होते हैं ?

समाधान—क्योंकि, सयमासयमकी प्राप्ति अतिदुर्लभ है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्यंचोंमें सयतासयत्तोंसे सासादनसम्यग्दृष्टि जीव असरयात्त
गुणित हैं ॥ ४२ ॥

चारों प्रकारके तिर्यंचोंमें जो सासादनसम्यग्दृष्टि जीव हैं, वे अपने अपने सयता
सयत्तोंसे असख्यात्तगुणित हैं, क्योंकि, सयमासयम प्राप्तिकी अपेक्षा सासादन गुण
स्थानकी प्राप्ति सुलभ है । गुणकार क्या है ? आबलीका असख्यात्तवा भाग गुणकार है ।

शुद्धा—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—अत्तमुत्त अत्तवहारकालके प्रतिपादक सूत्रसे और आचार्य परम्परासे
आये हुए उपदेशसे यह जाना जाता है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्यंचोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिव्यादृष्टि जीव
मरयात्तगुणित हैं ॥ ४३ ॥

१ तिर्यग्गती तिरिक्खां सवत्त स्तोत्ता संयत्तामयत्ता । सत्त सि १, ८

२ इत्तेषां सामायक्त्त । सत्त सि १, ८

चउच्चिहतिरिक्खसासणमम्मादिट्ठीहिंतो सग सगसम्मामिच्छादिट्ठीणो सखेज्ज-
गुणा । कुदो ? सासणुनरुमणकालादो सम्मामिच्छादिट्ठीणमुनरुमणकालस्स तत जुत्तीए
सखेज्जगुणत्तुलभा । को गुणगारो ? सखेज्जसमया ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ४४ ॥

चउच्चिहतिरिक्खमम्मामिच्छादिट्ठीहिंतो तेमिं चेअ अमजदमम्मादिट्ठीणो असखेज्ज-
गुणा । कुदो ? सम्मामिच्छत्तमुनरुमतजीणेहिंतो सम्मत्तमुवक्कमतजीवाणमसखेज्जगुण-
त्तादो । को गुणगारो ? आअलियाए अमखेज्जदिभागो । त कुदो णव्वदे ? ' पल्लिदोअमम-
वहिरदि अतोसुहुत्तेणेत्ति ' सुत्तादो, आअरियपरपगगदुअदेमादो वा ।

मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा, मिच्छादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ४५ ॥

चदुण्ह तिरिक्खाणमसजदसम्मादिट्ठीहिंतो तेसिं चेअ मिच्छादिट्ठी अणतगुणा
अमखेज्जगुणा य । मिप्पडिसिद्धमिद । जदि अणतगुणा, कधमसखेज्जगुणत्त ? अह

चारों प्रकारके सासादनसम्यग्दृष्टि तिर्यचोंसे अपने अपने सम्यग्मिथ्यादृष्टि
तिर्यच सख्यातगुणित है, क्योंकि, सासादनसम्यग्दृष्टियोंके उपक्रमणकालसे सम्यग्मिथ्या-
दृष्टियोंका उपक्रमणकाल आगम और युक्तिसे सख्यातगुणा पाया जाता है । गुणकार
क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्यचोंमें सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंसे असयतसम्यग्दृष्टि जीव
असख्यातगुणित हैं ॥ ४४ ॥

चारों प्रकारके सम्यग्मिथ्यादृष्टि तिर्यचोंसे उनके ही असयतसम्यग्दृष्टि जीव
असख्यातगुणित हैं, क्योंकि, सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंसे सम्यक्त्वको प्राप्त
होनेवाले जीव असख्यातगुणित होते हैं । गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा
भाग गुणकार है ।

शंका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—' इन जीवराशियोंके प्रमाणद्वारा अन्तर्मुहूर्त कालसे पत्योपम अपहृत
होता है ' इस द्रव्यानुयोगद्वारके सूत्रसे और आचार्य परम्परासे आये हुए उपदेशसे
जाना जाता है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्यचोंमें अमंयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव अनन्त-
गुणित हैं, और मिथ्यादृष्टि जीव असख्यातगुणित है ॥ ४५ ॥

चारों प्रकारके असयतसम्यग्दृष्टि तिर्यचोंसे उनके ही मिथ्यादृष्टि तिर्यच अनन्त
गुणित हैं और असख्यातगुणित भी हैं ।

शंका—यह यात तो विप्रतिपिद्ध अर्थात् परस्पर विरोधी है । यदि अनन्त-
गुणित है, तो वहा असख्यातगुणत्व नहीं बन सकता है, और यदि असख्यातगुणित है, तो

को गुणगारो ? आत्रलियाए असरोज्जदिभागो । एत्थ स्रह्यसम्मादिट्ठीणमप्पा-
वहुअ णत्थि, सच्चिक्खीसु सम्मादिट्ठीणमुत्तमादाभावा, मणुसगह्वदिरित्तणगर्हसु दसण-
मोहणीयक्खण्णाभावाच्च ।

मणुसगदीए मणुस-मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु तिसु अद्दासु उव-
समा पवेसणेण तुल्ला थोवा' ॥ ५३ ॥

तिसु त्रि मणुसेसु तिणिण त्रि उत्तमया पवेसणेण अण्णोणमपेक्खिय तुल्ला
सरिसा, चउत्तणमेत्तत्तादो । ते च्चेय थोवा, उत्तरिमगुणद्वानजीमपेक्खाए ।

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तेत्तिया चेव ॥ ५४ ॥

कुदो ? हेट्ठिमगुणद्वाने पड्डिण्णजीमण चेय उत्ततकसायवीदरागछदुमत्थ-
पज्जाएण परिणामुत्तंभा । सच्चयस्म अप्पानहुअ किण्ण परूविदं ? ण, पवेसप्पानहुएण
चेय तदग्गमादो । जदो सच्चओ णाम पवेसाहीणो', तदो पवेसप्पानहुएण सरिसो
सच्चयप्पानहुओ त्ति पुध ण उत्तो ।

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवाभाग गुणकार है । यहा पचेन्द्रियतिर्यंच
योनिमतियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंका अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, सर्व प्रकारकी
क्षियोंमें सम्यग्दृष्टि जीवोंका उपपाद नहीं होता है, तथा मनुष्यगतिको छोडकर अन्य
गतियोंमें दर्शनमोहनीयकर्मकी क्षणका भी अभाव है ।

मनुष्यगतिमें मनुष्य, मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यनियोंमें अपूर्वकरण आदि तीन
गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ ५३ ॥

सूत्रोक्त तीनों प्रकारके मनुष्योंमें अपूर्वकरण आदि तीनों ही उपशामक जीव
प्रवेशसे परस्परकी अपेक्षा तुल्य अर्थात् सदृश ह, क्योंकि, एक समयमें अधिकसे अधिक
चौपन जीवोंका प्रवेश पाया जाता है । तथा, ये जीव ही उपरिम गुणस्थानोंके जीवोंकी
अपेक्षा अल्प हैं ।

उपशान्तरूपायवीतरागछद्वस्य जीव प्रवेशसे पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ५४ ॥

क्योंकि, अधस्तन गुणस्थानोंको प्राप्त हुए जीवोंका ही उपशान्तरूपायवीतराग-
छद्वस्यरूप पर्यायसे परिणमण पाया जाता है ।

शका—यहा उपशामकोंके सच्चयका अल्पबहुत्व क्यों नहीं बतलाया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, प्रवेशसम्यन्धी अल्पबहुत्वसे ही उसका ज्ञान हो
जाता है । चूकि, सच्चय प्रवेशके आधीन होता है, इसलिए प्रवेशके अल्पबहुत्वसे
सच्चयका अल्पबहुत्व सदृश है, अतएव उसे पृथक् नहीं बतलाया ।

१ मनुष्यगती मनुष्याणामुपपन्नकादिप्रमत्तसयतान्तानां सामान्यवत् । स ति १, ८

२ अ प्रती ' पवेसाहीणो ' आ कप्तयो ' पवेसाहिणो ' इति पाठ ।

संजदासंजदद्व्याणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ४९ ॥

कुठो ? देमन्त्रयाणुपिद्वुवसमसम्मत्तम्म दुल्लहत्तादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ५० ॥

को गुणगारो ? आनलियाए जसखेज्जदिभागो । एदम्हादो गुणगारादो णव्वदे समय पडि त्त्तदुवचयादो अमखेज्जगुणचेणुवचिदा ति असखेज्जगुणत्त । एत्थ सइय-सम्मादिट्ठीणमप्पावहुअ किण्ण परूनिद ? ण, तिरिकयेसु असंखेज्जगुणाएसु चेष सइय सम्मादिट्ठीणगुणनादुनलभा । पचिंदियतिरिक्खजोणिणीसु सम्मत्तप्पावहुअग्निमेमपदु-प्पायणद्वमुत्तरसुत्त भणदि-

णवरि विसेसो, पचिंदियतिरिक्खजोणिणीसु असंजदसम्मादिट्ठी-संजदामंजदद्व्याणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ५१ ॥

सुगममेद ।

वेदगसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ५२ ॥

तिर्यंचोमें सयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव मनसे कम है ॥४९॥
क्योंकि, देशमतम्हारे उपशमसम्यक्त्वना होना दुर्लभ है ।

तिर्यंचोमें सयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियांमें वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असरयातगुणित है ॥ ५० ॥

गुणकार क्या है ? आधलीना असख्यातवा भाग गुणकार है । इस गुणकारसे यह जाना जाता है कि प्रतिसमय उनका उपचय होनेसे वे असख्यातगुणित सचित हो जाते हैं, इसलिये उनसे प्रमाणके असख्यातगुणितना उन जानी है ।

शुद्धा—यहां सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि तिर्यंचोका अल्पवहुत्व क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, असख्यात वर्षकी आयुनाले भोगभूमिया तिर्यंचोमें ही क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंका उपपाद पाया जाता है ।

अन पचेन्द्रियतिर्यंच योनिमतियोंमें सम्यक्त्वसे अल्पवहुत्वसम्यग्धी विशेषके प्रतिपादन करनेके लिये उत्तर सूत्र कहते हैं—

मिशेषता यह है कि पचेन्द्रियतिर्यंच योनिमतियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि और मयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव मनसे कम है ॥ ५१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

पचेन्द्रियतिर्यंच योनिमतियोंमें अमयतसम्यग्दृष्टि और सयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित है ॥ ५२ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । एत्थ खड्डयसम्मादिट्ठीणमप्पा-
बहुअ णत्थि, सच्चिन्धीसु सम्मादिट्ठीणमुत्तमादाभावा, मणुसगइवदिरिच्छणगईसु दसण-
मोहणीयकत्तण्णाभावाच्च ।

मणुसगदीए मणुस-मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु तिसु अद्दासु उव-
समा पवेसणेण तुल्ला थोवा' ॥ ५३ ॥

तिसु नि मणुसेसु तिण्णि नि उवसामया पवेसणेण अण्णोणमपेक्खिय तुल्ला
सरिसा, चउत्तणमत्तत्तादो । ते च्चेय थोवा, उत्तरिमगुणट्ठाणजीगपेक्खाए ।

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तेत्तिया चैव ॥ ५४ ॥

कुदो ? हेट्ठिमगुणट्ठाणे पड्डिण्णजीगणं चैय उत्ततकसायवीदरागछदुमत्थ-
पज्जाएण परिणामुत्तंभा । संचयस्स अप्पानहुअ किण्ण परूविद ? ण, पवेसप्पाबहुएण
चैय तदत्तगमादो । जदो सच्चओ णाम पवेसाहीणो', तदो पवेसप्पानहुएण सरिसो
सचयप्पानहुओ चि पुध ण उत्तो ।

गुणकार क्या है ? आवलीका असत्यातवाभाग गुणकार है । यहा पचेन्द्रियतिर्यंच
योनिमतियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंका अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, सर्व प्रकारकी
छियोंमें सम्यग्दृष्टि जीवोंका उपपाद नहीं होता है, तथा मनुष्यगतिको छोडकर अन्य
गतियोंमें दर्शनमोहनीयकर्मकी क्षपणाका भी अभाव है ।

मनुष्यगतिमें मनुष्य, मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यनियोंमें अपूर्वकरण आदि तीन
गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ ५३ ॥

सूत्रोक्त तीनों प्रकारके मनुष्योंमें अपूर्वकरण आदि तीनों ही उपशामक जीव
प्रवेशसे परस्परकी अपेक्षा तुल्य अर्थात् सदृश है, क्योंकि, एक समयमें अधिकसे अधिक
चौपन जीवोंका प्रवेश पाया जाता है । तथा, ये जीव ही उपरिम गुणस्थानोंके जीवोंकी
अपेक्षा अल्प हैं ।

उपशान्तकपायवीतरागउन्नस्थ जीव प्रवेशसे पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ५४ ॥

क्योंकि, अधस्तन गुणस्थानोंको प्राप्त हुए जीवोंका ही उपशान्तकपायवीतराग-
उन्नस्थरूप पर्यायसे परिणमण पाया जाता है ।

शक्रा—यहा उपशामकोंके सचयका अल्पबहुत्व क्यों नहीं बतलाया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, प्रवेशसम्यन्धी अल्पबहुत्वसे ही उसका ज्ञान हो
जाता है । चूकि, सचय प्रवेशके आधोन होता है, इसलिए प्रवेशके अल्पबहुत्वसे
सचयका अल्पबहुत्व सदृश है, अतएव उसे पृथक् नहीं बतलाया ।

१ मनुष्यगती मनुष्याणामुपशामकादिप्रमत्तयतान्तानां सामान्यवत् । स सि १, ८

२ अ प्रती ' पवेसहीणो ' आ कप्रत्यो ' पवेसाहिणो ' इति पाठ ।

खवा संखेज्जगुणा ॥ ५५ ॥

कुदो ? अट्टत्तरसदमेत्तादो ।

खीणकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ ५६ ॥

सुगममेद ।

सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो वि तुल्ला तत्तिया
चेय ॥ ५७ ॥

कुदो ? खीणकसायपज्जाएण परिणदाण चेय उत्तरगुणद्वानुक्कमुत्तलमा ।

सजोगिकेवली अद्ध पडुच्च सखेज्जगुणा ॥ ५८ ॥

मणुस मणुसपज्जत्तएसु ओघसजोगिरासिं ठविय हेट्टिमरासिणा ओरट्टिय गुणगारो
उप्पादेदच्चो । मणुसिणीसु पुण तप्पाओग्गसखेज्जसजोगिजीवे ट्टनिय अट्टत्तरसद मुच्चा
तप्पाओग्गसखेज्जखीणकसाएहि ओरट्टिय गुणगारो उप्पादेदच्चो ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें उपशान्तकपायवीतरागछद्मस्थोंसे क्षपक जीव सख्यात-
गुणित है ॥ ५५ ॥

क्योंकि, क्षपकसम्यग्धी एक गुणस्थानमें एक साथ प्रवेश करनेवाले जीवोंका
प्रमाण एक सौ आठ है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें क्षीणकपायवीतरागछद्मस्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही
हैं ॥ ५६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें सयोगिकेवली और अयोगिकेवली, ये दोनों भी प्रवेशसे
तुल्य और पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ५७ ॥

क्योंकि, क्षीणकपायरूप पर्यायसे परिणत जीवोंका ही आगेके गुणस्थानोंमें
उपक्रमण (गमन) पाया जाता है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सख्यातगुणित
हैं ॥ ५८ ॥

सामान्य मनुष्य और पर्याप्त मनुष्योंमेंसे ओघ सयोगिकेवलीराशिको स्थापित
करके और उसे अघस्तनराशिसे भाजित करके गुणकार उत्पन्न करना चाहिए । किन्तु
मनुष्यनियोंमें उनके योग्य सख्यात सयोगिकेवली जीवोंको स्थापित करके एक सौ आठ
सख्याको छोड़कर उनके योग्य सख्यात क्षीणकपायवीतरागछद्मस्थोंके प्रमाणसे भाजित
करके गुणकार उत्पन्न करना चाहिए ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ ५९ ॥

मणुस-मणुसपज्जत्ताण ओघग्घि उच्च-अप्पमत्तरासी चेव होदि । मणुसिणीसु पुण तप्पाओग्गसखेज्जमेत्तो होदि । सेस सुगम ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ ६० ॥

एदं पि सुगम ।

संजदासंजदा संखेज्जगुणा ॥ ६१ ॥

मणुस-मणुसपज्जत्तएसु संजदासजदा सखेज्जकोडिमेत्ता । मणुसिणीसु पुण तप्पाओग्गसखेज्जरूपमेत्ता त्ति धेत्तव्वा, वड्डमाणकाले एत्तिया त्ति उव्वेसाभावा । सेम सुगम ।

सासणसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ६२ ॥

कुदो ? तत्तो सखेज्जगुणकोडिमेत्तत्तादो । मणुसिणीसु तदो सखेज्जगुणा, तप्पाओग्गसखेज्जरूपमेत्तत्तादो । सेस सुगम ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें मयोगिकेपलीसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्त-संयत सख्यातगुणित हैं ॥ ५९ ॥

ओघप्ररूपणामें कहीं हुई अप्रमत्तसयतोंकी राशि ही मनुष्य-सामान्य और मनुष्य-पर्याप्तक अप्रमत्तसयतोंका प्रमाण है । किन्तु मनुष्यनियोंमें उनके योग्य सख्यात भाग-मात्र राशि होती है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयत सख्यातगुणित हैं ॥ ६० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तसयतोंसे संयतासंयत सख्यातगुणित हैं ॥ ६१ ॥

मनुष्य सामान्य और मनुष्य पर्याप्तकोंमें सयतासयत जीव सख्यात कोटिप्रमाण होते हैं । किन्तु मनुष्यनियोंमें उनके योग्य सख्यात रूपमान होते हैं, ऐसा अर्थ ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि, वे इतने ही होते हैं, इस प्रकारका वर्तमान कालमें उपदेश नहीं पाया जाता । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें संयतासयतोंसे सासादनसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणित हैं ॥ ६२ ॥

क्योंकि, वे सयतासयतोंके प्रमाणसे सख्यातगुणित कोटिमात्र होते हैं । मनुष्य-नियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि जीव मनुष्य सामान्य और मनुष्य पर्याप्तक सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सख्यातगुणित होते हैं, क्योंकि, उनका प्रमाण उनके योग्य सख्यात रूपमात्र है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

१ प्रतिपु 'सजदा' इति पाठ । २ तत सखेयगुणा सयतासयता । स सि १, ८.

३ सासादनसम्यग्दृष्टय सखेयगुणा । स सि १, ८.

खइयसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ६७ ॥

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ६८ ॥

एदाणि तिण्णि नि सुत्ताणि सुगमाणि ।

संजदासंजदहाणे सव्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ ६९ ॥

खीणदंसणमोहणीयाण देससजमे वड्डताणं वट्टणमभाजा । खीणदंसणमोहणीया पाएण असंजदा होदूण अच्छति । ते सजम पडिउज्जता पाएण महव्वयाइ चेउ पडिउवज्जति, ण देसव्वयाइ ति उच्च होदि ।

उवसमसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ७० ॥

खइयसम्मादिट्ठिसंजदासंजदेहिंतो उउमससम्मादिट्ठिसजदासजदाण वट्टणमुउलभा ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ७१ ॥

कुदो ? उहुनायत्तादो, सचयकालस्म उहुत्तादो वा, उउसमसम्मच्च पेक्खिय वेदगसम्मच्चस्म सुलहत्तादो वा ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणित है ॥ ६७ ॥

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणित है ॥ ६८ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम हैं ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि सबसे कम है ॥ ६९ ॥

फ्योंकि, दर्शनमोहनीयकर्मका क्षय करनेवाले और देशसयममें वर्तमान बहुत जीवोंका अभाव है । दर्शनमोहनीयका क्षय करनेवाले मनुष्य प्राय असयमी होकर रहते हैं । ये सयमको प्राप्त होते हुए प्राय महाव्रतोंको ही धारण करते हैं, अणुव्रतोंको नहीं; यह अर्थ कहा गया है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणित है ॥ ७० ॥

फ्योंकि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि सयतासयतोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि सयतासयत मनुष्य बहुत पाये जाते हैं ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें सयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणित है ॥ ७१ ॥

फ्योंकि, उपशमसम्यग्दृष्टियोंकी अपेक्षा वेदकसम्यग्दृष्टियोंकी आय अधिक है, अथवा सचयकाल बहुत है, अथवा उपशमसम्यक्त्वको देखते हुए अर्थात् उसकी अपेक्षा वेदकसम्यक्त्वका पाना सुलभ है ।

पमत्त-अपमत्तसंजदद्वारेण सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ७२ ॥
कुदो ? धोरकालमचयादो ।

खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ७३ ॥

बहुकालसचयादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ७४ ॥

गइयसम्मत्तेण मज्जम पटिरज्जमाणजीवेहिंतो वेदगमम्मत्तेण सज्जम पडिवज्जमाण
वेवाण बहुत्तुत्तलभा । मणुसिणीगयविसेमपदुप्पायणट्ठ उतरिममुत्त मणदि-

णवरि विसेसो, मणुसिणीसु असजद संजदासजद-पमत्तापमत्त-
जदद्वारेण सव्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ ७५ ॥

कुदो ? अप्पमत्थवेदोदण दसणमोहणीय सव्वेतजीवाण बहूणमणुत्तलभा ।

उवसमसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ७६ ॥

तीना प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें उपशम-
म्यगृष्टि सयते कम हैं ॥ ७२ ॥

क्योंकि, इनका सचयकाल अल्प है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तमयत गुणस्थानमें उपशमसम्य-
गृष्टियोंसे क्षायिकमम्यगृष्टि सरयातगुणित है ॥ ७३ ॥

क्योंकि, इनका सचयकाल बहुत है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकमम्य-
गृष्टियोंमें वेदकसम्यगृष्टि सरयातगुणित हैं ॥ ७४ ॥

क्योंकि, क्षायिकसम्यगृष्टिसे साथ सयमको प्राप्त होनेवाले जीवोंकी अपेक्षा
वेदकसम्यगृष्टिसे साथ सयमको प्राप्त होनेवाले जीवोंकी अधिभूता पाई जाती है । अतः
मनुष्यनियोंमें होनेवाली विशेषताये प्रतिपादन करनेके लिए उत्तर सूत्र कहते हैं—

केवल विशेषता यह है कि मनुष्यनियोंमें असयतमम्यगृष्टि, सयतासयत, प्रमत्त
सयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यगृष्टि जीव सबसे कम है ॥ ७५ ॥

क्योंकि, अप्रमत्तसयत वेदके उदयके साथ दानमोहनीयको क्षपण करनेवाले जीव
पहुत नहीं पाये जाते हैं ।

अमयतसम्यगृष्टि आदि चार गुणस्थानमें मनुष्यनियोंमें क्षायिकसम्यगृष्टियोंसे
उपशमसम्यगृष्टि सरयातगुणित हैं ॥ ७६ ॥

१ प्रतिशु ' बहूणमणुत्तलभा ' इति पाठ ।

अप्यसत्येदोदण' दसणमोहणीयं स्रमेतजीनेहितो अप्यसत्थेदोदण चेन
दंसणमोहणीय उवसमेतजीणं मणुसेसु सखेज्जगुणाणमुत्तमा ।

वेदगसम्मादिद्धी सखेज्जगुणा ॥ ७७ ॥

सुगममेद ।

एवं तिसु अद्वासु ॥ ७८ ॥

एदस्मत्थो- मणुस-मणुसपज्जत्तएसु णिरुद्धेसु तिसु अद्वासु उतसममम्मादिद्धी
थोवा, थोवकारणत्तादो । सइयमम्मादिद्धी सखेज्जगुणा, णहुत्तरणादो । मणुसिणीसु पुण
सइयमम्मादिद्धी थोवा, उतसममम्मादिद्धी सखेज्जगुणा । एत्थ पुवुत्तमेव कारण ।
उतसमम-उतसगण सचयस्म अप्यावहुअपरूणइमुत्तरमुत्त भणदि-

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ ७९ ॥

थोवपेसादो ।

फ्योंकि, अप्रशस्त वेदके उदयके साथ दर्शनमोहनीयका क्षपण करनेवाले जीवोंसे
अप्रशस्त वेदके उदयके साथ ही दर्शनमोहनीयका उपशम करनेवाले जीव मनुष्योंमें
सख्यातगुणित पाये जाते हैं ।

अमयत्तसम्यग्दृष्टि आदि चार गुणस्थानवर्ती मनुष्यनियोंमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे
वेदकमम्यग्दृष्टि सरयातगुणित है ॥ ७७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इसी प्रकार तीनों प्रकारके मनुष्योंमें अपूर्णरूप आदि तीन उपशमक गुणस्थानोंमें
सम्पत्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व है ॥ ७८ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं- मनुष्य-सामान्य ओर मनुष्य पर्याप्तकोंसे निरुद्ध
अपूर्वकरण आदि तीन उपशमक गुणस्थानोंमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव अल्प होते हैं,
फ्योंकि, उनके अल्प होनेका कारण पाया जाता है । उनसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव
सख्यातगुणित होते हैं, फ्योंकि, उनके बहुत होनेका कारण पाया जाता है । किन्तु
मनुष्यनियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव अल्प हैं, और उनसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव
सख्यातगुणित हैं । यहा सख्यातगुणित होनेका कारण पूर्वोक्त ही है (देखो सूत्र न ७५) ।

उपशमक और क्षपकोंसे सचयका अल्पबहुत्व प्ररूपण करनेके लिए उत्तर सूत्र
फहते हैं-

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें उपशमक जीव सन्ते कम हैं ॥ ७९ ॥

फ्योंकि, इनका प्रवेश अल्प होता है ।

१ प्रतिपु 'अप्यमत्थेदोदण' इति पाठ ।

पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्टाणे सब्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ७२ ॥

बुदो ? धोपकालसचयादो ।

खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ७३ ॥

बहुकालसचयादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ७४ ॥

खइयसम्मत्तेण सजम पडिउज्जमाणजीविहितो वेदगमम्मत्तेण सजम पडिवज्जमाण जीमाण बहुउत्तलभा । मणुसिणीगयविसेमपदुप्पायणट्ट उअरिमसुत्त भणदि-

णवरि विसेसो, मणुसिणीसु असजद सजदासंजद-पमत्तापमत्त

सजदट्टाणे सब्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ ७५ ॥

बुदो ? अप्पसत्थवेदोदण दसणमोहणीय खवेत्तजीमाण बहूणमणुत्तलमा' ।

उवसमसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ७६ ॥

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें उपशम-सम्यग्दृष्टि सरमे कम है ॥ ७२ ॥

क्योंकि, इनका सचयकाल अल्प है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि मरुयातगुणित हैं ॥ ७३ ॥

क्योंकि, इनका सचयकाल बहुत है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें वेदकसम्यग्दृष्टि मरुयातगुणित हैं ॥ ७४ ॥

क्योंकि, क्षायिकसम्यक्त्वसे साथ सयमको प्राप्त होनेवाले जीवोंकी अपेक्षा वेदकसम्यक्त्वके साथ सयमको प्राप्त होनेवाले जीवोंकी अधिकता पाई जाती है । अब मनुष्यनियोंमें होनेवाली विशेषतासे प्रतिपादन करनेके लिए उत्तर सूत्र कहते हैं—

क्षेत्रल विशेषता यह है कि मनुष्यनियोंमें अमयतसम्यग्दृष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव मगमे कम है ॥ ७५ ॥

क्योंकि, अप्रमत्तसयत वेदके उदयके साथ दर्शनमोहनीयको क्षयण करनेवाले जीव बहुत नहीं पाये जाते हैं ।

अमयतसम्यग्दृष्टि आदि चार गुणस्थानमें मनुष्यनियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि मरुयातगुणित हैं ॥ ७६ ॥

१ प्रतिशु 'बहूणमुत्तलमा' इति पाठ ।

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । सेस सुवोज्झं ।

वेदगसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ८७ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । सेस सुगमं ।

भवणवासिय-वाणवेतर-जोदिसियदेवा देवीओ सोधम्मीसाणकप्प-
वासियदेवीओ च सत्तमाए पुढवीए भंगो ॥ ८८ ॥

एदेसिमिदि एत्यज्झाहारो कायव्वो, अण्णहा सनधाभावा । खड्यसम्मादिट्ठीणम-
भाव पडि साधम्मुरलभा सत्तमाए पुढवीए भंगो एदेसिं होदि । अत्यदो पुण विसेसो
अत्थि, तं भणिस्सामो- सव्वत्थोया भवणवासियसाणसम्माइट्ठी । सम्मामिच्छादिट्ठी
संखेज्जगुणा । असंजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा । को गुणगारो ? आपलियाए असंखे-
ज्जदिभागो । मिच्छाइट्ठी असखेज्जगुणा । को गुणगारो ? जगपदरस्स असखेज्जदिभागो,
असंखेज्जाओ सेडीओ । केत्थियमेत्ताओ ? घणंगुलपढमज्जमूलस्स असखेज्जदिभाग-
मेत्ताओ । को पडिभागो ? असजदसम्मादिट्ठिरासी पडिभागो ।

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । शेष सूत्रार्थ
सुबोध (सुगम) है ।

देवोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि असख्यातगुणित हैं ॥ ८७ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । शेष सूत्रार्थ
सुगम है ।

देवोंमें भवनवासी, वानव्यन्तर, ज्योतिष्क देव और देनिया, तथा सौधर्म-ईशान-
कल्पवासिनी देनिया, इनका अल्पग्रहत्व सातवीं पृथिवीके अल्पग्रहत्वके समान है ॥८८॥

इस सूत्रमें 'इनका' इस पदका अध्याहार करना चाहिए, अन्यथा प्रकृतमें
इसका सम्यन्ध नहीं बनता है । क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके अभावकी अपेक्षा समानता पाई
जानेसे इन सूत्रोंके देव देवियोंका सातवीं पृथिवीके समान अल्पग्रहत्व है । किन्तु अर्थकी
अपेक्षा कुछ विशेषता है, उसे कहते हैं- भवनवासी सासादनसम्यग्दृष्टि देव आगे कही
जानेवाली राशियोंकी अपेक्षा सबसे कम हैं । उनसे भवनवासी सम्यग्मिथ्यादृष्टि
सख्यातगुणित हैं । उनसे भवनवासी असयतसम्यग्दृष्टि असख्यातगुणित हैं । गुणकार
क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । उनसे भवनवासी मिथ्यादृष्टि अस-
ख्यातगुणित हैं । गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो अस-
ख्यात जगध्रेणीप्रमाण है । वे जगध्रेणिया कितनी हैं ? घनागुलके प्रथम वर्गमूलके
असख्यातवें भागभाज हैं । प्रतिभाग क्या है ? असयतसम्यग्दृष्टि जीवराशि प्रतिभाग है ।

सचरत्थोपा वाणोत्तरंसासणसम्मादिट्ठी । मम्मामिच्छादिट्ठी सरसेज्जगुणा । असजदसम्मादिट्ठी असरेज्जगुणा । को गुणगारो ? आरलियाए असरेज्जदिभागो । मिच्छादिट्ठी असरेज्जगुणा । को गुणगारो ? जगपदरस्म असरेज्जदिभागो, असरेज्जाओ मेडीओ । केत्तियमेत्ताओ ? सेडीए अरसेज्जदिभागमेत्ताओ । को पडिभागो ? घण गुलस्म असरेज्जदिभागो, असरेज्जपदरगुलाणि वा पडिभागो । एव जोदिभियाण पि वचव्व । सग सगइत्थियेदाण सग सगोवभगो । सेस सुगम ।

**सोहम्मीसाण जाव सदर सहस्सारकप्पवासियदेवेषु जहा देवगइ-
भगो ॥ ८९ ॥**

जहा देवोघमिह अप्पाउहुअ उच्च, तथा एदेसिमप्पाउहुग उच्चव्व । त जहा-
सचरत्थोपा मग सगरुप्पत्था सासणा । सग-सगरुप्पसम्मामिच्छादिट्ठिणो मरेज्जगुणा ।
सग-सगरुप्पअसजदसम्मादिट्ठिणो असरेज्जगुणा । मग सगमिच्छादिट्ठी असरेज्जगुणा ।
एत्थ गुणगारो जाणिय वत्तव्वो, एगसरुत्ताभागा । अणतरउत्तरुप्पेषु असजदमम्मा

धानव्यन्तर सासादनसम्यग्दष्टि देव आगे कही जानेवाली राशियोंकी अपेक्षा सबसे कम है । उनसे धानव्यन्तर सम्यग्मिध्यादष्टि देव सख्यातगुणित है । उनसे धान व्यन्तर असयतसम्यग्दष्टि देव असख्यातगुणित है । गुणकार क्या है ? आवलीका अस ख्यातवा भाग गुणकार है । धानव्यन्तर असयतसम्यग्दष्टि देवोंसे धानव्यन्तर मिध्यादष्टि देव असख्यातगुणित है । गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो असख्यात जगधेणीप्रमाण है । ये जगधेणिया कितनी है ? जगधेणीके असख्यातये भागमात्र हैं । प्रतिभाग क्या है ? घनागुलका असख्यातवा भाग प्रतिभाग है, अथवा असख्यात प्रतरागुत्तर प्रतिभाग है ।

इसी प्रकार ज्योतिष्क देवोंके अल्पबहुत्वको भी कहना चाहिए । भयनवासी आदि निकायोंमें अपने अपने खीयेदियोंका अल्पबहुत्व अपने अपने ओघ अल्पबहुत्वके समान है । शेष सूत्राथ सुगम है ।

मौधर्म-ईशान कल्पसे लेकर शतार-सहस्रार कल्प तक कल्पनासी देवोंमें अल्प बहुत्व-देवगति सामान्यके अल्पबहुत्वके समान हैं ॥ ८९ ॥

जिस प्रकार सामान्य देवोंमें अल्पबहुत्वका कथन किया है, उसी प्रकार इनके अल्पबहुत्वको कहना चाहिए । वह इस प्रकार है- अपने अपने कल्पमें रहनेवाले सासा दनसम्यग्दष्टि देव सबसे कम हैं । इनसे अपने अपने कल्पके सम्यग्मिध्यादष्टि देव सख्यातगुणित है । इनसे अपने अपने कल्पके असयतसम्यग्दष्टि देव असख्यातगुणित हैं । इनसे अपने अपने कल्पके मिध्यादष्टि देव असख्यातगुणित हैं । यहापर गुणकार जानकर कहना चाहिए, क्योंकि, इन देवोंमें गुणकारकी एकरूपताका अभाव है । अभी इन पीछे

द्विद्विहाणे सव्वत्थोवा उरसमसम्मादिट्ठी । रड्यसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा । वेदगसमा-
दिट्ठी असखेज्जगुणा । को गुणगारो ? सव्वत्थ आगलियाए असखेज्जदिभागो चि ।
सेस सुगम ।

आणद जाव णवगेवज्जविमाणवासियदेवेसु सव्वत्थोवा सासण-
सम्मादिट्ठी ॥ ९० ॥

सुगममेदं सुत्त ।

सम्मामिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ९१ ॥

एद पि सुगमं ।

मिच्छादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ९२ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए असखेज्जदिभागो । कधमेद णव्वदे ? दव्वाणि-
ओगदासुत्तादो ।

असंजदसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ९३ ॥

कहे गये कल्पोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि देव सबसे कम है ।
इनसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि देव असख्यातगुणित है । इनसे वेदकसम्यग्दृष्टि देव असख्यात-
गुणित है । गुणकार क्या है ? सर्वत्र आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । शेष
सुचार्य सुगम है ।

आनत प्राणत रूपसे लेकर नग्नैरेयक विमानों तक विमानवासी देवोंमें सासा-
दनसम्यग्दृष्टि सबसे कम हैं ॥ ९० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त विमानोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें सम्यग्मिथ्यादृष्टि देव सख्यातगुणित
हैं ॥ ९१ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त विमानोंमें मम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें मिथ्यादृष्टि देव असख्यातगुणित
हैं ॥ ९२ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

शंका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—द्रव्यानुयोगद्वाररूपसे जाना जाता है कि उक्त कल्पोंमें मिथ्यादृष्टि
देवोंका गुणकार आवलीका असख्यातवा भाग है ।

उक्त विमानोंमें मिथ्यादृष्टियोंसे असयतसम्यग्दृष्टि देव सख्यातगुणित हैं ॥ ९३ ॥

बुद्धो ? मनुमेहितो आणदादिषु उत्पन्नमाणांमिच्छादिद्वी पक्षिण्य तद्युष्मन्-
माणमम्मादिद्वीण संखेज्जगुणत्तादो । देवलोए मम्मत्तमिच्छत्ताणि पडिवज्जमाणनीत्ताण
किण्ण पहाणत्त ? ण, तेमि मूलरागिस्स अमरेज्जदिभागत्तादो । को गुणगतो ?
संखेज्जसमया ।

असंजदसम्मादिद्विद्वाने सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिद्वी ॥ ९४ ॥

बुद्धो ? अतोमृद्दुत्तकालमचिदत्तादो ।

सहयसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ ९५ ॥

बुद्धो ? मरेज्जमागरोममालेण सचिदत्तादो । को गुणगतो ? आरलियाए
असंखेज्जदिभागो । सचयकालपडिभागेण पल्लिदोमस्स असखेज्जदिभागो गुणगतो
किण्ण उच्चदे ? ण, एगममएण पल्लिदोमस्स असखेज्जदिभागमेत्तजीराण उवमम
सम्मत्त पडिवज्जमाणामुत्तलभा ।

क्योंकि, मनुष्योंसे आनत आदि विमानोंमें उत्पन्न होनेवाले मिथ्यादृष्टियोंकी
अपेक्षा यथापर उत्पन्न होनेवाले सम्यग्दृष्टि जीव सख्यातगुणित होते हैं ।

शंका—देवलोकमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंकी प्रधानता क्यों
नहीं है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव मूलराशिके असख्यातवै
भागमात्र होते हैं ।

उक्त विमानोंमें सम्यग्दृष्टियोंका गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

आनत प्राणत कल्पसे लेकर नरग्रैरेयक तक असयतमस्यग्दृष्टि गुणस्थानमें
उपशमसम्यग्दृष्टि देव तनसे कम हैं ॥ ९४ ॥

क्योंकि, वे केवल अतर्मुद्दत कालके द्वारा सञ्चित होते हैं ।

उक्त विमानोंमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे शायिकसम्यग्दृष्टि देव असख्यातगुणित
हैं ॥ ९५ ॥

क्योंकि, वे सख्यात सागरोपम कालके द्वारा सञ्चित होते हैं । गुणकार क्या है ?
आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

शंका—सचयकालरूप प्रतिभाग होनेकी अपेक्षा पल्लोपमका असख्यातवा भाग
गुणकार क्यों नहीं कहा है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, एक समयके द्वारा पल्लोपमके असख्यातवै भागमात्र
जीव उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होते हुए पाये जाते हैं ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ९६ ॥

कुदो ? तत्थुप्पज्जमाणसइयसम्मादिट्ठीहितो सखेज्जगुणवेदगसम्मादिट्ठीणं तत्थु-
प्पत्तिदसणादो ।

अणुदिसादि जाव अवराइदविमाणवासियदेवेसु असंजदसम्मा-
दिट्ठिट्ठाने सन्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ९७ ॥

कुदो ? उवसमसेड्डीचडणोयरणकिरियागावदुवसमसम्मत्तसहितसखेज्जसजदाण-
मेत्थुप्पणाणमतोमुहुत्तसचिटाणमुत्तलभा ।

खइयसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ९८ ॥

को गुणगारो ? पल्लिदोउमस्त असखेज्जदिभागस्म सखेज्जदिभागो । को पडि-
भागो ? सखेज्जुवसमसम्मादिट्ठिजीवा पडिभागो ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ९९ ॥

कुदो ? खइयसम्मत्तेणुप्पज्जमाणमजदेहितो वेदगसम्मत्तेणुप्पज्जमाणसंजदाण सखेज्ज-

उक्त विमानोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि देव संख्यातगुणित
हैं ॥ ९६ ॥

क्योंकि, उन आनतादि कल्पवासी देवोंमें उत्पन्न होनेवाले क्षायिकसम्यग्दृष्टि
योंसे सख्यातगुणित वेदकसम्यग्दृष्टियोंकी वहा उत्पत्ति देखी जाती है ।

नर अनुदिशोंको आदि लेकर अपराजित नामक अनुत्तरविमान तक विमानवासी
देवोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि सनसे कम हैं ॥ ९७ ॥

क्योंकि, उपशमश्रेणीपर आरोहण और अवतरणरूप क्रियामें लगे हुए, अर्थात्
चढ़ते और उतरते हुए मरकर उपशमसम्यक्त्वसहित यहा उत्पन्न हुए, और अन्तर्मुहूर्त-
कालके द्वारा संचित हुए सरयात उपशमसम्यग्दृष्टि सयत पाये जाते हैं ।

उक्त विमानोंमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि देव असख्यातगुणित
हैं ॥ ९८ ॥

गुणकार क्या है ? पल्ल्योपमके असख्यातवर्षे भागका सख्यातवा भाग गुणकार है ।
प्रतिभाग क्या है ? सरयात उपशमसम्यग्दृष्टि जीव प्रतिभाग है ।

उक्त विमानोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि देव संख्यातगुणित
हैं ॥ ९९ ॥

क्योंकि, क्षायिकसम्यक्त्वके साथ मरण कर यहा उत्पन्न होनेवाले सयतोंकी

गुणत्तादो । तं पि कध णव्वदे ? कारणाणुसारिकज्जदंसणादो मणुसेसु खइयसम्मादिट्ठी सजदा थोवा, वेदगसम्मादिट्ठी सजदा सरपेज्जगुणा, तेण तेहितो देवेसुप्पज्जमाणमजदा वि तप्पडिभागिया चेत्ते चित्तव्व । एत्थ सम्मत्तप्पानहुअ चैन, सेसगुणट्ठाणाभावा । कधमेद णव्वदे ? एदम्हादो चैन सुत्तादो ।

सव्वट्ठसिद्धिविमाणवासियदेवेसु असंजदसम्मादिट्ठिट्ठाणे सव्व-
त्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ १०० ॥

खइयसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १०१ ॥

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १०२ ॥

एदाणि तिण्णि पि सुत्ताणि सुगमाणि । सव्वट्ठसिद्धिम्मिह तेचीसाउट्ठिदिम्मिह असखेज्जजीवरासी किण्ण होदि ? ण, तत्थ पल्लिदोवमस्स सरपेज्जदिभागमेत्तरम्मिह

अपेक्षा वेदकसम्यक्त्वके साथ मरण कर यहा उत्पन्न होनेवाले सयत सख्यातगुणित होते हैं ।

शका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि, 'कारणके अनुसार कार्य देखा जाता है,' इस न्यायके अनुसार मनुष्योंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि सयत अल्प होते हैं, उनसे वेदकसम्यग्दृष्टि सयत सख्यातगुणित होते हैं। इसलिये उनसे देवोंमें उत्पन्न होनेवाले सयत भी तत्प्रतिभागी ही होते हैं, यह अर्थ ग्रहण करना चाहिए। इन कल्पोंमें यही सग्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व है, क्योंकि, वहा शेष गुणस्थानोंका अभाव है।

शका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—इस सूत्रसे ही जाना जाता है कि अनुदिश आवि विमानोंमें केवल एक असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान होता है, शेष गुणस्थान नहीं होते हैं।

सर्गार्थसिद्धि विमानवासी देवोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि सबसे कम हैं ॥ १०० ॥

उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि देव सरयातगुणित हैं ॥ १०१ ॥

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि देव सरयातगुणित हैं ॥ १०२ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम हैं ।

शका—तेतीस सागरोपमनी आयुस्थितिवाले सर्गार्थसिद्धिविमानमें असख्यात जीवराशि क्यों नहीं होती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, यहापर पर्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण कालका है, इसलिये वहा असख्यात जीवराशिफा होना असम्भव है ।

तदसंभवा । जदि एव, तो जाणदादिदेवेषु वासपुधत्तरेसु संसेज्जावलिओरद्धिदपलिदो-
वममेत्ता जीवा किण्ण होंति ? ण, तत्थत्तणमिच्छादिद्धिआदीणमवहारकालस्स असंसेज्जा-
वलयत्त फिद्धिदूण संसेज्जावलयमेत्तअवहारकालप्पमगा । होदु चे ण, 'आणद-पाणद
जाव णग्गेवज्जीमाणवासियदेवेषु मिच्छादिद्धिप्पहुडि जाव अमजदसम्मादिद्धी दव्व-
पमाणेण केरडिया, पलिदोवमस्स असंसेज्जदिभागो । एदेहि पलिदोवममवहिरदि अतो-
मुहुत्तेण । अणुदिसादि जाव अत्राइदग्गिमाणवासियदेवेषु असजदसम्मादिद्धी दव्वपमाणेण
केरडिया, पलिदोवमस्स असंसेज्जदिभागो । एदेहि पलिदोवममवहिरदि अतोमुहुत्तेणेत्ति' ।
एदेण दव्वसुत्तेण जुत्तीए मिद्धअसंसेज्जावलयभागहारगग्गेण सह विरोहा ।

एव गतिमार्गणा समत्ता ।

शुक्रा—यदि ऐसा है तो वर्षपृथक्पृथक्के अन्तरसे युक्त आनतादि कल्पवासी
देवोंमें सख्यात आचलियोंसे भाजित पल्योपमप्रमाण जीव क्यों नहीं होते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ऐसा माननेपर वहाँके मिथ्यादृष्टि आदिकोंके अ-
वहारकालके असख्यात आचलीपना न रहकर सख्यात आचलीमात्र अवहारकाल प्राप्त
होनेका प्रसंग आ जायगा ।

शुक्रा—यदि मिथ्यादृष्टि आदि जीवोंके अवहारकाल सख्यात आचलीप्रमाण
प्राप्त होते हैं, तो होने दो ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ऐसा मानने पर 'आनत प्राणतकल्पसे लेकर नवग्रैवेयक
विमानवासी देवोंमें मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान तक
जीव द्रव्यप्रमाणकी अपेक्षा कितने है ? पल्योपमके असख्यातवै भागप्रमाण हैं । इन
जीवराशियोंके द्वारा अन्तर्मुहूर्तकालसे पल्योपम अपहृत होता है । नव अनुदिशोंसे लेकर
अपराजितनामक अनुत्तर विमान तक विमानवासी देवोंमें असयतसम्यग्दृष्टि जीव
द्रव्यप्रमाणकी अपेक्षा कितने है ? पल्योपमके असख्यातवै भागप्रमाण हैं । इन जीव
राशियोंके द्वारा अन्तर्मुहूर्तकालसे पल्योपम अपहृत होता है । इस प्रकार युक्तिसे सिद्ध
असख्यात आचलीप्रमाण भागहार जिनके गर्भमें है, ऐसे इन द्रव्यानुयोगहारके सूत्रोंके
साथ पूर्वोक्त कथनका विरोध आता है ।

इस प्रकार गतिमार्गणा समाप्त हुई ।

इंदियाणुवादेण पंचिंदिय पंचिंदियपज्जत्तएसु ओघं । णवरी
मिच्छादिद्वी असखेज्जगुणां ॥ १०३ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थो बुच्चदे- सेमिंदिएसु एगगुणद्वानेसु अप्पानहुअस्साभान-
पदुप्पायणमुहेण पंचिंदियप्पानहुअपदुप्पायणद्व पंचिंदिय पंचिंदियपज्जत्तगहण कद ।
जघा ओघम्मि अप्पानहुअ कद, तथा एत्थ मि अणूणाहियमप्पानहुअ कायव्व । णवरी
एत्थ असजदसम्मादिद्वीहितो मिच्छादिद्वी अणत्तगुणा त्ति अभणिदूण असखेज्जगुणा
त्ति वत्तव्व, अणत्ताण पंचिंदियाणमभाया । को गुणगारो ? पदरस्म असखेज्जदिभागो,
असखेज्जाओ मेहीओ । केत्तियमेत्ताओ ? सेडीण असखेज्जदिभागमेत्ताओ । को पडिभागो ?
घणगुलस्म असखेज्जदिभागो, अमखेज्जाणि पदरंगुलाणि । अघना पंचिंदिय पंचिंदिय
पज्जत्तमिच्छादिद्वीणममखेज्जदिभागो । को पडिभागो ? सग-मगअमजदसम्मादिद्विरामी ।

इन्द्रियमार्गणाके अनुवादसे पचेन्द्रिय और पचेन्द्रियपर्याप्तकोंमें अल्पबहुत्व
ओघके समान है । केवल विशेषता यह है कि असयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव
असख्यातगुणित हैं ॥ १०३ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं- शेष इन्द्रियवाले अर्थात् पचेन्द्रिय और पचेन्द्रिय
पर्याप्तकोंसे अतिरिक्त जीवोंमें एक गुणस्थान होता है, इसलिये उसमें अल्पबहुत्वके
अभावके प्रतिपादनद्वारा पचेन्द्रियोंके अल्पबहुत्वके प्रतिपादन करनेके लिए सूत्रमें पचे
न्द्रिय और पचेन्द्रिय पर्याप्तक पदका ग्रहण किया है । जिस प्रकार ओघमें अल्पबहुत्वका
कथन किया है, उसी प्रकार यहा भी हीनता और अधिकतासे रहित अल्पबहुत्वका कथन
करना चाहिए । केवल इतनी विशेषता है कि यहापर असयतसम्यग्दृष्टि पचेन्द्रियोंसे
मिथ्यादृष्टि पचेन्द्रिय अनन्तगुणित हैं, ऐसा न कहकर असख्यातगुणित हैं, ऐसा कहना
चाहिए, क्योंकि, अनन्त पचेन्द्रिय जीवोंका अभाव है । पचेन्द्रिय असयतसम्यग्दृष्टियोंसे
पचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं, यहा गुणकार क्या है ? जगप्रतरका
असख्यातया भाग गुणकार है, जो असख्यात जगधेणीप्रमाण है । वि जगधेणिया कितनी
हैं ? जगधेणीके असख्यातवै भागप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? घनागुलका असख्यातया
भाग प्रतिभाग है, जो असख्यात प्रतरागुलप्रमाण है । अथवा, पचेन्द्रिय और पचेन्द्रिय
पर्याप्तक मिथ्यादृष्टियोंका असख्यातया भाग गुणकार है । प्रतिभाग क्या है ? अपनी
अपनी असयतसम्यग्दृष्टि जीवराशि प्रतिभाग है ।

१ इन्द्रियद्वाने एकेन्द्रिय विकल्परूपेषु गुणस्थानभेदो नास्तात्यल्पबहुत्वाभाव । इन्द्रिय प्रत्युत्पत्ते
पचेन्द्रियापकेन्द्रियान्ता उच्यते बहव । पंचिंदियाणां सामान्यवत् । अथ तु विशेषः मिथ्यादृष्टयो सख्येयद्वया ।

सत्थाण-सव्वपरत्थाणअप्पात्रहुआणि एत्थ ऋण्ण परूविदाणि ? ण, परत्थाणादो चैव तेसिं दोण्हमग्गमा ।

एव इदियमग्गणा सम्मत्ता ।

कायाणुवादेण तसकाइय तसकाइयपज्जत्तएसु ओघं । णवरि
मिच्छादिट्ठी असखेज्जगुणां ॥ १०४ ॥

एदस्सत्थो— एगगुणट्ठाण-सेमकाएसु अप्पात्रहुअ णत्थि त्ति जाणाणुहु तसकाइय-
तमकाइयपज्जत्तगहण कद । एदसु टोसु वि अप्पात्रहुअ जघा ओघम्मि कदं, तथा
कादव्व, त्रिमेसाभाना । णवरि सग-सगअसजदसम्मादिट्ठीहिंतो मिच्छादिट्ठीण अणतगुणत्ते
पत्ते तप्पडिसेहट्टमसखेज्जगुणा त्ति उत्तं, तसकाइय तसकाइयपज्जत्ताणमाणंतियाभानादो ।
को गुणगारो ? पदरस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाओ सेडीओ सेडीए असखेज्जदि-

शका—स्वस्थान अल्पत्रहुत्त और सर्वपरस्थान अल्पवहुत्व यहापर क्यो नही कहे ?

समाधान— नहीं, क्योकि, परस्थान अल्पवहुत्वसे ही उन दोनों प्रकारके अल्प-
वहुत्वको ज्ञान हो जाता है ।

इस प्रकार इन्द्रियमार्गणा समाप्त हुई ।

कायमार्गणाके अनुवादमे त्रसकायिक और त्रसकायिक-पर्याप्तकोंमें अल्पवहुत्व
ओघके समान है । केवल विशेषता यह है कि अमयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव
असख्यातगुणित हैं ॥ १०४ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं— एकमात्र मिथ्यादृष्टि गुणस्थानवाले शेष स्थावर-
कायिक और त्रसकायिक लब्धपर्याप्तकोंमें अल्पत्रहुत्त नहीं पाया जाता है, यह ज्ञान
करानेके लिए सूत्रमें त्रसकायिक और त्रसकायिक पर्याप्तक पदका ग्रहण किया है ।
जिस प्रकार ओघप्ररूपणामें अल्पत्रहुत्व कह आए हैं, उसी प्रकार त्रसकायिक और
त्रसकायिक-पर्याप्तक, इन दोनोंमें भी अल्पत्रहुत्वका कथन करना चाहिए, क्योकि, ओघ-
अल्पवहुत्वसे इनके अल्पवहुत्वमें कोई विशेषता नहीं है । केवल अपने अपने वसंत-
सम्यग्दृष्टियोंके प्रमाणसे मिथ्यादृष्टियोंके प्रमाणके अनन्तगुणत्व प्राप्त होनेपर उसके
प्रतिषेध करनेके लिए असयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं, ऐसा
कहा है, क्योकि, त्रसकायिक और त्रसकायिक पर्याप्तक जीवोंका प्रमाण अनन्त नहीं
है । गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो जगश्रेणीके अस-

१ कायाणुवादेण स्थावरजयिणु गुणस्थानभेदाभावादल्पवहुत्वाभाव । काय प्रत्युच्यते । सवतस्तेनस्कायिका
अप्पा । ततो बहवः पृथिव्याकायिकाः । ततोऽन्धकायिका । ततो वातकायिका । सवतोऽनन्तत्वा वनरपतप ।
त्रसकायिकानां पञ्चेन्द्रियवत् । स. वि १, ८ ।

भागमेत्ताओ। को पडिभागो? घणगुलस्स अमरेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पदस्सुलाणि।
सेस सुगम ।

एउ कायमग्गणा समत्ता ।

जोगाणुवादेण पचमणजोगि पंचवच्चिजोगि-कायजोगि-ओरालिय
कायजोगासु तीसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा ॥१०५॥

एदेहि उच्चसच्चजोगेहि सह उउममसेदि चटताण पुक्कस्सेण चउउण्णत्तमत्थि चि
तुल्लत्त परुदिद । उउग्गिगुणद्वयजिपिहिंतो ऊणा चि थोवा चि पस्सिदा । एदेमि मरस
पहमप्पानहुआण तिसु अद्वासु द्विदउउसमगा मूलपद जादा ।

उवसतकसायवीदरागल्लदुमत्था तेत्तिया चेव ॥ १०६ ॥
सुगममेद ।

सवा संखेज्जगुणा ॥ १०७ ॥

अहुत्तरसदपरिमाणत्तादो ।

ख्यातवै भागमात्र असख्यात जगश्रेणीप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? घनागुलका अस
ख्यातवा भाग प्रतिभाग है, जो असख्यात प्रतरागुलप्रमाण है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।
इस प्रकार कायमार्गणा समाप्त हुई ।

योगमार्गणाके अनुवादसे पाचों मनोयोगी, पाचों वचनयोगी, काययोगी और
औदारिककाययोगियोंमें अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी
अपेक्षा परस्पर तुल्य और अल्प है ॥ १०५ ॥

इन सूत्रोक्त सर्व योगोंके साथ उपशामश्रेणी पर चढ़नेवाले उपशामक जीवोंकी
सख्या उत्कपसे चौपन होती है, इसलिए उनकी तुल्यता कहीं है । तथा उपरिम अर्थात्
क्षपकश्रेणीसम्बन्धी गुणस्थानवर्ती जीवोंसे कम होते हैं, इसलिए उन्हें अल्प कहा है ।
इस प्रकार पाचों मनोयोगी, पाचों वचनयोगी, काययोगी और औदारिककाययोगी, इन
चारह अल्पवहुत्वोंका प्रमाण लानके लिए अपूर्वकरण आदि तीनों गुणस्थानोंमें स्थित
उपशामक मूलपद अर्थात् अल्पवहुत्वके आधार हुए ।

उक्त चारह योगगाले उपशान्तरूपायवीतरागल्लद्वय जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही
है ॥ १०६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त चारह योगगाले उपशान्तरूपायवीतरागल्लद्वयोंसे क्षपक जीव सख्यात
गुणित है ॥ १०७ ॥

क्योंकि, क्षपकोंकी सख्याका प्रमाण एक सौ आठ है ।

योगावादेन वादान्तकयोगिना पचेन्द्रियवत् । काययोगिना सामान्यवत् । स लि १, ८

स्त्रीणकसायवीदरागछदुमत्या तेत्तिया चेव ॥ १०८ ॥

सुगममेदं ।

सजोगिकेवली पवेसणेण तत्तिया चेव ॥ १०९ ॥

एदं पि सुगम । जेसु जोगेसु सजोगिगुणद्वाण सभनदि, तेसिं चेदेदमप्पाचहुअं
धेत्तव्वं ।

सजोगिकेवली अद्धं पडुच्च संखेज्जगुणा ॥ ११० ॥

को गुणगारो ? संखेज्जसमया । जहा ओघमिह संखेज्जसमयसाहण कद, तहा
एत्थ पि कायव्वं ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ १११ ॥

एत्थ पि जहा ओघमिह गुणगारो माहिदो तहा साहेदव्वो । णरि अप्पिदजोग-
जीरामिपमाणं णादूण अप्पाजहुअ कायव्व ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ ११२ ॥

उक्त चारह योगमाले क्षीणरूपायनीतरागउग्रस्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही
हैं ॥ १०८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सयोगिकेवली जीव प्रशंसी अपेक्षा पूर्वोक्त प्रमाण ही है ॥ १०९ ॥

यह सूत्र भी सुगम है । किन्तु उपर्युक्त चारह योगोंमेंसे जिन योगोंमें सयोगि
केवली गुणस्थान सम्भव है, उन योगोंका ही यह अल्पबहुत्व ग्रहण करना चाहिए ।

सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सरयातगुणित है ॥ ११० ॥

गुणकार क्या है ? सत्यात समय गुणकार है । जिस प्रकार ओघमें सख्यात
समयरूप गुणकारका साधन किया है, उसी प्रकार यहापर भी करना चाहिए ।

मयोगिकेवलीसे उपर्युक्त चारह योगमाले अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्त-
सयत जीव सरयातगुणित हैं ॥ १११ ॥

जिस प्रकारसे ओघमें गुणकार सिद्ध किया है, उसी प्रकारसे यहापर भी सिद्ध
करना चाहिए । केवल विशेषता यह है कि त्रिचक्षित योगवाली जीरताशिके प्रमाणको
जानकर अल्पबहुत्व करना चाहिए ।

उक्त चारह योगमाले अप्रमत्तसयतयोंसे प्रमत्तसयत जीव मख्यातगुणित
हैं ॥ ११२ ॥

सुगममेद ।

संजदासंजदा असखेज्जगुणा ॥ ११३ ॥

को गुणगारो ? पल्लिदोममस्म असखेज्जदिभागस्त मखेज्जदिभागो । सस सुगम ।

सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ११४ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । कारण जाणिदूण उत्तच्च ।

सग्गामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ११५ ॥

को गुणगारो ? सखेज्जसमया । एत्थ वि कारण णिहालिय उत्तच्च ।

असंजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ११६ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए अमखेज्जदिभागो । जोगद्वाराण समाम कादूण तेण सामण्णरासिमोवड्डिय अप्पिदजोगद्वाराण गुणिदे इच्छिद-इच्छिदरासीओ होंति । अणेण पयारेण सच्चत्थ दच्चपमाणमुप्पाइय अप्पाअहुअ उत्तच्च ।

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त वारह योगनाले प्रमत्तसयतोंसे सयतासयत जीव असख्यातगुणित हैं ॥ ११३ ॥

गुणकार क्या है ? पल्लोपमके असख्यातवें भागका सख्यातवा भाग गुणकार है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

उक्त वारह योगनाले सयतासयतोंसे सासादनसम्यग्दृष्टि जीव अमख्यातगुणित हैं ॥ ११४ ॥

गुणकार क्या है ? आद्यलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । इसका कारण जानकर कहना चाहिए (देखो इसी भागका पृ २४०) ।

उक्त वारह योगनाले सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्भिन्नधादृष्टि जीव सख्यात गुणित हैं ॥ ११५ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है । यहा पर भी इसका कारण स्मरण कर कहना चाहिए (देखो इसी भागका पृ २५०) ।

उक्त वारह योगनाले सम्यग्भिन्नादृष्टियोंसे असयतसम्यग्दृष्टि जीव असख्यात गुणित हैं ॥ ११६ ॥

गुणकार क्या है ? आद्यलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । योगसम्यग्धा कालोका समास (योग) करके उससे मामान्यराशिको भाजित कर पुन विभक्ति योगक कालसे गुणा करनेपर इच्छित इच्छित योगवाते जीवोंकी राशिया हो जाती हैं । इस प्रकारके सयत्र व्यवप्रमाणको उत्पन्न करके उनका अल्पअहुत्व कहना चाहिए ।

मिच्छादिद्वी असंखेज्जगुणा, मिच्छादिद्वी अणंतगुणा ॥११७॥

एत्थ एए संवधो कायवो । त जहा- पंचमणजोगि-पंचमचिजोगिअसजदसम्मा-
दिद्वीहिंतो तेसिं चेए जोगाण मिच्छादिद्वी असखेज्जगुणा । को गुणगारो ? पदरस्स
असखेज्जदिभागो, अमखेज्जाओ सेडीओ । केचियमेत्ताओ ? सेडीए असखेज्जदिभाग-
मेत्ताओ । को पडिभागो ? घणगुलस्स असखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पदरगुलाणि ।
कायजोगि-ओरालियकायजोगिअमजदसम्मादिद्वीहिंतो तेसिं चेए जोगाणं मिच्छादिद्वी
अणतगुणा । को गुणगारो ? अभमिद्विण्हिं अणंतगुणो, सिद्वेहिं नि अणंतगुणो,
अणंताणि मवज्जीवरासिपडमजग्गमूलाणि चि ।

असंजदसम्मादिद्वि-संजदासंजद-पमत्तापमत्तसजदट्टाणे सम्मत्त-
प्पावहुअमोघं ॥ ११८ ॥

एदेसिं गुणट्टाणाण जया ओघम्हि सम्मत्तप्पावहुअं उच्च, तथा एत्थ नि
अणूणाहियं उच्च ।

उक्त चारह योगशाले असयतसम्यग्दृष्टियोंमें (पाचों मनोयोगी, पाचों वचन-
योगी) मिथ्यादृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं, और (काययोगी तथा औदारिक-
काययोगी) मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित हैं ॥ ११७ ॥

यहापर इस प्रकार सम्बन्ध करना चाहिए । जैसे- पाचों मनोयोगी और पाचों
वचनयोगी असयतसम्यग्दृष्टियोंसे उन्हीं योगोंके मिथ्यादृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ।
गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो असख्यात जगश्रेणी-
प्रमाण है । वे जगश्रेणिया कितनी ह ? जगश्रेणिके असख्यातवें भागप्रमाण है । प्रतिभाग
क्या है ? घनागुलका असख्यातवा भाग प्रतिभाग है, जो असख्यात प्रतरागुलप्रमाण है ।
काययोगी और औदारिककाययोगी असयतसम्यग्दृष्टियोंमें उन्हीं योगोंके मिथ्यादृष्टि
जीव अनन्तगुणित हैं । गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणित और सिद्धोंसे
भी अनन्तगुणित राशि गुणकार है, जो सर्व जीवराशिके अनन्त प्रथम धर्ममूलप्रमाण है ।

उक्त चारह योगशाले जीवोंमें अमयतसम्यग्दृष्टि, मयतासयत, प्रमत्तसयत और
अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पप्रहुत्व ओघके समान है ॥ ११८ ॥

इन सूत्रोंके चारों गुणस्थानोंका जिन प्रकार ओघमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्प
प्रहुत्व कहा है, उसी प्रकार यहापर भी हीनता और अधिक्तासे रहित अर्थात् तत्प्रमाण
ही अल्पप्रहुत्व कहना चाहिए ।

एवं तिसु अद्वासु ॥ ११९ ॥

सुगममेद ।

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ १२० ॥

एद पि सुगम ।

खवा संखेज्जगुणा ॥ १२१ ॥

अप्पिदजोगउत्तसामगेहिंतो अप्पिदजोगाण खवा संखेज्जगुणा । एत्थ पक्खे
सखेवेण मूलरासिमोत्तद्विय अप्पिदपम्पेण गुणिय इच्छिद्रासिपमाणमुप्पाएद्व ।

ओरालियमिस्सकायजोगीसु सव्वत्थोवा सजोगिकेवली ॥ १२२ ॥

कमाडे चडणोयरणिरियानात्तचालीसजीममलमादो थोरा जादा ।

असजदसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १२३ ॥

कुदो ? देव पेग्इय मणुम्मेहिंतो आगतूण तिरिक्खमणुत्तेसुप्पण्णाण अमन-
सम्मादिट्ठीणमोरालियमिस्समिह्त्त सजोगिकेवलीहिंतो संखेज्जगुणाणमुत्तमा ।

इसी प्रकार उक्त चारह योगनाले जीवोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें
सम्पत्त्वसम्बन्धी अल्परहुत्त्व है ॥ ११९ ॥

यह स्रष्ट सुगम है ।

उक्त चारह योगनाले जीवोंमें उपशामक जीव सबसे कम हैं ॥ १२० ॥

यह स्रष्ट भी सुगम है ।

उक्त चारह योगनाले उपशामकोंसे क्षपक जीव मर्यादागुणित हैं ॥ १२१ ॥

विचक्षित योगवाले उपशामकोंमें विचक्षित योगवाले क्षपक जीव सख्यातगुणित
होते हैं । यहापर प्रक्षेप संक्षेपके द्वारा मूलजीवराशिको भाजित करके विचक्षित प्रक्षेप
राशिके गुणा कर इच्छित राशिका प्रमाण उत्पन्न कर लेना चाहिए (देखो द्रव्यप्र
भाग ३ पृ ४८-४९) ।

औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सयोगिकेवली सरसे कम हैं ॥ १२२ ॥

फ्योंकि, कपाटसमुदातके समय आरोग्य और अवतरणक्रियामें सलग चालीस
जीवोंके अत्रलम्बनसे औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें सयोगिकेवली सरसे कम हो जाते हैं ।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें सयोगिकेवली जिनोंमें असयतसम्यग्दृष्टि जीव
सरयातगुणित हैं ॥ १२३ ॥

फ्योंकि, देव, नारकी और मनुष्योंसे आकर तिर्यक और मनुष्योंमें उत्पन्न होने
जीव औदारिकमिश्रकाययोगमें सयोगिकेवली जिनोंसे सख्यात
पाये जाते हैं ।

सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १२४ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पलिदोवमपढम-
वग्गमूलाणि ।

मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा ॥ १२५ ॥

को गुणगारो ? अभममिद्विएहि अणतगुणो, सिद्वेहि मि अणतगुणो, अणताणि
सव्वजीवरासिपढमवग्गमूलाणि ।

असजदसम्माइट्ठिट्ठाणे सव्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ १२६ ॥

दमणमोहणीयसएणुप्पण्णसदहणणं जीवाणमइदुल्लभत्तादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १२७ ॥

राओवसमियसम्मत्ताण जीवाण वट्ठणमुवलभा । को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

वेउव्वियकायजोगीसु देवगदिभंगो ॥ १२८ ॥

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें असयतसम्यग्दृष्टियोंसे सासादनसम्यग्दृष्टि जीव
असंख्यातगुणित हैं ॥ १२४ ॥

गुणकार क्या है ? पत्योपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पत्योपमके
असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव अनन्त-
गुणित हैं ॥ १२५ ॥

गुणकार क्या है ? अमन्यसिद्धोंसे अनन्तगुणित और सिद्धोंसे भी अनन्तगुणित
राशि गुणकार है, जो सर्व जीवराशिके अनन्त प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि
जीव सत्रसे कम हैं ॥ १२६ ॥

क्योंकि, दर्शनमोहनीयकर्मके क्षयसे उत्पन्न हुए श्रद्धानवाले जीवोंका होना
अतिदुर्लभ है ।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे
वेदकसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणित हैं ॥ १२७ ॥

क्योंकि, क्षायोपशमिक सम्यक्त्ववाले जीव बहुत पाये जाते हैं । गुणकार क्या
है ? संख्यात समय गुणकार है ।

त्रैक्रियिककाययोगियोंमें (समव गुणस्थानवर्ती जीवोंका) अल्पबहुत्व देवगतिके
समान है ॥ १२८ ॥

एवं तिसु अद्वासु ॥ ११९ ॥

सुगममेद ।

सर्वत्योंवा उवसमा ॥ १२० ॥

एद पि सुगम ।

खवा सखेज्जगुणा ॥ १२१ ॥

अप्पिदजोगउपमामगेहितो अप्पिदजोगाणं खवा सखेज्जगुणा । एत्तं सखेवेण मूलरामिमोअट्टिय अप्पिदपम्सेरेण गुणिय इच्छिदरासिपमाणमुप्पाएदत्तं

ओरालियमिस्सकायजोगीसु सर्वत्योंवा सजोगिकेवली ॥

कनाडे चडणोयरणक्रियानादचालीसजीवमनलमादो थोना जादा ।

असंजदसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ १२३ ॥

कुदो ? देव णेरइय मणुस्सेहितो आगतूण तिरिकरमणुमेसुप्पण्णाण सम्मादिट्ठीणमोरालियमिस्समिह मजोगिकेवलीहितो सखेज्जगुणाणमुत्तमा ।

इसी प्रकार उक्त बारह योगवाले जीवोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुण सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पप्रदुत्त हैं ॥ ११९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त बारह योगवाले जीवोंमें उपशामक जीव सबसे कम हैं ॥ १२० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त बारह योगवाले उपशामकोंमें क्षपक जीव सरयातगुणित हैं ॥ १२१ ॥

विवक्षित योगवाले उपशामकोंसे विवक्षित योगवाले क्षपक जीव सरयातगुणित होते हैं । यद्वापर प्रक्षेप मक्षेपने द्वारा मूलजीवराशिको भाजित करके विवक्षित प्रराशिके गुणा कर इच्छित राशिका प्रमाण उत्पन्न कर लेना चाहिये (देखो द्रष्टव्य भाग ३ पृ ४८-४९) ।

औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सयोगिकेवली सबसे कम हैं ॥ १२२ ॥

क्योंकि, कपाटसमुदायके समय आरोहण और अवतरणक्रियामें सत्प्रचाल जीवोंके अवलम्बनसे औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें सयोगिकेवली सबसे कम हो जाते हैं

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें सयोगिकेवली जिनोंसे असयतमम्यग्दृष्टि सरयातगुणित है ॥ १२३ ॥

क्योंकि, देव, नारकी और मनुष्योंसे आकर तियच और मनुष्योंमें उत्पन्न होने वाले असयतसम्यग्दृष्टि जीव औदारिकमिश्रकाययोगमें सयोगिकेवली जिनोंसे सरयातगुणित पाये जाते हैं ।

असंजदसम्मादिट्टिट्ठणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ १३२ ॥

कुदो ? उवसमसम्मत्तेण सह उवसमसेदिम्हि मदजीणणमइथोवत्तादो ।

खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ १३३ ॥

उवसामगेहिंतो सखेज्जगुणअसजदसम्मादिट्टिआदिगुणट्ठणेहिंतो सचयसंभवादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १३४ ॥

तिरिक्खेहिंतो पलिदोवमस्स अमखेज्जदिभागमेत्तेदेगसम्मादिट्टिजीणण देवेसु उववादसभववादो । को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो, अमखेज्जाणि पलिदो-
वमपडमवग्गमूलाणि ।

आहारकायजोगि-आहारमिस्सकायजोगीसु पमत्तसंजदट्ठणे
सव्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ १३५ ॥

सुगममेद ।

त्रैकियिकमिश्रकाययोगियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि
जीव सजसे कम हैं ॥ १३२ ॥

क्योंकि, उपशमसम्यक्त्वके साथ उपशमश्रेणीमें मरे हुए जीवोंका प्रमाण अत्यन्त
अल्प होता है ।

त्रैकियिकमिश्रकाययोगियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि-
योगी क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सख्यातगुणित हैं ॥ १३३ ॥

क्योंकि, उपशमश्रेणीमें मरे हुए उपशमकोंसे सख्यातगुणित असयतसम्यग्दृष्टि
आदि गुणस्थानोंकी अपेक्षा क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंका सचय सम्भव है ।

त्रैकियिकमिश्रकाययोगियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोगी
वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १३४ ॥

क्योंकि, त्रियचोंसे पल्योपमने असख्यातवें भागमात्र वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंका
देवोंमें उत्पन्न होना सम्भव है । गुणकार क्या है ? पल्योपमका असख्यातवा भाग
गुणकार है, जो पल्योपमके असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

आहाररूकाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमें प्रमत्तसयत गुणस्थानमें
क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सजसे कम हैं ॥ १३५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वेदसम्मादिद्वी संखेज्जगुणा ॥ १३६ ॥

एद पि सुगम । उपसमसम्मादिद्वीणमेत्थ सभयाभाया तेसिमप्पावहुग ण कहिद
किमद्ध उवसमसम्मत्तेण जाहाररिद्वी ण उपपज्जदि ? उपसमसम्मत्तकालमिह अइदहरमि
तदुप्पत्तीए सभयाभाया । ण उपसममेडिमिह उपसमसम्मत्तेण आहाररिद्वीओ लब्भ
तत्थ पमादाभावा । ण च ततो जोडण्णाण आहाररिद्वी उपलब्भइ, जत्तियमेत्तेण काले
आहाररिद्वी उपपज्जइ, उपसमसम्मत्तस्म तत्तियमेत्तकालमउट्ठाणाभाया ।

कम्मइयकायजोगीसु सव्वत्थोवा सजोगिकेवली ॥ १३७ ॥

कुदो ? पदर लोगपूरणेसु उवरुस्सेण सड्ढिमेत्तसजोगिकेवलीणमुवलभा ।

सासणसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ १३८ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिदोवमपढम
वग्गमूलाणि ।

आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमें प्रमत्तसयत्त गुणस्थानों
क्षायिकमस्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ १३६ ॥

यह सूत्र भी सुगम है । इन दोनों योगोंमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंका होना
सम्भव नहीं है, इसलिये उनका अल्पबहुत्व नहा कहा है ।

शंका—उपशमसम्यक्त्वके साथ आहारकऋद्धि क्यों नहीं उत्पन्न होती है ?

समाधान—क्योंकि, अत्यन्त अल्प उपशमसम्यक्त्वके कालमें आहारकऋद्धिक
उत्पन्न होना सम्भव नहा है । न उपशमसम्यक्त्वके साथ उपशमश्रेणीमें आहारकऋद्धि पाई
जाती है, क्योंकि, यहापर प्रमादका अभाव है । न उपशमश्रेणीसे उतरे हुए जीवोंके भा उप
शमसम्यक्त्वके साथ आहारकऋद्धि पाई जाती है, क्योंकि, जितने कालके द्वारा आहारक
ऋद्धि उत्पन्न होती है, उपशमसम्यक्त्वका उतने काल तक अवस्थान नहीं रहता है ।

कार्मणकाययोगियोंमें सयोगिकेवली जिन सबसे कम हैं ॥ १३७ ॥

क्योंकि, प्रतर और लोकपूरणसमुदायमें अधिकसे अधिक केवल साठ सयोगि
केवली जिन पाये जाते हैं ।

कार्मणकाययोगियोंमें सयोगिकेवली जिनोंसे सामादनसम्यग्दृष्टि जीव असख्यात
गुणित हैं ॥ १३८ ॥

गुणकार क्या है ? पत्थोपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पत्थोपमके
असख्यात प्रथम वगमूलप्रमाण है ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १३९ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । एत्थ कारण णादूण वत्तव्व ।

मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा ॥ १४० ॥

को गुणगारो ? अभमसिद्धिएहि अणतगुणो, सिद्धेहि णि अणतगुणो, अणताणि सव्वनीरासिपढममग्गमूलाणि ।

असंजदसम्मादिट्ठिडाणे सवत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ १४१ ॥

हुदो ? उवसममेडिम्हि उवसमसम्मत्तेण मदसजदाण सखेज्जत्तादो ।

खड्यसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १४२ ॥

पलिटोवमस्म असंखेज्जदिभागमेत्तखड्यसम्मादिट्ठीहितो असखेज्जजीवा विग्गह णिष्ण करेति त्ति उत्ते उच्चदे- ण ताव देवा खड्यसम्मादिट्ठिणो असखेज्जा अक्कमेण मरंति, मणुसेसु असखेज्जखड्यसम्मादिट्ठिप्पमगा । ण च मणुसेसु असखेज्जा मरति,

कार्मणकाययोगियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे असयतमम्यग्दृष्टि जीव असख्यात-
गुणित हैं ॥ १३९ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातका भाग गुणकार है । यहापर इसका कारण जानकर कहना चाहिये । (देखो इसी भागका पृ २५१ और तृतीय भागका पृ ४११)

कार्मणकाययोगियोंमें असयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित हैं ॥ १४० ॥

गुणकार क्या है ? अवव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा ओर सिद्धोंसे भी अनन्तगुणा गुणकार है, जो सर्व जीवराशिके अनन्त प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

कार्मणकाययोगियोंमें अमयतमम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं ॥ १४१ ॥

क्योंकि, उपशमश्रेणीमें उपशमसम्यक्त्वके साथ मरे हुए मयतोंका प्रमाण सख्यात ही होता है ।

कार्मणकाययोगियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सख्यातगुणित हैं ॥ १४२ ॥

शुद्धा—पल्योपमके असख्यातके भागप्रमाण क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे असख्यात जीव विग्रह क्यों नहीं करते हैं ?

समाधान—ऐसी आशकापर आचार्य कहते हैं कि न तो असख्यात क्षायिक सम्यग्दृष्टि देव एक साथ मरते हैं, अन्यथा मनुष्योंमें असख्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके होनेका प्रसंग आ जायगा । न मनुष्योंमें ही अमक्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव मरते हैं

तत्थामखेज्जाण सम्मादिट्ठीणमभारा । ण तिरिक्खा असखेज्जा मारणतिय करेति, तत्थ
आयाणुसारिनयत्तादो । तेण निग्गहगदीए खड्ढयसम्मादिट्ठीणो सखेज्जा चेव हांति ।
होता वि उवममसम्मादिट्ठीहिंतो सखेज्जगुणा, उपसमसम्मादिट्ठिकारणादो खड्ढयसम्मा
दिट्ठिकारणस्स सखेज्जगुणत्तादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ १४३ ॥

को गुणगारो ? पलिटोपमस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिटोपमपढमग्ग
मूलाणि । को पडिभागो ? खड्ढयसम्मादिट्ठिरासिगुणिदअसखेज्जाणलियाओ ।

एव जोगमग्गणा समत्ता ।

वेदानुवादेण इत्थिवेदएसु दोसु वि अद्धासु उवसमा पवेसणेण
तुल्ला थोवा ॥ १४४ ॥

क्योंकि, उनमें असख्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंका अभाव है । न असख्यात क्षायिक
सम्यग्दृष्टि नियच ही मारणातिरसमुद्धात करते हैं, क्योंकि, उनमें आयत्ते अनुसार व्यय
होता है । इसलिए निग्रहगतिमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सख्यात ही होते ह । तथा
सख्यात होते हुए भी वे उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे मर्यातगुणित होते ह, क्योंकि, उपशम
सम्यग्दृष्टियोंके (आयत्ते) कारणसे क्षायिकसम्यग्दृष्टियाके (आयत्ता) कारण सख्यात
गुणा है ।

विशेषार्थ—कामणकाययोगमें पाये जानेवाले उपशमसम्यग्दृष्टि जीव तो केवल
उपशमश्रेणीसे मरकर हा आते ह, किंतु क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव उपशमश्रेणाके अतिरिक्त
असयतसम्यग्दृष्टि आदि गुणस्थानोंसे मरकर भी कामणकाययोगमें पाये जाते ह । अत
उनका सख्यातगुणित पाया जाना स्वतः सिद्ध है ।

कर्मणकाययोगियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे
वेदरूतसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित है ॥ १४३ ॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमना असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्योपमके
असख्यात प्रथम वर्गमूत्रप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? क्षायिकसम्यग्दृष्टि राशिसे गुणित
असख्यात आयलिया प्रतिभाग है ।

इस प्रकार योगमार्गणा समाप्त हुई ।

वेदमार्गणाके अनुवादसे स्त्रीप्रदियोंमें अपूर्णकरण और अनिष्टचिक्करण, इन दोनों
ही गुणस्थानोंमें उपगामरू जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और जल्प है ॥ १४४ ॥

दसपरिमाणत्तादो' ।

खवा संखेज्जगुणा ॥ १४५ ॥

वीसपरिमाणत्तादो' ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ १४६ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जममया ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ १४७ ॥

को गुणगारो ? दो रूपाणि ।

संजदासंजदा असंखेज्जगुणा ॥ १४८ ॥

को गुणगारो ? पलिदोममस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिदोममपढम-
वग्गामूलाणि । को पडिभागो ? सखेज्जरूपगुणिदअसखेज्जाणलियाओ ।

सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ १४९ ॥

को गुणगारो ? आणलियाए अमखेज्जदिभागो । कि कारण ? असुहसामणगुणस्स

क्योकि, खीनेदी उपशामक जीवोंका प्रमाण दस हे ।

खीनेदियोंमें उपशामकोंसे क्षपक जीव सरयातगुणित हे ॥ १४५ ॥

क्योकि, उनका परिमाण बीस हे ।

खीनेदियोंमें क्षपकोंसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तमयत जीव सरयात-

गुणित हे ॥ १४६ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

खीनेदियोंमें अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयत जीव सरयातगुणित हैं ॥ १४७ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार हे ।

खीनेदियोंमें प्रमत्तसयतोंमें सयतासयत जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १४८ ॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमका असख्यातया भाग गुणकार हे, जो पल्योपमके
असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण हे । प्रतिभाग क्या है ? सख्यात रूपोंसे गुणित अस-
ख्यात आवलिया प्रतिभाग हे ।

खीनेदियोंमें सयतासयतोंसे सासादनमम्यग्दट्ठि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १४९ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातया भाग गुणकार हे ।

शका — इसका कारण क्या है ?

समाधान—क्योकि, अशुभ सासादनगुणस्थानका पाना सुलभ हे ।

सुलहत्तादो ।

सम्भामिच्छाद्वि सखेज्जगुणा ॥ १५० ॥

को गुणगारो ? सखेज्जसमया । किं कारण ? सासणायादो सखेज्जगुणाय
सभनादो ।

असंजदसम्भादिद्वि असंखेज्जगुणा ॥ १५१ ॥

को गुणगारो ? आत्रलियाए असखेज्जदिभागो । किं कारण ? सम्भामिच्छादिद्वि
आय पेक्सिदूण असखेज्जगुणायत्तादो ।

मिच्छादिद्वि असखेज्जगुणा ॥ १५२ ॥

को गुणगारो ? पदरस्स अमखेज्जदिभागो, असखेज्जाओ सेडीओ सेडीए
असखेज्जदिभागमत्ताओ । को पडिभागो ? घणगुलस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि
पदरंगुलाणि ।

असजदसम्भादिद्वि-सजदासजदद्वाने सव्वत्थोवा खइयसम्भादिद्वि

॥ १५३ ॥

स्त्रीपेदियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिध्यादृष्टि जीव सख्यातगुणित
है ॥ १५० ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है । इसका कारण यह है कि
सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानकी आयसे सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंकी सख्यातगुणित आय
सम्भय है, अथात् दूसरे गुणस्थानमें जितने जीव आते हैं, उनसे सख्यातगुणित जीव
तीसरे गुणस्थानमें आते हैं ।

स्त्रीपेदियोंमें सम्यग्मिध्यादृष्टियोंसे अमयतसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणित
है ॥ १५१ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । इसका कारण
यह है कि सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंकी आयको देखते हुए अमयतसम्यग्दृष्टि जीवोंकी
असख्यातगुणी आय होती है ।

स्त्रीपेदियोंमें अमयतसम्यग्दृष्टियोंमें मिध्यादृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १५२ ॥

गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो जगधेणीके
असख्यातके भागमात्र असख्यात जगधेणीप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? घनागुलका
असख्यातवा भाग प्रतिभाग है जो असख्यात प्रतरागुलप्रमाण है ।

स्त्रीपेदियोंमें अमयतसम्यग्दृष्टि और मयतामयत गुणस्थानमें धायिकसम्यग्दृष्टि
जीव मयमे कम है ॥ १५३ ॥

सखेज्जरुवमेत्तत्तादो ।

उवसमसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ १५४ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स अमसेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिदोवमपढम-
वग्गमूलाणि । को पडिभागो ? असखेज्जाणलियपडिभागो ।

वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ १५५ ॥

को गुणगारो ? आणलियाए असखेज्जदिभागो ।

पमत्त अप्पमत्तसंजदट्ठाणे सव्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ १५६ ॥

उवसमसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १५७ ॥

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १५८ ॥

एदाणि तिण्णि नि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एवं दोसु अद्दासु ॥ १५९ ॥

क्योंकि, स्त्रीवेदियोंमें सरयात रूपमात्र ही क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव पाये जाते हैं।
स्त्रीवेदियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि और सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्य-
ग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव असरयातगुणित हैं ॥ १५४ ॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्योपमके
असरयात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है। प्रतिभाग क्या है ? असरयात आवलिया प्रतिभाग है।

स्त्रीवेदियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि और सयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे
वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १५५ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है।

स्त्रीवेदियोंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसंयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव
सबसे कम हैं ॥ १५६ ॥

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ १५७ ॥

उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ १५८ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम ह ।

इसी प्रकार अपूर्वकरण और अनिष्टत्तिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें स्त्रीवेदियोंका
अल्पबहुत्व है ॥ १५९ ॥

सर्वतथोवा सख्यमम्मादिद्वी, उपसमसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा, इच्छेदेण साधम्मादा ।

सर्वतथोवा उवसमा ॥ १६० ॥

एदं सुत्त पुणरुत्त विष्णु होदि ? ण, एत्थ पपेसएहि अहियाराभाजा । मंचएण
एत्थ अहियारो, ण सो पुब्ब परूविदो । तदो ण पुणरुत्तत्तमिदि ।

खवा सखेज्जगुणा ॥ १६१ ॥

सुगममेद ।

पुरिसवेदएसु दोसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुत्ता थोवा
॥ १६२ ॥

चउवण्णपमाणत्तादो' ।

खवा सखेज्जगुणा ॥ १६३ ॥

अद्दुत्तरसदमेत्तादो' ।

क्योंकि, इन दोनों गुणस्थानोंमें स्त्रीदिदी शायिन्सम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं,
और उपशमसम्यग्दृष्टि जीव उनसे सख्यातगुणित होते हैं, इस प्रकार ओघके साथ
समानता पाई जाती है ।

स्त्रीदिदियोंमें उपशमक जीव सबसे कम हैं ॥ १६० ॥

शंका—यह सूत्र पुनरुक्त क्यों नहीं है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, यहा पर प्रवेशकी अपेक्षा इस सूत्रका अधिकार नहीं
है, किन्तु सच्यकी अपेक्षा यहापर अधिकार है और यह सच्य पहले प्ररूपण नहीं किया
गया है । इसलिये यहापर कहे गये सूत्रके पुनरुक्तता नहीं है ।

स्त्रीदिदियोंमें उपशमकासे क्षपक जीव सरयातगुणित हैं ॥ १६१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

पुरुपेदियोंमें अपूर्णकरण और अनिशुक्तिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें उपशमक
जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुन्य और अल्प हैं ॥ १६२ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण चौपन है ।

पुरुपेदियोंमें उक्त दोनों गुणस्थानोंमें उपशमकासे क्षपक जीव सरयात
गुणित हैं ॥ १६३ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण ष्व सौ आठ है ।

अप्यमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ १६४ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जसमया ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ १६५ ॥

को गुणगारो ? दोण्णि रूजाणि ।

सजदासंजदा असंखेज्जगुणा ॥ १६६ ॥

को गुणगारो ? पलिदोमस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिदोवमपढम-
ग्गमूलाणि ।

सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १६७ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए अमखेज्जदिभागो । सेस सुग्गम ।

सभ्भामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १६८ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जसमया । सेस सुग्गम ।

पुरुषेदियोंमें दोनों गुणस्थानोंमें क्षपकोंसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्त-
सयत मर्यातगुणित हैं ॥ १६४ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

पुरुषेदियोंमें अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयत जीव संख्यातगुणित हैं ॥ १६५ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार ह ।

पुरुषेदियोंमें प्रमत्तसयतोंसे संयतासयत जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १६६ ॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्योपमके
असख्यात प्रथम धर्ममूलप्रमाण है ।

पुरुषेदियोंमें मयतासयतोंसे सासादनसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित
हैं ॥ १६७ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । शेष सूत्रार्थ
सुग्गम है ।

पुरुषेदियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें सम्यग्निग्न्यादृष्टि जीव सख्यातगुणित
हैं ॥ १६८ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है । शेष सूत्रार्थ सुग्गम है ।

असजदसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ १६९ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए अमखेज्जदिभागो ।

मिच्छादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ १७० ॥

को गुणगारो ? पदरस्म अमखेज्जदिभागो, अमखेज्जाओ सेडीओ सेडीए

असखेज्जदिभागमेत्ताओ ।

असंजदसम्मादिद्वि-सजदासजद-पमत्त-अप्पमत्तसजदद्वुण्णे सम्भत्त-

प्पावहुअमोघं ॥ १७१ ॥

एदेसिं जधा ओघमिह मम्मत्तप्पावहुअ उच्च तथा उच्च ।

एव' दोसु अद्वासु ॥ १७२ ॥

सव्वत्थोवा उवसमासम्मादिद्वी, सद्यमम्मादिद्वी मखेज्जगुणा, इच्छेदेहि माघम्मादो ।

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ १७३ ॥

पुरुषोदियोंमें सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें असयतमम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित
हैं ॥ १६९ ॥

गुणकार क्या है ? आबलीका असख्यातका भाग गुणकार है ।

पुरुषोदियोंमें असयतमम्यग्दृष्टियोंमें मिथ्यादृष्टि जीव असख्यातगुणित
हैं ॥ १७० ॥

गुणकार क्या है ? जगप्रतरना असख्यातका भाग गुणकार है, जो जगध्रेणीके
असख्यातमें भागमात्र असख्यात जगध्रेणीप्रमाण है ।

पुरुषोदियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि, सयतानयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत
गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व ओघके समान हैं ॥ १७१ ॥

इन गुणस्थानोंका जिस प्रकार ओघमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व कहा है,
उसी प्रकार यहापर कहना चाहिए ।

इसी प्रकार पुरुषोदियोंमें अपूर्णकरण और अनिशुचितिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें
सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व है ॥ १७२ ॥

क्योंकि, उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सजसे कम है और क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव
उनसे सख्यातगुणित हैं, इस प्रकार ओघके साथ समानता पाई जाती है ।

पुरुषोदियोंमें उपशमक जीव सबसे कम हैं ॥ १७३ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ १७४ ॥

दो णि सुत्ताणि सुगमाणि ।

णंसयवेदएसु दोसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवां

॥ १७५ ॥

कुदो ? पचपरिमाणत्तादो ।

खवा संखेज्जगुणा ॥ १७६ ॥

कुदो ? ढमपरिमाणत्तादो ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ १७७ ॥

कुदो ? सचयरामिपडिग्गहादो ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ १७८ ॥

को गुणमारो ? दोण्णि रूग्गणि ।

उपशामकौसे क्षपक जीव सरयात्तगुणित हैं ॥ १७४ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

नपुसकरोदियोंमें अपूर्णकरण और अनिष्टत्तिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प है ॥ १७५ ॥

क्योंकि, उनका परिमाण पाच है ।

नपुसकरोदियोंमें अपूर्णकरण और अनिष्टत्तिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें उपशामकौसे क्षपक जीव प्रवेशकी अपेक्षा सरयात्तगुणित है ॥ १७६ ॥

क्योंकि, उनका परिमाण दस है ।

नपुसकरोदियोंमें क्षपकौमे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसंयत जीव सरयात्तगुणित हैं ॥ १७७ ॥

क्योंकि, उनकी सचयरामिको ग्रहण क्रिया गया है ।

नपुसकरोदियोंमें अप्रमत्तसयत्तौसे प्रमत्तमयत जीव सरयात्तगुणित हैं ॥ १७८ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

१ नपुसकरोदानीं ×× सामान्यवन् । स सि १, ८

२ गो जी ६३० दस चैव नपुमा तद् । प्रवच द्वा ५३

संजदासजदा असखेज्जगुणा ॥ १७९ ॥

को गुणगारो ? पलिदोममस्म असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिदोममपढम वग्गमूलाणि ।

सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १८० ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । सेम सुगम ।

सम्माभिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ १८१ ॥

को गुणगारो ? सखेज्जसमया । कारण चितिय उत्तच्च ।

असंजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ १८२ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो ।

भिच्छादिट्ठी अणतगुणा ॥ १८३ ॥

को गुणगारो ? अभजसिद्धिएहि अणतगुणो, अणताणि सच्चजीवरामिपढम वग्गमूलाणि ।

नपुसकरोदियोमें प्रमत्तसयतोसे सयतासयत जीव अमख्यातगुणित हैं ॥ १७९ ॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमका अमख्यातचा भाग गुणकार है, जो पल्योपमके असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

नपुसकरोदियोमें सयतासयतोसे सासादनसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १८० ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातचा भाग गुणकार है । दोप सूत्रार्थ सुगम है ।

नपुसकरोदियोमें सासादनमम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव सख्यातगुणित हैं ॥ १८१ ॥

गुणकार क्या है ? मख्यात समय गुणकार है । इसका कारण विचारकर कहना चाहिए (देखो भाग ३ पृ ४१८ इत्यादि) ।

नपुसकरोदियाम सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें अमयतमम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १८२ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातचा भाग गुणकार है ।

नपुसकरोदियोमें असयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित हैं ॥ १८३ ॥

गुणकार क्या है ? अभज्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा गुणकार है, जो सर्व जीवराशिके अनन्त प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

असंजदसम्मादिट्ठि-संजदासंजदट्ठणे

सम्मत्तपावहुअमोघं

॥ १८४ ॥

असंजदसम्मादिट्ठिण ताव उच्चदे- मवत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठि । सइय-
सम्मादिट्ठि असखेज्जगुणा । को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । कुदो ?
पढमपुदरीसइयसम्मादिट्ठिण पहाणत्तच्चुत्तगमादो । वेदगमसम्मादिट्ठि असखेज्जगुणा । को
गुणगारो ? आपलियाए अमखेज्जदिभागो ।

संजदामजदाण सवत्थोवा सइयसम्मादिट्ठि । कुदो ? मणुसपज्जत्तणउसयवेदे
मोत्तूण तेमिमणत्थाभावा । उअमसम्मादिट्ठि अमखेज्जगुणा । को गुणगारो ? पलिदो-
वमस असखेज्जदिभागो, अमखेज्जाणि पलिदोअमपढमअम्मूलाणि । वेदगसम्मादिट्ठि
अमखेज्जगुणा । को गुणगारो ? आपलियाए अमखेज्जदिभागो ।

पमत्त-अपमत्तसंजदट्ठणे सवत्थोवा सइयसम्मादिट्ठि ॥ १८५ ॥

नपुंसकप्रेदियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि और सयतामयत गुणस्थानमें सम्यक्त्व-
सम्बन्धी अल्पप्रवृत्त ओघके समान है ॥ १८४ ॥

इनमेंसे पहले असयतसम्यग्दृष्टि नपुंसकप्रेदी जीवोंका अल्पप्रवृत्त कहते हैं-
नपुंसकप्रेदी उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सत्रसे कम हैं । उनसे नपुंसकप्रेदी क्षायिकसम्यग्दृष्टि
जीव असख्यातगुणित हैं । गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है,
क्योंकि, यहापर प्रथम पृथिवीके क्षायिकसम्यग्दृष्टि नारकी जीवोंकी प्रधानता स्वीकार
की गई है । नपुंसकप्रेदी क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे नपुंसकप्रेदी वेदकसम्यग्दृष्टि जीव अस
ख्यातगुणित हैं । गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

सयतासयत नपुंसकप्रेदी जीवोंका अल्पप्रवृत्त कहते हैं- नपुंसकप्रेदी सयता-
सयत क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सत्रसे कम हैं, क्योंकि, मनुष्य पर्याप्तक नपुंसकप्रेदी
जीवोंके छोड़कर उनका अन्यत्र अभाव है । नपुंसकप्रेदी सयतासयत क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे
उपशमसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं । गुणकार क्या है ? पल्योपमका असख्यातवा
भाग गुणकार है, जो पल्योपमके असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है । नपुंसकप्रेदी सयता-
सयत उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं । गुणकार क्या
है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

नपुंसकप्रेदियोंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि
जीव सत्रसे कम हैं ॥ १८५ ॥

कृदो ? अप्ससत्येदोदएण बहूण दसणमोहणीयखवगाणमभावा ।

उवसमसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ १८६ ॥

वेदगसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ १८७ ॥

मुगमाणि दो नि सुत्ताणि ।

एवं दोसु अद्वासु ॥ १८८ ॥

जधा पमत्तापमत्ताण सम्मत्तप्पाअहुअ परुत्तिद, तथा दोसु अद्वासु सव्वत्थोना सडयसम्मादिट्ठी, उवसमसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ति परुत्थेयव्व ।

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ १८९ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ १९० ॥

दो नि सुत्ताणि मुगमाणि ।

फ्योत्ति, अग्रशस्त वेदके उदयेने साथ दर्शनमोहनीयके क्षपण करनेवाले बहुत जीवोंका अभाव है ।

नपुमकरोदियोंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव मरुयातगुणित हैं ॥ १८६ ॥

उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ १८७ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम ह ।

इसी प्रकार नपुमकरोदियोंमें अपूर्णकरण और अनिष्टचिह्नकरण, इन दोनों गुण स्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पग्रहत्व है ॥ १८८ ॥

जिस प्रकारने नपुसन्वेदी प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयतोंका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पग्रहत्व कहा है, उसी प्रकार अपूर्णकरण आदि दो गुणस्थानोंमें 'क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं, उनसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं' इस प्रकार प्ररूपण करना चाहिए ।

नपुसकरोदियोंमें उपशामक जीव सबसे कम हैं ॥ १८९ ॥

उपशामकोंसे क्षपक जीव सरयातगुणित हैं ॥ १९० ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

अवगदवेदएसु दोसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा'
॥ १९१ ॥

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ १९२ ॥

दो पि सुत्ताणि सुगमाणि ।

खवा संखेज्जगुणा ॥ १९३ ॥

कुदो ? अहुत्तरमदपमाणत्तादो ।

खीणकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ १९४ ॥

सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो वि तुल्ला तत्तिया
चेव ॥ १९५ ॥

दो पि सुत्ताणि सुगमाणि ।

सजोगिकेवली अद्धं पडुच्च संखेज्जगुणा ॥ १९६ ॥

एदं पि सुगम ।

एउ वेदमग्गणा समत्ता ।

अपगतत्रेदियोंमें अपूर्णकरण और अनिष्टचिक्करण, इन दोनों गुणस्थानोंमें उप-
शामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ १९१ ॥

उपशान्तकपायवीतरागछदुमत्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ १९२ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

अपगतत्रेदियोंमें उपशान्तकपायवीतरागछदुमत्थोंसे क्षपक जीव सख्यातगुणित
हैं ॥ १९३ ॥

क्योंकि, इनका प्रमाण एक स्तो आठ है ।

अपगतत्रेदियोंमें क्षीणकपायवीतरागछदुमत्थ पूर्वोक्त प्रमाण ही है ॥ १९४ ॥

सजोगिकेवली और अजोगिकेवली ये दोनों ही प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और
पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ १९५ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

सजोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सख्यातगुणित है ॥ १९६ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

इस प्रकार वेदमार्गणा समाप्त हुई ।

कसायाणुवादेण कोधकसाइ माणकसाइ-मायकसाइ-लोभकसाईसु
दोसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा' ॥ १९७ ॥

सुगममेद ।

खवा संखेज्जगुणा ॥ १९८ ॥

को गुणगारो ? दो रूपाणि ।

णवरि विसेसा, लोभकसाईसु सुहुमसांपराइय-उवसमा विसेसा
हिया ॥ १९९ ॥

दोउत्तमामयपेमेएहितो सखेज्जगुणे' दोगुणद्वयणपेसयक्खवए पेक्खिदूण
कथ सुहुमसांपराइयउत्तमामया विसेसाहिया ? ण एस दोसो, लोभकसाएण सयएसु
पणिसतजीपे पेक्खिदूण तेसिं सुहुमसांपराइयउत्तमामएसु पणिसताण चउत्तणपरिमाणेण

कपायमार्गणाके जनुनादसे क्रोत्रकपायी, मानरूपायी, मायारूपायी और लोभ
कपायियोम अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंम उपशामक जीव
प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प है ॥ १९७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

चारों कपायवाले जीवोंम उपशामकोंसे क्षपक सरयातगुणित हैं ॥ १९८ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

केवल विशेषता यह है कि लोभरूपायी जीवोंमें क्षपकोंसे सूक्ष्मसाम्परायिक
उपशामक विशेष अधिक हैं ॥ १९९ ॥

शुक्रा—अपूर्वकरण आर अनिवृत्तिकरण, इन दो उपशामक गुणस्थानोंमें प्रवेश
करनेवाले जीवोंसे सरयातगुणित प्रमाणवाले इहाँ दो गुणस्थानोंमें प्रवेश करनेवाले
क्षपकोंको देखकर अर्थात् उनकी अपेक्षासे सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामक विशेष अधिक
कैसे हो सकते हैं ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, लोभकपायके उदयसे क्षपकोंमें प्रवेश
करनेवाले जीवोंको देखते हुए लोभरूपायके उदयसे सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामकोंमें
प्रवेश करनेवाले और चोपन सरयरूप परिमाणवाले उन लोभरूपायी जीवोंके विशेष

१ कपायाणुवादेण कोधमानमायाणुवायाणां पुवेदवत् । ××× लोभकपायाणां द्वयोः उपशामकयोस्तुल्ला
सत्त्वा । क्षपका सरयेयुणा । सूक्ष्मसाम्परायणुद्वयुपशामकस्यता विशेषाधिना । सूक्ष्मसाम्परायक्षपका
सरयेयुणा । शयाणां सामा यवत् । स ति १, ८

२ प्रतिपु 'सखेज्जगुणो' इति पाठ ।

विमेमाहियत्तानिरोहा । कुदो ? लोभरुमाईसु चि विमेमणादो ।

खवा संखेज्जगुणा ॥ २०० ॥

उपशामगेहितो सत्रगाण दुगुणत्तुवलंभा ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ २०१ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ २०२ ॥

को गुणगारो ? दो रूपाणि । चदुकमायअप्पमत्तसंजदाणमेत्थ सदिट्ठी २ । ३ ।

४ । ७ । पमत्तसंजदाण संदिट्ठी ४ । ६ । ८ । १४ ।

अधिक होनेमें कोई विरोध नहीं है । विरोध न होनेका कारण यह है कि सूत्रमें 'लोभ-
क्यायी जीवोंमें' ऐसा विशेषणपद दिया गया है ।

लोभरूपायी जीवोंमें सूक्ष्ममाप्परायिक उपशामकोंसे सूक्ष्ममाप्परायिक क्षपक
सरयातगुणित हैं ॥ २०० ॥

क्योंकि, उपशामकोंसे क्षपक जीवोंका प्रमाण दुगुणा पाया जाता है ।

चारों रूपायवाले जीवोंमें क्षपकोंसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसयत
सरयातगुणित हैं ॥ २०१ ॥

गुणकार क्या है ? सरयात समय गुणकार है ।

चारों कपायवाले जीवोंमें अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयत सरयातगुणित हैं ॥ २०२ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार हैं । यहा चारों कपायवाले अप्रमत्तसयतोंका
प्रमाण या अल्परहुत्त वतलानेवाली अरुसदृष्टि इस प्रकार है— २ । ३ । ४ । ७ । तथा
चारों कपायवाले प्रमत्तसयतोंकी अरुसदृष्टि ४ । ६ । ८ और १४ है ।

विशेषार्थ—यहा पर चतु रूपायी अप्रमत्त और प्रमत्त सयतोंके प्रमाणका ज्ञान
करानेके लिये जो अरुसदृष्टि वतलाई गई है, उसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य तिर्यंचोंमें
मानकपायका काल सबसे कम है, उससे क्रोध, माया और लोभकपायका काल उत्तरो
त्तर विशेष अधिक होता है । (देखो भाग ३, पृ ४००) । तदनुसार यहा पर अप्रमत्त-
सयत और प्रमत्तसयतोंका अरुसदृष्टि द्वारा प्रमाण वतलाया गया है कि मानकपाय-
वाले अप्रमत्तसयत सबसे कम है, जिनका प्रमाण अरुसदृष्टिमें (०) दो वतलाया गया
है । इनमें क्रोधकपायवाले अप्रमत्तसयत विशेष अधिक होते हैं, जिनका प्रमाण अरु
सदृष्टिमें (३) तीन वतलाया गया है । इनसे मायाकपायवाले अप्रमत्तसयत विशेष
अधिक होते हैं, जिनका प्रमाण अरुसदृष्टिमें (४) चार वतलाया गया है । इनसे लोभ-
कपायवाले अप्रमत्तसयत विशेष अधिक होते हैं, जिनका प्रमाण अरुसदृष्टिमें (७) सात
वतलाया गया है । चूंकि अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयतोंका प्रमाण दुगुणा माना गया है,
इसलिए यहा अरुसदृष्टिमें भी उनका प्रमाण क्रमशः दूना ४, ६, ८ और १४ वतलाया गया
है । यह अरुसदृष्ट्या काल्पनिक है, और उसका अभिप्राय स्थूल रूपसे चारों कपायोंका

सजदासंजदा असखेज्जगुणा' ॥ २०३ ॥

को गुणगारो ? पलिदोमस्म अमखेज्जदिभागो, अमखेज्जाणि पलिदोमपढम वगमूलाणि ।

सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ २०४ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए असखेज्जदिभागो ।

सम्मामिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ २०५ ॥

को गुणगारो ? सखेज्जा समया ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २०६ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए अमखेज्जदिभागो ।

मिच्छादिट्ठी अणतगुणा' ॥ २०७ ॥

को गुणगारो ? अभससिद्धिएहि अणतगुणो, सिद्धेहि वि अणतगुणो, अणताणि सव्वजीवरामिपढमवगमूलाणि ।

परस्पर आपेक्षिक प्रमाण वतलाना मात्र हे । इसी हीनाधिकताके लिए देखो भाग ३, पृ २३४ आदि ।

चारों कपायवाले जीवोंमें प्रमत्तमयतोंसे सयतासयत असख्यातगुणित है ॥ २०३ ॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमना असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्योपमने असख्यात प्रथम वगमूलप्रमाण है ।

चारों कपायवाले जीवोंमें सयतासयतोंसे सासादनमभ्यगृह्णति असख्यातगुणित है ॥ २०४ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

चारों कपायवाले जीवोंमें सासादनसम्यगृह्णित्योसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि सख्यात गुणित है ॥ २०५ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

चारों कपायवाले जीवोंमें सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंसे असयतमभ्यगृह्णति असख्यात गुणित है ॥ २०६ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

चारों कपायवाले जीवोंमें असयतसम्यगृह्णित्योसे मिथ्यादृष्टि अनन्तगुणित है ॥ २०७ ॥

गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंसे भी अनन्तगुणा प्रमाण गुणकार है, जो सर्व जीवराशिके अनन्त प्रथम वगमूलप्रमाण है ।

१ मविधु सजदामजदासंखेज्जगुणा' इति पाठ ।

२ अथ तु विशेषेण मिथ्यादृष्टयोऽनन्तगुणा । स ति १, ८

असंजदसम्मादिट्ठि-संजदासंजद पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्ठुणे सम्मत्त-
प्पावहुअमोघं ॥ २०८ ॥

एदेसिं जथा ओघमिह सम्मत्तप्पावहुअं उचं तथा वत्तव्व, निसेसाभागादो ।

एवं दोसु अद्दासु ॥ २०९ ॥

जथा पमत्तापमत्ताण सम्मत्तप्पावहुअ परुनिदं, तथा दोसु अद्दासु परूवेदव्वं ।
णपरि लोभकसायस्स एव तिसु अद्दासु त्ति वत्तव्व, जाण सुहुमसापराडओ त्ति लोभ-
कसायउत्तलभा । एणं सुत्ते किण्ण परुनिदं ? परुनिदमेण पसेसप्पावहुअसुत्तेण । तेणेव
एसो अत्थो णव्वदि त्ति पुध ण परुनिदो ।

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ २१० ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ २११ ॥

दो रि सुत्ताणि सुगमाणि ।

चारों कपायवाले जीवोंमें असयत्तसम्यग्दृष्टि, सयत्तासयत्त, प्रमत्तसंयत्त और
अप्रमत्तसयत्त गुणस्थानमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पवहुत्व ओघके समान है ॥ २०८ ॥

इन सूत्रके गुणस्थानोंका जिस प्रकार ओघमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पवहुत्व
कहा है, उसी प्रकार यहापर कहना चाहिए, क्योंकि, दोनोंमें कोई विशेषता नहीं है ।

इसी प्रकार अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें चारों कपाय-
वाले जीवोंका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पवहुत्व है ॥ २०९ ॥

जिस प्रकारसे चारों कपायवाले प्रमत्त और अप्रमत्तसयत्तोंका सम्यक्त्वसम्बन्धी
अल्पवहुत्व कहा है, उसी प्रकार अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दो गुणस्थानोंमें
कहना चाहिए । किन्तु विशेषता यह है कि लोभकपायका इसी प्रकार अपूर्णकरण आदि
तीन गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पवहुत्व है, ऐसा कहना चाहिए, क्योंकि, सूक्ष्म-
साम्पराय गुणस्थान तक लोभकपायका सद्भाव पाया जाता है ।

शका—यदि ऐसा है, तो इसी प्रकारसे सूत्रमें क्यों नहीं प्ररूपण किया ?

समाधान—प्रवेशसम्बन्धी अल्पवहुत्व सूत्रके द्वारा सूत्रमें उक्त बात प्ररूपित की
ही गई है । और उसी प्रवेशसम्बन्धी अल्पवहुत्व सूत्रके द्वारा यह ऊपर कहा गया अर्थ
जाना जाता है, इसलिये उसे यहापर पृथक् नहीं कहा है ।

चारों कपायवाले उपशामरू जीव सत्से कम है ॥ २१० ॥

उपशामरूसे क्षपक जीव संख्यातगुणित है ॥ २११ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

अकसाईसु सव्वत्थोवा उवसंतकसायवीदरागछट्टुमत्था ॥२१२॥
चउत्तणपरिमाणत्तादो' ।

खीणकसायवीदरागछट्टुमत्था सखेज्जगुणा ॥ २१३ ॥

अट्टुत्तरसदपरिमाणत्तादो' ।

सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो वि तुत्त्ला तत्तिया
चेव ॥ २१४ ॥

सुगममेद ।

सजोगिकेवली अद्धं पडुच्च सखेज्जगुणा ॥ २१५ ॥

कुदो ? अणूणावियओघरामित्तादो ।

एव कसायमग्गणा समत्ता ।

णाणाणुवादेण मदिअण्णाणि-सुदअण्णाणि-विभगण्णाणीसु सव्व
त्थोवा सासणसम्मादिट्ठी ॥ २१६ ॥

अकपायी जीवोंमें उपशान्तरूपायवीतरागछट्टुमत्था मयमे कम हैं ॥ २१२ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण चौपन हे ।

अरूपायी जीवोंमें उपशान्तरूपायवीतरागछट्टुमत्था धीणरूपायवीतरागछट्टुमत्था
सख्यातगुणित हैं ॥ २१३ ॥

क्योंकि, उनका परिमाण एक सौ आठ हे ।

अरूपायी जीवोंमें सयोगिकेवली और अयोगिकेवली, ये दोनों ही प्रवेशकी
अपेक्षा तुल्य और पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २१४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अरूपायी जीवोंमें सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सख्यातगुणित हैं ॥२१५॥

क्योंकि, उनका प्रमाण ओघराशिसे न कम है, न अधिक है ।

इस प्रकार कपायमार्गणा समाप्त हुई ।

ज्ञानमार्गणाके अनुवादसे मत्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी और विभगज्ञानी जीवोंमें
सासादनसम्पग्घट्टि सरसे कम हैं ॥ २१६ ॥

१ गो जी ६२९

२ ज्ञानादानेन मत्यज्ञानि धुत्तानिपु सव्व स्तोत्रा सासादनसम्पग्घट्टय । स ति १, ८

कुदो ? पलिदोमस्स असखेज्जदिभागपरिमाणत्तादो ।

मिच्छादिट्ठी अणतगुणा, मिच्छादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥२१७॥

एत्थ एव' संबंधो कीरदे- मदि-सुदअण्णाणिसासणेहिंतो मिच्छादिट्ठी अणतगुणा । को गुणगारो ? सव्वजीवरासिस्स असखेज्जदिभागो । विभगणाणिसासणेहिंतो तेमि चेव मिच्छादिट्ठी असखेज्जगुणा । को गुणगारो ? पदरस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाओ सेडीओ, सेडीए असखेज्जदिभागमेत्ताओ । को पडिभागो ? घणगुलस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पदरंगुलाणि ।त्ति । अण्णहा निप्पडिसेहत्तादो ।

आभिणिबोहिय सुद ओधिणाणीसु तिसु अद्दासु उवसमा पवे-
सणेण तुल्ला थोवा ॥ २१८ ॥

सुगममेदं ।

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ २१९ ॥

क्योंकि, उनका परिमाण पल्योपमके असख्यातवें भागमात्र है ।

उक्त तीनों अन्नानी जीवोंमें मिथ्यादृष्टि अनन्तगुणित हैं, मिथ्यादृष्टि असख्यात-
गुणित हैं ॥ २१७ ॥

यहापर इस प्रकार सूत्रार्थ सम्बन्ध करना चाहिए- मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी सासादन सम्यग्दृष्टियोंसे मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित हैं। गुणकार क्या है? सर्व जीवराशिका असख्यातवा भाग गुणकार है। विभगज्ञानी सासादन सम्यग्दृष्टियोंसे उनके ही मिथ्यादृष्टि अर्थात् विभगज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीव असख्यात गुणित हैं। गुणकार क्या है? जगप्रतरका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो जगध्रेणीके असख्यातवें भागमात्र असख्यात जगध्रेणीप्रमाण है। प्रतिभाग क्या है? घनागुलका असख्यातवा भाग प्रतिभाग है, जो असख्यात प्रतरागुलप्रमाण है। यदि इस प्रकार सूत्रका अर्थ न किया जायगा, तो परस्पर विरोध प्राप्त होगा।

आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ २१८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

मति, श्रुत और अविज्ञानियोंमें उपशान्तकपायवीतरागछदुमस्य पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २१९ ॥

१ मिथ्यादृष्टयोऽसखेयगुणा । स ति १, ८

२ मतिषु 'एद' इति पाठ ।

३ मतिश्रुतावधिज्ञानेषु सर्वत स्तोकाश्रयत्वात्

एद पि सुगम ।

खवा संखेज्जगुणां ॥ २२० ॥

को गुणगारो ? दोण्णि रूपाणि ।

खीणकसायवीदरागच्छदुमत्था तेत्तिया चेव ॥ २२१ ॥

सुगममेद ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा सखेज्जगुणां ॥ २२२ ॥

कुदो ? अणूणाहियओघरासित्तादो ।

पमत्तसंजदा सखेज्जगुणां ॥ २२३ ॥

को गुणगारो ? दोण्णि रूपाणि ।

संजदासजदा असखेज्जगुणां ॥ २२४ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

मति, श्रुत और अधिज्ञानियोंमें उपशान्तरूपायवीतरागच्छदुमत्थोंसे क्षपक जीव सरूयातगुणित हैं ॥ २२० ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

मति, श्रुत और अधिज्ञानियोंमें क्षपकोंसे क्षीणरूपायवीतरागच्छदुमत्थ पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २२१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

मति, श्रुत और अधिज्ञानियोंमें क्षीणरूपायवीतरागच्छदुमत्थोंसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसंयत जीव सरूयातगुणित हैं ॥ २२२ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण ओघराशिसे न कम है, न अधिक है ।

मति, श्रुत और अधिज्ञानियोंमें अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयत जीव सरूयात गुणित हैं ॥ २२३ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

मति, श्रुत और अधिज्ञानियोंमें प्रमत्तसयतासे सयतासंयत जीव अमरूयात गुणित हैं ॥ २२४ ॥

१ खत्वार क्षपकाः सरूयेयगुणा । स ति १, ८

२ अप्रमत्तसयता सरूयेयगुणा । स ति १, ८

३ प्रमत्तसयता सरूयेयगुणा । स ति १, ८

४ संयतासयताः (अ) सरूयेयगुणा । स ति १, ८

कुदो ? पलिदोवमस्म असखेज्जदिभागपरिमाणत्तादो । को गुणगारो ? पलिदो-
मस्म असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिदोत्रमपढमत्रग्गमूलाणि ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा' ॥ २२५ ॥

कुदो ? पहाणीक्यदेअसजदमम्मादिट्ठिरासिच्चादो । को गुणगारो ? आवलियाए
असखेज्जदिभागो ।

असंजदसम्मादिट्ठि-संजदासंजद पमत्त-अप्पमत्तसजदट्ठाणे सम्मत्त-
प्पात्रहुगमोघं ॥ २२६ ॥

जधा ओघमिह एदेमि सम्मत्तप्पात्रहुअ परुपिद, तथा परुपेदव्वमिदि बुत्त होदि ।

एवं तिसु अद्दासु ॥ २२७ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ २२८ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ २२९ ॥

एदाणि तिण्णि नि सुत्ताणि सुगमाणि ।

क्योंकि, उनका परिमाण पल्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण हे । गुणकार क्या
है ? पल्योपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्योपमके असख्यात प्रथम वर्गमूल-
प्रमाण है ।

मति, श्रुत और अग्रधिज्ञानियोंमें संयतासयतोमे असयतसम्यग्दृष्टि जीव अस-
ख्यातगुणित हैं ॥ २२५ ॥

क्योंकि, यहापर असयतसम्यग्दृष्टि देवोंकी राशि प्रधानतासे स्वीकार की गई
है । गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

मति, श्रुत और अग्रधिज्ञानियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसयत
और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पत्रहुत्व ओघके ममान है ॥ २२६ ॥

जिस प्रकार ओघमें इन गुणस्थानोंका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पत्रहुत्व कहा है,
उसी प्रकार यहापर भी प्ररूपण करना चाहिये, यह अर्थ कहा गया है ।

इसी प्रकार मति, श्रुत और अग्रधिज्ञानी जीवोंमें अपूर्वकरण आदि तीन गुण-
स्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पत्रहुत्व है ॥ २२७ ॥

मति, श्रुत और अग्रधिज्ञानियोंमें उपशामक जीव सत्रसे कम हैं ॥ २२८ ॥

उपशामकोंसे क्षपक जीव सख्यातगुणित हैं ॥ २२९ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम हैं ।

मणपज्जवणाणीसु तिसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा^१
॥ २३० ॥

उवसतकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चैव ॥ २३१ ॥

खवा संखेज्जगुणा^२ ॥ २३२ ॥

खीणकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चैव ॥ २३३ ॥

एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा^३ ॥ २३४ ॥

को गुणगारो ? सखेज्जरूपाणि ।

पमत्तसजदा संखेज्जगुणा^४ ॥ २३५ ॥

को गुणगारो ? दोष्णि रूपाणि ।

पमत्त-अप्पमत्तसंजदद्वारेण सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ २३६ ॥

मन पर्ययज्ञानियोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प है ॥ २३० ॥

उपशान्तरूपायवीतरागछदुमत्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २३१ ॥

उपशान्तरूपायवीतरागछदुमत्थोंसे क्षपक जीव सरयातगुणित हैं ॥ २३२ ॥

धीणकपायवीतरागछदुमत्थ पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २३३ ॥

ये सूत्र सुगम है ।

मन'पर्ययज्ञानियोंमें धीणकपायवीतरागछदुमत्थोंसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसयत जीव सरयातगुणित हैं ॥ २३४ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात रूप गुणकार है ।

मन'पर्ययज्ञानियोंमें अप्रमत्तमयतोंसे प्रमत्तसयत जीव सख्यातगुणित हैं ॥ २३५ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

मन'पर्ययज्ञानियोंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें उपशामसम्पददृष्टि जीव सबसे कम हैं ॥ २३६ ॥

१ मन पर्ययज्ञानियु सव्वत स्तोत्राश्रन्वत्ता उपशामका । स सि १, ८ तर्वा सरया १० । गो जी ६३

२ चत्तरा क्षपका सख्ययगुणा । स सि १, ८ तर्वा सरया २० । गो जी ६३०

३ अप्रमत्तसयता सख्ययगुणा । स सि १, ८

४ प्रमत्तसयता सख्ययगुणा । स सि १, ८

उवसमसेडीदो ओदिण्णाण' उरमममेदिं चदमाणाणं ना उरसममम्मत्तेण योवाणं जीवाणमुवलभा ।

खइयसम्माइट्ठी संखेज्जगुणा ॥ २३७ ॥

उदयसम्मत्तेण मणपज्जत्रणाणिमुणित्तराण बहुगमुवलभा ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ २३८ ॥

सुगममेद ।

एवं तिसु अद्वासु ॥ २३९ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ २४० ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ २४१ ॥

एदाणि तिण्णि सुत्ताणि सुगमाणि, बहुमो परुपिट्तादो ।

केवलणाणीसु सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो वि तुल्ला तत्तिया चेव ॥ २४२ ॥

क्योंकि, उपशमश्रेणीसे उत्तरनेवाले, अथवा उपशमश्रेणीपर चढ़नेवाले मन पर्यय ज्ञानी थावे जीव उपशमसम्यक्त्त्रके साथ पाये जाते हैं ।

मनःपर्ययज्ञानियोंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ २३७ ॥

क्योंकि, उक्त गुणस्थानोंमें क्षायिकसम्यक्त्त्रके साथ बहुतसे मन पर्ययज्ञानी मुनिवर पाये जाते हैं ।

मनःपर्ययज्ञानियोंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें वेदकसम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ २३८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानियोंमें अपूर्णकरण आदि तीन उपशमक गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्त है ॥ २३९ ॥

मनःपर्ययज्ञानियोंमें उपशमक जीव सरसे कम हैं ॥ २४० ॥

उपशमक जीवोंमें क्षपक जीव सरयातगुणित हैं ॥ २४१ ॥

ये तीनों सूत्र सुगम हैं, क्योंकि, वे बहुत बार प्ररूपण किये जा चुके ह ।

केवलज्ञानियोंमें मयोगिकेवली और अयोगिकेवली जिन प्रवेशकी अपेक्षा दोनों तुल्य और तानन्मात्र ही है ॥ २४२ ॥

तुल्ला तत्तिया सदा हेउ हेउमतभाणेण जोजेयच्चा । त कध ? जेण तुल्ला, तेण तत्तिया चि । केत्तिया ते ? अद्दुत्तरमयमेत्ता ।

सजोगिकेवली अद्द पडुच्च सखेज्जगुणा' ॥ २४३ ॥

पुव्वफोडिणालम्हि सचय गदा सजोगिकेवल्लिणो एगममयपपेसगेहितो मखेज्ज गुणा, मखेज्जगुणेण कालेण मिलिदत्तादो ।

एउ णाणमग्गणा समत्ता ।

संजमाणुपादेण सजदेसु तिसु अद्दासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा ॥ २४४ ॥

सुदो ? चउउण्णपमाणत्तादो ।

उवसंतकसायवीदरागछुदुमत्था तत्तिया चैव ॥ २४५ ॥

सुगममेद ।

खवा सखेज्जगुणा ॥ २४६ ॥

तुल्य ओर ताव मात्र, ये दोनों शब्द हेतु हेतुमद्भावसे सम्बन्धित करना चाहिए। शका—वह कैसे ?

समाधान—चूँकि, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली परस्पर तुल्य ह, इसलिए वे ताव मात्र अर्थात् पूर्वोक्त प्रमाण ह ।

शका—व कितने ह ?

समाधान—वे एउ सो आठ सख्याप्रमाण ह ।

केवलज्ञानियोंमें सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सख्यातगुणित हैं ॥२४३॥

पुव्वफोटीप्रमाण कालमें सचयको प्राप्त हुए सयोगिकेवली एक समयमें प्रवेश करनेवालोंकी अपेक्षा सख्यातगुणित हैं, क्योंकि, वे सख्यातगुणित कालसे सचित हुए हैं ।

इस प्रकार ज्ञानमार्गणा समाप्त हुई ।

सयममार्गणाके अनुरादमे सयतोंमें अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ २४४ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण चोपन है ।

सयतोंमें उपशान्तरूपायरीतरागउद्वस्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २४५ ॥

यह सब सुगम है ।

सयतोंमें उपशान्तरूपायरीतरागउद्वस्थोंसे क्षपक जीव सख्यातगुणित हैं ॥२४६॥

१ केवलज्ञानियों अयोगिकेवल्लिणो सयोगिकेवल्लिणो सखेज्जगुणा । स वि १, ८ ५

को गुणगारो ? दोषिण रूपाणि । किं कारण ? जेण णाण-वेदादिमच्चवियप्पेसु उवसमसेडिं चडंतजीरेहितो ससगमेडिं चढतजीना दुगुणा त्ति आडरिओपदेमादो । एग-ममएण तित्थयरा छ ससगसेडिं चडति । दस पत्तेयवुद्धा चढंति, बोहियवुद्धा अट्टुत्तर-सयमेत्ता, सग्गच्चुआ तत्तिया चेव । उम्फस्सोगाहणाए दोषिण ससगमेडिं चडति, जहण्णोगाहणाए चत्तारि, मज्झिमोगाहणाए अट्ट । पुरिसपेदेण अट्टुत्तरमयमेत्ता, णउंसय-पेदेण दस, इत्थिपेदेण तिस । एदेमिमद्वमेत्ता उवसमसेडिं चडति' त्ति घेत्तव्व ।

क्षीणकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ २४७ ॥

केत्तिया ? अट्टुत्तरसयमेत्ता । कुदो ? सजमसामण्णविमसादो ।

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

शंका—क्षपकोंका गुणकार दो होनेका कारण क्या है ?

समाधान—चूकि, ज्ञान, वेद आदि सर्ग विस्तरोंमें उपशमश्रेणीपर चढ़नेवाले जीवोंसे क्षपकश्रेणीपर चढ़नेवाले जीव दुगुणे होते ह, इस प्रकार आचार्योंका उपदेश पाया जाता है ।

एक समयमें एक साथ छह तीर्थंकर क्षपकश्रेणीपर चढते हैं । दश प्रत्येकबुद्ध, एक सौ आठ बोधिवनबुद्ध ओर स्वर्गसे च्युत होकर आये हुए उतन ही जीव अर्थात् एक सौ आठ जीव क्षपकश्रेणीपर चढते ह । उत्कृष्ट भवगाहनावाले दो जीव क्षपकश्रेणीपर चढते हैं । अघन्य भवगाहनावाले चार और ठीक मध्यम भवगाहनावाले आठ जीव एक साथ क्षपकश्रेणीपर चढते हैं । पुत्रपेदेके उदयके साथ एक सौ आठ, नपुंसकवेदके उदयसे दश और स्त्रीवेदके उदयसे तिस जीव क्षपकश्रेणीपर चढते ह । इन उपर्युक्त जीवोंके आधे प्रमाण जीव उपशमश्रेणीपर चढते ह, ऐसा अर्थ ग्रहण करना चाहिए ।

सयतोमें क्षीणरूपायवीतरागछद्वस्य जीव पूर्वोक्त प्रमाण हीं हैं ॥ २४७ ॥

शंका—क्षीणरूपायवीतरागछद्वस्य जितने होते हैं ?

समाधान—एक सौ आठ होते ह, क्योंकि, यहापर सयम सामान्यकी विवक्षा की गई है ।

१ दो चैवुक्कीण चउर जत्ताण मन्निमाए उ । उड्हिय सय खुउ मिच्छइ ओगाण्णाद तवा ॥
भव दा ५०, ४५५

२ हाति खवा इमित्तमये बोत्थियवुद्धा य पुरिसपेदा य । उवस्सेणट्टुत्तरसयप्यमा सग्गदो य बुद्धा ॥
पत्तयवुद्धति पयरा धिणउवसयमणोडिणाणवुद्धा । दमछव्वीसदमवामट्टावात जटासममो ॥ जेट्टारत्तहुमन्निमओगाहणा
इ पारि अडेव । दवर्गं हवति खवगा उवममगा अद्वयदेमि ॥ गो जी ६२९-६३२

तुल्ला तत्तिया सदा हेउ हेउमतभावेण जोजेयन्वा । त कध ? जेण तुल्ला,
तत्तिया त्ति । केत्तिया ते ? जट्टुत्तरसयमेत्ता ।

सजोगिकेवली अद्ध पडुच्च सरसेज्जगुणा' ॥ २४३ ॥

पुव्वफोडिक्कालम्हि सचय गट्ठा सजोगिकेवल्लिणो एगममयपवेसगेहितो मक्खे
गुणा, मखेज्जगुणेण कालेण मिलिट्ठादे ।

एव णाणमग्गणा समत्ता ।

**सजमाणुवादेण सजदेसु तिसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल
थोवा ॥ २४४ ॥**

कुट्ठो ? चउत्तण्णपमाणत्तादे ।

उवसंतकसायवीदरागच्छदुमत्था तत्तिया चेव ॥ २४५ ॥

सुगममेद ।

खवा संसेज्जगुणा ॥ २४६ ॥

तुल्य और ताव मात्र, ये दोनों शब्द हेतु हेतुमद्भावसे सम्बन्धित करना चाहि
शक्य—वह कैसे ?

समाधान—चूँकि, मयोगिकेवली और अयोगिकेवली परस्पर तुल्य ह, इसलि
ये ताव मात्र अर्थात् पूर्वोक्त प्रमाण ह ।

शक्य—य कितने ह ?

समाधान—ये एक सो आठ सख्याप्रमाण ह ।

केवलवानियोगे सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सरयातगुणित हैं ॥२४३॥

पूर्वफोटीप्रमाण कालमें सचयको प्राप्त हुए मयोगिकेवली एक समयमें प्रवे
करनेवालोंका अपेक्षा सरयातगुणित हैं, क्योंकि, ये सख्यातगुणित कालसे सचि
हए हैं ।

इस प्रकार ज्ञानमार्गणा समाप्त हुई ।

मयममार्गणाके अनुवादमें सयतोमें अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उ
शामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ २४४ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण चौपन हे ।

सयतोमें उपशान्तरूपायवीतरागच्छन्नस्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २४५ ॥

यह सूत्र सुगम हे ।

सयतोमें उपशान्तरूपायवीतरागच्छन्नस्थोंसे क्षपक जीव सख्यातगुणित हैं ॥२४६॥

१ केवलवानिपु अयोगिकेवल्लिण्यः सयोगिकेवल्लिणः सखेयगुणा— स वि १, ८ २

कुदो ? पुव्वकोडिसचपादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ २५४ ॥

खओणममियसम्मत्तादो ।

एव तिसु अद्दासु ॥ २५५ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ २५६ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ २५७ ॥

ग्गदाणि तिण्णि पि सुत्ताणि सुगमाणि ।

सामाह्यच्छेदोवट्ठावणसुद्धिसंजदेसु दोसु अद्दासु उवसमा पवे-
सणेण तुल्ला थोवा' ॥ २५८ ॥

खवा संखेज्जगुणा' ॥ २५९ ॥

अप्पमत्तसंजदा अवखवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ २६० ॥

फ्योकि, उनका सचयकाल पूर्वकोटी वर्ष है ।

सयतोंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकमम्यगृह्णियोंसे
नेत्रकमम्यगृह्णित जीव सख्यातगुणित है ॥ २५४ ॥

फ्योकि, नेत्रकमम्यगृह्णियोंके क्षायोपशमिक नम्यक्त्व होता है (जिम्नकी प्राप्ति
सुलभ है) ।

इसी प्रकार सयतोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी
अल्पवहुत्व है ॥ २५५ ॥

उक्त गुणस्थानोंमें उपशामक जीव सयसे कम हैं ॥ २५६ ॥

उपशामकोंसे क्षपक जीव सख्यातगुणित हैं ॥ २५७ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम हैं ।

सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसंयतोंमें अपूर्णकरण और अनिष्टात्तिकरण,
इन दोनों गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प है ॥ २५८ ॥

उपशामकोंमें क्षपक जीव मख्यातगुणित हैं ॥ २५९ ॥

क्षपकोंमें अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसयत सख्यातगुणित हैं ॥ २६० ॥

१ सयमातुवादेन सामायिकच्छेदोपरथापनशुद्धिसयतेषु द्वयोः उपशमनयोस्तुल्यसख्या । स सि १, ८

२ तत्र सख्येयगुणो क्षपकौ । स सि १, ८

३ अयमत्राः सख्येयगुणा । स सि १, ८

सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो वि तुल्य तत्तिया
चेव ॥ २४८ ॥

सुवोञ्जमेद ।

सजोगिकेवली अद्धं पडुच्च सखेज्जगुणा ॥ २४९ ॥

कुदो ? एगममयादो मचयकालममूहस्म सखेज्जगुणचुलभा ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा सखेज्जगुणा ॥ २५० ॥

को गुणगारो ? सखेज्जसमया । एत्थ ओघकारण चित्तिय वत्तन् ।

पमत्तसजदा सखेज्जगुणा ॥ २५१ ॥

को गुणगारो ? टोण्णि रूपाणि ।

पमत्त-अप्पमत्तसजदट्टाणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ २५२ ॥

कुदो ? जतोमुहुत्तमचयादो ।

खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ २५३ ॥

सयतोंमें सयोगिकेवली और अयोगिकेवली चिन ये दोनों ही प्रवेशकी अपेक्षा
तुल्य और पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २४८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सयतोंमें सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा संख्यातगुणित हैं ॥ २४९ ॥

क्योंकि, एउ समयकी अपेक्षा सचयकालना समूह सरयातगुणा पाया जाता है ।

सयतोंमें सयोगिकेवली जिनोंसे जक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तमयत जीव
सरयातगुणित है ॥ २५० ॥

गुणकार क्या है ? सरयात समय गुणकार है । यहापर राशिके ओघके समान
होनेका कारण चित्तजन कर कहना चाहिए । इसका कारण यह है कि दोनों स्थानोंपर
सयम सामान्य ही चित्रभिन ह (देखो सूत्र न ८) ।

मयतोंमें अप्रमत्तमयतोंमें प्रमत्तमयत जीव सरयातगुणित हैं ॥ २५१ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

सयतोंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तमयत गुणस्थानमें उपशमसम्पदृष्टि जीव
सयतोंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तमयत गुणस्थानमें उपशमसम्पदृष्टि जीव
सयतोंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तमयत गुणस्थानमें उपशमसम्पदृष्टि जीव
सयतोंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तमयत गुणस्थानमें उपशमसम्पदृष्टि जीव

क्योंकि, उनका सचयकाल जन्तमुद्धत है ।

सयतोंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तमयत गुणस्थानमें उपशमसम्पदृष्टियोंसे
क्षायिकसम्पदृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ २५३ ॥

परिहारशुद्धिसंजदेसु सव्वत्थोवा अप्पमत्तसजदा' ॥ २६८ ॥
गुणममेद ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा' ॥ २६९ ॥

को गुणगारो ? दो रूजाणि ।

पमत्त अप्पमत्तसंजदट्टाणे सव्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ २७० ॥

कुदो ? सइयमम्मत्तस्स पउर सभजाभावा ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ २७१ ॥

रुदो ? सओपममियमम्मत्तस्स पउर सभजादो । एत्थ उउमममम्मत्त णत्थि,

तीमं वामेण त्रिणा परिहारशुद्धिसंजमस्स संभजाभावा । ण च तेत्थियकालमुउममसम्म-
त्तसात्रहृगणमत्थि, जेण परिहारशुद्धिसंजमेण उउसममम्मत्तस्सुउलद्धी होज ? ण च
परिहारशुद्धिसंजमसुइत्तस्स उउसमसेडीचडणट्ट दमणमोहणीयस्सुउसामण्ण पि सभजइ,
जेणुउसममेडिडिह्मि टोण्ह पि संजोगो होज ।

परिहारशुद्धिसंयतोमं अप्रमत्तसयत जीव सउसे कम है ॥ २६८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

परिहारशुद्धिसंयतोमं अप्रमत्तसंयतोसे प्रमत्तसयत सरयातगुणित है ॥ २६९ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

परिहारशुद्धिसंयतोमं प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमे धायिकमस्य-

गट्टि जीव सउसे कम हैं ॥ २७० ॥

क्योंकि, क्षायिकसम्यक्त्वना प्रचुरतासे होना संभव नहीं है ।

परिहारशुद्धिसंयतोमं प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमे धायिकसम्य-

गट्टिपोमे वेदकमस्यगट्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ २७१ ॥

क्योंकि, क्षायोपशमिकसम्यक्त्वका प्रचुरतासे होना संभव है । यहा परिहारशुद्धि-

सयतोमं उपशमसम्यक्त्व नहीं होता है, क्योंकि, तीस वर्षके बिना परिहारशुद्धिसंयतना

होना संभव नहीं है । और न उतने काल तक उपशमसम्यक्त्वना अवस्थान रहता

है, निमित्त कि परिहारशुद्धिसंयतके साथ उपशमसम्यक्त्वकी उपलब्धि हो सके ?

सुमर्य पात यह है कि परिहारशुद्धिसंयतको नहीं छोड़नेवाले जीवके उपशमश्रेणीपर

चढ़नेके लिए दशममोहनीयकर्मका उपशमन होना भी संभव नहीं है, जिससे कि उपशम

ध्यानमें उपशमसम्यक्त्व और परिहारशुद्धिसंयत, इन दोनोंका भी संयोग हो सके ।

पमत्तसंजदा मंसेज्जगुणा' ॥ २६१ ॥

एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

पमत्त अप्पमत्तसजदद्व्याणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ २६२ ॥

कुदो ? अतोमुहुत्तसचयादो ।

खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ २६३ ॥

पुव्वकोडिसचयादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ २६४ ॥

उओउसमियमम्मचादो ।

एव दोसु अद्वासु ॥ २६५ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ २६६ ॥

खवा सखेज्जगुणा ॥ २६७ ॥

एदाणि तिण्णि रि सुत्ताणि सुगमाणि ।

अप्रमत्तसयतामे प्रमत्तमयत सग्घातगुणित है ॥ २६१ ॥

ये सूत्र सुगम है ।

सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसयतोंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुण स्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सत्रमे कम हैं ॥ २६२ ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल अन्तर्मुहत्त है ।

सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसयतोंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुण स्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे शायिकसम्यग्दृष्टि जीव सग्घातगुणित हैं ॥ २६३ ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल पूर्वमोटी वर्ष है ।

सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसयतोंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुण स्थानमें शायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदसम्यग्दृष्टि जीव सग्घातगुणित है ॥ २६४ ॥

क्योंकि, वेदसम्यग्दृष्टियोंसे शायोपशमिक सम्यक्त्व होता है (जिसकी प्राप्ति सुलभ है) ।

इसी प्रकार उक्त जीवोंका अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वमग्नधी अल्पगुह्य है ॥ २६५ ॥

उक्त जीवोंमें उपशामक सत्रसे कम है ॥ २६६ ॥

उपशामकोंमें क्षपक मर्यातगुणित हैं ॥ २६७ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम ह ।

१ प्रमत्त सग्घेयद्वया । स वि १, ८

उवसमसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २७७ ॥

को गुणगारो ? पल्लिदोवमस्स असखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पल्लिदोवमपढम-
वग्गामूलाणि ।

वेदगसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २७८ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । कारणं जाणिदूण वत्तच्च ।

असंजदेसु सब्वत्थोवा सासणसम्मादिट्ठी ॥ २७९ ॥

कुदो ? छापलियसचयादो ।

सम्मामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ २८० ॥

कुदो ? सखेज्जापलियसंचयादो ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २८१ ॥

को गुणगारो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागो । कुदो ? साभावियादो ।

सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकमस्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव असख्यात-
गुणित हैं ॥ २७७ ॥

गुणकार क्या है ? पल्लोपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्लोपमके
असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

सयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि असंख्यातगुणित
हैं ॥ २७८ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । इसका कारण
जानकर कहना चाहिए । (देखो सूत्र न २०) ।

असयतोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि जीव सत्से कम हैं ॥ २७९ ॥

फ्योंकि, उनका सचयकाल छह आवलीमान है ।

असयतोंमें सामादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिध्यादृष्टि जीव सख्यातगुणित
हैं ॥ २८० ॥

फ्योंकि, उनका सचयकाल सख्यात आवलीप्रमाण है ।

असयतोंमें सम्यग्मिध्यादृष्टियोंसे असयतसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित
हैं ॥ २८१ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है, फ्योंकि, यह
स्वाभाविक है ।

१ असयतेशु सबत स्तोरा सासादनसम्यग्दृष्टय । स सि १, ८

२ सम्यग्मिध्यादृष्टय सरयेययुणा । स सि १, ८

३ असयतसम्यग्दृष्टयो सरयेययुणा । स सि १, ८

सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदेसु सुहुमसांपराइयज्वसमा थोर्षा
॥ २७२ ॥

कुदो ? चउउण्णपमाणत्तादो ।

खवा संखेज्जगुणा' ॥ २७३ ॥

को गुणगारो ? दोण्णि रूपाणि ।

जधाक्खादविहारसुद्धिसंजदेसु अकसाइभगो' ॥ २७४ ॥

जधा अरुमारिणमप्पानहुग उच तथा जहाक्खादविहारसुद्धिसंजदाण पि ऋद्व
मिदि उच होदि ।

सजदासंजदेसु अप्पावहुअ णत्थि' ॥ २७५ ॥

ण्यपदत्तादो । एत्थ मम्मत्तप्पानहुअ उच्चदे । तं जहा-

सजदासजदट्टाणे सव्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ २७६ ॥

कुदो ? सखेज्जपमाणत्तादो ।

सूक्ष्मसांपरायिकशुद्धिसयतोम सूक्ष्मसांपरायिक उपशामक जीव अल्प
हैं ॥ २७२ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण चौपन है ।

सूक्ष्मसांपरायिकशुद्धिसयतोमें उपशामकोंसे क्षपक जीव सख्यातगुणि
हैं ॥ २७३ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार ह ।

यथाख्यातविहारशुद्धिसयतोमें अल्पगहुत्त अकपायी जीवोंके समान है ॥ २७४ ॥

जिस प्रकार अकपायी जीवोंका अल्पगहुत्त कहा है, उसी प्रकार यथाख्यात

विहारशुद्धिसयतोंका भी अल्पगहुत्त करना चाहिए, यह अर्थ कहा गया है ।

सयतासयत जीवोंमें अल्पगहुत्त नहीं है ॥ २७५ ॥

क्योंकि, सयतासयत जीवोंके एक ही गुणस्थान होता है । यहापर सम्यक्त्त

सम्बन्धी अल्पगहुत्त कहते हैं । यह इस इस प्रकार है-

सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सनसे कम है ॥ २७६ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण सख्यात ही है ।

१ सूक्ष्मसांपरायिकशुद्धिसयतेषु उपशामकेभ्य क्षपका सत्त्वेयगुणा । स सि १, ८

२ यथाख्यातविहारशुद्धिसयतेषु उपशातन्यायस्य क्षणिकयाया सत्त्वेयगुणा । अथाधिकेवद्विनस्ता
पु १ । मयोभिकेवद्विन सत्त्वेयगुणा । स सि १, ८

३ सयतासयतानां नास्यस्यगहुत्तम् । स सि १, ८

दंसणाणुवादेण चक्षुदंसणि-अचक्षुदंसणीसु मिच्छादिद्विष्णुहृडि
जाव स्त्रीणकसायवीदरागच्छदुमत्था त्ति ओघं' ॥ २८६ ॥

जघा ओघमिह एदेमिमप्यात्रहुग परुपिदं तथा एत्थ वि परुपेदव्वं, विमेसाभावा ।
विसेसपरुखणहृमुत्तरसुत्त मणादि-

णवरि चक्षुदंसणीसु मिच्छादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ २८७ ॥

को गुणगारो ? पदरस्त असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाओ सेडीओ, सेडीए'
अमखेज्जदिभागमेत्ताओ । कुदो ? सामानियादो ।

ओधिदंसणी ओधिणाणिभंगो' ॥ २८८ ॥

केवलदंसणी केवलणाणिभंगो' ॥ २८९ ॥

दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एउ दसणमगणा समत्ता ।

दर्शनमार्गणाके अनुवादसे चक्षुदर्शनी और अचक्षुदर्शनी जीवोंमें मिथ्यादृष्टिसे
लेकर क्षीणकपायवीतरागच्छदस्य गुणस्थान तरु अल्पचहुत्व ओघके समान है ॥ २८६ ॥

जिस प्रकार ओघमें इन गुणस्थानवर्ती जीवोंका अल्पचहुत्व कहा है, उसी प्रकार
पहापर भी कहना चाहिए, क्योंकि, दोनोंमें कोई विशेषता नहीं है। अत्र चक्षुदर्शनी
जीवोंमें सम्भ्र पशियेपताके प्ररूपण करमेके लिए उत्तर सूत्र कहते हे—

विशेषता यह है कि चक्षुदर्शनी जीवोंमें असयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि
अमरयातगुणित हैं ॥ २८७ ॥

गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो असख्यात
जगध्रेणिप्रमाण है । ये जगध्रेणिया भी जगध्रेणोंके असख्यातवें भागमात्र हैं । इसका
कारण क्या है ? ऐसा स्वभावसे है ।

अधिदर्शनी जीवोंका अल्पचहुत्व अधिज्ञानियोंके समान है ॥ २८८ ॥

केवलदर्शनी जीवोंका अल्पचहुत्व केवलज्ञानियोंके समान है ॥ २८९ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

इस प्रकार दर्शनमार्गणा समाप्त हुई ।

१ दक्षनाहुवादेण चक्षुदर्शनिना मनोयोगिवत् । अचक्षुदर्शनिना काययोगिवत् । स मि १, ८

२ अतिपु ' सेडीओ सत्रगमेटी अमखेज्जदिभागो सेडीए ' इति पाठ ।

३ अत्रधिदर्शनिनामत्रधिज्ञानिवत् । स सि १, ८ ४ केवलदर्शनिना केवलज्ञानिवत् । स सि १, ८

मिच्छादिद्वी अणतगुणा' ॥ २८२ ॥

को गुणगारो ? अभयसिद्धिद्वि अणतगुणो, सिद्धेहि वि अणतगुणो, अणताणि सब्वजीवरासिपढमयग्गमूलाणि । कुदो ? साभावियादो ।

असंजदसम्मादिद्विद्व्याणे सब्वत्थोवा उवसमसम्मादिद्वी ॥ २८३ ॥

कुदो ? अंतोमुहुत्तसचयादो ।

खइयसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ २८४ ॥

कुदो ? सागरोवमसचयादो । को गुणगारो ? आचलियाए असखेज्जदिभागो । कुदो ? साभावियादो ।

वेदगसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ २८५ ॥

को गुणगारो ? आचलियाए असखेज्जदिभागो । कुदो ? साभावियादो ।

एव सजममग्गणा समत्ता ।

असंयतोमं असयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित है ॥ २८२ ॥

गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणित और सिद्धोंसे भी अनन्तगुणित राशि गुणकार है, जो सर्व जीवराशिके अनन्त प्रथम वर्गमूलप्रमाण है, क्योंकि, यह स्वाभाविक है ।

असयतोमं असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं ॥ २८३ ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

असयतोमं असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव असरयातगुणित हैं ॥ २८४ ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल सागरोपम है । गुणकार क्या है ? आचलीका असख्यातवा भाग गुणकार है, क्योंकि, यह स्वाभाविक है ।

असयतोमं असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असरयातगुणित हैं ॥ २८५ ॥

गुणकार क्या है ? आचलीका असख्यातवा भाग गुणकार है, क्योंकि, यह स्वाभाविक है ।

इस प्रकार सयममार्गणा समाप्त हुई ।

कुदो ? मणुसकिण्ह णील्लेस्मियसखेज्जखइयसम्मादिट्ठिपरिग्गहादो ।

उवसमसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २९५ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो । कुदो ? णेरइएसु किण्हलेस्सिएसु पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागमेत्तउउसमसम्मादिट्ठीणमुउलंभा ।

वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ २९६ ॥

को गुणगारो ? आउलियाए असंखेज्जदिभागो । सेम सुगम ।

णवरि विसेसो, काउलेस्सिएसु असंजदसम्मादिट्ठिद्वाने सव्व-
थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ २९७ ॥

कुदो ? अतोमुहुत्तसचयादो ।

खइयसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २९८ ॥

कुदो ? पढमपुढविहिं सच्चिदखइयसम्मादिट्ठिग्गहादो । को गुणगारो ? आउ-
लियाए असखेज्जदिभागो ।

क्योंकि, यहा पर कृष्ण ओर नीललेइश्यानाले सख्यात क्षायिकसम्यग्दष्टि मनुष्योंका ग्रहण किया गया हे ।

कृष्ण, नील और कापोतलेइश्यानालोंमें असंयतसम्यग्दष्टि गुणस्थानमें क्षायिक-
सम्यग्दष्टियोंसे उपशमसम्यग्दष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं ॥ २९५ ॥

गुणकार क्या हे ? पल्योपमका असख्यातया भाग गुणकार हे, क्योंकि, कृष्ण-
लेइश्यानाले नारकियोंमें पल्योपमके असख्यातवें भागमात्र उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंका
सङ्घाव पाया जाता हे ।

कृष्ण, नील और कापोतलेइश्यानालोंमें जमपतसम्यग्दष्टि गुणस्थानमें उपशम-
सम्यग्दष्टियोंसे वेदरुमसम्यग्दष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ २९६ ॥

गुणकार क्या हे ? आउलीका असख्यातया भाग गुणकार हे । शेष सूत्रार्थ
सुगम हे ।

केरल-निशेपता यह हे कि कापोतलेइश्यानालोंमें असंयतसम्यग्दष्टि गुणस्थानमें
उपशमसम्यग्दष्टि जीव सत्रसे कम हे ॥ २९७ ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल अन्तर्मुहूर्त हे ।

कापोतलेइश्यानालोंमें असंयतसम्यग्दष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दष्टियोंसे क्षायिक-
सम्यग्दष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ २९८ ॥

क्योंकि, यहा पर प्रथम पृथिवीमें सच्चिद क्षायिकसम्यग्दष्टि जीवोंका ग्रहण
किया गया हे । गुणकार क्या हे ? आउलीका असख्यातया भाग गुणकार हे ।

लेसाणुवादेण किण्हलेस्सिय णील्लेस्सिय-काउलेस्सिएसु सब्ब
त्थोवा सासणसम्मादिट्ठी' ॥ २९० ॥

सुगममेद ।

सम्माभिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ २९१ ॥

को गुणगारो ? सखेज्जसमया ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २९२ ॥

को गुणगारो ? आमलियाए अमखेज्जदिभागो । कुटो ? साभावियाटो ।

मिच्छादिट्ठी अणतगुणा ॥ २९३ ॥

को गुणगारो ? अभसिद्धिएहि अणतगुणो, मिद्धेहि वि अणतगुणो, अणताणि
मव्वजीरामिपटमग्गमूलाणि ।

असजदसम्मादिट्ठिट्ठाणे सब्बत्थोवा खडयसम्मादिट्ठी ॥ २९४ ॥

लेश्यामार्गणाके अनुवादसे कृष्णलेश्या, नीललेश्या और कापोतलेश्यापाले जीवोंमें
सासादनसम्यग्दृष्टि सबसे कम है ॥ २९० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

कृष्ण, नील और कापोतलेश्यापालोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि
जीव सरयातगुणित हैं ॥ २९१ ॥

गुणकार क्या है ? सरयात समय गुणकार है ।

कृष्ण, नील और कापोतलेश्यापालोंमें सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि
जीव अमरयातगुणित हैं ॥ २९२ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असरयातवा भाग गुणकार है, क्योंकि, यह
स्वाभाविक है ।

कृष्ण, नील और कापोतलेश्यापालोंमें असयतसम्यग्दृष्टियोंमें मिथ्यादृष्टि जीव
अनन्तगुणित हैं ॥ २९३ ॥

गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणित और सिद्धोंसे भी अनन्तगुणित
राशि गुणकार है, जो सब जीवराशिके अनन्त प्रथम वगमूलप्रमाण है ।

कृष्ण, नील और कापोतलेश्यापालोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें धायिक
सम्यग्दृष्टि सबसे कम है ॥ २९४ ॥

सम्मामिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ३०४ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ३०५ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए असखेज्जदिभागो । सेस सुगोज्झ ।

मिच्छादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ३०६ ॥

को गुणगारो ? पदरस्म असंखेज्जदिभागो, असखेज्जाओ सेडीओ, सेडीए असंखेज्जदिभागमेत्ताओ । को पडिभागो ? घणगुलस्म असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पदरंगुलाणि ।

असंजदसम्मादिट्ठिसंजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजददुणे सम्मत्त-प्पावहुअमोधं ॥ ३०७ ॥

जधा ओघम्हि अप्पावहुअमेदेसिं उत्तं सम्मत्त पडि, तथा एत्थ सम्मत्तप्पावहुगं वत्तव्वमिदि वुत्तं होइ ।

तेजोलेश्या और पद्मलेश्यावालोंमें सासादनमम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिध्यादृष्टि जीव संख्यातगुणित हैं ॥ ३०४ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

तेजोलेश्या और पद्मलेश्यावालोंमें सम्यग्मिध्यादृष्टियोंसे असयतसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ ३०५ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

तेजोलेश्या और पद्मलेश्यावालोंमें असयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिध्यादृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ ३०६ ॥

गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो जगश्रेणीके असख्यातवे भागमात्र असख्यात जगश्रेणीप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? घनागुलका असख्यातवा भाग प्रतिभाग है, जो असख्यात प्रतरागुलप्रमाण है ।

तेजोलेश्या और पद्मलेश्यावालोंमें असयतसम्यग्दृष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें मम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व ओघके समान है ॥३०७॥

जिस प्रकार ओघमें इन गुणस्थानोंका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार यथापर सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व कहना चाहिये, यह अर्थ कहा गया है ।

वेदगसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ २९९ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए असखेज्जदिभागो ।

तेजोलेस्सिय-पम्मलेस्सिएसु सव्वत्थोवा अप्पमत्तसजदा ॥ ३०० ॥

कुदो ? मखेज्जपरिमाणत्तादो ।

पमत्तसंजदा सखेज्जगुणा ॥ ३०१ ॥

को गुणगारो ? दो रूजाणि ।

संजदासजदा असखेज्जगुणा ॥ ३०२ ॥

को गुणगारो ? पलिटोपमस्म असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिटोपमपदम
पग्गमूलाणि ।

सासणसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ ३०३ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए अमखेज्जदिभागो । कुदो ? मोहम्मिमाण-सणक्कुमार
माहिंदसमिपरिग्गहादो ।

कापोतलेश्यानालोमं असयत्तसम्यग्दष्टि गुणव्यानमं क्षापिकसम्यग्दष्टियासे वेदक
सम्यग्दष्टि जीव असख्यातगुणित है ॥ २९९ ॥

गुणकार क्या है ? आचलीना असख्यातवा भाग गुणकार है ।

तेजोलेश्या और पद्मलेश्यानालोमं अप्रमत्तसयत्त जीव सवमे कम हैं ॥ ३०० ॥

क्योंकि, उनका परिमाण सख्यात है ।

तेजोलेश्या और पद्मलेश्यानालोमं अप्रमत्तसयत्तोसे प्रमत्तसयत्त जीव सख्यातगुणित
हैं ॥ ३०१ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

तेजोलेश्या और पद्मलेश्यानालोमं प्रमत्तसयत्तोमे सयत्तासयत्त जीव असख्यात-
गुणित हैं ॥ ३०२ ॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्योपमके
असख्यात प्रथम पग्गमूलप्रमाण है ।

तेजोलेश्या और पद्मलेश्यानालोमं सयत्तासयत्तोसे सामादनसम्यग्दष्टि जीव
असख्यातगुणित है ॥ ३०३ ॥

गुणकार क्या है ? आचलीका असख्यातवा भाग गुणकार है, क्योंकि, यहा पर
सौधर्म ईशान और सन्नकुमार माहेन्द्र कल्पसम्यन्धी देवराशिको ग्रहण किया गया है ।

१ तेज पद्मश्यानां सवत्त स्तोत्रा अप्रमत्ता । स ति १, ८

२ प्रमत्ताः संख्ययुगा । स ति १, ८

३ प्वमितरेषां पवेन्द्रियवत् । स ति १, ८

को गुणगारो ? ओघसिद्धो ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा^१ ॥ ३१४ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जसमया ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा^२ ॥ ३१५ ॥

को गुणगारो ? दोष्णि रूपाणि ।

संजदासंजदा असंखेज्जगुणा^३ ॥ ३१६ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स अमखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पलिदोवमपढम-
वग्गमूलाणि ।

सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा^४ ॥ ३१७ ॥

को गुणगारो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।

सम्मामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा^५ ॥ ३१८ ॥

गुणकार क्या है ? ओघमें घतलाया गया गुणकार ही यहापर गुणकार है ।

शुक्कलेश्यानालोमें सयोगिकेनली जिनोसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसयत
जीव संख्यातगुणित हैं ॥ ३१४ ॥

गुणकार क्या है ? सत्यात समय गुणकार है ।

शुक्कलेश्यानालोमें अप्रमत्तसयतोसे प्रमत्तसयत जीव संख्यातगुणित हैं ॥ ३१५ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

शुक्कलेश्यानालोमें प्रमत्तसयतोसे सयतासयत जीव असंख्यातगुणित हैं ॥ ३१६ ॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमका असत्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्योपमके
असत्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

शुक्कलेश्यानालोमें सयतासयतोसे सासादनसम्पग्घट्टि जीव असंख्यातगुणित
हैं ॥ ३१७ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असत्यातवा भाग गुणकार है ।

शुक्कलेश्यानालोमें सासादनसम्पग्घट्टियोसे सम्पग्ग्मिध्यादट्टि जीव संख्यातगुणित
हैं ॥ ३१८ ॥

१ अप्रमत्तसयता सख्येयगुणा । स मि १, ८

२ प्रमत्तसयता सख्येयगुणा । स मि १, ८

३ सयतासयता (अ) सरयेयगुणा । स सि १, ८

४ सासादनसम्पग्घट्टय (अ) सख्येयगुणा । स सि १, ८

५ सम्पग्ग्मिध्यादट्टयः सख्येयगुणा । स सि १, ८

सुकलेस्सिएसु तिसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा'
॥ ३०८ ॥

सुगममेद ।

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ ३०९ ॥

कुदो ? उवउवण्णपमाणत्तादो ।

एवा संखेज्जगुणा' ॥ ३१० ॥

अहुत्तरसदपरिमाणत्तादो ।

खीणकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ ३११ ॥

सुगममेद ।

सजोगिकेवली पवेसणेण तत्तिया चेव ॥ ३१२ ॥

एदं पि सुगम ।

सजोगिकेवली अद्वं पडुच्च संखेज्जगुणा' ॥ ३१३ ॥

शुक्लेश्यागालोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ ३०८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

शुक्लेश्यागालोंमें उपशान्तरूपायवीतरागछद्वयस्य जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ३०९ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण चौपन है ।

शुक्लेश्यागालोंमें उपशान्तरूपायवीतरागछद्वयस्थोंसे क्षपक जीव सख्यातगुणित हैं ॥ ३१० ॥

क्योंकि, उनका परिमाण एक सौ आठ है ।

शुक्लेश्यागालोंमें क्षीणरूपायवीतरागछद्वयस्य जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ३११ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

शुक्लेश्यागालोंमें सयोगिकेवली प्रवेशकी अपेक्षा पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ३१२ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

शुक्लेश्यागालोंमें सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सख्यातगुणित हैं ॥ ३१३ ॥

१ शुक्लेश्यानां सवत स्तोत्रा उपशमना । स ति १, ८

२ क्षपका सख्येयगुणा । स ति १, ८ ३ सयोगिकेवलिन सख्येयगुणा । स ति १, ८

संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्टाणे सम्मत्तप्पावहुगमोघं
॥ ३२४ ॥

जधा एदेसिमोघमिह सम्मत्तप्पानहुग युत्त, तथा वत्तव्य ।

एवं तिसु अद्धासु ॥ ३२५ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ ३२६ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ ३२७ ॥

एदाणि तिणिण पि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एव लेस्सामग्गणा' समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धिएसु मिच्छाइट्ठी जाव अजोगिकेवाल्लि
ति ओघं' ॥ ३२८ ॥

एत्थ ओघअप्पानहुअ अणूणाहिय उत्तवं ।

शुक्ललेश्यानालोंमें संयतासयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें
सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पनहुत्व ओघके समान है ॥ ३२४ ॥

जिस प्रकार इन गुणस्थानोंका ओघमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पवहुत्व कहा है,
उसी प्रकार यहापर भी कहना चाहिए ।

इसी प्रकार शुक्ललेश्यानालोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें सम्यक्त्व-
सम्बन्धी अल्पनहुत्व है ॥ ३२५ ॥

उक्त गुणस्थानोंमें उपशामक जीव सनसे कम हैं ॥ ३२६ ॥

उपशामकोंसे क्षपक जीव सख्यातगुणित हैं ॥ ३२७ ॥

ये तीनों ही सून सुगम ह ।

इस प्रकार लेश्यामार्गणा समाप्त हुई ।

भव्यमार्गणाके अनुवादेमे भव्यसिद्धोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगिकेवली गुण-
स्थान तक जीवोंका अल्पनहुत्त ओघके समान है ॥ ३२८ ॥

यहापर ओघसम्बन्धी अल्पनहुत्व हीनता और अधिकतासे रहित अर्थात्
व्यभिचारी ही कहना चाहिए ।

१ अ-आप्रला 'लेस्सामग्गणा' इति पाठ ।

२ मन्वाववादेन मन्याना सामायवत् । स सि १, ८

को गुणगारो ? सखेज्जा समया ।

मिच्छादिद्वी असंखेज्जगुणा' ॥ ३१९ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए अमखेज्जदिभागो ।

असंजदसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा' ॥ ३२० ॥

आरणच्चुदरासिस्स पहाणत्तपरियप्पणादो ।

असंजदसम्मादिद्विद्वाने सब्वत्थोवा उवसमसम्मादिद्वी ॥ ३२१ ॥

कुदो ? अतोमुहुत्तसचयादो ।

खइयसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ ३२२ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो ।

वेदगसम्मादिद्वी संखेज्जगुणा ॥ ३२३ ॥

सओनसमियसम्मत्तादो ।

गुणकार क्या है ? सरयात समय गुणकार है ।

शुक्कलेश्यापालोमें सम्यग्मिध्यादृष्टियोंसे मिध्यादृष्टि जीव असरयातगुणित हैं ॥ ३१९ ॥

गुणकार क्या है ? आचलीका असरयातवा भाग गुणकार है ।

शुक्कलेश्यापालोमें मिध्यादृष्टियोंसे असयतमस्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ ३२० ॥

फ्योंकि, यहापर धारण अच्युतरूपसम्बन्धी देघराशिकी प्रधानता विनक्षित है ।

शुक्कलेश्यापालोमें असयतसस्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसस्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं ॥ ३२१ ॥

फ्योंकि, उनका सचयकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

शुक्कलेश्यापालोमें असयतसस्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसस्यग्दृष्टियोंसे क्षायिक सस्यग्दृष्टि जीव असरयातगुणित हैं ॥ ३२२ ॥

गुणकार क्या है ? आचलीका असरयातवा भाग गुणकार है ।

शुक्कलेश्यापालोमें असयतसस्यग्दृष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसस्यग्दृष्टियोंसे वेदक सस्यग्दृष्टि सरयातगुणित है ॥ ३२३ ॥

फ्योंकि, वेदकसस्यग्दृष्टियोंके क्षायोपशमिक सस्यक्त्व होता है (जिसकी प्राप्ति सुलभ है) ।

१ मिध्यादृष्टयोऽस्ययगुणा । स ति १, ८

२ असयतसस्यग्दृष्टयोऽस्ययगुणा (१) । स ति १, ८

संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्टाणे

सम्मत्तप्पावहुगमोघं

॥ ३२४ ॥

जधा एदेसिमोघमिह सम्मत्तप्पानहुग बुत्त, तहा वत्तच्चं ।

एवं तिसु अद्वासु ॥ ३२५ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ ३२६ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ ३२७ ॥

एदाणि तिण्णि त्रि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एउ लेस्सामगणा' समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धिएसु मिच्छाइट्ठी जाव अजोगिकेवालि

त्ति ओघं ॥ ३२८ ॥

एत्थ ओघअप्पानहुजं अणूणाहिय उत्तच्चं ।

शुक्ललेश्यामालोमें संयतासयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें सम्यक्त्वमम्बन्धी अल्पनहुत्व ओघके समान है ॥ ३२४ ॥

जिस प्रकार इन गुणस्थानांका ओघमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पनहुत्व कहा है, उसी प्रकार यहापर भी कहना चाहिए ।

इसी प्रकार शुक्ललेश्यामालोमें अपूर्वरूण आदि तीन गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वमम्बन्धी अल्पनहुत्व है ॥ ३२५ ॥

उक्त गुणस्थानोंमें उपशामक जीव सत्रसे कम है ॥ ३२६ ॥

उपशामकोंसे क्षपक जीव संख्यातगुणित हैं ॥ ३२७ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम ह ।

इस प्रकार लेश्यामार्गणा समाप्त हुई ।

भव्यमार्गणाके अनुवादेसे भव्यसिद्धामें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगिकेनली गुणस्थान तरु जीवोंका अल्पनहुत्त ओघके समान है ॥ ३२८ ॥

यहापर ओघसम्बन्धी अल्पनहुत्व हीनता और अधिकतासे रहित अर्थात् तत्रमाण ही कहना चाहिए ।

१ अ आपस्ता 'लेस्सामगणा' इति पाठ ।

२ मयाउवादन मन्याना सामायवत् । स सि १, ८

को गुणगारो ? सखेज्जा समया ।

मिच्छादिद्वी असंखेज्जगुणां ॥ ३१९ ॥

को गुणगारो ? आरलियाए अमखेज्जदिभागो ।

असजदसम्मादिद्वी सखेज्जगुणां ॥ ३२० ॥

आरणच्चुदरासिस्स पहाणत्तपरियप्पणादो ।

असजदसम्मादिद्विद्वाने सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिद्वी ॥ ३२१ ॥

कुदो ? अतोसुहुत्तसचयादो ।

सइयसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ ३२२ ॥

को गुणगारो ? आरलियाए असखेज्जदिभागो ।

वेदगसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा ॥ ३२३ ॥

सओरसमियसम्मत्तादो ।

गुणकार क्या है ? सरयात समय गुणकार है ।

शुक्कलेश्यानालोमें सम्पग्मिव्याद्विष्टियोंसे मिथ्याद्विष्टि जीव असरयातगुणित हैं ॥ ३१९ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असरयातवा भाग गुणकार है ।

शुक्कलेश्यानालोमें मिथ्याद्विष्टियोंसे असयतसम्यग्द्विष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ ३२० ॥

क्योंकि, यहापर आरण अच्युतकरपममग्धी देवराशिकी प्रधानता विवक्षित है ।

शुक्कलेश्यानालोमें असयतसम्यग्द्विष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्द्विष्टि जीव सबसे कम हैं ॥ ३२१ ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल अन्तमुहूर्त है ।

शुक्कलेश्यानालोमें असयतसम्यग्द्विष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्द्विष्टियोंसे क्षायिक सम्यग्द्विष्टि जीव असरयातगुणित हैं ॥ ३२२ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असरयातवा भाग गुणकार है ।

शुक्कलेश्यानालोमें असयतसम्यग्द्विष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्द्विष्टियोंसे वेदक सम्यग्द्विष्टि सरयातगुणित हैं ॥ ३२३ ॥

क्योंकि, वेदकसम्यग्द्विष्टियोंके क्षायोपशमिक सम्यक्त्व होता है (जिसकी प्राप्ति सुलभ है) ।

१ मिथ्याद्विष्टयोञ्जरयेयशुणा । स ति १, ८

२ असयतसम्यग्द्विष्टयोञ्जरयेयशुणा (१) । स ति १, ८

सजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्टाणे सम्मत्तप्पावहुगमोघं

॥ ३२४ ॥

जधा एदेसिमोवम्हि सम्मत्तप्पानहुग बुत्त, तथा पत्तध्वं ।

एवं तिसु अद्वासु ॥ ३२५ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ ३२६ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ ३२७ ॥

एदाणि तिण्णि वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एव लेस्सामगणा' समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धिएसु मिच्छाइट्टी जाव अजोगिकेवालि ति ओघं' ॥ ३२८ ॥

एत्थ ओघअप्पानहुअ अणुणाहिय वत्तन्न ।

शुक्ललेश्यागालोमें संयतामयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्परहुत्व ओघके समान है ॥ ३२४ ॥

जिस प्रकार इन गुणस्थानोंका ओघमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्परहुत्व कहा है, वसी प्रकार यहापर भी कहना चाहिए ।

इसी प्रकार शुक्ललेश्यागालोमें अपूर्णरुण आदि तीन गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्परहुत्व है ॥ ३२५ ॥

उक्त गुणस्थानोंमें उपशामक जीव सत्रसे कम हैं ॥ ३२६ ॥

उपशामकोंसे क्षपक जीव सख्यातगुणित हैं ॥ ३२७ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम ह ।

इस प्रकार लेश्यामार्गणा समाप्त हुई ।

भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्यसिद्धामें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक जीवोंका अल्परहुत्व ओघके समान है ॥ ३२८ ॥

यहापर ओघसम्बन्धी अल्परहुत्व हीनता और अधिकतासे रहित अर्थात् तत्प्रमाण ही कहना चाहिए ।

१ अ-आप्रत्या 'लेस्सामगणा' इति पाठ ।

२ मन्वातुवादेन मन्वाना मामा यवत् । स सि १, ८

अभवसिद्धिएसु अप्पावहुअ णत्थि' ॥ ३२९ ॥

कुदो ! एगपदत्तादो ।

एव भनियमग्गणा समत्ता ।

सम्मत्ताणुवादेण सम्मादिट्ठीसु ओधिणाणिभंगो ॥ ३३० ॥

जघा ओधिणाणीणमप्पावहुग परुरिद, तथा एत्थ परूरेद्व्वं । णवरि सज्जोगि-
अज्जोगिपदाणि वि एत्थ अत्थि, सम्मत्तसामण्णे अहियारादो ।

खइयसम्मादिट्ठीसु तिसु अद्दासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा'
॥ ३३१ ॥

तप्पाओग्गसखेज्जपमाणत्तादो ।

उवसंतकसायवीदरागछुदुमत्था तत्तिया चैव' ॥ ३३२ ॥

सुगममेद ।

अभव्यसिद्धीमें अल्पवहुत्व नहीं है ॥ ३२९ ॥

क्योंकि, उनके एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान ही होता है ।

इस प्रकार भव्यमार्गणा समाप्त हुई ।

सम्यक्त्वमार्गणाके अनुवादसे सम्यग्दृष्टि जीवोंमें अल्पवहुत्व अधिनािनियोंके
समान है ॥ ३३० ॥

जिस प्रकार ज्ञानमार्गणामें अधिज्ञानियोंका अल्पवहुत्व कहा है, उसी प्रकार
यहापर भी कहना चाहिए । केवल विशेषता यह है कि सयोगिकेवली ओर अयोगि
केवली, ये दो गुणस्थानपद यहापर होते हैं, क्योंकि, यहापर सम्यक्त्वसामान्यका
अधिकार है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव
प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ ३३१ ॥

क्योंकि, उनका तत्प्रायोग्य सख्यात प्रमाण है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें उपशान्तकपायवीतरागछद्मस्य जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही
हैं ॥ ३३२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

१ अमन्यानां नास्त्यल्पबहुत्वम् । स ति १, ८

२ सम्यक्त्वात्तादेतं क्षायिकसम्यग्दृष्टिषु सर्वतः स्तोकाश्रन्वार उपशमका । स ति १, ८

३ इतरेषां प्रमत्तान्तां सामायवत् । स ति १, ८

खवा संखेज्जगुणा ॥ ३३३ ॥

खीणकसायवीदरागछट्टुमत्था तत्तिया चेव ॥ ३३४ ॥

सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो वि तुल्ला तत्तिया
चेव ॥ ३३५ ॥

एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

सजोगिकेवली अद्धं पडुच्च संखेज्जगुणा ॥ ३३६ ॥

गुणगारो ओघसिद्धो, सड्यसम्मत्तविरहिदमजोगीणमभावा ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ ३३७ ॥

को गुणगारे ? तप्पाओग्गसखेज्जगुणाणि ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ ३३८ ॥

को गुणगारो ? दो रूपाणि ।

क्षायिकमभ्यग्दृष्टियोंमें उपशान्तरूपायवीतरागछद्मस्थोसे क्षपक जीव संख्यात-
गुणित हैं ॥ ३३३ ॥

क्षीणरूपायवीतरागछद्मस्थ पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ३३४ ॥

सयोगिकेवली और अयोगिकेवली, ये दोनों ही प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और
पूर्वाक्त प्रमाण ही है ॥ ३३५ ॥

ये सूत्र सुगम हैं ।

सयोगिकेवली जिन संचयकालकी अपेक्षा संख्यातगुणित हैं ॥ ३३६ ॥

यहापर गुणकार ओत्र कथित है, क्योंकि, क्षायिकसम्यक्त्तसे रहित सयोगि
कल्प नहीं पाये जाते हैं ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तमयत जीव संख्यात-
गुणित हैं ॥ ३३७ ॥

गुणकार क्या है ? अप्रमत्तसयतोंके योग्य संख्यातरूप गुणकार है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तमयत जीव संख्यातगुणित
हैं ॥ ३३८ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार हैं ।

संजदासंजदा संखेज्जगुणा^१ ॥ ३३९ ॥

मणुसर्गदि मोक्षण अणत्थ खइयसम्मादिद्विसंजदासंजदाणमभावा ।

असंजदसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा^१ ॥ ३४० ॥

को गुणगारो ? पलिदोपमस्स असखेज्जदिभागे, अमखेज्जाणि पलिदोपमपदम वग्गमूलानि ।

असजदसम्मादिद्वि संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदद्व्याणे खइय सम्मत्तस्स भेदो णत्थि ॥ ३४१ ॥

एदस्म अहिप्पाओ- जेण खइयसम्मत्तस्स एदेसु गुणद्व्याणेषु भेदो णत्थि, तेण णत्थि मम्मत्तप्पाउहुग, एयपयत्तादो । एसो अत्थो एदेण परुत्तिदो होदि ।

वेदगसम्मादिद्वीसु सव्वत्थोवा अप्पमत्तसंजदा ॥ ३४२ ॥

बुदो ? तप्पाओग्गसखेज्जपमाणत्तादो ।

क्षायिकमम्यग्दृष्टियोंमें प्रमत्तमयतोंमें संयतासयत जीव सख्यातगुणित है ॥३३९॥
क्योंकि, मनुष्यगतिको छोड़कर अन्य गतियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि सयतासयत जीवोंका अभाव है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें सयतासयतोंसे असयतसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ ३४० ॥

गुणकार क्या है ? पल्लोपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्लोपमके असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

क्षायिकमम्यग्दृष्टियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तमयत गुणस्थानमें क्षायिकमम्यक्त्वरूपा भेद नहीं है ॥ ३४१ ॥

इस सूत्रका अभिप्राय यह है कि इन असयतसम्यग्दृष्टि आदि चारों गुणस्थानोंमें क्षायिकसम्यक्त्वकी अपेक्षा कोई भेद नहीं है, इसलिए उनमें सम्यक्त्वसम्यग्धी अल्प बहुत्व नहीं है, क्योंकि, उन सबमें क्षायिकसम्यक्त्वरूप एक पद ही प्रिवक्षित है । यह अर्थ इस सूत्रके द्वारा प्ररूपित किया गया है ।

वेदकमम्यग्दृष्टियोंमें अप्रमत्तसयत जीव सबमे कम हैं ॥ ३४२ ॥

क्योंकि, उनका तत्प्रायोग्य सख्यातरूप प्रमाण है ।

१ तद सयतासयता सखेयगुणा । स सि १, ८

२ असयतसम्यग्दृष्टीयसखेयगुणा । स सि १, ८

३ क्षायोपममिक्तसम्यग्धिषु सर्वत स्तोका अप्रमत्ताः । स सि १, ८

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा' ॥ ३४३ ॥

को गुणगारो ? दो रूपाणि ।

संजदासंजदा असंखेज्जगुणा ॥ ३४४ ॥

को गुणगारो ? पलिदोममस्म असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिदोमपढम-
वगमूलाणि ।

असंजदसम्मादिट्टी असंखेज्जगुणा' ॥ ३४५ ॥

को गुणगारो ? आत्रलियाए असखेज्जदिभागो ।

असंजदसम्मादिट्टि-संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्टाणे वेदग-
सम्मत्तस्स भेदो णत्थि ॥ ३४६ ॥

एत्थ भेदसद्दो अप्पात्रहुअपज्जाओ घेत्तव्वो, सदाणमणेयत्थत्तादो । वेदगसम्मत्तस्स
भेदो अप्पात्रहुअं णत्थि त्ति उच्च होदि ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें अप्रमत्तसंयतोसे प्रमत्तसयत जीव मरयातगुणित है ॥३४३॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें प्रमत्तसयतोसे सयतासयत जीव असरयातगुणित हैं ॥३४४॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमत्रा असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्योपमके
असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें सयतासयतोसे अमयतसम्यग्दृष्टि जीव असरयातगुणित
हैं ॥ ३४५ ॥

गुणकार क्या है ? आचलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्त-
सयत गुणस्थानमें वेदकसम्यक्त्वका भेद नहीं है ॥ ३४६ ॥

यहापर भेद शब्द अल्पबहुत्वका पर्यायवाचक ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि,
शब्दोंके अनेक अर्थ होते हैं । इस प्रकार इस सूत्र द्वारा यह अर्थ कहा गया है कि इन
गुणस्थानोंमें वेदकसम्यक्त्वका भेद अर्थात् अल्पबहुत्व नहीं है ।

१ प्रमत्ता सरयेयुणा । स ति १, ८०

२ सयतासयता (अ) सरयेयुणा स ति १, ८

३ असयतसम्यग्दृष्टयोऽसखेयुणा । स ति १, ८

उवसमसम्मादिद्वीसु तिसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्य
थोवा' ॥ ३४७ ॥

उवसंतकसायवीदरागलुट्टुमत्था तत्तिया चैव ॥ ३४८ ॥

अण्पमत्तसजदा अणुवसमा संखेज्जगुणा' ॥ ३४९ ॥

एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

पमत्तसजदा संखेज्जगुणा ॥ ३५० ॥

को गुणगारो ? दो रूपाणि ।

संजदासंजदा असंखेज्जगुणा' ॥ ३५१ ॥

को गुणगारो ? पल्लिदोममस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पल्लिदोममपढम-
वग्गमूलाणि ।

असजदसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा' ॥ ३५२ ॥

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें अपूर्सकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशमक जीव
प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ ३४७ ॥

उपशान्तरूपायनीतरागलुट्टुस्य जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ३४८ ॥

उपशान्तरूपायनीतरागलुट्टुस्थोसे अनुपशमक अप्रमत्तसयत जीव असख्यातगुणित
हैं ॥ ३४९ ॥

ये सूत्र सुगम ह ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें अप्रमत्तसयतोसे प्रमत्तसयत जीव असख्यातगुणित
हैं ॥ ३५० ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें प्रमत्तसयतोसे सयतासयत जीव असख्यातगुणित
हैं ॥ ३५१ ॥

गुणकार क्या है ? पल्ल्योपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्ल्योपमके
असख्यात प्रथम वगमूलप्रमाण है ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें सयतासयतोसे असयतसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित
हैं ॥ ३५२ ॥

१ जीवशमिकसम्यग्दृष्टीनां सवत स्तोत्राधत्वार उपशमका । स सि १, ८

२ अपमत्ता सरयेयगुणा । स सि १, ८

३ प्रमत्ता सरयेयगुणा । स सि १, ८

४ सयतासयता (अ) सरयेयगुणा । स सि १, ८

५ असयतसम्यग्दृष्टीनां सरयेयगुणा । स सि १, ८

को गुणगारो ? आवलियाए असंसेज्जदिभागो ।

असंजदसम्मादिट्ठि-संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्ठाणे उव-

समसम्मत्तस्स भेदो णत्थि ॥ ३५३ ॥

सुगममेदं ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मा(मिच्छादिट्ठि)-मिच्छादिट्ठीणं णत्थि अप्पा-
बहुअं ॥ ३५४ ॥

कुदो ? एगपदत्ताढो ।

एव सम्मत्तमग्गणा समत्ता ।

सण्णियाणुवादेण सण्णीसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव खीणकसाय-
वीदरागच्छदुमत्था त्ति ओघं ॥ ३५५ ॥

जधा ओघमिह अप्पानहुग परुनिदं तथा एत्थ परूवेदन्वं, सण्णित्तं पडि उह-
यत्थ भेदाभावा । निसेसपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि-

गुणकार क्या हे ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसंयत और अग्रमत्त-
संयत गुणस्थानमें उपशमसम्यक्त्वका अल्पग्रहत्व नहीं है ॥ ३५३ ॥

यह सूत्र सुगम हे ।

सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिध्यादृष्टि और मिध्यादृष्टि जीवोंका अल्पबहुत्व
नहीं है ॥ ३५४ ॥

क्योंकि, तीनों प्रकारके जीवोंके एक गुणस्थानरूप ही पद है ।

इस प्रकार सम्यक्त्वमार्गणा समाप्त हुई ।

सन्निमार्गणाके अनुवादसे सन्नियोंमें मिध्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणरूपाप-
वीतरामच्छदस्य गुणस्थान तक जीवोंका अल्पबहुत्व ओघके समान है ॥ ३५५ ॥

जिस प्रकार ओघमें इन गुणस्थानोंका अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार यहा
पर भी प्ररूपण करना चाहिए, क्योंकि, मक्षित्वकी अपेक्षा दोनों स्थानोंपर कोई भेद
नहीं है । अत्र सन्नियोंमें समव विशेषके प्रतिपादनके लिए उत्तर सूत्र कहते हैं—

१ शेषाणा नास्त्यल्पबहुत्वम्, निपक्ष एनेरुगुणस्थानप्रद्वान् । ए ति १, ८

२ सत्ताववादेन सन्नित्ता चत्थदवनिवत् । स ति १, ८

णवरि मिच्छादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ ३५६ ॥

ओघमिदि बुचे अणत्तगुणत्त^१ पत्त, तण्णिरायरणद्वं अमखेज्जगुणा इदि उत्त । गुण
गारे पदरस्त असंखेज्जदिमागो, असंखेज्जाओ^२ सेडीओ, सेडीए असंखेज्जदि
भागमेत्ताओ ।

असण्णीसु णत्थि अप्पावहुअं ॥ ३५७ ॥

कुदो^३ एगपदत्तादो ।

एव सण्णिमग्गणा समत्ता ।

आहाराणुवादेण आहारएसु तिसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण
तुल्ला थोवां ॥ ३५८ ॥

चउत्तणपमाणत्तादो ।

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ ३५९ ॥

सुगममेद ।

निशेषता यह है कि सन्नियोंम असयत्तसम्यग्दृष्टियोंमे मिथ्यादृष्टि जीव अम
ख्यातगुणित हैं ॥ ३५६ ॥

उपर्युक्त सूत्रमें 'ओघ' इस पदके कह देने पर असयत्तसम्यग्दृष्टियोंसे सन्नियों
मिथ्यादृष्टि जीवोंके अनन्तगुणितता प्राप्त होती थी, उसके निराकरणके लिए इस सूत्रमें
'असख्यातगुणित ह' ऐसा पद कहा है । यहा पर गुणकार जगप्रतरका असख्यातवा
भाग है, जो जगध्रेणीके असख्यातत्वे भागमात्र असख्यात जगध्रेणीप्रमाण है ।

असन्नी जीवोंमें अल्पबहुत्व नहीं है ॥ ३५७ ॥

क्योंकि, उनमें एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान ही होता है ।

इस प्रकार सन्नियोगा समाप्त हुई ।

आहारमार्गणके अनुवादेसे आहारकोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें
उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प है ॥ ३५८ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण चौपन है ।

आहारकोंमें उपशान्तकपायनीतरागछन्नस्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही है ॥ ३५९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

१ प्रतिपु 'अणत्तरे गुणत्त' इति पाठ ।

२ प्रतिपु 'असंखेज्जदि' इति पाठ ।

३ असन्नियों नास्त्यल्पबहुत्वम् । स सि १, ८

४ आहाराणुवादेण आहारकार्णा काययोगित्त्वं । स सि १, ८

स्ववा संखेज्जगुणा ॥ ३६० ॥

अट्टुत्तरसदपमाणत्ताटो ।

स्वीणकसायवीदरागळदुमत्था तत्तिया चेव ॥ ३६१ ॥

सुगममेदं ।

सजोगिकेवली पवेसणेण तत्तिया चेव ॥ ३६२ ॥

सजोगिकेवली अट्टं पडुच्च संखेज्जगुणा ॥ ३६३ ॥

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ ३६४ ॥

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ ३६५ ॥

एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

संजदासंजदा असंखेज्जगुणा ॥ ३६६ ॥

को गुणगारो ? पलिदोमस्स असखेज्जदिभागो ।

सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ३६७ ॥

सम्भामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ३६८ ॥

आहारकॉमें उपशान्तरूपाययीतरागळदुमत्थोंमें क्षपक जीव संख्यातगुणित
हैं ॥ ३६० ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण एक सौ आठ है ।

आहारकॉमें क्षीणरूपाययीतरागळदुमत्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही है ॥ ३६१ ॥

यह सत्र सुगम है ।

आहारकॉमें सयोगिकेवली जिन प्रवेशकी अपेक्षा पूर्वोक्त प्रमाण ही है ॥ ३६२ ॥

सयोगिकेवली जिन संचयकालकी अपेक्षा संख्यातगुणित है ॥ ३६३ ॥

सयोगिकेवली जिनोंसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तमयत जीव संख्यात-
गुणित हैं ॥ ३६४ ॥

अप्रमत्तसंयतोसे प्रमत्तसयत जीव संख्यातगुणित है ॥ ३६५ ॥

ये सत्र सुगम हैं ।

आहारकॉमें प्रमत्तसंयतोसे सयतासंयत जीव असख्यातगुणित हैं ॥ ३६६ ॥

गुणकार क्या है ? पल्लोपमका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

आहारकॉमें संयतासंयतोसे सासादनसम्पगट्टि जीव असंख्यातगुणित हैं ॥ ३६७ ॥

सासादनसम्पगट्टियोंसे सम्पगिमध्याट्टि जीव संख्यातगुणित हैं ॥ ३६८ ॥

असंजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ३६९ ॥

मिच्छादिट्ठी अणतगुणा ॥ ३७० ॥

एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

असंजदसम्मादिट्ठिसजदासंजद-पमत-अप्पमतमजदट्ठाणे सम्मत्त-
प्पावहुअमोघ ॥ ३७१ ॥

एवं तिसु अद्दासु ॥ ३७२ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ ३७३ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ ३७४ ॥

एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

अणाहारएसु सव्वत्थोवा सजोगिकेवली' ॥ ३७५ ॥

हुदो ? सट्ठिपमाणत्तादो ।

अजोगिकेवली सखेज्जगुणा' ॥ ३७६ ॥

हुदो ? दुरूज्जणछस्सदपमाणत्तादो ।

सम्यग्मिथ्याद्यष्टियोंसे असयतसम्यग्दष्टि जीव अमर्यातगुणित है ॥ ३६९ ॥

असयतसम्यग्दष्टियोंसे मिथ्याद्यष्टि जीव अनन्तगुणित हैं ॥ ३७० ॥

ये सूत्र सुगम हैं ।

आहारकोंमें असयतसम्यग्दष्टि, सयतासयत, प्रमत्तमयत और अप्रमत्तमयत
गुणस्थानमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व ओषके समान हैं ॥ ३७१ ॥

इसी प्रकार अपूर्वकरण जाति तीन गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व
ओषके समान हैं ॥ ३७२ ॥

उक्त गुणस्थानोंमें उपशामर जीव सत्रमे कम है ॥ ३७३ ॥

उपशामकोंसे क्षपक जीव भरयातगुणित हैं ॥ ३७४ ॥

ये सूत्र सुगम हैं ।

अनाहारकोंमें मयोगिकेवली जिन सबसे कम है ॥ ३७५ ॥

फ्योंकि, उनका प्रमाण साठ है ।

अनाहारकोंमें अयोगिकेवली जिन सख्यातगुणित हैं ॥ ३७६ ॥

फ्योंकि, उनका प्रमाण दो कम छह सौ अर्थात् पाच सां अष्टमानवे (९८) है ।

१ अनाहारकोंमें सबत स्तोत्रा सयोगिकेवली । स वि १ ८

२ अयोगिकेवली सखेयगुणा । स वि १, ८

सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा' ॥ ३७७ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्म अमंसेज्जदिभागो, अमंसेज्जाणि पलिदोवमपदम-
वगमूलाणि ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा' ॥ ३७८ ॥

को गुणगारो ? आरलियाए अमग्गेज्जदिभागो ।

मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा ॥ ३७९ ॥

स गुणगारो ? अभयमिद्धिएहि अणतगुणो, मिद्धेहि वि ञणतगुणो, अणताणि
मयजीरामिपदमवग्गमूलाणि ।

असंजदसम्मादिट्ठिट्ठाने सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ३८० ॥

दुदो ? सग्गेज्जजीवपमाणत्तादो ।

अनाहारकोमे ज्योगिकेवली जिनेमे मामादनसम्यग्दष्टि जीव असख्यातगुणित
॥ ३७७ ॥

गुणकार क्या है ? पत्थोपमका असख्यातका भाग गुणकार है, जो पत्थोपमके
समख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

अनाहारकोमे सामादनसम्यग्दष्टियोमे जमयतसम्यग्दष्टि जीव असख्यातगुणित
॥ ३७८ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातका भाग गुणकार है ।

अनाहारकोमे अमयतसम्यग्दष्टियोमे मिथ्यादष्टि जीव अनन्तगुणित है ॥ ३७९ ॥

गुणकार क्या है ? अभयमिद्धोमे अनन्तगुणित, सिद्धोमे भी अनन्तगुणित
को गुणकार है, जो सर्व जीवराशिके अनन्त प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

अनाहारकोमे अमयतसम्यग्दष्टि गुणस्थानमे उपशमसम्यग्दष्टि जीव मयमे कम
॥ ३८० ॥

क्योंकि, अनाहारक उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंका प्रमाण सख्यात है ।

१ साधानसम्यग्दष्टयोऽसंख्येयगुणा । स मि १, ८

२ अनाहारसम्यग्दष्टयोऽसंख्येयगुणा । स वि १, ८

३ विपारदयोऽनन्तदयाः । स मि १, ८

खद्वयसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा ॥ ३८१ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जसमया ।

वेदगसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ ३८२ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्म असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पलिदोवमस्स पढमवग्गमूलाणि ।

(एन आहारमग्गणा समत्ता ।)

एवमप्पावहुगाणुगमो चि समत्तमणिओगहार ।

अनाहारकामे असयतमभ्यग्दष्टि गुणस्थानमे उपशमसभ्यग्दष्टियोसे क्षायिक-सभ्यग्दष्टि जीव सरयात्तगुणित हैं ॥ ३८१ ॥

गुणकार क्या हे ? सख्यात समय गुणकार हे ।

अनाहारकामे असयतसभ्यग्दष्टि गुणस्थानमे क्षायिकसभ्यग्दष्टियोसे वेदकसभ्य-ग्दष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ ३८२ ॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमका असख्यातया भाग गुणकार है, जो पल्योपमके असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

(इस प्रकार आहारमार्गणा समाप्त हुई ।)

इस प्रकार अल्पब्रह्त्वानुगम नामक अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

२५



परिशिष्ट

अंतरपरुवणासुत्ताणि ।

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|---|-------|-------------|---|-------|
| १ | अंतराणुगमेण दुनिहो णिहेसो, ओघेण आदेसेण य । | १ | ११ | उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्ठ देसूणं । | १४ |
| २ | ओघेण मिच्छादिट्ठीणमतर केचि चिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरंतरं । | ४ | १२ | चट्ठुण्हमुवसामगाणमतर केचि चिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | १७ |
| ३ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो-मुहुत्त । | ५ | १३ | उक्कस्सेण वासपुघत्त । | १८ |
| ४ | उक्कस्सेण वे छागट्ठिसागरोव-माणि देसूणाणि । | ६ | १४ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो-मुहुत्त । | " |
| ५ | सामणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छा-दिट्ठीणमतर केचि चिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | ७ | १५ | उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्ठ देसूण । | १९ |
| ६ | उक्कस्सेण पलिदोममस्स अस-खेज्जदिभागो । | ८ | १६ | चट्ठुण्ह सवग-अजोगिकेवलीणमतर केचि चिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | २० |
| ७ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलि-दोममस्स असखेज्जदिभागो, अतो-मुहुत्त । | ९ | १७ | उक्कस्सेण छम्मास । | २१ |
| ८ | उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्ठ देसूण । | ११ | १८ | एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरंतरं । | " |
| ९ | अमनदसम्मादिट्ठिप्पट्ठि जाण अप्पमत्तसज्जदा त्ति अतर केचि चिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतर । | १३ | १९ | सजोगिकेवलीणमंतर केचि चिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | " |
| १० | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो-मुहुत्त । | " | २० | एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतरं । | " |
| | | | २१ | आदेसेण गदियाणुवादेण णिरय-गदीए णेरइएसु मिच्छादिट्ठि-अस-जदसम्मादिट्ठीणमंतर केचि चिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर । | २२ |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|---|-------|-------------|---|-------|
| २२ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त । | २२ | ३२ | उक्कस्सेण पलिदोवमस्स अमरै- ज्जदिभागो । | २९ |
| २३ | उक्कस्सेण तेचीस सागरोवमाणि देसुणाणि । | २३ | ३३ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलि- दोवमस्स असरेज्जदिभागो, अतो- मुहुत्त । | " |
| २४ | सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | २४ | ३४ | उक्कस्सेण सागरोवम तिण्णि सत्त दस सत्तारस वावीस तेचीस सागरोवमाणि देसुणाणि । | " |
| २५ | उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असरे- ज्जदिभागो । | " | ३५ | तिरिक्खगदीए तिरिक्खेसु मिच्छादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | ३१ |
| २६ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलि- दोवमस्स असरेज्जदिभागो, अतोमुहुत्त । | २५ | ३६ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अंतो- मुहुत्त । | " |
| २७ | उक्कस्सेण तेचीस सागरोवमाणि देसुणाणि । | २६ | ३७ | उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोवमाणि देसुणाणि । | ३२ |
| २८ | पढमादि जाव सत्तमीए पुढवीए णेहएसु मिच्छादिट्ठि-असजद- सम्मादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | २७ | ३८ | सासणसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाव सजदासजदा त्ति ओघ । | ३३ |
| २९ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त । | " | ३९ | पच्चिदियतिरिक्ख पच्चिदियतिरिक्ख- पज्जत्त पच्चिदियतिरिक्खजोणिणीसु मिच्छादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | ३७ |
| ३० | उक्कस्सेण सागरोवम तिण्णि सत्त दस सत्तारस वावीस तेचीस सागरोवमाणि देसुणाणि । | " | ४० | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त । | ३८ |
| ३१ | सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | २९ | ४१ | उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोवमाणि देसुणाणि । | " |
| | | | ४२ | सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केवचिर कालादो | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|---|-------|
| | होदि, णाणाजीन पडुच्च जहण्णेण एगसमयं । | ३८ | ५५ | एदं गदिं पडुच्च अतरं । | ४६ |
| ४३ | उक्कस्सेण पलिदोमस्स असरेज्जदिभागो । | ३९ | ५६ | गुणं पडुच्च उभयदो वि णत्थि अतरं, णिरतर । | " |
| ४४ | एगजीन पडुच्च जहण्णेण पलिदोमस्स असरेज्जदिभागो, अतोमुहुत्तं । | " | ५७ | मणुसगदीए मणुस मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु मिच्छादिट्ठीणमतर केनचिरं कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतरं । | " |
| ४५ | उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोममाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणभहियाणि । | ४० | ५८ | एगजीनं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | ४७ |
| ४६ | अमजदसम्मादिट्ठीणमतर केनचिरं कालादो होदि, णाणाजीनं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरतर । | ४१ | ५९ | उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोममाणि देसणाणि । | " |
| ४७ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | ४२ | ६० | सासणसम्मादिट्ठि-सम्माभिच्छादिट्ठीणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च जहण्णेण एगसमयं । | ४८ |
| ४८ | उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोममाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणभहियाणि । | " | ६१ | उक्कस्सेण पलिदोमस्स असरेज्जदिभागो । | " |
| ४९ | सनदासजदाणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणाजीनं पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतर । | ४३ | ६२ | एगजीन पडुच्च जहण्णेण पलिदोमस्स असरेज्जदिभागो, अतोमुहुत्तं । | " |
| ५० | एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " | ६३ | उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोममाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणभहियाणि । | ४९ |
| ५१ | उक्कस्सेण पुव्वकोडिपुधत्तं । | ४४ | ६४ | असजदसम्मादिट्ठीणमतर केनचिरं कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतरं । | ५० |
| ५२ | पविदिपतिरिक्खअपज्जचाणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतरं । | ४५ | ६५ | एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " |
| ५३ | एगजीन पडुच्च जहण्णेण सुद्धा-मग्गहणं । | " | ६६ | उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोममाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणभहियाणि । | " |
| ५४ | उक्कस्सेण अणत्तकालमसरेज्ज-पोगलपरियट्ठं । | " | | | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|---|-------|
| ६७ | सजदासजदप्पहुडि जान अप्पमत्त सजदाणमत्तर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरंतर । | ५१ | ८२ | एद गदिं पडुच्च अतर । | ५७ |
| ६८ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो-मुहुत्त । | " | ८३ | गुणं पडुच्च उभयदो वि णत्थि अतर, णिरतर । | " |
| ६९ | उक्कस्सेण पुच्चकोडिपुधत्त । | ५२ | ८४ | देवगदीए देवेसु मिच्छादिट्ठि-असजदसम्मादिट्ठीणमत्तर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | " |
| ७० | चदुण्हमुत्तसामगाणमत्तर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | ५३ | ८५ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो मुहुत्त । | " |
| ७१ | उक्कस्सेण वासपुधत्त । | " | ८६ | उक्कस्सेण एकक्कीस सागरो-वमाणि देसुणाणि । | ५८ |
| ७२ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो-मुहुत्त । | ५४ | ८७ | सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छा-दिट्ठीणमत्तर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | ५९ |
| ७३ | उक्कस्सेण पुच्चकोडिपुधत्त । | " | ८८ | उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असरे-ज्जदिभागो । | " |
| ७४ | चदुण्ह खना अजोगिकेवलीणमत्तर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | ५५ | ८९ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलिदो-वमस्स असरेज्जदिभागो, अतो-मुहुत्त । | " |
| ७५ | उक्कस्सेण छम्मासं, वासपुधत्त । | " | ९० | उक्कस्सेण एकक्कीस सागरो-वमाणि देसुणाणि । | ६० |
| ७६ | एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | " | ९१ | भरणवासिय वाणत्तर जोदिसिय-सोधम्मीसाणप्पहुडि जान सदार-सहस्मारकप्पवासियदेवेसु मिच्छा-दिट्ठि-असजदसम्मादिट्ठीणमत्तर केरचिर कालादो होदि, णाणा-जीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | ६१ |
| ७७ | सजोगिकेवली ओघ । | ५६ | ९२ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो-मुहुत्त । | " |
| ७८ | मणुसअपज्जत्ताणमत्तर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | " | | | |
| ७९ | उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असरे-ज्जदिभागो । | " | | | |
| ८० | एगजीव पडुच्च जहण्णेण खुदा-भनग्गहण । | " | | | |
| ८१ | उक्कस्सेण अणतकालमसरेज्ज-पोग्गलपरियट्ठ । | ५७ | | | |

| सूत्र संख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र संख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|--------------|---|-------|--------------|---|-------|
| १३ | उक्कस्सेण सागरोमम पलिदोमम वे सत्तदस चोदस सोलस अट्टारस सागरोममाणि सादिरेयाणि । | ६१ | | भग्गहणं । | ६५ |
| १४ | सासनसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छादिट्ठीण सत्याणोघ । | ६२ | १०३ | उक्कस्सेण वे सागरोममसहस्ताणि पुच्चकोडिपुधत्तेणग्गमहियाणि । | " |
| १५ | आणढ जाय णग्गेयज्जनिमाणवासियदेवेषु मिच्छादिट्ठि असजदसम्मादिट्ठीणमंतर केचिच कालादो होदि, णाणाजीय पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | " | १०४ | वादेरेइदियाणमंतर केचिच कालादो होदि, णाणाजीय पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | ६६ |
| १६ | एगजीयं पडुच्च जहण्णेण अतोसुट्ठं । | " | १०५ | एगजीय पडुच्च जहण्णेण सुद्धाभग्गहण । | " |
| १७ | उक्कस्सेण वीस वायीस तेयीस चउयीम पणयीस छव्वीस सत्तावीम अट्टागीस ऊणत्तीम तीस एकक्कीस सागरोममाणि देसणाणि । | ६३ | १०६ | उक्कस्सेण असरेज्जा लोणा । | " |
| १८ | सासनसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छादिट्ठीण सत्याणमोघ । | ६४ | १०७ | एयं वादेरेइदियपज्जत्त अपज्जत्ताण । | ६७ |
| १९ | अणुदिसादि जाव सच्चट्ठिसिद्धिनिमाणवासियदेवेषु असजदसम्मादिट्ठीणमंतर केचिच कालादो होदि, णाणाजीय पडुच्च (णत्थि) अतर, णिरतरं । | " | १०८ | सुट्ठमेइदिय सुट्ठमेइदियपज्जत्त-अपज्जत्ताणमतर केचिच कालादो होदि, णाणाजीय पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतर । | " |
| १०० | एगजीयं पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतर । | " | १०९ | एगजीय पडुच्च जहण्णेण सुद्धाभग्गहण । | " |
| १०१ | इदियाणुवादेण एइदियाणमतरं केचिच कालादो होदि, णाणाजीय पडुच्च णत्थि अतरं, णिरतरं । | ६५ | ११० | उक्कस्सेण अगुलस्स असरेज्जदिभागो, असरेज्जासरेज्जाओ ओसप्पिणि-उस्मप्पिणीओ । | " |
| १०२ | एगजीयं पडुच्च जहण्णेण सुद्धा- | " | १११ | वीइदिय-तीइदिय-चट्ठुरिंदिय-तस्सेय पज्जत्त-अपज्जत्ताणमतरं केचिच कालादो होदि, णाणाजीय पडुच्च णत्थि अतरं, णिरतर । | ६८ |
| | | | ११२ | एगजीय पडुच्च जहण्णेण सुद्धाभग्गहण । | " |
| | | | ११३ | उक्कस्सेण अणंतकालमसरेज्ज- | " |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|--|-------|
| | पोगलपरियट्टं । | ६८ | | याणि, सागरोरममदपुधत्त । | ७५ |
| ११४ | पंचिदिय-पंचिदियपञ्जत्तएसु मि- च्छादिट्टी ओघ । | ६९ | १२५ | चटुण्ह रत्ता अजोगिकेनली ओघ । | ७७ |
| ११५ | सासनसम्मादिट्टि सम्मानिच्छा- दिट्टीणमत्तर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जह- ण्णेण एगसमय । | " | १२६ | सजोगिकेनली ओघ । | " |
| ११६ | उक्कस्सेण पलिदोमस्स असखे- ज्जदिभागो । | " | १२७ | पंचिदियअपञ्जत्ताण वेहादिय- अपञ्जत्ताण भगो । | " |
| ११७ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलिदोमस्स असखेज्जदिभागो, अतोसुहुत्त । | ७० | १२८ | एदमिदिय पडुच्च अत्तर । | " |
| ११८ | उक्कस्सेण सागरोरममह- स्साणि पुच्चकोट्टिपुधत्तेणम्महि- याणि सागरोरमसदपुधत्त । | " | १२९ | गुण पडुच्च उभयदो वि णत्थि अत्तर, णिरत्तर । | " |
| ११९ | असन्नदमम्मादिट्टिप्पहुडि जाण अप्पमत्तमज्जदाणमत्तर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अत्तर, णिरत्तर । | ७१ | १३० | कायाणुत्तादेण पुढपिकाइय- आउकाइय तेउकाइय-वाउकाइय- वादर सुहुम पञ्जत्त-अपञ्जत्ताण- मत्तर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अत्तर, णिरत्तर । | ७८ |
| १२० | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो- सुहुत्त । | ७२ | १३१ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण सुहा- भवग्गहण । | " |
| १२१ | उक्कस्सेण सागरोरममह- स्साणि पुच्चकोट्टिपुधत्तेणम्महि- याणि, सागरोरमसदपुधत्त । | " | १३२ | उक्कस्सेण अणत्तकालमसखेज्ज- पोगलपरियट्टं । | " |
| १२२ | चटुण्हसुवसामगाण णाणाजीव पडि ओघ । | ७५ | १३३ | वणप्फदिकाइय—णिगोदजीव— वादर-सुहुम पञ्जत्त-अपञ्जत्ताण- मत्तर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अत्तर, णिरत्तर । | ७९ |
| १२३ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो- सुहुत्त । | " | १३४ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण सुहा- भवग्गहण । | " |
| १२४ | उक्कस्सेण सागरोरमसह- स्साणि पुच्चकोट्टिपुधत्तेणम्महि- | " | १३५ | उक्कस्सेण असखेज्जा लोगा । | " |
| | | | १३६ | वादरवणप्फदिकाइयपत्तेयसरीर- पञ्जत्त अपञ्जत्ताणमत्तर केर- चिर कालादो होदि, णाणा- | |

| मूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र मख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|---|-------|
| | जीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | | | ओष । | ८५ |
| १३७ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण खुद्दा- भवग्गहणं । | ७९ | १४७ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त । | " |
| १३८ | उक्कस्सेण अद्वाडज्जपोग्गल- परियट्ठ । | ८० | १४८ | उक्कस्सेण वे सागरोवमसह- स्माणि पुच्चकोडिपुधत्तेणग्गमहि- याणि, वे सागरोवममहस्माणि देसूणाणि । | ८६ |
| १३९ | तमक्काइय-तसक्काइयपज्जत्तएसु मिच्छादिट्ठी ओष । | " | १४९ | चदुण्ह खना अजोगिकेवली ओष । | " |
| १४० | सामणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च ओष । | " | १५० | मजोगिकेवली ओष । | " |
| १४१ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलि- दोवमस्स अससेज्जदिभागो, अंतोमुहुत्त । | ८१ | १५१ | तसक्काइयअपज्जत्ताण पचिदिय- अपज्जत्तभगो । | " |
| १४२ | उक्कस्सेण वे सागरोवमसह- स्माणि पुच्चकोडिपुधत्तेणग्गमहि- याणि, वे सागरोवमसहस्साणि देसूणाणि । | " | १५२ | एद काय पडुच्च अतर । गुण पडुच्च उभयदो नि णत्थि अतरं, णिरतर । | ८७ |
| १४३ | अमजदसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाव अप्पमत्तसज्जदाणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | ८२ | १५३ | जोगाणुत्तादेण पंचमणजोगि- पचरचिजोगीसु कायजोगि- ओगलियकायजोगीसु मिच्छा- दिट्ठि-अमजदसम्मादिट्ठि-सज्जदा- सज्जद-पमत्त-अप्पमत्तमज्जद- सजोगिकेवलीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणेगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | " |
| १४४ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त । | ८३ | १५४ | सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जह- ण्णेण एगममय । | ८८ |
| १४५ | उक्कस्सेण वे सागरोवमसह- स्माणि पुच्चकोडिपुधत्तेणग्गमहि- याणि, वे सागरोवमसहस्माणि देसूणाणि । | " | १५५ | उक्कस्सेण पलिदोवमस्स अससे- ज्जदिभागो । | " |
| १४६ | चदुण्हमुत्तमामगाणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च | | | एगजीवं पडुच्च णत्थि अतर | |

| सूत्र संख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र संख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|--------------|--|-------|--------------|--|-------|
| | गिरतर । | ८८ | | णीण मणजोगिभगो । | ९१ |
| १५७ | चदुण्हमुनसामगाणमतर केरचिरं कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च ओघ । | " | १७० | वेउच्चियमिस्सकायजोगीसु मिच्छादिट्ठीणमतरं केरचिरं कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | " |
| १५८ | एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर । | ८९ | १७१ | उक्कस्सेण चारम मुहुत्त । | ९२ |
| १५९ | चदुण्ह ख्वाणमोघ । | " | १७२ | एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर । | " |
| १६० | ओरालियमिस्सकायजोगीसु मिच्छादिट्ठीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणेगनीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर । | " | १७३ | सामणमम्मादिट्ठि-असजदसम्मादिट्ठीणं ओरालियमिस्सभगो । | " |
| १६१ | सासणसम्मादिट्ठीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च ओघ । | " | १७४ | आहारकायजोगीसु आहारमिस्सकायजोगीसु पमचसज्जाणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | ९३ |
| १६२ | एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर । | ९० | १७५ | उक्कस्सेण वासपुधत्त । | " |
| १६३ | असजदसम्मादिट्ठीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | " | १७६ | एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर । | " |
| १६४ | उक्कस्सेण वासपुधत्त । | " | १७७ | कम्मइयकायजोगीसु मिच्छादिट्ठि-सासणसम्मादिट्ठि-असजदसम्मादिट्ठि सजोगिकेवलीण ओरालियमिस्सभगो । | " |
| १६५ | एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर । | " | १७८ | वेदाणुवादेण इत्थिनेदसु मिच्छादिट्ठीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च णत्थि अतर गिरतर । | ९४ |
| १६६ | सजोगिकेवलीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | ९१ | १७९ | एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | " |
| १६७ | उक्कस्सेण वासपुधत्त । | " | १८० | उक्कस्सेण पणपण पलिदोनमाणि देसणाणि । | " |
| १६८ | एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर । | " | | | |
| १६९ | वेउच्चियकायजोगीसु चदुण्हा- | " | | | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|--|-------|
| १८१ | सामणसम्मादिट्ठि-सम्माभिच्छा- दिट्ठीणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीवं पडुच्च ओघ । | ९५ | १९३ | पुरिसनेदएसु मिच्छादिट्ठी ओघ । | १०० |
| १८२ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असखेज्जदि- भागो, अतोमुहुत्त । | " | १९४ | सासणसम्मादिट्ठि-सम्माभिच्छा- दिट्ठीणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगममय । | १०१ |
| १८३ | उक्कस्सेण पलिदोवमसद- पुधत्त । | ९६ | १९५ | उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो । | " |
| १८४ | असंजदसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाण अप्पमत्तसंजदाणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं । | ९७ | १९६ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स अमंखेज्जदि- भागो, अतोमुहुत्त । | " |
| १८५ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | " | १९७ | उक्कस्सेण सागरोवमसद- पुधत्त । | " |
| १८६ | उक्कस्सेण पलिदोवमसद- पुधत्त । | " | १९८ | असंजदसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाण अप्पमत्तसंजदाणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं । | १०२ |
| १८७ | दोण्हमुवसामगाणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीवं पडुच्च जहण्णुक्कस्समोघ । | ९९ | १९९ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | " |
| १८८ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | " | २०० | उक्कस्सेण सागरोवमसद- पुधत्तं । | १०३ |
| १८९ | उक्कस्सेण पलिदोवमसद- पुधत्त । | " | २०१ | दोण्हमुवसामगाणमतरं केन- चिरं कालादो होदि, गाणाजीवं पडुच्च ओघ । | १०४ |
| १९० | दोण्हं खणाणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगममय । | १०० | २०२ | एगजीवं, पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " |
| १९१ | उक्कस्सेण वासपुधत्त । | " | २०३ | उक्कस्सेण सागरोवमसद- पुधत्त । | " |
| १९२ | एगजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं । | " | २०४ | दोण्हं खणाणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीवं | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|----------------------------|-------|-------------|----------------------------|-------|
| | पहुच्च जहण्णेण एगसमय । | १०५ | २१७ | उक्कस्सेण अतोमुहुत्त । | ११० |
| २०५ | उक्कस्सेण वास सादिरेय । | १०६ | २१८ | उवसतकूमायवीदरागछदुमत्था- | |
| २०६ | एगजीन पहुच्च णत्थि अतर, | | | णमतर केवचिर कालादो होदि, | |
| | णिरतरं । | " | | णाणाजीव पहुच्च जहण्णेण | |
| २०७ | णजुसयवेदएसु मिच्छादिट्ठीण- | | २१९ | एगसमयं । | " |
| | मतर केवचिर कालादो होदि, | | | उक्कस्सेण वामपुघत्त । | " |
| | णाणाजीव पहुच्च णत्थि | | २२० | एगजीन पहुच्च णत्थि अंतर । | १११ |
| | अतर, णिरतर । | १०६ | २२१ | अणियट्ठिरत्तना सुहुमत्तना | |
| २०८ | एगजीन पहुच्च जहण्णेण | | | खीणकूमायवीदरागछदुमत्था | |
| | अतोमुहुत्त । | १०७ | | अजोगिकेवली ओघ । | " |
| २०९ | उक्कस्सेण तेत्तीस सागरोन- | | २२२ | सजोगिकेवली ओघ । | " |
| | माणि देसणाणि । | " | २२३ | कसायाणुवादेण कोधकसाइ- | |
| २१० | सासणसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाव | | | माणकूमाइ-भायकसाइ-लोह- | |
| | अणियट्ठिउत्तसामिदो चि | | | कमाईसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि | |
| | मूलोघ । | " | | जाव सुहुमत्तपराइयउवसमा | |
| २११ | दोण्ह खवाणमतर केवचिर | | | त्तना चि मणजोगिभगो । | " |
| | कालादो होदि, णाणाजीव | | २२४ | अकमाईसु उवसतकसायवीद- | |
| | पहुच्च जहण्णेण एगसमय । | १०९ | | रागछदुमत्थाणमतर केवचिर | |
| २१२ | उक्कस्सेण वासपुघत्त । | " | | कालादो होदि, णाणाजीव | |
| २१३ | एगजीन पहुच्च णत्थि अतर, | " | | पहुच्च जहण्णेण एगसमय । | ११३ |
| | णिरतर । | " | २२५ | उक्कस्सेण वासपुघत्त । | " |
| २१४ | अवगदवेदएसु अणियट्ठिउत्त- | | २२६ | एगजीन पहुच्च णत्थि अतर, | |
| | सम सुहुमत्तसमाणमतर केव- | | | णिरतर । | " |
| | चिर कालादो होदि, णाणा- | | २२७ | खीणकूमायवीदरागछदुमत्था | |
| | जीव पहुच्च जहण्णेण एग- | | | अजोगिकेवली ओघ । | " |
| | समय । | " | २२८ | सजोगिकेवली ओघ । | " |
| २१५ | उक्कस्सेण वासपुघत्त । | " | २२९ | णाणाणुवादेण मदिअण्णाणि- | |
| २१६ | एगजीन पहुच्च जहण्णेण | | | सुदअण्णाणि—विभगणाणीसु | |
| | अतोमुहुत्त । | ११० | | मिच्छादिट्ठीणमतर केवचिर | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|---|-------|-------------|--|-------|
| | कालादो होदि, णाणेगजीवं पडुच्च णत्थि अंतर, णिरंतरं । ११४ | | २४१ | चदुण्हमुवसामगाणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं । १२२ | |
| २३० | सासणसम्मादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च ओघ । | " | २४२ | उक्कस्सेण वासपुधत्तं । | " |
| २३१ | एगजीव पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं । | " | २४३ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " |
| २३२ | आभिणिनोहिय सुद-ओहि-णाणीसु असंजदसम्मादिट्ठीणमंतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | " | २४४ | उक्कस्सेण छावट्टिसागरोवमाणि सादिरियाणि । | " |
| २३३ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | ११५ | २४५ | चदुण्हं खवगाणमोघ । णवरि निसेसो ओधिणाणीसु खवाणं वासपुधत्तं । १२४ | |
| २३४ | उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसण | " | २४६ | मणपज्जवणाणीसु पमत्त-अप्पमत्तसजदाणमतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरंतरं । | " |
| २३५ | सजदासजदाणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतरं । ११६ | | २४७ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " |
| २३६ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " | २४८ | उक्कस्सेण अतोमुहुत्तं । | " |
| २३७ | उक्कस्सेण छावट्टिसागरोवमाणि सादिरियाणि । | " | २४९ | चदुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय । १२५ | |
| २३८ | पमत्त-अप्पमत्तसजदाणमंतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरतर । ११९ | | २५० | उक्कस्सेण वासपुधत्तं । | " |
| २३९ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । १२० | | २५१ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । १२६ | |
| २४० | सादिरियाणि । | " | २५२ | उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसणं । | " |
| | | | २५३ | चदुण्हं खवगाणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमय । १२७ | |
| | | | २५४ | उक्कस्सेण वासपुधत्तं । | " |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|---|-------|
| २५५ | एगजीर पडुच्च णत्थि अतर णिरतर । | १२७ | | कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | १३१ |
| २५६ | केवलणाणीसु सनोगिकेनली ओघ । | " | २७० | एगजीर पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | " |
| २५७ | अजोगिकेनली ओघ । | " | २७१ | उक्कस्सेण अतोमुहुत्त । | " |
| २५८ | सजमाणुवादेण सजदेसु पमत्त- सजदप्पहुडि जाण उरमत- कमायवीदरागछदुमत्था त्ति मणपज्जनणाणिभगो । | १२८ | २७२ | सुद्धमसापराइयसुद्धिसजदेसु सु- द्धमसापराइयउरसमाणमतर के- वचिर कालादो होदि, णाणा- जीव पडुच्च जहण्णेण एग- समय । | १३२ |
| २५९ | चटुण्ह खवा अजोगिकेनली ओघ । | " | २७३ | उक्कस्सेण वासपुधत्त । | " |
| २६० | सजोगिकेनली ओघ । | " | २७४ | एगजीर पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | " |
| २६१ | सामाइय-छेदोण्डावणसुद्धि- सजदेसु पमत्तापमत्तसजदाण- मतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | " | २७५ | समाणमोघ । | " |
| २६२ | एगजीर पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | १२९ | २७६ | जहाकसादपिहारसुद्धिमजदेसु अकमाइभगो । | " |
| २६३ | उक्कस्सेण अतोमुहुत्त । | " | २७७ | सजदासजदाणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणेगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | १३३ |
| २६४ | दोण्हसुणसामगाणमतर केव चिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | " | २७८ | असजदेसु मिच्छादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | " |
| २६५ | उक्कस्सेण वासपुधत्त । | " | २७९ | एगजीर पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | " |
| २६६ | एगजीर पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | १३० | २८० | उक्कस्सेण तेत्तीस सागरोव माणि देसणाणि । | १३४ |
| २६७ | उक्कस्सेण पुब्बकोडी देसण । | " | २८१ | सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छा- दिट्ठि-असजदसम्मादिट्ठीणमोघ । | " |
| २६८ | दोण्ह समाणमोघ । | १३१ | | | |
| २६९ | परिहारसुद्धिसजदेसु पमत्ता- पमत्तसजदाणमतर केवचिर | | | | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|--|-------|
| २८२ | दंसणाणुवादेण चक्रुदंसणीसु मिच्छादिद्वीणमोधं । | १३५ | २९४ | ओधिदसणी ओधिणाणिभंगो । | १४३ |
| २८३ | सासणसम्मादिद्वि-सम्मामिच्छा- दिद्वीणमतरं केचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च ओघ । | १३६ | २९५ | केवलदसणी केवलणाणिभंगो । | " |
| २८४ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स अमरोज्जदि- भागो, अतोमुहुत्त । | " | २९६ | लेस्माणुवादेण क्रिण्हेलेस्सिय- णीलेस्सिमय--काउलेस्सिएसु मिच्छादिद्वि--असजदमम्मा-- दिद्वीणमतरं केचिरं कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | " |
| २८५ | उक्कस्सेण वे सागरोवमसह- स्साणि देखणाणि । | " | २९७ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " |
| २८६ | असजदसम्मादिद्विप्पहुडि जाय अप्पमत्तसजदाणमतर केचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतर । | १३८ | २९८ | उक्कस्सेण तेत्तीम सत्तारस सत्त सागरोवमाणि देखणाणि । | १४४ |
| २८७ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | " | २९९ | सासणमम्मादिद्वि सम्मामिच्छा- दिद्वीणमतरं केचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च ओघ । | १४५ |
| २८८ | उक्कस्सेण वे सागरोवमसह- स्साणि देखणाणि । | " | ३०० | एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स अमरोज्जदि- भागो, अतोमुहुत्त । | " |
| २८९ | चदुण्हमुवसामगाणमतर केच- चिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च ओघ । | १४१ | ३०१ | उक्कस्सेण तेत्तीस सत्तारम सत्त सागरोवमाणि देखणाणि । | " |
| २९० | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | " | ३०२ | तेउलेस्सिय--पम्मलेस्सिएसु मिच्छादिद्वि--असजदमम्मा-- दिद्वीणमतरं केचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | १४६ |
| २९१ | उक्कस्सेण वे सागरोवमसह- स्साणि देखणाणि । | " | ३०३ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " |
| २९२ | चदुण्ह खराणमोध । | १४२ | ३०४ | उक्कस्सेण वे अट्टारम मागरो- वमाणि सादिरेयाणि । | १४७ |
| २९३ | अचक्रुदंसणीसु मिच्छादिद्वि- प्पहुडि जाय खीणकसापयीद- रागल्लुमत्था ओघ । | १४३ | | | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|---|-------|-------------|--|-------|
| ३०५ | सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च ओघ । | १४७ | ३१५ | संजदासंजद-पमत्तसजदाण- मतरं केरचिर कालादो होदि, णाणेगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | १५१ |
| ३०६ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोमस्स असखेज्जदि- मागो, अतोमुहुत्त । | १४८ | ३१६ | अप्पमत्तसंजदाणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरंतर । | ” |
| ३०७ | उक्कस्सेण वे अट्टारस सागरो- वमाणि सादिरैयाणि । | ” | ३१७ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | ” |
| ३०८ | सजदासजद पमत्त-अप्पमत्त- सजदाणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणेगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | ” | ३१८ | उक्कस्समतोमुहुत्त । | ” |
| ३०९ | सुककलोस्सिएसु मिच्छादिट्ठि- असजदसम्मादिट्ठीणमतर केर- चिर कालादो होदि, णाणा- जीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | १४९ | ३१९ | तिण्हमुत्तसामगाणमतर केव- चिर कालादो होदि, णाणा- जीव पडुच्च जहण्णेण एग- समय । | १५२ |
| ३१० | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | ” | ३२० | उक्कस्सेण वासपुधत्त । | ” |
| ३११ | उक्कस्सेण एकक्कीस सागरो- वमाणि देख्खाणि । | ” | ३२१ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | ” |
| ३१२ | सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च ओघ । | ” | ३२२ | उक्कस्सेण अतोमुहुत्त । | ” |
| ३१३ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलिदोमस्स असखेज्जदि- मागो, अतोमुहुत्त । | ” | ३२३ | उवसत्तकसायवीदरागळदुम- त्थाणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जह- ण्णेण एगसमय । | १५३ |
| ३१४ | उक्कस्सेण एकक्कीस सागरो- वमाणि देख्खाणि । | १५० | ३२४ | उक्कस्सेण वासपुधत्त । | ” |
| | | | ३२५ | एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | ” |
| | | | ३२६ | चटुण्ह खण्ण ओघ । | ” |
| | | | ३२७ | सजोगिकेनली ओघ । | १५४ |
| | | | ३२८ | भनियाणुवादेण भवसिद्धिएसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव अजोगिकेनलि चि ओघ । | ” |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|---|-------|
| ३२९ | अमनसिद्वियाणमंतर केचिचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतरं, गिरतरं । | १५४ | | अतोमुहुत्तं । | १५७ |
| ३३० | एगजीव पडुच्च णत्थि अंतरं, गिरंतरं । | " | ३४२ | उक्कस्सेण तेत्तीसं सागरो-वमाणि सादिरैयाणि । | " |
| ३३१ | सम्मचाणुनादेण सम्मादिट्ठीसु असंजदसम्मादिट्ठीणमंतरं केचिचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, गिरंतरं । | १५५ | ३४३ | चदुण्हमुवसामगाणमतरं केचिचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | १६० |
| ३३२ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " | ३४४ | उक्कस्सेण वासपुधत्तं । | " |
| ३३३ | उक्कस्सेण पुच्चकोडी देखणं । | " | ३४५ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " |
| ३३४ | सजदासजदप्पहुडिं जान उवसत्तकसायवीदरागछदुमत्था ओधिणाणिमंगो । | " | ३४६ | उक्कस्सेण तेत्तीम मागरो-वमाणि सादिरैयाणि । | " |
| ३३५ | चदुण्ह खवगा अजोगिकेवली ओघं । | १५६ | ३४७ | चदुण्हं खमा अजोगिकेवली ओघ । | १६१ |
| ३३६ | सजोगिकेवली ओघं । | " | ३४८ | सजोगिकेवली ओघं । | " |
| ३३७ | खड्यसम्मादिट्ठीसु असंजद-सम्मादिट्ठीणमंतर केचिचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, गिरतरं । | " | ३४९ | वेदगसम्मादिट्ठीसु असंजद-सम्मादिट्ठीण सम्मादिट्ठिमंगो । | १६२ |
| ३३८ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " | ३५० | सजदामंजदाणमतर केचिचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, गिरतरं । | " |
| ३३९ | उक्कस्सेण पुच्चकोडी देखण । | " | ३५१ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " |
| ३४० | संजदासजद पमत्तसजदाणमतर केचिचिर कालादो होदि, णाणा-जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, गिरंतरं । | १५७ | ३५२ | उक्कस्सेण छावट्ठिसागरोवमाणि देखणाणि । | " |
| ३४१ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " | ३५३ | पमत्त-अप्पमत्तसजदाणमतरं केचिचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, गिरतरं । | १६३ |
| | | | ३५४ | एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | १६४ |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|---|-------|
| ३५५ | उक्कस्सेण तेत्तीम सागरो वमाणि सादिरियाणि । | " | ३७० | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | १६९ |
| ३५६ | उत्तसमसम्मादिट्ठीसु अमज्ज- सम्मान्निट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणानीव पडुच्च जहण्णेण एगममय । | १६५ | ३७१ | उक्कस्सेण अतोमुहुत्त । | " |
| ३५७ | उक्कस्सेण सत्त राद्धिदियाणि । | " | ३७२ | उत्तसत्तकसायनीदरागळुदुमत्या- णमतर केवचिर कालादो होदि, णाणानीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | " |
| ३५८ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | " | ३७३ | उक्कस्सेण वासपुधत्त । | " |
| ३५९ | उक्कस्सेण अतोमुहुत्त । | १६६ | ३७४ | एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | " |
| ३६० | सत्तसज्जदाणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणानीव पडुच्च जहण्णेण एगममय । | " | ३७५ | सामणमम्मादिट्ठी—सम्मा— मिच्छादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणानीव पडुच्च जहण्णेण एगममय । | १७० |
| ३६१ | उक्कस्सेण चोद्दस राद्धिदियाणि । | " | ३७६ | उक्कस्सेण पल्लिदोरमस्स असंखे- ज्जदिभागो । | " |
| ३६२ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | " | ३७७ | एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | १७१ |
| ३६३ | उक्कस्सेण अतोमुहुत्त । | १६७ | ३७८ | मिच्छादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणेगनीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | " |
| ३६४ | पमत्त—अप्पमत्तसज्जदाणमतरं केवचिर कालादो होदि, णाणा- जीव पडुच्च जहण्णेण एग समय । | " | ३७९ | सण्णियाथुत्तादेण सण्णीसु मिच्छादिट्ठीणमोघ । | " |
| ३६५ | उक्कस्सेण पण्णारस राद्धि- दियाणि । | " | ३८० | सासणसम्मादिट्ठीप्पहुडि जाव उत्तसत्तकसायनीदरागळुदुमत्या त्ति पुरिसवेदभागो । | " |
| ३६६ | एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त । | " | ३८१ | चटुण्ह खवाणमोघ । | १७२ |
| ३६७ | उक्कस्सेण अतोमुहुत्त । | १६८ | ३८२ | असण्णीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर । | " |
| ३६८ | तिण्हसुत्तसामगाणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय । | " | | | |
| ३६९ | उक्कस्सेण वासपुधत्त । | " | | | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|---|-------|
| ३८३ | एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतरं । | १७२ | | अतोमुहुत्त । | १७५ |
| ३८४ | जाहाराणुवाटेण आहारएसु मिच्छादिट्ठीणमोघ । | १७३ | ३९० | उक्कस्सेण अगुलस्त असंखे-ज्जदिभागो असरेज्जाओ ओसप्पिणि-उस्तप्पिणीओ । | " |
| ३८५ | सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छा-दिट्ठीणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च ओघं । | " | ३९१ | चदुण्हमुजसामगाणमंतर केन-चिर कालादो होदि, णाणा-जीन पडुच्च ओघमगो । | १७७ |
| ३८६ | एगजीन पडुच्च जहण्णेण पलिदोमस्स असंखेज्जदि-भागो, अतोमुहुत्त । | " | ३९२ | एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । | " |
| ३८७ | उक्कस्सेण अगुलस्त असखे-ज्जदिभागो, असरेज्जासरे-ज्जाओ ओसप्पिणि-उस्म-प्पिणीओ । | " | ३९३ | उक्कस्सेण अगुलस्त असंखे-ज्जदिभागो असरेज्जासरे-ज्जाओ ओसप्पिणि-उस्तप्पि-णीओ । | " |
| ३८८ | अमजदसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाव अप्पमत्तसज्जाणमतरं केनचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च णत्थि अंतर, गिरंतरं । | १७४ | ३९४ | चदुण्ह स्रानणमोघ । | १७८ |
| ३८९ | एगजीन पडुच्च जहण्णेण | | ३९५ | सजोगिरेणली ओघ । | " |
| | | | ३९६ | अणाहारा कम्मइयकायजोगि-मगो । | " |
| | | | ३९७ | णपरि निमेसा, अजोगि-केनली ओघ । | १७९ |

भावपरूवणासुत्ताणि ।

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|---|-------|-------------|--|-------|
| १ | भावाणुगमेण दुनिहो णिहेमो, ओघेण आदेसेण य । | १८३ | | भानो, पारिणामिओ भानो । | १९६ |
| २ | ओघेण मिच्छादिट्ठि च्चि को भानो, ओदइओ भानो । | १९४ | ४ | सम्मामिच्छादिट्ठि च्चि को भानो, खओजसमिओ भानो । | १९८ |
| ३ | सासणसम्मादिट्ठि च्चि को | | ५ | असजदसम्मादिट्ठि च्चि को भानो, उवसमिओ वा खइओ | |

| सूत्रं सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्रं सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|--------------|---|-------|--------------|---|-------|
| | वा राओनसमिओ वा भाओ । | १९९ | | वा भाओ । | २१० |
| ६ | ओदइएण भाणेण पुणो असजदो । | २०१ | १८ | ओदइएण भाणेण पुणो असजदो । | २११ |
| ७ | सजदासंजद-पंमत्त-अप्पमत्त-सजदा त्ति को भाओ, राओन समिओ भाओ । | " | १९ | तिरिक्खगदीए तिरिक्ख-पंचि-दियतिरिक्ख-पंचिदियपज्जत्त-पंचिदियतिरिक्खजोणिणीसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव सजदा-संजदानमोघ । | २१२ |
| ८ | चट्ठण्हसुं समात्ति को भाओ, ओनममिओ भाओ । | २०४ | २० | णवरि निमेसो, पंचिदिय-तिरिक्खजोणिणीसु अमजद-सम्मादिट्ठि त्ति को भाओ, ओनसमिओ वा राओनममिओ वा भाओ । | २१२ |
| ९ | चट्ठण्ह रावा सजोगिकेवली अजोगिकेवली त्ति को भाओ, खइओ भाओ । | २०५ | २१ | ओदइएण भाणेण पुणो असजदो । | २१३ |
| १० | आदेसेण गइयाणुवादेण णिरय-गईए णेरइएसु मिच्छादिट्ठि त्ति को भाओ, ओदइओ भाओ । | २०६ | २२ | मणुसगदीए मणुम मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव अजोगिकेवली त्ति ओघ । | " |
| ११ | सासणसंम्मादिट्ठि त्ति को भाओ, पारिणामिओ भाओ । | २०७ | २३ | देवगदीए देनेसु मिच्छादिट्ठि-प्पहुडि जाव अमजदसंम्मादिट्ठि त्ति ओघ । | २१४ |
| १२ | संम्मामिच्छादिट्ठि त्ति को भाओ, राओनसमिओ भाओ । | २०८ | २४ | भण्णरासिय-वाणोत्तर-जोदि-सियदेवा देवीओ, सोधम्मीसाण-कप्परासियेदीओ च मिच्छा-दिट्ठी सासणसंम्मादिट्ठी संम्मा-मिच्छादिट्ठी ओघ । | " |
| १३ | असजदसंम्मादिट्ठि त्ति को भाओ, उवसमिओ वा खइओ वा राओनसमिओ वा भाओ । | " | २५ | असजदसंम्मादिट्ठि त्ति को भाओ, उवसमिओ वा राओनसमिओ वा भाओ । | " |
| १४ | ओदइएण भाणेण पुणो असजदो । | २०९ | २६ | ओदइएण भाणेण पुणो असजदो । | २१५ |
| १५ | एवं पढमाए पुढगीए णेरइयाण । | " | २७ | सोधम्मीसाणप्पहुडि जाव णव- | |
| १६ | त्रिदियाए जाव सत्तमीए पुढगीए णेरइएसु मिच्छादिट्ठि सासण-संम्मादिट्ठि संम्मामिच्छादिट्ठीण-मीघ । | २१० | | | |
| १७ | असजदसंम्मादिट्ठि त्ति को भाओ, उवसमिओ वा खओवसमिओ | | | | |

| सूत्र संख्या | सूत्र | शृङ्खला | सूत्र संख्या | सूत्र | शृङ्खला |
|--------------|---|---------|--------------|---|---------|
| | गैवजनिमाणनासियदेवेसु मिच्छा- दिद्विप्पहुडि जाण असंजदसम्मा- दिद्वि ति ओघ । | २१५ | | खड्दो भावो । | २२९ |
| २८ | अणुदिसादि जाण सच्चद्विसिद्धि- निमाणनासियदेवेसु असजद- सम्मादिद्वि ति को भावो, ओवसमिओ वा खड्दो वा खओउसमिओ वा भावो । | " | ३७ | वेउच्चियकायजोगीसु मिच्छा- दिद्विप्पहुडि जाण असंजदसम्मा- दिद्वि ति ओघभगो । | " |
| २९ | ओदइएण भावेण पुणो असजदो । | २१६ | ३८ | वेउच्चियमिस्सकायजोगीसु मि- च्छादिद्वी सासणसम्मादिद्वी असंजदसम्मादिद्वी ओघ । | २२० |
| ३० | इंदियाणुत्तेण पच्चियपज्जत्त- एसु मिच्छादिद्विप्पहुडि जाण अजोगिकेउलि ति ओघ । | " | ३९ | आहारकायजोगि-आहारमिस्स- कायजोगीसु पमत्तसजदा ति को भावो, खओउसमिओ भावो । | " |
| ३१ | कायाणुत्तेण तसकाइयत्तम- काइयपज्जत्तएसु मिच्छादिद्वि- प्पहुडि जाण अजोगिकेउलि ति ओघ । | २१७ | ४० | कम्मइयकायजोगीसु मिच्छा- दिद्वी सासणसम्मादिद्वी असजद- सम्मादिद्वी सजोगिकेउली ओघ । | २२१ |
| ३२ | जोगाणुत्तेण पच्चमणजोगि- पच्चरच्चिजोगि कायजोगि ओरा- लियकायजोगीसु मिच्छादिद्वि- प्पहुडि जाण सजोगिकेउलि ति ओघ । | २१८ | ४१ | वेदाणुत्तेण इत्थियेद पुरिसवेद- णउत्तयवेदएसु मिच्छादिद्वि- प्पहुडि जाण अणियद्वि ति ओघ । | " |
| ३३ | ओरालियमिस्सकायजोगीसु मि- च्छादिद्वि—सासणसम्मादिद्वीण ओघ । | " | ४२ | अजगदवेदएसु अणियद्विप्पहुडि जाण अजोगिकेउली ओघ । | २२२ |
| ३४ | असजदसम्मादिद्वि ति को भावो, खड्दो वा खओउसमिओ वा भावो । | | ४३ | कसायाणुत्तेण कोधकमाइ- माणकमाइ—मायकमाइ—लोभ- कमाइसु मिच्छादिद्विप्पहुडि जाण सुद्धममापराइयउत्तममा खवा ओघ । | २२३ |
| ३५ | ओदइएण भावेण पुणो असंजदो । | | ४४ | अरुत्ताइसु चदुट्ठाणी ओघ । | " |
| ३६ | सजोगिकेउलि ति को | | ४५ | णाणाणुत्तेण मदिअण्णाणि- सुदअण्णाणि निभंगणाणीसु मि- च्छादिद्वी सासणसम्मादिद्वी ओघ । | २२४ |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|---|-------|
| ४६ | आभिषिचोहिय-सुद-ओधिणाणीसु असंजदसम्मादिट्टिप्पहुडि जाण खीणकमायवीदरागउदुमत्या ओष । | २२५ | ५७ | ओहिदमणी ओहिणाणिमगो । | २२९ |
| ४७ | मणपन्नगणाणीसु पमत्तसजदप्पहुडि जाण खीणरुमायवीदरागउदुमत्या ओष । | " | ५८ | केवलदमणी केवलणाणिमगो । | " |
| ४८ | केवलणाणीसु सजोगिकेनली (अजोगिकेनली) ओष । | " | ५९ | लेम्माणुवादेण किण्हलेस्सियणीलेस्सिय काउलेस्सिएसु चहुट्टाणी ओष । | " |
| ४९ | सजमाणुवादेण सजदेसु पमत्तसजदप्पहुडि जाण अजोगिकेनली ओष । | २२७ | ६० | तेउलेस्सिय पम्मलेस्सिएसु मिच्छादिट्टिप्पहुडि जाण अप्पमत्तसजदा ति ओष । | " |
| ५० | सामाइयउदोणट्टाणसुद्विसजदेसु पमत्तमजदप्पहुडि जाण अणियट्टि ति ओष । | " | ६१ | सुम्भलेस्सिएसु मिच्छादिट्टिप्पहुडि जाण सजोगिकेनलि ति ओष । | २३० |
| ५१ | परिहारसुद्विसजदेसु पमत्त-अप्पमत्तसजदा ओष । | " | ६२ | भरियाणुवादेण भममिद्विएसु मिच्छादिट्टिप्पहुडि जाण अजोगिकेनलि ति ओष । | " |
| ५२ | सुहुमसापराइयसुद्विमजदेसु सुहुमसापराइया उवसमा राखा ओष । | " | ६३ | अभमसिद्विय ति को भाणे, परिणामिओ भाणे । | " |
| ५३ | जहाम्पदादिपरिहारसुद्विमजदेसु चहुट्टाणी ओष । | २२८ | ६४ | सम्मत्ताणुवादेण सम्मादिट्टीसु अमजदसम्मादिट्टिप्पहुडि जाण अजोगिकेनलि ति ओष । | " |
| ५४ | सजदासजदा जोष । | " | ६५ | सइयसम्मादिट्टीसु असजदसम्मादिट्टि ति को भाणे, सइओ भाणे । | " |
| ५५ | असंजदेसु मिच्छादिट्टिप्पहुडि जाण असजदसम्मादिट्टि ति ओष । | " | ६६ | सइय सम्मत्त । | " |
| ५६ | दसणाणुवादेण चक्खुदसणिअचक्खुदसणीसु मिच्छादिट्टिप्पहुडि जाण खीणरुमायवीदरागउदुमत्या ति ओष । | " | ६७ | ओदइण्ण भाणेण पुणा असजदे । | " |
| | | | ६८ | सजदासजद-पमत्त-अप्पमत्तसजदा ति को भाणे, सओणसमिओ भाणे । | " |
| | | | ६९ | सइय सम्मत्त । | " |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|--|-------|
| ७० | चदुण्हमुनसमा त्ति को भावो, ओउसमिओ भावो । | २३३ | ८२ | संजदासजद-पमत्त-अप्पमत्त- सजदा त्ति को भावो, खओउ- समिओ भावो । | २३६ |
| ७१ | खइयं सम्मत्त । | " | ८३ | उउसमिय सम्मत्त । | " |
| ७२ | चदुण्ह खया सजोगिकेवली अओगिकेवलि त्ति को भावो, खइओ भावो । | " | ८४ | चदुण्हमुनसमा त्ति को भावो, उउसमिओ भावो । | " |
| ७३ | खइय सम्मत्त । | २३४ | ८५ | उउसामियं सम्मत्त । | " |
| ७४ | वेदयसम्मादिट्ठीसु असजदसम्मा- दिट्ठि त्ति को भावो, खओउ- समिओ भावो । | " | ८६ | सासणमम्मादिट्ठी ओघ । | " |
| ७५ | खओउसमियं सम्मत्त । | " | ८७ | सम्माभिच्छादिट्ठी ओघं । | २३७ |
| ७६ | ओदइएण भावेण पुणो असजदो । | २३५ | ८८ | भिच्छादिट्ठी ओघ । | " |
| ७७ | संजदासजद-पमत्त-अप्पमत्त- सजदा त्ति को भावो, खओउ- समिओ भावो । | " | ८९ | सण्णियाणुउादेण सण्णीसु भिच्छा- दिट्ठिप्पहुडि जाण खीणकसाय- वीदरागउदुमत्था त्ति ओघ । | " |
| ७८ | खओउसमिय सम्मत्तं । | " | ९० | असण्णि त्ति को भावो, ओदइओ भावो । | " |
| ७९ | उउसमसम्मादिट्ठीसु असजद- सम्मादिट्ठि त्ति को भावो, उउ- समिओ भावो । | " | ९१ | आहाराणुउादेण आहारएसु भिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाण सजोगि- केवलि त्ति ओघ । | २३८ |
| ८० | उउसामियं सम्मत्त । | " | ९२ | अणाहाराण कम्मइयमंगो । | " |
| ८१ | ओदइएण भावेण पुणो असजदो । | २३६ | ९३ | णउरि पिसेसो, अओगिकेवलि त्ति को भावो, खइओ भावो । | " |

अप्पावहुगपरूवणासुत्ताणि ।

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|---|-------|-------------|--|-------|
| १ | अप्पावहुआणुगमेण दुनिहो णिदेसो, ओघेण आदेसेण य । | २४१ | २ | ओघेण तिसु अद्दामु उवसमा परेसणेण तुल्ला थोया । | २४३ |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|---|-------|-------------|---|-------|
| ३ | उपसतक्रसायनीदरागडुमुत्या तत्तिया चैय । | २४५ | | त्योना उपसमसम्मादिट्टी । | २५८ |
| ४ | सना सखेज्जगुणा । | " | २२ | सइयसम्मादिट्टी मखेज्जगुणा । | " |
| ५ | खीणक्रमायनीदरागडुमुत्या त त्तिया चैय । | २४६ | २३ | वेदगसम्मादिट्टी सखेज्जगुणा । | " |
| ६ | सजोग्गेवली अजोग्गेवली पसेणोण दो नि तुल्ला तत्तिया चैय । | " | २४ | एव तिसु नि अद्दामु । | " |
| ७ | सजोग्गेवली अद्द पडुच्च सखेज्जगुणा । | २४७ | २५ | सच्चत्योना उपसमा । | २५९ |
| ८ | अप्पमत्तमजदा अस्सना अणु समा सखेज्जगुणा । | " | २६ | सना सखेज्जगुणा । | २६० |
| ९ | पमत्तमजदा सखेज्जगुणा । | " | २७ | आदेसेण गदियाणुनादेण गिरय- गदीए णेरइएसु सच्चत्योना सामणसम्मादिट्टी । | २६१ |
| १० | सजत्तामजदा असखेज्जगुणा । | २४८ | २८ | सम्मामिच्छादिट्टी सखेज्जगुणा । | " |
| ११ | सासणसम्मादिट्टी असखेज्जगुणा । | " | २९ | असजदसम्मादिट्टी असखेज्ज- गुणा । | २६२ |
| १२ | सम्मामिच्छादिट्टी मखेज्जगुणा । | २५० | ३० | मिच्छादिट्टी असखेज्जगुणा । | " |
| १३ | असजदसम्मादिट्टी असखेज्ज- गुणा । | २५१ | ३१ | अमजदसम्मादिट्टिद्वाने सच्च- त्योना उपसमसम्मादिट्टी । | २६३ |
| १४ | मिच्छादिट्टी जणतगुणा । | २५२ | ३२ | सइयसम्मादिट्टी असखेज्ज- गुणा । | " |
| १५ | असजदसम्मादिट्टिद्वाने सच्च- त्योवा उपसमसम्मादिट्टी । | २५३ | ३३ | वेदगसम्मादिट्टी असखेज्जगुणा । | २६४ |
| १६ | सइयसम्मादिट्टी असखेज्जगुणा । | " | ३४ | एव पढमाए पुढरीए णेरइया । | " |
| १७ | वेदगसम्मादिट्टी असखेज्जगुणा । | २५६ | ३५ | त्रिदियाए जात्र सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु सच्चत्योना सामण- सम्मादिट्टी । | २६५ |
| १८ | सजदासजदद्वाने सच्चत्योना सइयसम्मादिट्टी । | " | ३६ | सम्मामिच्छादिट्टी सखेज्जगुणा । | " |
| १९ | उपसमसम्मादिट्टी असखेज्ज- गुणा । | २५७ | ३७ | असजदसम्मादिट्टी असखेज्ज- गुणा । | २६६ |
| २० | वेदगसम्मादिट्टी असखेज्जगुणा । | " | ३८ | मिच्छादिट्टी असखेज्जगुणा । | " |
| २१ | पमत्तापमत्तसजदद्वाने सच्च- | | ३९ | असजदसम्मादिट्टिद्वाने सच्च- त्योना उपसमसम्मादिट्टी । | २६७ |
| | | | ४० | वेदगसम्मादिट्टी असखेज्जगुणा । | " |

| सूत्र सत्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सत्या | सूत्र | पृष्ठ |
|---|-------|-------|--|-------|-------|
| ४१ तिरिक्त्तगदीए तिरिक्त्त पचि- त्तियतिरिक्त्त—पचिदियपज्जत्त- तिरिक्त्त—पचिदियजोगिणीसु सच्चत्थोवा सज्जामज्जा । | | २६८ | ५३ मणुमगदीए मणुम मणुमपज्जत्त- मणुमिणीसु तिसु ज्जामु उर- समा परमणेण तुत्त्वा थोवा । | | २७३ |
| ४२ सामासम्मादिट्ठी असंखेज्ज- गुणा । | | " | ५४ उरमतत्तमायपीदरागठदुमत्था तेत्तिया चेव । | | " |
| ४३ सम्मामिच्छादिट्ठीणो संखेज्ज- गुणा । | | " | ५५ रत्ता संखेज्जगुणा । | | २७४ |
| ४४ अमनदमम्मादिट्ठी अमखेज्ज गुणा । | | २६९ | ५६ खीणरूमायपीदरागठदुमत्था त- त्तिया चेव । | | " |
| ४५ मिच्छादिट्ठी अणत्तगुणा, मिच्छा- दिट्ठी अमखेज्जगुणा । | | " | ५७ मज्जोगिकेवली ज्जोगिकेवली परसणेण दो ति तुत्त्वा, तत्तिया चेव । | | " |
| ४६ अमज्जदसम्मादिट्ठीद्वारेणो सच्च- त्थोवा उरमतसम्मादिट्ठी । | | २७० | ५८ सज्जोगिकेवली अद्द पट्त्त संखेज्जगुणा । | | " |
| ४७ सुइयमम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा । | | २७१ | ५९ अप्पमत्तमज्जा अक्कया अणु- वसमा मखेज्जगुणा । | | २७५ |
| ४८ वेत्तसम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा । | | " | ६० पमत्तमज्जा मखेज्जगुणा । | | " |
| ४९ मज्जामज्जदद्वारेणो सच्चत्थोवा उरमतसम्मादिट्ठी । | | २७२ | ६१ सज्जामंज्जा मखेज्जगुणा । | | " |
| ५० वेदगमम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा । | | " | ६२ सामणमम्मादिट्ठी मखेज्जगुणा । | | " |
| ५१ पराति विमेषो, पचिदिय- तिरिक्त्तजोगिणीसु अमंज्जद- सम्मादिट्ठी मंज्जासज्जदद्वारेणो सच्च- त्थोवा उरमतसम्मादिट्ठी । | | " | ६३ सम्मामिच्छादिट्ठी मखेज्जगुणा । | | २७६ |
| ५२ वेदमम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा । | | " | ६४ अमज्जदमम्मादिट्ठी मखेज्जगुणा । | | " |
| | | " | ६५ मिच्छादिट्ठी ज्जमखेज्जगुणा, मिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा । | | " |
| | | " | ६६ अमनदमम्मादिट्ठीद्वारेणो सच्च- त्थोवा उरमतसम्मादिट्ठी । | | " |
| | | " | ६७ सुइयमम्मादिट्ठी मखेज्जगुणा । | | २७७ |
| | | " | ६८ वेदगमम्मादिट्ठी मखेज्जगुणा । | | " |
| | | " | ६९ मज्जामंज्जदद्वारेणो सच्चत्थोवा सुइयमम्मादिट्ठी । | | " |
| | | " | ७० उरमतसम्मादिट्ठी मखेज्जगुणा । | | " |

| सूत्र संख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र संख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|--------------|---|-------|--------------|---|-------|
| ७१ | वेदगसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा । | २७७ | ८९ | सोहम्मीसाण जाण सदार-सह- स्मारकप्पनासियदेवेसु जहा देवगइभगो । | २८२ |
| ७२ | पमच अप्पमचमजदट्ठाणे सच्च- त्थोना उवसमसम्मादिद्वी । | २७८ | ९० | आणद जाण णवगेवज्जनिमाण- वासियदेवेसु सच्चत्थोना सासणसम्मादिद्वी । | २८३ |
| ७३ | खइयसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा । | " | ९१ | सम्माभिच्छादिद्वी सखेज्ज गुणा । | " |
| ७४ | वेदगसम्मादिद्वी संखेज्जगुणा । | " | ९२ | मिच्छादिद्वी असखेज्जगुणा । | " |
| ७५ | णवरि तिसेसो, मणुसिणीसु अमजद सजटासजद पमत्तापमच- सजदट्ठाणे सच्चत्थोना खइय- मम्मादिद्वी । | " | ९३ | असजदसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा । | " |
| ७६ | उवसमसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा । | " | ९४ | असजदसम्मादिद्विट्ठाणे सच्च- त्थोना उवसमसम्मादिद्वी । | २८४ |
| ७७ | वेदगसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा । | २७९ | ९५ | खइयसम्मादिद्वी असखेज्ज- गुणा । | " |
| ७८ | एव तिसु अद्वासु । | " | ९६ | वेदगसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा । | २८५ |
| ७९ | सच्चत्थोना उवसमा । | २७९ | ९७ | अणुदिमादि जाण अनराइद- निमाणनामियदेवेसु असजद सम्मादिद्विट्ठाणे सच्चत्थोना उवसमसम्मादिद्वी । | " |
| ८० | खना सखेज्जगुणा । | २८० | ९८ | खइयसम्मादिद्वी असखेज्ज गुणा । | " |
| ८१ | देवगदीए देवेसु सच्चत्थोना सामणसम्मादिद्वी । | " | ९९ | वेदगसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा । | " |
| ८२ | सम्माभिच्छादिद्वी सखेज्जगुणा । | " | १०० | सच्चट्ठसिद्धिनिमाणनासियदेवेसु असजदसम्मादिद्विट्ठाणे सच्च- त्थोना उवसमसम्मादिद्वी । | २८६ |
| ८३ | असजदसम्मादिद्वी असखेज्ज- गुणा । | " | १०१ | खइयसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा । | " |
| ८४ | मिच्छादिद्वी असखेज्जगुणा । | " | १०२ | वेदगसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा । | " |
| ८५ | असजदसम्मादिद्विट्ठाणे सच्च त्थोना उवसमसम्मादिद्वी । | " | १०३ | इदियाणुवादेण पच्चिदिय पच्चि दियपज्जत्तएसु ओघ । णवरि मिच्छादिद्वी असखेज्जगुणा । | २८८ |
| ८६ | खइयसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा । | " | | | |
| ८७ | वेदगसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा । | २८१ | | | |
| ८८ | भरणनामिय-चाणवेत्तर-जोदि- सियदेवा देवीओ मोघम्मीसाण- कप्पनासियदेवीओ च सत्तमाए पुढवीए भगो । | " | | | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|---|-------|-------------|---|-------|
| १०४ | कायाणुरादेण तसकाइय तस- काइयपज्जत्तएसु ओधं । णवरि मिच्छादिही असखेज्जगुणा । | २८९ | | संजद—पमत्तापमत्तसंजदद्वारेण सम्मत्तप्पाअहुअमोघ । | २९३ |
| १०५ | जोगाणुरादेण पचमणजोगि- पचमचिजोगि—कायजोगि— ओरालियकायजोगीसु तीसु अद्दासु पेसणेण तुल्ला थोना । | २९० | ११९ | एण तिसु अद्दासु । | २९४ |
| १०६ | उरसत्तकसायवीदरागल्लदुमत्था तेत्तिया चेव । | " | १२० | सच्चत्थोना उवसमा । | " |
| १०७ | खना संखेज्जगुणा । | " | १२१ | खना सखेज्जगुणा । | " |
| १०८ | खीणकसायवीदरागल्लदुमत्था तेत्तिया चेव । | २९१ | १२२ | ओरालियमिस्सकायजोगीसु सच्चत्थोना सजोगिकेनली | " |
| १०९ | सजोगिकेनली पेसणेण तेत्तिया चेव । | " | १२३ | असजदसम्मादिही संखेज्ज- गुणा । | " |
| ११० | सजोगिकेनली अद्द पडुच्च सखेज्जगुणा । | " | १२४ | सासणमम्मादिही असंखेज्ज- गुणा । | २९५ |
| १११ | अप्पमत्तमज्जदा अकस्सना अणु- वसमा संखेज्जगुणा । | " | १२५ | मिच्छादिही अणंतगुणा । | " |
| ११२ | पमत्तसज्जदा सखेज्जगुणा । | " | १२६ | असजदसम्माइडिद्वारेण सच्च- त्थोना सइयसम्मादिही । | " |
| ११३ | सज्जदासज्जदा असखेज्जगुणा । | २९२ | १२७ | वेदगसम्मादिही सखेज्जगुणा । | " |
| ११४ | सासणमम्मादिही असखेज्ज- गुणा । | " | १२८ | वेडवियकायजोगीसु देवगदि- भगो । | " |
| ११५ | सम्मामिच्छादिही सखेज्ज- गुणा । | " | १२९ | वेडवियमिस्सकायजोगीसु सच्चत्थोना सामणमम्मादिही । | २९६ |
| ११६ | असजदसम्मादिही असंखेज्ज- गुणा । | " | १३० | असजदसम्मादिही सखेज्ज- गुणा । | " |
| ११७ | मिच्छादिही असंखेज्जगुणा, मिच्छादिही अणंतगुणा । | २९३ | १३१ | मिच्छादिही अमखेज्जगुणा । | " |
| ११८ | असजदसम्मादिही—सज्जदा— | | १३२ | असजदसम्मादिद्वारेण सच्च- त्थोना उवसमसम्मादिही । | २९७ |
| | | | १३३ | खइयसम्मादिही सखेज्जगुणा । | " |
| | | | १३४ | वेदगसम्मादिही असखेज्ज- गुणा । | " |
| | | | १३५ | आहारकायजोगि आहारमिस्म- | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|-----------------------------------|-------|-------------|--------------------------------|-------|
| | कायजोगीसु पमत्तसजदङ्घणे | | १५२ | मिच्छादिद्वी अमरोज्जगुणा । | ३० |
| | सव्वत्थोवा खइयसम्मादिद्वी । | २९७ | १५३ | अत्तचदमम्मादिद्वी-मज्जानंद | |
| १३६ | वेदगमम्मादिद्वी सखेज्जगुणा । | २९८ | | द्वीणे मव्वत्थोवा खइयमम्मा- | |
| १३७ | कम्मइयकायजोगीसु सव्व- | | | दिद्वी । | ॥ |
| | त्थोवा सजोगिक्खेवली । | ॥ | १५४ | उत्तमममम्मादिद्वी असखेज्ज- | |
| १३८ | सासणमम्मादिद्वी अमखेज्ज- | | | गुणा । | ३० |
| | गुणा । | ॥ | १५५ | वेदगमम्मादिद्वी अमखेज्ज- | |
| १३९ | अमज्जदमम्मादिद्वी अनखेज्ज- | | | गुणा । | ॥ |
| | गुणा । | २९९ | १५६ | पमत्त-अप्पमत्तमज्जद्वी मव्व | |
| १४० | मिच्छादिद्वी ङ्गत्तगुणा । | ॥ | | त्थोवा खइयमम्मादिद्वी । | ॥ |
| १४१ | अमज्जदमम्मादिद्वीद्वीद्वीणे मव्व- | | १५७ | उत्तमममम्मादिद्वी मखेज्जगुणा । | |
| | त्थोवा उव्वसममम्मादिद्वी । | ॥ | १५८ | वेदगमम्मादिद्वी समेज्ज- | |
| १४२ | खइयमम्मादिद्वी मखेज्जगुणा । | ॥ | | गुणा । | ॥ |
| १४३ | वेदगमम्मादिद्वी अनखेज्ज- | | १५९ | एवं दोसु ज्झानु । | ॥ |
| | गुणा । | ३०० | १६० | सव्वत्थोवा उत्तममा । | ३० |
| १४४ | वेदाद्युनादेण इत्थि वेदएणु दोसु | | १६१ | खना मखे-ज्जगुणा । | ॥ |
| | वि ज्झानु उत्तमना पव्वत्तएण | | १६२ | पुग्गि वेदएणु दोसु ज्झानु | |
| | तुहा थोवा । | ॥ | | उत्तमना परमएण तुहा थोवा । | ॥ |
| १४५ | खना मखेज्जगुणा । | ३०१ | १६३ | खना सखेज्जगुणा । | ॥ |
| १४६ | अप्पमत्तमज्जदम अत्तखा | | १६४ | अप्पमत्तमज्जदम अत्तखा | |
| | अत्तवममा सखेज्जगुणा । | ॥ | | अत्तवममा सखेज्जगुणा । | ३० |
| १४७ | पमत्तमज्जदम सखेज्जगुणा । | ॥ | १६५ | पमत्तमज्जदम समेज्जगुणा । | ॥ |
| १४८ | संज्झानंदम अमखेज्जगुणा । | ॥ | १६६ | संज्झानंदम अमखेज्जगुणा । | ॥ |
| १४९ | मानपत्तम्मादिद्वी अमखेज्ज- | | १६७ | मानपत्तम्मादिद्वी अमखेज्ज- | |
| | गुणा । | ॥ | | गुणा । | ॥ |
| १५० | तन्नामिच्छादिद्वी मखेज्ज- | | १६८ | तन्नामिच्छादिद्वी मखेज्ज- | |
| | गुणा । | ३२२ | | गुणा । | ॥ |
| १५१ | अमज्जदमम्मादिद्वी अमखेज्ज- | | १६९ | अमज्जदमम्मादिद्वी पमत्तमज्ज- | |
| | गुणा । | ॥ | | दमम्मादिद्वी पमत्तमज्ज- | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|--|-------|
| | गुणा । | ३०६ | | गुणा । | ३१० |
| १७० | मिच्छादिद्वी असखेज्जगुणा । | " | १८७ | वेदगनम्मादिद्वी मखेज्जगुणा । | " |
| १७१ | अमजदमम्मादिद्वि—सजदा— मजद पमत्त-अपमत्तमजदद्व्याणे सम्मत्तप्पावहुअमोष । | " | १८८ | एव दोसु जइत्तु । | " |
| १७२ | एव दोसु अद्वामु । | " | १८९ | मव्वत्थोवा उव्वन्ना । | " |
| १७३ | सव्वत्थोवा उव्वममा । | " | १९० | खवा मखेज्जगुणा । | " |
| १७४ | खवा मखेज्जगुणा । | ३०७ | १९१ | अमगदवेदएत्तु दोसु जइत्तु उव्वसमा पवेसणे तुल्ला धोवा । | ३११ |
| १७५ | णउमयवेदएत्तु दोसु अद्वामु उव्वममा पवेसणे तुल्ला धोवा । | " | १९२ | उव्वमंतकनापवीदरागउदुमत्था तच्चिया चेर । | " |
| १७६ | खवा सखेज्जगुणा । | " | १९३ | खवा मखेज्जगुणा । | " |
| १७७ | अपमत्तमजदरा अमखवा अणु- वसमा मखेज्जगुणा । | " | १९४ | खीणकनापवीदरागउदुमत्था तच्चिया चेर । | " |
| १७८ | पमत्तसजदा सखेज्जगुणा । | " | १९५ | सजोगकेवली अजोगकेवली पवेसणे दो वि तुल्ला तच्चिया चेर । | " |
| १७९ | सजदामंजदा असखेज्जगुणा । | ३०८ | १९६ | सजोगिकेवली अज पइच्च सखेज्जगुणा । | " |
| १८० | मामणमम्मादिद्वी असखेज्ज- गुणा । | " | १९७ | कनायाणुवादेण कोधकमाड- माणकमाइ-मायकसाइ-लोभ- कसाईसु दोसु अद्वामु उव्वसमा पवेसणे तुल्ला धोवा । | ३१२ |
| १८१ | मम्मामिच्छादिद्वी सखेज्ज- गुणा । | " | १९८ | खवा सखेज्जगुणा । | " |
| १८२ | अमजदमम्मादिद्वी असखेज्ज- गुणा । | " | १९९ | णवरि विसेसा, लोभरुमाईसु सुहुमसापराइयउव्वसमा विसे- साहिया । | " |
| १८३ | मिच्छादिद्वी अणत्तगुणा । | " | २०० | खवा मखेज्जगुणा । | ३१३ |
| १८४ | अमजदसम्मादिद्वि—सजदा— सजदद्व्याणे सम्मत्तप्पावहुअ- मोष । | ३०९ | २०१ | अपमत्तसजदा अकत्तया अणु- वममा | " |
| १८५ | पमत्त अपमत्तमजदद्व्याणे सव्व- त्थोवा | " | २०२ | | " |
| १८६ | सखेज्ज- | | | | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|---|-------|
| २०३ | सजदासजदा असखेज्जगुणा । | ३१४ | | णीसु तिसु अद्वासु उवसमा | |
| २०४ | सासणसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | " | २१९ | पवेसणेण तुल्ला थोवा । | ३१७ |
| २०५ | सम्माभिच्छादिट्ठी सखेज्ज- गुणा । | " | २२० | उपसतरुमाययीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव । | " |
| २०६ | असजदसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | " | २२१ | खवा सखेज्जगुणा । | ३१८ |
| २०७ | मिच्छादिट्ठी अणतगुणा । | " | २२२ | खीणकमाययीदरागछदुमत्था तेत्तिया चेव । | " |
| २०८ | असजदसम्मादिट्ठी--सजदा-- सनद--पमत्त--अप्पमत्तसजद-- द्वारेण सम्मत्तप्पानहुअमोघ । | ३१५ | २२३ | अप्पमत्तसजदा अक्खवा अणु वसमा सखेज्जगुणा । | " |
| २०९ | एव दोसु अद्वासु । | " | २२४ | पमत्तसजदा सखेज्जगुणा । | " |
| २१० | सव्वत्थोना उपममा । | " | २२५ | संजदामजदा असखेज्जगुणा । | " |
| २११ | खवा सखेज्जगुणा । | " | २२६ | असजदसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | ३१९ |
| २१२ | अरुमाईसु सव्वत्थोना उपमत्त- कमाययीदरागछदुमत्था । | ३१६ | २२७ | असजदसम्मादिट्ठी--सजदा-- सजद पमत्त अप्पमत्तसजदद्वारेण सम्मत्तप्पानहुअमोघ । | " |
| २१३ | खीणकमाययीदरागछदुमत्था सखेज्जगुणा । | " | २२८ | एव तिसु अद्वासु । | " |
| २१४ | सजोगिनेवली अजोगिनेवली पवेसणेण दो नि तुल्ला तत्तिया चेव । | " | २२९ | सव्वत्थोना उवसमा । | " |
| २१५ | सजोगिनेवली अद्द पट्टच्च सखेज्जगुणा | " | २३० | खवा सखेज्जगुणा । | " |
| २१६ | णाणाणुनादेण मदिअण्णाणि- मुदअण्णाणि--विभगण्णाणीसु सव्वत्थोना सागणसम्मादिट्ठी । | " | २३१ | मणपज्जणणीसु तिसु अद्वासु उपसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा । | ३२० |
| २१७ | मिच्छादिट्ठी अणतगुणा, मिच्छादिट्ठी अरुखेज्जगुणा । | ३१७ | २३२ | उपसतरुमाययीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव । | " |
| २१८ | आभिणिचोदिय-मुद ओधिणा- | | २३३ | खवा सखेज्जगुणा । | " |
| | | | २३४ | खीणकमाययीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव । | " |
| | | | २३५ | अप्पमत्तसजदा अक्खवा अणु- वसमा सखेज्जगुणा । | " |
| | | | २३६ | पमत्तसजदा सखेज्जगुणा । | " |

| सूत्र संख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र संख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|--------------|---|-------|--------------|---|-------|
| २३६ | पमत्त अप्पमत्तसजदद्व्याणे सव्व- त्थोना उवसमसम्मादिट्ठी । | ३२० | | त्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी । | ३२४ |
| २३७ | खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा । | ३२१ | २५३ | खइयसम्मादिट्ठी सखेज्ज- गुणा । | " |
| २३८ | वेदगसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा । | " | २५४ | वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा । | ३२५ |
| २३९ | एव तिसु अद्वासु । | " | २५५ | एव तिसु अद्वासु । | " |
| २४० | सव्वत्थोना उवसमा । | " | २५६ | सव्वत्थोना उवसमा । | " |
| २४१ | खना संखेज्जगुणा । | " | २५७ | खना संखेज्जगुणा । | " |
| २४२ | केवलणाणीसु सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो नि तुल्ला तत्तिया चेव । | " | २५८ | सामाइयच्छेदोवद्व्याणसुद्विसज- देसु दोसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा । | " |
| २४३ | सजोगिकेवली अद्द पडुच्च सखेज्जगुणा । | ३२२ | २५९ | खना संखेज्जगुणा । | " |
| २४४ | सजमाणुवादेण सजदेसु तिसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा । | " | २६० | अप्पमत्तसंजदा अक्खना अणु- वसमा संखेज्जगुणा । | " |
| २४५ | उवसत्तकमायमीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव । | " | २६१ | पमत्तसजदा संखेज्जगुणा । | ३२६ |
| २४६ | खना संखेज्जगुणा । | " | २६२ | पमत्त-अप्पमत्तसंजदद्व्याणे सव्व- त्थोना उवसमसम्मादिट्ठी । | " |
| २४७ | खीणरूमायमीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव । | ३२३ | २६३ | खइयसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा । | " |
| २४८ | सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो नि तुल्ला तत्तिया चेव । | ३२४ | २६४ | वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा । | " |
| २४९ | सजोगिकेवली अद्द पडुच्च संखेज्जगुणा । | " | २६५ | एव दोसु अद्वासु । | " |
| २५० | अप्पमत्तसजदा अक्खना अणुवसमा संखेज्जगुणा । | " | २६६ | सव्वत्थोना उवसमा । | " |
| २५१ | पमत्तसजदा संखेज्जगुणा । | " | २६७ | खना संखेज्जगुणा । | " |
| २५२ | पमत्त-अप्पमत्तसजदद्व्याणे सव्व- त्थोना उवसमसम्मादिट्ठी । | " | २६८ | परिहारसुद्विसजदेसु सव्व- त्थोना अप्पमत्तसंजदा । | ३२७ |
| | | | २६९ | पमत्तसजदा संखेज्जगुणा । | " |
| | | | २७० | पमत्त-अप्पमत्तसंजदद्व्याणे सव्व- त्थोना खइयसम्मादिट्ठी । | " |
| | | | २७१ | वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा । | " |
| | | | २७२ | सुहुमसापराइयसुद्विसंजदेसु सु- हुमसापराइयउवसमा थोवा । | ३२८ |

| सूत्र सत्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सत्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|---|-------|--|-------|-------|
| २७३ | सना सखेज्जगुणा । | ३२८ | दिट्ठी असखेज्जगुणा । | | ३३१ |
| २७४ | जधाम्सादनिहारसुद्धिसज्जदेसु अरुमाडभगो । | " | २८८ ओधिदंसणी ओधिणाणिभगो । | " | " |
| २७५ | सज्जदासज्जदेसु अप्पापहुअ णत्थि । | " | २८९ केवलदसणी केवलणाणिभगो । | " | " |
| २७६ | सज्जदासज्जदट्ठाणे सवत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी । | " | २९० लेस्साणुवादेण किण्हलेस्सिय- णीलेस्सिय- काउलेस्सिएसु सवत्थोवा सासणसम्मादिट्ठी । | | ३३२ |
| २७७ | उत्तसमसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | ३२९ | २९१ सम्मामिच्छादिट्ठी सखेज्ज- गुणा । | " | " |
| २७८ | वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | " | २९२ असज्जदसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | " | " |
| २७९ | अमज्जदेसु सवत्थोवा सामण- सम्मादिट्ठी । | " | २९३ मिच्छादिट्ठी अणत्तगुणा । | " | " |
| २८० | सम्मामिच्छादिट्ठी सखेज्ज- गुणा । | " | २९४ असज्जदसम्मादिट्ठिट्ठाणे सवत्- थोवा खइयसम्मादिट्ठी । | " | " |
| २८१ | असज्जदसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | " | २९५ उत्तसमसम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा । | | ३३३ |
| २८२ | मिच्छादिट्ठी अणत्तगुणा । | ३३० | ३९६ वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | " | " |
| २८३ | असज्जदसम्मादिट्ठिट्ठाणे सवत्- थोवा उत्तसमसम्मादिट्ठी । | " | २९७ णवरि निसेसो, काउलेस्सिएसु असज्जदसम्मादिट्ठिट्ठाणे सवत्- थोवा उत्तसमसम्मादिट्ठी । | " | " |
| २८४ | खइयसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | " | २९८ खइयसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | " | " |
| २८५ | वेदगसम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा । | " | २९९ वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | | ३३४ |
| २८६ | दसणाणुवादेण चक्खुदसणि- अचक्खुदसणीसु मिच्छादिट्ठि- प्पहुडि जाण खीणरुमाययीद- रागछदुमत्था त्ति ओध । | ३३१ | ३०० तेउलेस्सिय--पम्मलेस्सिएसु सवत्थोवा अप्पमत्तसज्जदा । | " | " |
| २८७ | णवरि चक्खुदमणीसु मिच्छा- | | ३०१ पमत्तमज्जदा सखेज्जगुणा । | " | " |
| | | | ३०२ सज्जदासज्जदा असखेज्जगुणा । | " | " |
| | | | ३०३ सासणसम्मादिट्ठी असखेज्ज- | | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|---|-------|-------------|--|-------|
| | गुणा । | ३३४ | ३२१ | असंजदसम्मादिट्ठिद्वारेण सव्व- त्थोवा उवसमसम्माद्वि । | ३३८ |
| ३०४ | सम्मामिच्छादिट्ठी संखेज्ज- गुणा । | ३३५ | ३२२ | सइयसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | " |
| ३०५ | असजदसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | " | ३२३ | वेदगसम्मादिट्ठी मखेज्जगुणा । | " |
| ३०६ | मिच्छादिट्ठी असखेज्जगुणा । | " | ३२४ | सजदासजद-पमत्त-अप्पमत्त- सजदद्वारेण सम्मत्तप्पानहुग- मोघ । | ३३९ |
| ३०७ | अमजदसम्मादिट्ठि -सजदा-- सजद पमत्त-अप्पमत्तसजदद्वारेण सम्मत्तप्पानहुगमोघ । | " | ३२५ | एव तिसु अद्वासु । | " |
| ३०८ | सुक्कलेस्सिएसु तिसु अद्वासु उवसमा पनेसणेण तुल्ला थोना । | ३३६ | ३२६ | सव्वत्थोवा उवसमा । | " |
| ३०९ | उवसतकसायवीदरागळदुमत्था तत्तिया चेव । | " | ३२७ | खना मखेज्जगुणा । | " |
| ३१० | खना सखेज्जगुणा । | " | ३२८ | भविथाणुवादेण भवसिद्धिएसु मिच्छादिट्ठी जान अजोगि- केवलि त्ति ओघ । | " |
| ३११ | खीणकसायवीदरागळदुमत्था तत्तिया चेव । | " | ३२९ | अभवसिद्धिएसु अप्पानहुग णत्थि । | ३४० |
| ३१२ | सजोगिकेवली पनेसणेण तत्तिया चेव । | " | ३३० | सम्मत्ताणुवादेण सम्मादिट्ठीसु ओविणाणिभगो । | " |
| ३१३ | मजोगिकेवली अद्द पडुच्च सखेज्जगुणा । | " | ३३१ | सइयसम्मादिट्ठीसु तिसु अद्वासु उवसमा पनेसणेण तुल्ला थोना । | " |
| ३१४ | अप्पमत्तसजदा अक्खना अणु- वसमा सखेज्जगुणा । | ३३७ | ३३२ | उवसतकसायवीदरागळदुमत्था तत्तिया चेव । | " |
| ३१५ | पमत्तसंजदा सखेज्जगुणा । | " | ३३३ | खना सखेज्जगुणा । | ३४१ |
| ३१६ | सजदासजदा असखेज्जगुणा । | " | ३३४ | खीणकसायवीदरागळदुमत्था तत्तिया चेव । | " |
| ३१७ | सासणसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | " | ३३५ | सजोगिकेवली अजोगिकेवली पनेसणेण दो वि तुल्ला तत्तिया चेव । | " |
| ३१८ | सम्मामिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा । | " | ३३६ | सजोगिकेवली अद्द पडुच्च | " |
| ३१९ | मिच्छादिट्ठी असखेज्जगुणा । | ३३८ | | | |
| ३२० | अमजदसम्मादिट्ठी सखेज्ज- गुणा । | " | | | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या |
|-------------|---|-------|--|
| २७३ | सजा सखेज्जगुणा । | ३२८ | दिट्ठी असखे |
| २७४ | जधाकप्रादिनिहारसुद्धिसजदेसु अम्माइभगो । | " | २८८ ओधिदंसणी |
| २७५ | सजदासजदेसु अप्पात्रहुअ णत्थि । | " | २८९ केवलदसणी = |
| २७६ | सजदामजदट्ठाणे सच्चत्थोना सइयसम्मादिट्ठी । | " | २९० लेस्ताणुवादे णीललेस्सिय |
| २७७ | उत्तमसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | ३२९ | २९१ सम्मामिच्छा गुणा । |
| २७८ | वेदगसम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा । | " | २९२ असजदसम्मा गुणा । |
| २७९ | असजदेसु सच्चत्थोना सामण- मम्मादिट्ठी । | " | २९३ मिच्छादिट्ठी |
| २८० | सम्मामिच्छादिट्ठी सखेज्ज- गुणा । | " | २९४ असजदसम्मा त्थोना सइय |
| २८१ | असजदसम्मादिट्ठी असखेज्ज गुणा । | " | २९५ उत्तमसम्मा गुणा । |
| २८२ | मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा । | ३३० | ३९६ वेदगसम्मादि गुणा । |
| २८३ | असजदसम्मादिट्ठिट्ठाणे सच्च- त्थोना उत्तमसम्मादिट्ठी । | " | २९७ णवरि निसेसे असजदसम्मा त्थोना उत्तम |
| २८४ | सइयसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | " | २९८ सइयसम्मादि गुणा । |
| २८५ | वेदगसम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा । | " | २९९ वेदगसम्मादि गुणा । |
| २८६ | दसणाणुवादेण चक्रुदमणि- अचक्रुदमणीसु मिच्छादिट्ठि- प्पहुडि जान खीणम्माययीद- रागल्लदुमत्था त्ति ओघ । | ३३१ | ३०० तेउलेस्सिय- सच्चत्थोना उ |
| २८७ | णवरि चक्रुदमणीसु मिच्छा | | ३०१ पमत्तसजदा |
| | | | ३०२ मज्जासजदा |
| | | | ३०३ सासणसम्मा |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|---|-------|-------------|--|-------|
| ३६५ | पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा । | ३४७ | ३७४ | खवा सखेज्जगुणा । | ३४८ |
| ३६६ | संजदासंजदा असखेज्जगुणा । | " | ३७५ | अणाहारएसु सन्वत्थोना | " |
| ३६७ | सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा । | " | | सजोगिकेनली । | " |
| ३६८ | सम्माभिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा । | " | ३७६ | अजोगिकेनली संखेज्जगुणा । | " |
| ३६९ | असंजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा । | ३४८ | ३७७ | सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा । | ३४९ |
| ३७० | मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा । | " | ३७८ | असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा । | " |
| ३७१ | असंजदसम्मादिट्ठी --संजदा-- संजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजद- ट्ठाणे सम्मत्तप्पावहुअमोघ । | " | ३७९ | मिच्छादिट्ठी अणतगुणा । | " |
| ३७२ | एव तिसु अद्वासु । | " | ३८० | असजदसम्मादिट्ठिणाणे सन्वत्थोवा उअसमसम्मादिट्ठी । | " |
| ३७३ | सन्वत्थोना उवसमा । | " | ३८१ | खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा । | ३५० |
| | | " | ३८२ | वेदगमनादिट्ठी असखेज्जगुणा । | " |

२ अवतरण-गाथा-सूची

(भागप्ररूपणा)



| संख्या | गाथा | पृष्ठ | अन्यत्र कहा | क्रम सख्या | गाथा | पृष्ठ | अन्यत्र कहा |
|--------|-------------------|-------|------------------------------|------------|---------------------|-------|-------------------------------|
| १ | अपिदधादरभावो | १८६ | | ९ | जाणण्णाण च तहा | १९१ | |
| ११ | इगिवीस अट्ट तह णव | १९२ | | २ | णामिणि-धम्मवयारो | १८६ | |
| १२ | पक्कोत्तरपदवृद्धो | १९३ | | १४ | देसे खओवसमिप | १९४ | |
| १० | एय ठाण तिणिण धिय- | १९२ | | १३ | मिच्छत्ते दस भगा | " | |
| ५ | ओदरवो उवसमिओ | १८७ | | ८ | लद्धीओ सम्मत्त | १९१ | |
| ४ | खयप य खीणमोहे | १८६ | पदखडा वेदनाखड गो जी ६७ | ३ | सम्मत्तुप्पत्तीय वि | १८६ | पदखडा वेदनाखड, गो जी ६६ |
| ६ | गदि लिग कसाया वि | १८९ | | ७ | सम्मत्तं चारित्त दो | १९० | |

| सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र सख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|-------------|--|-------|-------------|--|-------|
| | सखेज्जगुणा । | ३४१ | ३५२ | असंजदसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | ३४४ |
| ३३७ | अप्पमत्तमज्जदा अक्खमा अणु- वसमा सखेज्जगुणा । | " | ३५३ | असजदसम्मादिट्ठी—सज्जदा— सज्जद-पमत्त-अप्पमत्तसज्जद- ट्ठाणे उवसमसम्मत्तस्स भेदो णत्थि । | ३४५ |
| ३३८ | पमत्तमज्जदा सखेज्जगुणा । | " | ३५४ | सासणसम्मादिट्ठी सम्मामिच्छा- दिट्ठी मिच्छादिट्ठीण णत्थि अप्पावहुअ । | " |
| ३३९ | सज्जदासज्जदा सखेज्जगुणा । | ३४२ | ३५५ | सण्णियाणुपादेण सण्णीसु मिच्छादिट्ठीप्पहुडि जाव रीण- कमायवीदरागल्लदुमत्था त्ति ओष । | " |
| ३४० | असज्जदसम्मादिट्ठी असखेज्ज गुणा । | " | ३५६ | णत्थि, मिच्छादिट्ठी असखेज्ज गुणा । | ३४ |
| ३४१ | असज्जदसम्मादिट्ठी—सज्जदा— सज्जद-पमत्त-अप्पमत्तसज्जदट्ठाणे खइयसम्मत्तस्स भेदो णत्थि । | " | ३५७ | असण्णीसु णत्थि अग्गावहुअ । | " |
| ३४२ | वेदगसम्मादिट्ठीसु सच्चत्थोपा अप्पमत्तसज्जदा । | " | ३५८ | आहाराणुपादेण आहारएसु तिसु अद्दासु उयममा परेसणेण तुल्ला थोवा । | " |
| ३४३ | पमत्तमज्जदा सखेज्जगुणा । | ३४३ | ३५९ | उयसत्तकमायवीदरागल्लदुमत्था तत्तिया चेव । | " |
| ३४४ | सज्जदासज्जदा असखेज्जगुणा । | " | ३६० | खमा सखेज्जगुणा । | ३४ |
| ३४५ | असज्जदसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा । | " | ३६१ | रीणकमायवीदरागल्लदुमत्था तत्तिया चेव । | " |
| ३४६ | असज्जदसम्मादिट्ठी—मज्जदा— सज्जद पमत्त-अप्पमत्तसज्जद- ट्ठाणे वेदगसम्मत्तस्स भेदो णत्थि । | " | ३६२ | सज्जोगिकेवली परेसणेण तत्तिया चेव । | " |
| ३४७ | उवसमसम्मादिट्ठीसु तिसु अद्दासु उवसमा परेसणेण तुल्ला थोवा । | ३४४ | ३६३ | सज्जोगिकेवली अद्द पडुच्च सखेज्जगुणा । | " |
| ३४८ | उयसत्तकमायवीदरागल्लदुमत्था तत्तिया चेव । | " | ३६४ | अप्पमत्तसज्जदा अक्खमा अणुवममा सखेज्जगुणा । | " |
| ३४९ | अप्पमत्तसज्जदा अणुवसमा सखेज्जगुणा । | " | | | |
| ३५० | पमत्तसज्जदा सखेज्जगुणा । | " | | | |
| ३५१ | सज्जदासज्जदा असखेज्जगुणा । | " | | | |

| सूत्र संख्या | सूत्र | पृष्ठ | सूत्र संख्या | सूत्र | पृष्ठ |
|--------------|--|-------|--------------|--|-------|
| ३६५ | पमत्तसंजदा सखेज्जगुणा । | ३४७ | ३७४ | खवा संखेज्जगुणा । | ३४८ |
| ३६६ | संजदासजदा असखेज्जगुणा । | " | ३७५ | अणाहारएसु सच्चत्थोना | |
| ३६७ | सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा । | " | | सजोगिकेवली । | " |
| ३६८ | सम्मामिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा । | " | ३७६ | अजोगिकेवली संखेज्जगुणा । | " |
| ३६९ | असजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा । | ३४८ | ३७७ | सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा । | ३४९ |
| ३७० | मिच्छादिट्ठी अणतगुणा । | " | ३७८ | असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा । | " |
| ३७१ | असजदसम्मादिट्ठी -संजदा-सजद-पमत्त-अपमत्तसजद-ट्ठाणे सम्मत्तप्पात्रहुअमोष । | " | ३७९ | मिच्छादिट्ठी अणतगुणा । | " |
| ३७२ | एव-तिसु अद्वासु । | " | ३८० | असजदसम्मादिट्ठीट्ठाणे सच्चत्थोना उवसमसम्मादिट्ठी । | " |
| ३७३ | सच्चत्थोवा उवसमा । | " | ३८१ | खड्यसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा । | ३५० |
| | | | ३८२ | वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा । | " |

२ अवतरण-गाथा-सूची (भावप्ररूपणा)



| क्रम संख्या | गाथा | पृष्ठ | अन्यत्र कहाँ | क्रम संख्या | गाथा | पृष्ठ | अन्यत्र कहाँ |
|-------------|--------------------|-------|------------------------------|-------------|---------------------|-------|-------------------------------|
| १ | अप्यिदं भादरभावो | १८६ | | ९ | णाणण्णाण च तहा | १९१ | |
| ११ | इगिवीस अट्ट तह णव | १९२ | | २ | णामिणि घम्भुवयारो | १८६ | |
| १२ | एकोत्तरपदवृद्धो | १९३ | | १४ | देसे खओवसमिप | १९४ | |
| १० | एय ठाण तिण्णि विय- | १९२ | | १३ | मिच्छत्ते दस भगा | " | |
| ५ | ओदइओ उवसमिओ | १८७ | | ८ | लद्धोओ सम्मत्तं | १९१ | |
| ४ | खवप य खीणमोहे | १८६ | पदखडा वेदनाखड गो जी ६७ | ३ | सम्मत्तुप्पत्तीय वि | १८६ | पदखडा वेदनाखड, गो जी ६६ |
| ६ | गदि लिंग कसाया वि | १८९ | | ७ | रित्त दो | १९० | |

३ न्यायोक्तियां

| क्रम संख्या | न्याय | पृष्ठ | क्रम संख्या | न्याय | पृष्ठ |
|-------------|--|----------------------------------|-------------|---|-------|
| १ | एगजोगणिद्विद्वान्मेगदेसो णानुवद्वदि चि णायादो । | २५९ | ३ | कारणाणुसारिणा कज्जेण होदव्वमिदि णायादो । | २५० |
| २ | जहा उहेसो तथा णिद्वेसो । | ४, ९, २५, २७, ७१, १९४, २७० | ४ | समुदापसु पयट्टाण तदेग देसे वि पउत्तिदसणादो । | १९९ |

४ ग्रन्थोल्लेख

१ चूलियासुत्त

१ त कध णव्वदे ? 'पच्चिदिएसु उवसामंतो गम्भोव्वत्तिएसु उवसामेदि,
णो सम्मुच्छिमेसु' चि चूलियासुत्तादो । ११८

२ दव्वाणिओगहार

१ एदेहि पलिदोवममवहिरदि अतोमुहुत्तेण काणेत्ति दव्वाणिओगहार
सुत्तादो णव्वदि । २५०

२ आणद पाणद जाव णव्वगेवज्जविमाणवासियदेचेसु मिच्छादिद्विप्पहुडि
जाव असजदसम्मादिद्वी दव्वपमाणेण वेचटिया, पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो ।
एदेहि पलिदोवममवहिरदि अतोमुहुत्तेण । अणुदिस्सदि जाव अवराहदविमाण
वासियदेचेसु असजदसम्मादिद्वी दव्वपमाणेण वेचटिया, पलिदोवमस्स असखेज्जदि-
भागो । एदेहि पलिदोवममवहिरदि अतोमुहुत्तेणेत्ति एदेण दव्वसुत्तेण । २८७

३ पाहुडसुत्त (कपायग्राभृत)

१ च्चदुण्ह कसायाणमुस्सतरस्स छम्मासमत्तस्सेव सिद्धीदो । ण पाहुड
सुत्तेण धियदिचारो, तस्स भिण्णोव्वदेसत्तादो । ११२

२ त पि हुदो णव्वदे ? 'णियमा मणुगसदीए' इदि सुत्तादो । २५६

४ छत्रपुस्तरु

१ केसु वि सुत्तपोत्थएसु पुरिसव्वेदस्सतर छम्मासा । १०६

५ पारिभाषिक शब्दसूची

| शब्द | पृष्ठ | शब्द | पृष्ठ |
|---------------------------------|----------|---------------------|-------------------------|
| अ | | आ | |
| अक्षपायत्र | २२३ | आगमद्रव्यान्तर | २ |
| असुदृशेनस्थिति | १३७, १३८ | आगमद्रव्यभाव | १८४ |
| अचिन्ततद्रव्यतिरिक्तद्रव्यान्तर | ३ | आगमद्रव्याल्पसङ्ख्य | २४२ |
| अतिप्रसंग | २०६, २०९ | आगमभावभाव | १८४ |
| अयस्त्वनराशि | २४९, २६२ | आगमभावान्तर | ३ |
| अनर्पित | ४७ | आगमभावाल्पसङ्ख्यत्व | २४२ |
| अनात्मभूतभाव | १८७ | आदेश | १, २४३ |
| अनात्मस्वरूप | २०७ | आधली | ७ |
| अनादिपारिणामिक | २०७ | आसादन | २४ |
| अनुदयोपशम | २०७ | आहारकऋद्धि | २०८ |
| अन्तर्दापक | २०१, २०० | आहारककाल | १७४ |
| अन्तर | ३ | | |
| अंतरानुगम | १ | उ | |
| अन्तमुद्धत | ९ | उच्छेद | ३ |
| अन्यथानुपपत्ति | २२३ | उत्कीरणकाल | १० |
| अपगतपेदेत्य | २२२ | उत्तरप्रतिपत्ति | ३२ |
| अप्ययिम | ४४, ७४ | उत्तानशय्या | ४७ |
| अपूराद्धा | ५४ | उद्वेलनकाल | ३४ |
| अभियान | १९४ | उद्वेलना | ३३ |
| अर्ष | १९४ | उद्वेलनाकाडक | १०, २५ |
| अर्षमुद्रलपरिवर्तन | ११ | उपक्रमणकाल | २५०, २५१, २५५ |
| अर्पित | ६३ | उपदेश | ३२ |
| असमान्तर | ११७ | उपरिमराशि | २४९, २६२ |
| असद्वारकाट | २४९ | उपशम | २००, २०२, २०३, २११, २०० |
| असाक्षिभाव | २०८ | उपशमश्रेणी | १८, १७१ |
| असक्षिस्थिति | १७२ | उपशमसम्यक्त्वाद्धा | १५, २५४ |
| अस्ययम | १८८ | उपशान्तकपायाद्धा | १९ |
| अस्यद्वानस्थापनांतर | २ | उपशामक | १२५, २६० |
| अस्यद्वानस्थापनाभाव | १८४ | उपशामकाद्धा | १५९, १६० |
| असिद्धता | १८८ | ओ | |
| | | ओघ | १, २४३ |

| शब्द | पृष्ठ | शब्द | पृष्ठ |
|-----------------------|----------------------------------|------------------------------|----------------|
| | औ | | ड |
| औप्यधिकभाव | १८५, १९४ | डहरकाल | ४२, ४४, ४७, ५६ |
| औपशमिकभाव | १८५, २०३ | | त |
| | क | | |
| कपाटपर्याय | ९० | तद्व्यतिरिक्तअल्पयहुत्व | २४२ |
| कैरण | ११ | तद्व्यतिरिक्तनोभागमद्रव्यभाव | १८४ |
| कपाय | २२३ | तीर्थेकर | १९४, ३२३ |
| कुरु | ४१ | तीव्र मन्दभाव | १८७ |
| कृतकरणीय | १४, १५, १६, ९९, १०५, १३९, २३३ | त्रसपर्याप्तस्थिति | ८४, ८५ |
| | | त्रसस्थिति | ६५, ८१ |
| | | | द |
| भ्रोधोपशामनाद्वा | १९० | दक्षिणप्रतिपत्ति | ३२ |
| क्षपक | १०५, १२४, २६० | दिवसपृथक्त्व | ९८, १०३ |
| क्षपकश्रेणी | १२, १०६ | दिव्यध्वनि | १९४ |
| क्षपकाद्वा | १५९, १६० | दीर्घान्तर | ११७ |
| क्षय | १९८, २०२, २११, २०० | दृष्टमाग | २२, ३८ |
| क्षायिकभाव | १८५, २०५, २०६ | देवलोक | २८४ |
| क्षायिकसम्यक्त्वाद्वा | २५४ | देशघातिस्पर्धक | १०९ |
| क्षायिकसंज्ञा | २०० | देशमत | २७७ |
| क्षायोपशमिक | २००, २११, २२० | देशस्यम | २०२ |
| क्षायोपशमिकभाव | १८, १९८ | द्रव्ययिष्कम्भसूची | २६३ |
| क्षुद्रभवप्रहण | ४५, ५६ | द्रव्यान्तर | ३ |
| | ग | द्रव्याल्पप्रभुत्व | २४१ |
| गुणकार | २४७, २५७, २६२, २७४ | द्रव्यलिङ्गी | ५८, ६३, १४९ |
| गुणकाल | ८९ | | न |
| गुणस्थानपरिपाटी | १३ | नपुसकचेदोपशामनाद्वा | १९० |
| गुणाद्वा | १५१ | नामभाव | १८३ |
| गुणा तरसक्रान्ति | ८९, १५४, १७१ | नामान्तर | १ |
| | घ | नामाल्पयहुत्व | २४१ |
| घनागुल | ३१७, ३३५ | निदर्शन | ६, २५, ३२ |
| | च | निरन्तर | ५६, २५७ |
| घमुदशौनस्थिति | १३७, १३९ | निजराभाव | १८७ |
| | ज | निर्वाण | ३५ |
| जीवविपाकी | २२२ | नोभागमअचित्तद्रव्यभाव | १८४ |
| ज्ञानकार्य | २२४ | नोभागमद्रव्यभाव | १८४ |
| | | नोभागमद्रव्यान्तर | २ |
| | | नोभागमभव्यद्रव्यभाव | १८४ |

| शब्द | पृष्ठ | शब्द | पृष्ठ |
|------------------------|--------------------|----------------------|-----------------|
| नोभागमभावभाव | १८४ | मासपृथक्त्वान्तर | १७९ |
| नोभागमभावान्तर | ३ | मिथ्यात्व | ६ |
| नोभागममिथ्रद्रव्यभाव | १८४ | मिश्रान्तर | ३ |
| नोभागमद्रव्याल्पवहुत्व | २४२ | मुहूर्तपृथक्त्व | ३२, ४५ |
| नोभागमभावाल्पवहुत्व | २४२ | | |
| नोभागमसाचित्तद्रव्यभाव | १८४ | य | |
| नोश्न्द्रियावरण | २३७ | योग | २०६ |
| | | योगान्तरसक्रान्ति | ८९ |
| प | | | |
| परमार्थ | ७ | ल | |
| परस्थानाल्पवहुत्व | २८९ | लेद्यान्तरसक्रान्ति | १५३ |
| परिपाटी | २० | लेद्याद्धा | १५१ |
| पल्योपम | ७, ९ | लोभोपशामनाद्धा | १९० |
| पारिणामिकभाव | १८५, २०७, १९६, २३० | व | |
| पुद्गलपरिवर्तन | ५७ | वर्गमूल | २६७ |
| पुद्गलविपाकित्व | २२२ | वर्षपृथक्त्व | १८, ५३, ५५, २६४ |
| पुद्गलविपाकी | २२६ | वर्षपृथक्त्वान्तर | १८ |
| पुरुषवेदोपशामनाद्धा | १९० | वर्षपृथक्त्वान्त्यु | ३६ |
| पूर्वकोटीपृथक्त्व | ४२, ५२, ७२ | विकल्प | १८९ |
| प्रक्षेपसक्षेप | २९४ | विग्रह | १७३ |
| प्रतरागुल | ३१७, ३३५ | विग्रहगति | ३०० |
| प्रतिभाग | २७०, २९० | चिरह | ३ |
| प्रत्यय | १९४ | ध्यमिचार | १८९, २०८ |
| प्रत्येकबुद्ध | ३२३ | | |
| प | | श | |
| बोधितबुद्ध | ३२३ | श्रेणी | १६६ |
| भ | | प | |
| भव्यत्व | १८८ | पण्णोकपायोपशामनाद्धा | १९० |
| भाव | १८६ | पण्णमास | २१ |
| भाववेद | २२२ | स | |
| भुयन | ६३ | साचित्तान्तर | ३ |
| म | | सदुपशम | २०७ |
| महाव्रत | २७७ | सद्भावस्थापनाभाव | १८३ |
| मानोपशामनाद्धा | १९० | सद्भावस्थापनान्तर | २ |
| मायोपशामनाद्धा | १९० | सम्मूर्च्छिम | ४१ |
| मासपृथक्त्व | ३२, ९३ | | |

| शब्द | पृष्ठ | शब्द | पृष्ठ |
|-----------------------|----------------------------------|-----------------------------|----------------|
| | औ | | ह |
| गौव्यधिकभाव | १८५, १९४ | डहरकाल | ४२, ४४, ४७, ५६ |
| औपशमिकभाव | १८५, २०४ | | त |
| | क | तद् यतिरिक्तअल्पवहुत्व | २४२ |
| कपाटपर्याय | ९० | तद्व्यतिरिक्तनोआगमद्रव्यभाव | १८४ |
| कैरण | ११ | तीर्थकर | १९४, ३२३ |
| कपाय | २२३ | तीव्र मन्दभाव | १८७ |
| कुरु | ४१ | त्रसपर्याप्तस्थिति | ८४, ८५ |
| वृत्तकरणीय | १४, १५, १६, ९९, १०५, १३९, २३३ | त्रसस्थिति | ६५, ८१ |
| | | | द |
| क्रौघोपशमनाद्धा | १९० | दक्षिणप्रतिपत्ति | ३२ |
| क्षपक | १०५, १२४, २६० | दिवसपृथक्त्व | ९८, १०३ |
| क्षपकश्रेणी | १२, १०६ | दिव्यध्वनि | १९४ |
| क्षपकाद्धा | १५९, १६० | दीर्घान्तर | ११७ |
| क्षय | १९८, २०२, २११, २२० | दृष्टमार्ग | २२, ३८ |
| क्षायिकभाव | १८५, २०५, २०६ | देवलोक | २८४ |
| क्षायिकसम्यक्त्वाद्धा | २५४ | देशघातिस्पर्धक | १९९ |
| क्षायिकसक्षा | २०० | देशव्रत | २७७ |
| क्षायोपशमिक | २००, २११, २२० | देशसयम | २०२ |
| क्षायोपशमिकभाव | १८५, १९८ | द्रव्यविष्णुम्भसूची | २६३ |
| क्षुद्रभवग्रहण | ४५, ५६ | द्रव्यान्तर | ३ |
| | ग | द्रव्याल्पवहुत्व | २४१ |
| गुणकार | २४७, २५७, २६२, २७४ | द्रव्यलिङ्गी | ५८, ६३, १४९ |
| गुणकाल | ८९ | | न |
| गुणस्थानपरिपाटी | १३ | नपुसकचेदोपशमनाद्धा | १९६ |
| गुणाद्धा | १५१ | नामभाव | १८३ |
| गुणा तरसक्रान्ति | ८९, १५४, १७१ | नामान्तर | १ |
| | घ | नामाल्पवहुत्व | २४१ |
| घनागुल | ३१७, ३३५ | निदर्शन | ६, २५, ३२ |
| | च | निरन्तर | ५६, २५७ |
| घनुदर्शनस्थिति | १३७, १३९ | निजराभाव | १८७ |
| | ज | निर्याण | ३५ |
| जीवधिपाकी | २०२ | नोआगमअचित्द्रव्यभाव | १८४ |
| ज्ञानकार्य | २२४ | नोआगमद्रव्यभाव | १८४ |
| | | नोआगमद्रव्यान्तर | २ |
| | | नोआगमभव्यद्रव्यभाव | १८४ |

| शब्द | पृष्ठ | शब्द | पृष्ठ |
|------------------------|--------------------|----------------------|-----------------|
| नोआगमभावभाव | १८४ | मासपृथक्त्वान्तर | १७९ |
| नोआगमभावान्तर | ३ | मिध्यात्व | ६ |
| नोआगममिश्रद्रव्यभाव | १८४ | मिश्रान्तर | ३ |
| नोआगमद्रव्याल्पवहुत्व | २४२ | मुहूर्तपृथक्त्व | ३२, ४५ |
| नोआगमभावाल्पवहुत्व | २४२ | | |
| नोआगमसच्चित्तद्रव्यभाव | १८४ | य | |
| नोइन्द्रियावरण | २३७ | योग | २२६ |
| | | योगान्तरसक्रान्ति | ८९ |
| प | | | |
| परमार्थ | ७ | ल | |
| परस्थानाल्पवहुत्व | २८९ | लेदयान्तरसक्रान्ति | १५३ |
| परिपाटी | २० | लेदयाद्धा | १५१ |
| पल्योपम | ७, ९ | लोभोपशामनाद्धा | १९० |
| पारिणामिकभाव | १८५, २०७, १९६, २३० | | |
| पुद्गलपरिवर्तन | ५७ | व | |
| पुद्गलविपाकित्व | २२० | वर्गमूल | २६७ |
| पुद्गलविपाकी | २२६ | वर्षपृथक्त्व | १८, ५३, ५५, २६४ |
| पुरुषवेदोपशामनाद्धा | १९० | वर्षपृथक्त्वान्तर | १८ |
| पूयकोटोपृथक्त्व | ४२, ५२, ७२ | वर्षपृथक्त्वयु | ३६ |
| प्रक्षेपसक्षेप | २९४ | विकल्प | १८९ |
| प्रतरागुल | ३१७, ३३५ | विग्रह | १७३ |
| प्रतिभाग | २७०, २९० | विग्रहगति | ३०० |
| प्रत्यय | १९४ | विरह | ३ |
| प्रत्येकबुद्ध | ३२३ | व्यभिचार | १८९, २०८ |
| | | श | |
| बोधितबुद्ध | ३२३ | श्रेणी | १६६ |
| | | प | |
| भव्यत्व | १८८ | पण्णोकपायोपशामनाद्धा | १९० |
| भाव | १८६ | पण्मास | २१ |
| भाववेद | २२२ | | |
| भुवन | ६३ | स | |
| | | सच्चित्तान्तर | ३ |
| म | | सदुपशम | २०७ |
| महाव्रत | २७७ | सद्भावस्थापनाभाव | १८३ |
| मानोपशामनाद्धा | १९० | सद्भावस्थापनान्तर | |
| मायोपशामनाद्धा | १९० | सम्मूर्च्छिम | |
| मासपृथक्त्व | ३२, ९३ | | |

| शब्द | पृष्ठ | शब्द | पृष्ठ |
|-----------------------------|----------|----------------------|----------|
| सम्यक्त्य | ६ | सचय | २४४, २७३ |
| सम्यग्मिध्यात्य | ७ | सचयकाल | २७७ |
| सर्वघातित्व | १९८ | सचयकालप्रतिभाग | २८४ |
| सर्वघातिस्पर्धक | १९९, २३७ | सचयकालमाहात्म्य | २५३ |
| सर्वघाती | १९९, २०२ | सचयराशि | ३०७ |
| सर्वपरस्थानात्पयद्भुत्य | २८९ | सयम | ६ |
| सागरोपम | ६ | सयमासयम | ६ |
| सागरोपमपृथक्त्य | १० | स्त्रियुक्तप्रमण | २१० |
| सागरोपमशतपृथक्त्य | ७० | स्थान | १८९ |
| सातासातयधपरावृत्ति | १३०, १४२ | स्थापनान्तर | २ |
| साधारणभाय | १९६ | स्थापनाभाय | १८३ |
| सान्तर | २५७ | स्थापनात्पयद्भुत्य | २४१ |
| साक्षिपातिभाय | १९३ | स्थायरस्थिति | ८५ |
| सासादनगुण | ७ | स्त्रीयेदस्थिति | ९६, ९८ |
| सासादनपञ्चादागतमिध्याहृष्टि | १० | स्त्रीयेदोपशामनाद्धा | १०० |
| सासयमसम्यक्त्य | १६ | स्वस्थानाल्परद्भुत्य | २८९ |
| सिद्धयत्काल | १०४ | | |
| सुहृमाद्धा | १९ | | |
| सोचिकस्वरूप | २६७ | हेतुहेतुमद्भाय | ३२२ |



| शब्द | पृष्ठ | शब्द | पृष्ठ |
|-----------------------------|----------|----------------------|----------|
| सम्यक्त्व | ६ | सचय | २४४, २७३ |
| सम्यग्मिथ्यात्व | ७ | सचयकाल | २७७ |
| सर्वघातित्व | १९८ | सचयकालप्रतिभाग | २८४ |
| सर्वघातिस्पधक | १९९, २३७ | सचयकालमाहात्म्य | २५३ |
| सर्वघाती | १९९, २०२ | सचयराशि | ३०७ |
| सर्वपरस्थानाल्पयद्दुत्व | २८९ | सयम | ६ |
| सागरोपम | ६ | सयमासयम | ६ |
| सागरोपमपृथक्त्व | १० | स्तियुकसक्रमण | २१० |
| सागरोपमशतपृथक्त्व | ७२ | स्थान | १८९ |
| सातासातरधपरवृत्ति | १३०, १४२ | स्थापनान्तर | २ |
| साधारणभाव | १९६ | स्थापनाभाव | १८३ |
| सान्तर | २५७ | स्थापनाल्पयद्दुत्व | २४१ |
| सान्निपातिभाव | १९३ | स्थावरस्थिति | ८५ |
| सासादनगुण | ७ | स्त्रीवेदस्थिति | ९६, ९८ |
| सासादनपश्चादागतमिथ्यादृष्टि | १० | स्त्रीवेदोपशामनाज्ञा | १९० |
| सासयमसम्यक्त्व | १६ | स्वस्थानाल्परदुत्व | २८९ |
| सिद्धयत्काल | १०४ | | |
| सुहृन्मादा | १९ | | |
| सौचिकस्वरूप | २६७ | हेतुहेतुमद्भाव | ३२२ |



